ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार



एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म परमपिता परमात्मा की विचित्रता से युक्त, अद्भुत और विलक्षण सृष्टि का उद्घाटन पूज्यपाद गुरुदेव श्रृङ्गी ऋषि कृष्णदत्त जी महाराज के प्रवचनों से हुआ। वह ईश्वर का एक अलौकिक और दिव्य प्रकटीकरण है और सृष्टि के इतिहास की एक मात्र, विलक्षण अद्भुत घटना भी। पूज्यपाद गुरुदेव का जन्म सृष्टि सम्वत् १९६०८५३०४३ माह अश्विन, कृष्णपक्ष तृतीया, विक्रम सम्वत् १९९९, ईसवी सम्वत् २७ सितम्बर १९४२ को, उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर, सलेमाबाद में एक विशेष बालक ने जन्म लिया। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, शवासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो बालक की गर्दन दायें-बायें हिलने लगती, लगभग १५ मिनट वेद मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त सृष्टि के आदि काल से वर्तमान काल तक के विभिन्न कालों के स्वयं और विभिन्न ऋषि-मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक एक दिव्य प्रवचन होता। बाल्यावस्था होने के कारण, प्रारम्भ में आवाज अस्पष्ट होती और जैसे-जैसे आयु बढ़ने लगी, वैसे-वैसे ही आवाज और विषय दोनों स्पष्ट होने लगे। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नही था। ग्रामीण, निर्धन और अपठित समाज होने के कारण भूत प्रेत का प्रभाव मानते हुए बहुत-सी चिकित्सा भी कराई गई, पर सब व्यर्थ रहे। क्योंकि बालक की यह प्रवचन क्रिया तो यौगिक थी यह तो सतत् ऐसे ही चलती रही। आवाज जब कुछ स्पष्ट हुई तो इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में श्रृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का

कारण बनी। और इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में भी जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में जाता तो कुछ अन्तराल बाद स्वतः ही योग समाधि की स्थिति बन जाती। जहां इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और जैसा काल देखा था उस काल के अनुकूल व्याख्यान कण्ठ आ जाते। क्योंकि, जन्म जन्मान्तरों के संस्कार स्मृति में, अन्तःकरण में विराजमान रहते हैं। और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीर धारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती, जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि महाराज, और पूज्य महानन्द जी के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण, वहां अन्तरिक्ष में दिव्य आत्माओं के सम्मुख सत्संग में दिया जाने वाला दिव्य प्रवचन, इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन मानस को भी सुनाई देते। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, ब्रह्माण्ड की विशालता, प्रत्येक लोक में जीवन की अनिवार्यता का बोध, सृष्टि का उद्देश्य, पूर्व कालों में विज्ञान की विशालता का दिग्दर्शन, वैदिक संस्कृति का उज्ज्वलतम स्वरूप, आत्मा, परमात्मा और प्रकृति का स्वरूप, विभिन्न कालों का आँखो देखा सदृश्य वर्णन, भगवान राम और भगवान कृष्ण के जीवन की दिव्यता का साक्षात दर्शन, समाज में प्रचलित रूढ़ियों का निवारण करने वाली दृष्टि, क्या कुछ दिव्य नहीं है इन दिव्य प्रवचनों में ? ये किसी भी मनुष्य को, समाज का और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते है।

पूज्यपाद गुरुदेव की २० वर्ष की अवस्था तक ये प्रवचन ऐसे ही जनमानस को आश्चर्यचकित और उनका मार्गदर्शन करते रहे। परन्तु कुछ प्रबुद्ध महानुभावों ने इन प्रवचनों की इस अमूल्य निधि को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से सन् १९६२ से शब्द ध्वनांकित यन्त्र (टेप रिकार्ड) संरक्षित करने का निश्चय किया, और यह क्रम पूज्यपाद गुरुदेव के महाप्रयाण ईसवी सम्वत् १५ अक्तूबर १९९२, माह कार्तिक, कृष्णपक्ष

चतुर्थी, विक्रम सम्वत् २०४९ सृष्टि सम्वत् १९६०८५३०९३ को हुआ था।

इस अन्तराल पूज्यपाद गुरुदेव के १५०० प्रवचन, टेप रिकार्ड से संरक्षित किये गये। जिनमें सृष्टि के अनन्तकाल की अमूल्य धरोहर निहित है। हम उनको व्यवस्थित रूप से और अनुसन्धानात्मक दृष्टि से पुस्तकों के रूप में प्रकाशित कर रहे हैं। परमात्मा की अनुपम कृपा से प्राप्त, इस अमूल्य धरोहर को जन जन तक पंहुचाने के प्रयास में योगदान देने के लिए, प्रत्येक वैदिक धर्मी को सहयोगी बनना चाहिए। जिससे हम सृष्टि के आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक की मानव गाथा को सभी के सम्मुख रख सकें। विश्व कल्याणार्थ की भावना से निहित इस महान ज्ञान की वसुधैव कुटुम्बकम की संस्कृति को प्रसारित कर सकें।

1. 631228-हम आर्य बनें

देखो, मुनिवरों! अभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम तुम्हारे समक्ष पुनः की भान्ति कुछ वेदमन्त्रों का पाठ कर रहे थे ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, जिन वेदमन्त्रों का अभी अभी हमने तुम्हारे समक्ष, पाठ किया। आज के वेद पाठ में उस देव की याचना कर रहे थे जो देवों का महादेव है। जिस महादेव के लिए ऋषि मुनियों ने और देवताओं ने भी इसी महादेव की याचना की। आज हम पुनः से उस परमपिता परमात्मा की अनुपम कृपा से, आज हम महादेव, देवो के देव की याचना करने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा था। आज हम अपने भाग्य को सराहना देते चले गए। जिस जीवन में परमात्मा के गान गाने का अवसर प्राप्त होता हो वह जीवन बड़ा अमूल्य है। वह जीवन बड़ा अमूल्य है और वह कितना अमूल्य है। वह इतना अमूल्य है कि उसकी महिमा का गुणगान नही गाया जा सकता।

मुनिवरों! ईश्वर का गान, उस महादेव का गान हम कौन से जीवन में गा सकते हैं? कौनसा जीवन ऐसा है, जिसमें हम महादेव की याचना कर सकें और उसके विज्ञान की चर्चाएँ कर सके वह कौनसा जीवन है, वह परमात्मा ने कौनसा जीवन दिया है। जो देवताओं ने भी जिस जीवन की याचना की है, वह है मनुष्य। वह जीवन है मनुष्य, जिसकी याचना हमारे आचार्यों ने पुनः पुनः की है, ऋषियों और महर्षियों ने देवता बनने के लिए महादेव से याचना की है कि हमें मनुष्य बना। और कैसा मनुष्य बना? मनुष्य बनाना है, तो हमें आर्य बना, हमें श्रेष्ठ पुरूष बना। हम यथार्थ का पालन करने वाले बनें। जैसा मैने द्वितीय वाक्यों में आर्यों की व्याख्या प्रारम्भ होती चली जा रही है। आर्यों की व्याख्या आज भी मैं करता चला जाँऊ। मुझे आर्यों का जीवन बड़ा अमूल्य प्रतीत होता है, उनका जीवन संसार में परोपकार करने के लिए होता है, उनका जीवन संसार में वास्तविकता को फैलाने के लिए होता है। वे अपने ज्ञान विज्ञान का प्रसार करके यहाँ से चले जाते हैं। मुनिवरों! नारद मुनि महाराज ने आर्यों की व्याख्या करते हुए कहा था कि आज

मैं आर्यों की व्याख्या नहीं कर सकता क्योंकि आर्य इतने श्रेष्ठ होते हैं। सृष्टि का जब प्रारम्भ हुआ सृष्टि के प्रारम्भ में आर्य यहाँ आये। सृष्टि के प्रारम्भ से आर्य आते चले आए हैं। जो दूसरों को कष्ट न देने वाले हों, उनको आर्य कहते हैं। यह आर्य परम्परा से यहाँ आए हैं और इन्हीं ने सृष्टि का निर्माण किया है। इन्हीं का यज्ञ इतना महान है। इन्हीं के विज्ञान से यह सर्व संसार उत्पन्न हुआ। तो मुनिवरों! यह महान आर्यों की परम्परो को, मैं आर्यों की परम्परा बहुत समय से गाता चला जा रहा हूँ।

मुनिवरों! आज मुझे महादेव की याचना करने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। महादेव जो देवों के भी देव हैं। जो महान हैं, जिसकी याचना देवताजन भी किया करते हैं। मुनिवरों! त्रेता के काल में भगवान राम ने वशिष्ठ मुनि महाराज से प्रश्न किया कि भगवन! महादेव कौन हैं? हम महादेव किसको माने? उस समय महाराजा वशिष्ठ मुनि ने कहा था राम! यह जो महादेव है, यह देवों के देव हैं, यह हम इसके महाऋणी है, क्योंकि यह देव है, देता है और यह क्या देता है यह हमें वह सामग्री देता है जो कहीं भी प्राप्त नहीं होती है। उस सामग्री को देता है, महादेव। राम ने कहा कि महाराज! वह कौन सी सामग्री है? जो महादेव देता है हमें। उन्होंने कहा था कि वह सामग्री वायु है, वह सामग्री अग्नि है, वह अन्तरिक्ष है, वह पृथ्वी है, जल है, यह सब सामग्री उस विधाता की देन है। जो मनुष्य के हृदय में ओत प्रोत हो रही है। जो मुनिवरों! देखो, मनुष्य का जीवन सञ्चार होता है, इन्ही से। खानपान की सामग्री आती है, पृथ्वी से, यह पृथ्वी उस परम महादेव की देन है। इस पृथ्वी पर हम सभी स्थापित हो करके और हम उसके विज्ञान का उस महिमा का गुणगान गाते हैंआज हम उस पृथ्वी की गोद में जा करके हम उन वनस्पतियों को पाते है उस विज्ञान को पाते है जिस विज्ञान से देखो, हमारे जीवन का विकास हो जाता है। अहा देखो, यह उस महादेव ने हमें देन दी है जहाँ एक एक वस्तु इस प्रकार की है कि मानव चकित हो जाता हैमुनिवरों!।

मुनिवरों! और मानव यथार्थता का जब पान करता है। विचार आता है, इस विज्ञान

का प्रसार करता है, मनुष्य देखता है, कि परमात्मा उस महादेव ने यह ज्ञान दिया है। महादेव ने यह हमें सब सामग्री दी हैं। अपने जीवन में धारण करने के लिए, अपने जीवन को ऊँचा बनाने के लिए, हमें श्रेष्ठ बनाने के परमात्मा ने सामग्री दी है।

आज हम देखो, इसके पश्चात वह कितना ऊँचा महादेव है, क्या एक यही सामग्री नही दी, उस महादेव ने वह सामग्री दी है मुनिवरों! कौन सी सामग्री दी है? वेद है हमारे द्वारा। आज वह सामग्री ज्ञान है ज्ञान से अपने जीवन का प्रसार, जीवन को ऊँचा बनाते है वह सामग्री कहाँ से जानी जाती है? यह प्रकाश से जानी जाती है। प्रकाश कौनसा है? वह प्रकाश हमारे द्वारा वेद। वेद कहते हैं प्रकाश को। उस परमात्मा ने हमें यह प्रकाश दिया है और इसी प्रकाश के आधार पर हम सर्वत्र सृष्टि को जानने वाले बन जाते है। इसी प्रकाश से हम भौतिक विज्ञान को जानते हैं और इसी प्रकाश से हम देखो, आध्यात्मिक विज्ञान को जानते हैं। इसी प्रकाश को ग्रहण करके हम संसार का भौतिक औरआध्यात्मिक सर्वशः ज्ञान हमें प्राप्त हो जाता है। मुनिवरों! यह कौनसा प्रकाश है, वेद रूपी प्रकाश है, यह वेद रूपी माता है। कौन सी माता है? वेद माता, जिस वेद माता के गर्भ में जाने के पश्चात हम महान बन जाते हैं। जिस गायत्री के गर्भ में जाने के पश्चात हम महान बन जाते हैं, वह विचित्र बन जाते हैं। तो मुनिवरों! वह हमारे द्वारा कौन है वह हमारे द्वारा प्रकाश है। आज हमें प्रकाश को पाने के लिए क्या करना पड़ेगा।

आज हमें कौन सा कर्तव्य करने की आवश्यकता है। जो हम प्रकाश को पा सकेंगे? मुनिवरों! वह हमारे द्वारा क्या है? आर्य बनना है। हम आर्य बनें। आर्य हम वेद के आधार को लेकर बन सकते हैं, प्रकाश को ले करके। जो प्रकाश में चलने वाला हो उसको आर्य कहते हैं और जो अन्धकार में चलने वाला होता है मुनिवरों! उसको अनार्य कहते हैं। आज मैने इसकी व्याख्या पूर्व काल में भी की है। आज मैं पुनः से करता चला जाँऊ। मैने पुनः काल में कहा है कि आर्य हों तो यहाँ भगवान राम जैसे आर्य हों, आर्य हो तो यहाँ महाराजा काग जैसे आर्य हो, यहां

आर्य बनना हो तो मुनिवरों! नारद मुनि जैसे जिन्होने लोक लोकान्तरों से कहा, यहाँ आर्य बनना है तो मुनिवरों! माता गार्गी, अभ्यती मुनि महाराज और भी नाना आचार्य हुए जिन्होंने आर्यों की पताका को संसार में फहराया। मुनिवरों! देखो, आज से पूर्व काल में इसकी व्याख्या की भी है आज भी मैं देता चला जाँऊ आज भी इसका कुछ प्रकाश देता चला जाँऊ। मुनिवरों! देखो, आज हम उस प्रकाश के आधार पर चलें जिससे हम भौतिक और आध्यात्मिक विज्ञान सबको जान सकें। मेरे प्यारे महानन्द जी! ने एक समय एक वाक् कहा था कि अन्तरिक्ष में यह वाणी है परन्तु अन्तरिक्ष में रमण करने वाली है आज देखो, इसमें भिन्न भिन्न प्रकार का मत है, मनुष्यों का। कोई तो इस शब्द को अनादि कह रहा है, कोई कहता है कि यह शब्द अनादि नहीं हो सकता है। मानो देखो, इसमें नाना प्रकार के प्रमाण दिये। आज मेरे पूज्यपाद आज से बहुत पूर्व काल में मेरे पूज्यपाद ने मुझे एक वाक् निर्णय कराया क्या इसमें दो प्रकार के मत हो सकते हैएक तो वैज्ञानिको का कुछ मत है इस सम्बन्ध में कि यह जो शब्द है, जो अन्तरिक्ष में रमण करता है कि अनादि है कौन कहता है कि यह अनादि नहीं मानो देखो, इसमें युक्ति देता है विद्वान, बुद्धिमान, दार्शनिक युक्ति दे रहे है यह जो शब्द है यह अनतरिक्ष में रमण करने वाला है। मेघावी बुद्धि से उत्पन्न होता है। परन्तु इसमें भिन्न भिन्न प्रकार का मत है, कोई यह कह रहा है कि अनादि नहीं, कुछ काल के लिए रमण करता है परन्तु उसके पश्चात यह समाप्त हो जाता है। समाप्त हो जाता है, यह भी किन्ही विद्वानों का मत है, परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक निर्णय लिया उन्होंने कहा है, कुछ विद्वानों ने यह भी कहा है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव से पूर्व भी यह कहा है क्या यह जो शब्द है यदि यह अनादि होता तो सृष्टि के समाप्त होने का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता क्योंकि सृष्टि में अनादि जब तक शब्द रहता है जब तक सृष्टि अश्वत है, स्थिर है और जब शब्द नही तो मानो देखो, यह सृष्टि समाप्त हो जाएगी इस प्रकार सब बुद्धिमान युक्तियाँ देते है, दार्शनिको ने भी ऐसा कहा है परन्तु इसका उत्तर यह है कि मानो यह जो शब्द है, यह अनादि नहीं मानो देखो, अनादि तो

तीन ही पदार्थ है संसार में आत्मा, परमात्मा और प्रकृति। मानो देखो, यह अनादि नहीं। यह संक्षिप्त हो जाते हैं, और लुप्त हो जाते हैं। अन्तरिक्ष के साथ साथ यह शान्त हो जाते है। जैसे मुनिवरों! देखो, जैसे ऋक और साम हैं। जैसे पृथ्वी को ऋक कहा गया है और वायु को साम की चुनौती दी है। दोनों के मिलान होने के पश्चात इसको साम गान कहा जाता है। मानो देखो, जब दोनों पृथक पृथक हो जाते हैं, जब दोनों पृथक पृथक हो जाते है उसके पश्चात यह गान समाप्त हो जाता है और गान के समाप्त हो जाने के पश्चात विज्ञान की महिमा नही रहती। क्योंकि इनका बहुत संक्षिप्त परमाणु बन करके महान देखो, वह प्रकृति में लय हो जाते हैं। इसको प्रकृति कहते हैं।

आज मुनिवरों! यह भी माना जाता है कि आज देखो, जितनी प्रकृति है आज यह जो रची हुई है जितना यह संसार हमें दृष्टिगोचर आ रहा है यह सब कुछ प्रकृति से उत्पन्न होता है। यह संक्षिप्त रूपों से यह प्रकृति में लय हो जाता है। जैसे मुनिवरों! देखो, पृथ्वी में प्रकृति में वृक्षों का अङ्कुर है, मानो देखो, जैसे जीवात्मा के द्वारा अन्तःकरण एक कर्म रूपी थैली है जिसमें देखो, पाप व पुण्य दोनों कर्म विराजमान रहते हैं। इसी प्रकार मुनिवरों! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने ऐसा कहा है कि यह शब्द भी अनादि तो नहीं माना जाता। जब अनादि इन सभी पदार्थों को नही माना जाता, परन्तु इनका सूक्ष्म हो करके, यह प्रकृति की गोद में चले जाते हैं। जैसे यह महान आत्मा कर्मों का चक्र समाप्त हो जाने के पश्चात कर्म बद्ध समाप्त हो जाने के पश्चात मानो देखो, यह परमात्मा के गर्भ में स्थापित हो जाता है, परमात्मा के आङ्गन में रमण करता है। उसके आङ्गन में रमण करता रहता है उसको मोक्ष कहते हैं। इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, यह शब्द भी तभी तक अनादि है, जब तक इसको अनादि कह सकते हैं, जब तक अन्तरिक्ष है। मानो यह भी है कुछ वाक्य समाप्त होते रहते हैं, उनका रूपांतर होता रहता है। ऐसा भी कुछ हमारे आचार्यों ने कहा है इस सम्बन्ध में। परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने इस सम्बन्ध में यह कहा है कि यह शब्द अनादि माना जाता है। परन्तु देखो, अनादि न होने का

भी कोई प्रमाण नही अनादि होने का भी कोई प्रमाण नहीं, प्रमाण देते हैं, भिन्न भिन्न रूपों से प्रमाण देते है। आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह भी प्रमाण दिया है इसमें, यदि यह वाक् अनादि न होता तो इसकी महानता इतनी न कही जाती, जो मेघावी बुद्धि से प्राप्त होता है। जब इसकी इतनी महानता है तो इसको कह सकते हैं कि यह अनादि माना जाना चाहिए।

परन्तु वास्तव में देखो, इसका रूपातंर इस प्रकार हो जाता है इसका रूप रेखा इस प्रकार निर्भ्रान्तहो जाती है जैसे देखो, मध्याह्न स्तवति विश्व भोगा, जैसे मेघावी बुद्धि है मेघावी बुद्धि देखो, अन्तःकरण सब ग्रन्थियों को पार करके यह महान देखो, इस परमात्मा में आनन्द को रमण करता है और उस वाक् की ज्योति को देता है, उस विज्ञान को खोजता है यह वाक् कहाँ से आ रहा है? कहाँ जा रहा है हमारे शरीर में कोई थैली ऐसी नहीं, हमारे शरीर में कोई स्थान ऐसा नहीं जहाँ इतने शब्दार्थ, इतना वेदों का ज्ञान हो या इतना प्रकाश हो परन्तु यह भी कहीं से आता है येकहाँ से आता है? अन्तरिक्ष से आता है। परन्तु इससे सिद्ध होता है कि यह शब्द अनादि है।

जो भगवान कृष्ण ने, महाभारत का वर्णन, मेरे प्यारे महानन्द जी! ने आधुनिक काल की चर्चा करते हुए यह भी कहा है कि आधुनिक काल के वैज्ञानिकों का यह मत्त है कि जो भगवान कृष्ण ने महाराजा अर्जुन को जो महान गीता का उपदेश दिया, आज यन्त्रों द्वारा उस वाणी को यन्त्रो द्वारा स्थिर करना चाहते हैं ग्रहण करना चाहते है। परन्तु यह कहा है। मेरे प्यारे महानन्द जी! ने ऐसा कहा परन्तु इससे आज देखो, इस विज्ञान का जानने के लिए मनुष्य इसमें सफल भी हो सकता है और असफल भी हो सकता है, यह हमारा कोई मन्तव्य नहीं परन्तु हम तो यह उच्चारण कर रहें है, क्या जो भगवान कृष्ण ने गीता का जो उपदेश दिया था वह अब तक अन्तरिक्ष में रमण कर रहा है या नही? परन्तु इसका रूप रेखा क्या माने, इसका कोई उत्तर नही परन्तु यह अवश्य कह सकते है क्या जब महान देखो, मेघावीबुद्धि से सम्बन्ध होता है और मेघावी बुद्धि से इसका अनुमान करती है तो

विचार आता है कि अवश्य देखो, वह अनादि हो सकता है। मानो देखो, वह अभी तक हो सकता है। कुछ वाक्यों, की, कुछ शब्दों की रूप रेखा भिन्न हो जाती है। परन्तु मेरे पूज्यपाद गरुदेव ने यह कहा है इस सम्बन्ध में यह कहा है कि यह जो शब्द है, यह अनादि है। परन्तु देखो, यह प्रकृति में बीज रूप से रहता है, जैसे वृक्षो का इसमे देखो, जैसे वट वृक्ष है वट वृक्ष का, एक सूक्ष्म से अङ्कुर में इतने बड़े वट वृक्ष का विज्ञान होता है, इतना विशाल वट वृक्ष रहता है। इसी प्रकार समाप्त हो जाने के पश्चात सबका सूक्ष्म रूप होकर उस महान प्रकृति में रमण करता है। अङ्कुर रूप से रमण न करता है तो मुनिवरों! देखो, आज यदि अङ्कुर रूप से रमण न करता तो सब कुछ कैसे रहता? मानो यह उपादान कारण से और मानो देखो, सामान्य से जब यह उत्पन्न होता है इसी प्रकार उत्पन्न होता है पूर्व से विराजमान है। जैसे मुनिवरों! देखो, जैसे मनुष्य की आत्मा के द्वारा ज्ञान और प्रयत्न दोनों ही स्वाभाविक हैं। दोनों स्वाभाविक है, परन्तु उनका अङ्कुर है, इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, आज कह सकते है गौरव के साथ हमारे आचार्यों ने इस वाक् को कहा है कि यह वाक् यथार्थ हो सकता है।

परन्तु आज हम बेटा! हम व्याख्यान देते देते बहुत दूर चले गए हैं। व्याख्यान तो हमारा महादेव के सम्बन्ध से चल रहा था हम उच्चारण करते करते कितनी दूर चले गए हैं। आज हम महादेव की याचना करने जा रहे थे।

हे महादेव! आज देवता तेरी पूजा किया करते हैं। तू वास्तव में महादेव है तू वास्तव में लिंग स्वरूप है। भगवन! जब सृष्टि प्रारम्भ होती है, यह संसार लिंग रूपों से उत्पन्न होता है। जब लिंग रूप से उत्पन्न होता है, तो यह आप के महत की कृपा है यह आपके विज्ञान की कृपा है। क्या छह माह में लोक लोकान्तर रच जाते हैं। हे प्रभु! हे महादेव! तू वास्तव में महादेव है। देवों का भी देव है। आज हम तेरी पूजा करने जा रहे हैं। तू वास्तव में हमारे जीवन का साथी है। हे प्रभु! हे महादेव! हे कल्याण करने वाले हे महा! हे महा आनन्द को प्रदान करने वाले तू वास्तव में महादेव है। हमारा कल्याण करने वाला है तू हमारा कल्याण कर, आज हम अपने

कल्याण की जिज्ञासा लेकर आपके समक्ष आए हैं।

हे प्रभु! हे प्रभु! आपको देवों का देव कहा है। क्यों कहा है? कौन से देवताओं ने आपको अपना महा देव चुना है और चुनौती दी है जो महान देखो, मनुष्यो के लिए देवता है, जैसे बुद्धिमान है, बुद्धिमान देखो, महान आत्माएं, महान आत्माएं, संसार में मनुष्यों का कल्याण करने के लिए आती हैं, और उपदेश देकर यहाँ से समाप्त हो जाती हैं, चले जाते है। उन आचार्यों ने भी उन देवताओं ने भी उस महादेव को अपना देव चुना है। और उसको चुनौती दी है आज हमे उस महादेव की शरण में जाना है। परन्तु प्रत्येक पुरुष और प्रत्येक देव कन्याओं को उस महादेव की शरण में जाना हैं। आज मुनिवरो देखो, उस महादेव की व्याख्या करते हुए देवर्षि नारद मुनि महाराज ने कहा है कि वह जो महादेव है वह कल्याण करने वाला हैं। सृष्टि को नियन्त्रण में करने वाला हैं, आज देखो, जो सृष्टि को नियन्त्रण में करने वाला हो और देवताओं पर अनुगृम करने वाला है, उसको महादेव कहा गया है वह वास्तव में महादेव है। देवताओं का भी देव है। मुनिवरों! देखो, नारद मुनि ने यह भी कहा है कि महान जो धर्मज्ञो की स्थिति का रूपान्तर करने वाला है, वह भी महादेव है मानो जो देवताओ को आज्ञा देने वाला है वह भी महादेव है मुनिवरों! देखो, परमात्मा को भिन्न भिन्न रूपों से पुकारा है। उसको महादेव की चुनौती वास्तव में दी है आज हम महादेव को चुनौती देते चले जाएं। आज महादेव की याचना करते चले जाएं, जो महादेव है, महामहा नमो स्तुति उत्तम भवता जो अहा! देखो, लोक लोकान्तरों को रचने वाला, इनमें रमण करने वाला, और सृष्टि को नियन्त्रण में करने वाला है। उसको महा कहते है महादेव कहते है।

हे परमदेव! आ! हमारा कल्याण करने वाले आ। तू कल्याण करता है, तू हमारा कल्याण कर। हम तेरे से याचना करने जा रहे हैं। आज तू हमारी याचना स्वीकार कर। आज तू देव है परन्तु देव न होता आज हम तेरी याचना न करते, आज हम तेरी शरण में नही आते परन्तु देखो, हमने विज्ञान से अच्छी प्रकार देखा है। आज मुनिवरों! देखो, आज अपने पूज्यपाद गुरुदेव की कृपा से नास्तिक हो करके भी

देखा है, परन्तु उसमें कुछ न मिला। अन्त में उस महादेव की शरण में जाना ही पड़ा। जो महादेव है, आज मुनिवरों! देखो, नास्तविकत्व यह कह रहा है, जिस महादेव की हम याचना करते चले जा रहे हैं जिसे महादेव पुकारा जा रहा है, परन्तु वह महादेव क्या पदार्थ है। वह क्या है मुनिवरों! देखो, इसको आज आत्मा से विचारा जाएगा जाना जाएगा। आत्मा ऐसा पदार्थ नहीं कि आज तुम्हारे समक्ष इसका निर्णय करा दूँ, परन्तु समक्ष देखना है तो पूर्व तू अपने को जान और अपने को देख कि मैं कौन हूँ और कैसा हूँ। मैं आज जब मैं अपने नेत्रों को नहीं देख सकता, तो उस प्रभु को कैसे देख सकता है। बिना विज्ञान के, बिना प्रकाश के, जब मेरे में इतना प्रकाश नहीं कि आज मैं अपने नेत्रों को तो देख सकूं, परन्तु आज हम उस महादेव को देखना चाहते हैं? बेटा! महादेव तो उस महा अनुपम की कृपा से देखा जाएगा। जब आत्मिक बल बढ़ जाएगा, जब महानता बढ़ जाएगी, विज्ञान के शिखर पर पहुंचेंगे, आध्यात्मिक विज्ञान के शिखर पर पहुचेंगे।

आज देखो, आज देखो, हम भौतिक विज्ञान को खोजते चले जा रहे हैं। जैसे मेरे पूज्यपाद आज से पूर्व काल में ऋषियों ने कहा है नारायन्तक ने भी कहा है, आदि वैज्ञानिको ने कहा कि हमने विज्ञान में तो इतना जाना है परन्तु आज विज्ञान को बहुत महानो ने जाना है, महानुभवों ने जाना है आध्यात्मिक विज्ञान को तो बेटा! संसार में कोई कोई जाना करता है। कोई कोई आध्यात्म विज्ञान के शिखर पर पंहुचता है, कोई कोई जानता है, कोई कोई देखता है कि यह प्रकाश कैसा है, इस प्रकाश की महिमा कैसी है, उस प्रकाश के प्राप्त होने पर हम कैसे बन जाते है उस वेद रूपी प्रकाश को पान करके हम वास्तव में देवता बन जाते है और जो हम उस सोम का पान कर लेते है, वही प्रकाश हमारा सोम है जिस सोम का पान करके हम मुग्ध हो जाते है और मुग्ध हो करके उस परमात्मा की गोद में जा स्थिर होते हैंमुनिवरों! जो संसार को रचयिता है महादेव है अहा!!।

मुनिवरों! आज मैं आर्यों की व्याख्या करने जा रहा था। पूर्व स्थलों से, मैने कई स्थानो में आर्यों की व्याख्या की, आज भी करता जाँऊ। मुनिवरों! देखो, आर्य

हमारे सतोयुग, में त्रेता काल में द्वापर काल में आर्यों का बड़ा प्रकोप (अधिकता) था और आर्य अपने जीवन को कितनी महत्ता देते थे। महान त्रेता काल में जब महाराजा राम, लक्ष्मण और सीता तीनों विराजमान थे मुनिवरों! तीनो में विराजमान हो जाने के कारण वहाँ एक वार्ता चल रही थी। लक्ष्मण यथार्थ आर्य था। जिस लक्ष्मण ने मुनिवरों! उनके जीवन की कितनी महत्वता मिलती है। क्या जो मुनिवरों! देखो, आर्य बन करके, आर्य वह कहलाया जाता है जो माता के, चरणों को स्पर्श करने वाला हो। और चरणों को छूता हो परन्तु देखो, उसकी दृष्टि कितनी स्थल परन जाती हो परन्तु देखो, वह कैसा यथार्थ आर्य था? भगवान राम ने एक समय लक्ष्मण से कहा लक्ष्मण से कहा हे लक्ष्मण! आज तुम परमात्मा को जानने का प्रयत्न करो। मानो, लक्ष्मण ने कहा मैं अवश्य कर रहा हूँ भगवन! आप देखो, मेरा जो कर्तव्य है, मेरा जो महादेव है, वह मेरी सेवा है, वह मेरा परोपकार है। जब मैं परोपकार के शिखर पर पहुंच जाँऊगा तो महादेव की कृपा अवश्य हो जाएगी। मुनिवरों! आज बेटा! आज हमें विचारना चाहिए कि हम किस विज्ञान के इच्छुक हैं, हम किस मर्यादा को ले करके संसार में आए हैं, और कौन सी मर्यादा को ले करके हमें चलना है। हमें उस मर्यादा को लेकर चलना है जिस मर्यादा को हमारे आचार्य और हमारे ऋषि मुनि सब आदेश दे करके चले गएं हैं।

मैं यज्ञोपवीत की व्याख्या करने जा रहा था मुनिवरों! यज्ञोपवीत की व्याख्या ही पूर्ण रूप से न हो सकी। मुनिवरों! देखो, यज्ञोपवीतम्, यज्ञोपवीतम्, जो परम पवित्र है। जिस यज्ञोपवीत के लिए हम उस परम देव की याचना करते है। हे परम पवित्र! यह यज्ञोपवीत हमारा परम पवित्र है यह कैसा पवित्र है, क्या इसमें जो विज्ञान विराजमान है जो विज्ञान है देखो, जैसे माता गायत्री में सर्व विज्ञान विराजमान है इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, जैसे आत्मा को जानने के पश्चात सब कुछ हमें प्राप्त हो जाता है इसी प्रकार यह यज्ञोपवीतम् इतना परम पवित्र है, परम पवित्र है। यह परम पवित्रता को देने वाला है, कैसे देने वाला है, परन्तु इसके पात्र बनने की आवश्यकता है परम पवित्रता को देने वाला है परन्तु उसको धारण करने के लिए

उसका पात्र बनने की आवश्यकता है। यज्ञोपवीतम् परम पवित्र है, जिस परम पवित्रता की व्याख्या हमारे आचार्य गाते चले आए हैं, जो आर्यों का भूषण है। आर्यों का भूषण परम पवित्र है मुनिवरों! जैसे सूर्य परम पवित्र है, वह प्रकाश को देने वाला है इसी प्रकार महादेव परम प्रकाश देता है इसी प्रकार यह यज्ञोपवीत भी हमें परम प्रकाश देता है और यह परम प्रकाश का ज्ञान कराता है कैसे कराता है? मुनिवरों! एक एक अस्वतों में एक एक ऋण है हमारे द्वारा, मातृऋण, पितरऋण और तृतीय ऋण देवऋण है आज हम देवताओं का ऋण उससे कैसे उऋण हो सकते है। इन महा असुतम ऋणो से हम कैसे उऋण हो सकते है मुनिवरों! यह परम पवित्र तो हमने धारण कर लिया, आज यज्ञोपवीत को हमने धारण कर लिया आर्यों का भूषण तो हमने ले लिया परन्तु आर्यों के हमारे कर्म है नहीं। आज देखो, हमारे द्वारा केवल धागे रूपों से यह हमारे कण्ठ में सुशोभित हो रहा है, हम भी कह सकते है कि आर्य हैं परन्तु जब तक हम आर्यों के, जब तक हम आर्य इस विज्ञान को नही जानते हम पूर्व पात्र बने नही परन्तु आज हम पात्र बनें नही, हमने भूषण को ले लिया, आज भूषण का अधिकारी कौन है? जिसने अपने जीवन को कुछ बनाया है, जिसने अपने जीवन को न बना करके, कुछ बनाया है परन्तु वह इसका अधिकारी है, आज हे मेरे प्यारे! महान संसार! आज परमपवित्र को जानने का प्रयत्न करता है, इसका अधिकारी बनना चाहता है, तो यथार्थ आर्य बनकरकेतू संसार में इस प्रकार विराजमान हो जा जैसे महान सूर्य अपने प्रकाश को देने वाला है। सूर्य प्रकाश का अधिकारी है। इसी प्रकार आज तू भी अपने प्रकाश का अधिकारी बन। और महान देखो, उस परम पवित्र को धारण करने वाला बन, जिस परम पवित्रता से तेरा वास्तविक कल्याण होगा और कल्याण होकर तेरी महानता संसार में महान उज्ज्वल कहलाई जाएगी।

यह है मुनिवरों! आज का हमारा आदेश मैं आज से पूर्व यह कह चुका हूँ कि हम आर्य उसको नहीं कहते जो दूसरों की निन्दा करने वाला हो, आर्य उसको नहीं कहते जो त्रुटियाँ ही त्रुटियाँ देखने वाला हो। आर्य उसे कहते हैं जो यथार्थता का

भूषण अपने में धारण करने वाला हो। यह थामुनिवरों! आज का हमारा आदेश, भगवान राम ने देखो, इस परम पवित्र की व्याख्या करते हुए अपने विधाता लक्ष्मण से कहा था हे लक्ष्मण! यह जो अपने कण्ठ में धारण कर रहे हैं, आज तुम्हें ज्ञान है कि आज हमने अपने ऐश्वर्य को क्यों त्यागा है? आज कोई मनुष्य यह कहता है कि माता कैकेयी के आदेश का पालन किया है, कोई कुछ कह रहा है। परन्तु देखो, भगवान राम ने यह कहा है, हे सीते! आज हमने इस राष्ट्र को क्यों त्यागा है? आज हमने ऐश्वर्य को क्यो त्यागा है? उस ऐश्वर्य को हम भोग सकते थे। माता केकैयी कोई हमारे लिए ऐसी नहीं थी कि जिस राष्ट्र को हम नहीं भोग सकते थे परन्तु हमने आज इसीलिए त्यागा है कि हमें इस परम पवित्र की रक्षा करनी हैसंसार में। परमपवित्रं! यज्ञोपवीतम्! आज यह यज्ञोपवीतम् है यह महान है और भी देखो, पवित्रता को प्राप्त कराने वाला है आज हमें इसकी रक्षा करनी है आज देखो, ऋणों से अवऋण होना है। आज हमारे ऋषियों ने कहा है कि आज मनुष्यों का और यथार्थ आर्यों का कर्तव्य है संसार में कि अपने ऐश्वर्य को त्याग करके अपनी मर्यादा की रक्षा करनी चाहिए। अपने महान परम पवित्र की रक्षा करनी चाहिए यह हमारे लिए भी उतना ही परमपवित्र है, यह हमारा कल्याण करने वाला है, आज हमें इसकी रक्षा करनी चाहिए। आज हमने राष्ट्र की भूमि को त्यागा, ऐश्वर्य को त्यागा है, आज हमने देखो, पर्वतों में अपनी शैय्या बनाई है, आज पर्वतों की शैय्या बनाई है, क्यों बनाई है? इसका क्या कारण है? क्या देखो, हमें इस महान यज्ञोपवीत की रक्षा करनी है। कैसे करनी है? आज हम देखो, यवन हमारी रक्षा में देखो, महानता को समाप्त करने जा रहे है यहाँ राजा रावण जैसे दैत्य बन चुके हैं, जो मर्यादा से दूर चले जा रहे हैं। वहवेदों के पण्डित होते हुए भी दैत्य! आज देखो, तुम्हें उनको जा करके निर्णय देना है। आज हमें उनको शिक्षा देनी है। आज हमें इस परम पवित्र की रक्षा करनी है।

मुनिवरो देखो, सीता ने कहा कि महाराज! यह परम पवित्र तो है परन्तु इसमें क्या विज्ञान है इसकी हमें रक्षा करना अनिवार्य है? राम ने कहा कि देवी! यह हमारे

आर्यों का भूषण है। यह वह भूषण है जिस भूषण के लिए देवता देखो, चन्द्र और सूर्य मण्डलों से यहाँ आत्माएं आ करके इस परम पवित्र को धारण करती है। और इसकी रक्षा करती है। इसकी रक्षा करने के लिए वे आत्माएं यहाँ आती है। देवी! आज हमें भी इसकी रक्षा करनी है। आज हमें भी यह देखना है कि हम कैसे इसकी रक्षा कर सकते हैं। मुनिवरों! यह हम विज्ञान से कर सकते हैं। अपने महान त्याग और तपस्या से कर सकते हैं। जब हमारे द्वारा त्याग तपस्या नहीं कर्तव्य नहीं तो हम इसकी रक्षा किसी प्रकार नहीं कर सकते। आज राजाओं का कर्तव्य है, जो अपने परम पवित्र की रक्षा करता है वह परम पवित्र बन जाता है। जो परम पवित्र की रक्षा नहीं करता वह परम पवित्र किसी काल में नहीं बन सकेगा। आज राजाओं का राष्ट्र भी देखो, इन्हीं परम पवित्रताओं पर आधारित है। आज राष्ट्र यदि परम पवित्र की रक्षा नहीं करेगा तो मानो देखो, उसका राष्ट्र कदापि परम पवित्र नहीं बन सकेगा। आज हम यदि हिंसक बन जाएं तो हमारा राष्ट्र हमसे पूर्व हिंसक बन जाएगा। आज हम दुराचारी बन जाते हैं तो हमारा राष्ट्र भी दुराचारी बन जाएगा। देवी! आज हम ऐश्वर्य में व्याप्त हो जाएंगे तो हमारा राष्ट्र भी ऐश्वर्यवान बन जाएगा और कोई भी पुरूषार्थ नहीं कर सकेगा। आज सबसे पूर्व हमें अपने त्याग और तपस्या से अपने जीवन को ऊँचा बनाना है और उस परम पवित्र की रक्षा करनी है जिसकी हमारे आचार्यों ने चुनौती दी है। आज हमें उस चुनौती आधार पर चलना है। एक एक ऋण में आज हमारी मातृ ऋण है। माता क्या ऋण था हमारे द्वारा आज यह यज्ञोपवीत है इसमें मातृ ऋण था मेरी प्यारी माता कैकेयी ने कहा कि पुत्र तू वन को चला जा। परन्तु देखो, मैने माता के उस आदेश को पान करते हुए मैने परमात्मा की याचना की हे प्रभु! तू जो करता है, जो आप करते है, यथार्थ है। परन्तु जो भी करते है वह सब कुछ सुन्दर है। परन्तु मेरे भगवान मेरे महादेव वह जो कुछ कार्य करता है, मनुष्य के लिए सब कुछ अच्छा करते है, वह सब कुछ यथार्थ करते है मेरे लिए उस प्रभु! ने यथार्थ किया है मेरी माता ने कुछ अवऋण होने का एक आदेश तो दिया। जिससे मैं मातृ से उऋण

होने जा रहा हूँ। मुनिवरों! देखो, भगवान राम ने कहा था कि हे सीते! मैं उस माता के आदेश को पान करता हुआ मातृऋण से पार होने जा रहा हूँमातृ ऋण से उऋण होने जा रहा हूँ। माता का यही ऋण था क्या ऋण था माता ने यह आदेश दिया था कि हे पुत्र! तू आज देखो, वन में चल और चल करके देखो, तू अपनी मर्यादा को ऊँचा बना, और महान देखो, यहां देवताओं की रक्षा करने वाला बन। अपने परम पवित्र की रक्षा कर। यह मेरी माता का आदेश था जिसको जानकरके राष्ट्र को त्याग कर वन जा पहुँचा।

आज मैं वन में हूँ परन्तु पर्वतो की शैय्या पर हूँ। आज देखो, यह माता का ऋण है। माता के ऋण से उऋण होने जा रहा हूँ जो माता ने मुझे आदेश दिया है, जो माता का आदर नहीं करता, माता की आज्ञा में नहीं चलता वह पुत्र नहीं कहलाता, वह कुपुत्र कहलाता है। आज मैंने अपनी माता के गर्भ से जन्म लिया है, मैं माता का ऋणी हूँ। मेरी माता ने आदेश दिया है उस माता के आदेश के अनुकूल मैंने पर्वतों को शैय्या बनाई है।

भगवान राम ने जब यह कहा तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने यह भी कहा कि द्वितीय ऋण हमारे द्वारा ऋषि ऋण है, जो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे आज्ञा दी थी कि मेरा राष्ट्र राम राज्य कैसे बन सकता है। मेरे पूज्यपाद गुरुओं ने यह कहा था ऋषियों ने मुझे आदेश दिया है और यह कहा कि तुम्हारा राष्ट्र तब तक राम राज्य नहीं बनेगा जब तक त्याग और तपस्या न होगी, मानो जब तक तुम अपनी पतिका नही फहराओगेअपनी संस्कृति की पताका न लहराओगे। जब तक तुम अपने राष्ट्र को राम राज्य नही बना सकते। मैं आज हे पूज्य! हे महान मेरी पत्नी! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने जो मुझे आज्ञा दी है उस आज्ञा का पालन करने के लिए आज मैं आया हूँ, और उस ऋण से उऋण होने जा रहा हूँ। जो मेरे ऋषि ने कहा है ऋषि ने कहा है, कि आज देखो, तू देवताओं का ऋण है, आज तू ऋषियो का ऋणी है ऋषियों की आज्ञा है क्या अपनी पतिका को लहरा यथार्थ अपनी पतिका को लहरा और जब यथार्थता की पतिका को लहरायेगा तो तेरा राष्ट्र वास्तव में राम राज्य

बन जाएगा। उस समय भगवान राम ने कहा हे सीते! आज मैने पूज्यपाद गुरुदेव का आदेश पालन किया आज तुझे परमात्मा ने प्रेरणा दी मेरी माता मेरे लिए कारण बन गई मेरी माता कारण बन गई परन्तु मेरा तो गुरुदेव का आदेश था। मैं उनके आदेशों पर चलने वाला था। आज मैं उनका ऋणी हूँ, मैं उनके आदेशों के अनुकूल अवश्य अपने राष्ट्र को राम राज्य बनाऊंगा, और महान देखो, मैं अपनी संस्कृति का प्रसार अवश्य करता चला जाँऊगा सीते!।

इसके पश्चात मुनिवरों! भगवान राम ने कहादेवी! मेरे द्वारा एक महान देव ऋण है। आज मैं देव ऋण से उऋण होने कैसे जाँऊगा जब मैं यहाँ भयंकर वन में हूँ। हम तीनों मिलजुल करके आज हम मार्ग की सामग्री को एकत्रित करके नित्य प्रति यजन् किया करते हैं। आज देवताओं से उऋण होने का प्रयत्न करने जा रहे हैं और प्रभु! से उन देवताओं की याचना किया करते हैं। हे देवताओं! तुम मेरे महान देवता, तुम मेरे देवता हो, मैं तुम्हारी पूजा कर रहा हूँ और यज्ञों द्वारा तुम्हारी पूजा कर रहा हूँ। मेरी पूजा स्वीकार करो। यह भगवान राम, सीता और लक्ष्मण तीनों मिलकर नित्य प्रति उस मार्ग में यजन किया करते थे। जहाँ सामग्री न थी मानो देखो, वहां किसी यज्ञों की भी जगह न थी वह मानो इस प्रकार का था। परन्तु देखो, वह यहाँ नित्य प्रति यज्ञन करते थे भगवान राम ने देखो, यज्ञन करने में देखो, पूर्ण विज्ञान को जाना भगवान राम ने यज्ञन किया पृथ्वी के विज्ञान को जाना कि इस पृथ्वी में, अमुक पृथ्वी पर क्या स्थापित हो सकता है। क्या उत्पन्न हो सकता है उस विज्ञान को जाना बेटा! आज मुनिवरों! भगवान राम ने यज्ञ द्वारा देवताओं का पूजा करते करते, यज्ञ करते करते उस विज्ञान को जाना जिसको बेटा! अब तक वैज्ञानिक खोज नहीं पाए हैं, उस विज्ञान को, कौन से विज्ञान को खोजा है? क्या पृथ्वी को देख लिया करते थे कि वह पृथ्वी किस प्रकार की है? केवल दृष्टिमात्र से ही पृथ्वी को देख लिया करते थे कि अमुक पृथ्वी में इतना अन्न उत्पन्न हो सकता है। इस प्रकार को हो सकता है इसमें इस प्रकार की सोमलताएं व वृक्ष उत्पन्न हो सकते हैं। यह भगवान राम का इस प्रकार का विज्ञान था।

मुनिवरों! वह दृष्टिमात्र से ही विज्ञान को खोज लिया करते थे।
आज मुनविरो! देखो, इससे पूर्व काल में महानन्द जी ने भी कहा था आज का विज्ञान इस विज्ञान पर पहुंच चुका है। परन्तु यह अवश्य कह सकते हैं कि महानन्द जी पहुंच चुके होंगे परन्तु आज हमें इससे कोई मन्तव्य नहीं आज तो हमें यह प्रकाश देना है। आज हमें तो यह मन्तव्य प्रगट करना है, जो हमारा आदेश चल रहा था।
हम उच्चारण करते चले जा रहे थे क्या, मुनिवरों! देखो, हम उच्चारण कर रहे थे कि देव ऋण के सम्बन्ध में राम ने कहा देखो, मैं देवताओं के ऋण से उऋण होने जा रहा हूँ। मुनिवरों! देखो, भगवान राम देवताओं की पूजा करते थे जब भगवान राम ने राम राज्य की स्थापना की उस समय यज्ञ कर देवताओं का पूजन किया और देवताओं से कहा देवताओं कि देवताओं! आओ मेरे राष्ट्र में विराजमान हो जाओ मेरे राष्ट्र को देव राष्ट्र बना दो, राम राज्य बना दो। परन्तु देखो, मैं अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता हूँ। उस समय मुनिवरों! देखो, देवताओं की पूजा की, मैंने देखो, इससे पूर्व काल में कहा है मनुष्य को जो कुछ बनना है आज देखो, उस प्रकार की पूजा करे तो वही बन जाएगा। आज तुम्हें यदि दैत्य बनना है तो दैत्यों के सम्पर्क में रह करके दैत्यों की पूजा करो। एक समय वह आएगा जब तुम दैत्य बन सकते हो और देवताओं की पूजा करने से तुम देवता बन सकते हो। यह है मुनिवरों! आज का हमारा आदेश।
आज हम वाक् उच्चारण करते करते बेटा! बहुत दूर चले गए। भगवान राम का आदेश प्रगट करने लगे। उच्चारण क्या कि हम आदेश प्रगट कर रहे थे महादेव की व्याख्या कर रहे थे। हे महादेव! कल्याण करने वाले महादेव सबकी बुद्धियों में प्रकाश देने वाले महादेव! आज तू हमारा कल्याण कर। आज हम पुनः से तेरी याचना कर रहे है। मुनिवरों! देखो, जिस मनुष्य को आज मनुष्य महादेव की याचना करता है तो देवता बन जाता है। मुनिवरों! यह है हमारा आज का आदेश जो प्रगट हो रहा था। आज हमें अधिक आदेश नहीं प्रगट करना है आज हमारा वाक् तो

इतना ही चलना था। समय मिलेगा तो बेटा! किसी द्वितीय तृतीय काल में और भी प्रकाश दे सकेंगे। अहा देखो, प्रकाश देते चले जाएंगे आज हम केवल वेद माता की याचना कर रहे थे। आज वेद रूपी प्रकाश की याचना कर रहे थे परन्तु परमपिता परमात्मा से याचना कर रहे थे। प्रभु! आपने हमें बड़ा ऊँचा सौभाग्य दिया है, जो आज वेदमन्त्रों का पाठ आज संहिताओं का पाठ आज हमें महादेव की याचना करने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा था। मुनिवरों! यह सब कुछ भाग्य से प्राप्त होता है। यह मनुष्यों के ऊँचे संस्कारों से प्राप्त होता है। आज हम प्रभुकी याचना करते चले जाएं जिस प्रभुन हमें जन्म दिया है, जिस प्रभुने हमें उत्पन्न किया है इस संसार में आज हम उस वेद माता की याचना करते चले जाएं जो वेद माता हमें प्रकाश के देने वाली है। हमें प्रकाश के मार्ग पर पंहुचाने वाली है। आज हम पुनः से उसकी याचना करते चले जाएं। यह है मुनिवरों! आज की हमारी वार्ता। कल समय मिलेगा तो बेटा! इससे आगे वाक् उच्चारण किया जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! अभी तो आपका समय भी समाप्त नहीं हुआ है।

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं महानन्द जी! समय समाप्त हो चुका है। बेटा! आज हमें केवल इतना ही वाक्य उच्चारण करना था। आज हम उच्चारण करते करते दूरी भी ले गयें, आज हम आर्यों की व्याख्या कर रहे थे कि आर्य किसको कहते हैं। आर्य भगवान राम जैसे, आर्य नारद जैसे आर्य जो श्रेष्ठ विचार करने वाले हों। आर्य उनको कहते हैं जो यथार्थता की तुलना करने वाले हों। आर्य वह होते हैं, जो बुद्धि से और गम्भीरता पूर्वक वाक्य को विचारने वाले होते हैं। उनको आर्य कहते है। बेटा! आज जैसा तुम्हें निर्णय कराया था उनको आर्य नहीं कहते आज बेटा! यह वाक् हमारा समाप्त हो चुका है। कल समय मिलेगा तो शेष वार्ता कल प्रगट होगी।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन! गुरुदेव! आज हमें आपका वाक्य सुन्दर तो लगा नहीं।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटा! कल देखा जाएगा। कल और सुन्दर हो जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन!।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरों! आज हमारा यह वाक्य गम्भीर था। महानन्द जी के आङ्गन में इसीलिए नहीं आया क्योंकि आज का वाक् हमारा गम्भीर था, विचारणीय था, और मनन करने योग्य था। इसीलिए इसमें गूढ़ता थी। समय मिलेगा तो शेष वाक्य कल और प्रगट किए जाएंगे आज समय समाप्त हो चुका है। अब कुछ वेदमन्त्रों का पाठ होगा उसके पश्चात वार्ता समाप्त हो जाएगी।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! आपने कल यह कहा था कि हम यथार्थता का उत्तर और अच्छी तरह स्पष्ट करेंगे वह नहीं किया।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! कल देखा जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन! जैसी आज्ञा! धन्यवाद!।

2. 640927-मृत्यु उपरान्त आत्मा की गति

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! अभी अभी हमारा, पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम पुनः की भान्ति कुछ वेदमन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पुनः की भान्ति जिन वेदमन्त्रों का पाठ किया। मैंने आज से पूर्व कई स्थलों में कहा था, कि हमारा यह ज्ञान और विज्ञान से भरी हुई संहिता का पाठ चल रहा है। जिसमे मानवत्व को भी बड़ा ऊँचा विशलेषण किया जाता है। मानवत्व तो, यह संहिता तो ऋषित्व का है कि मानवत्व, आत्मत्व और परमात्मात्व क्या है? और विज्ञानत्व क्या है? आज का यह मनोहर पाठ, जिसकी पुरी बड़ी ही सुन्दर थी, जिसके रूपान्तर में जाकर जटा पाठ में वेदों का गान गाते चले जा रहे थे। जिससे हमारा आत्मा बड़ा प्रसन्न होने जा रहा था, ऐसा प्रतीत होता चला जा रहा था कि आज हमें अमूल्य प्रकाश प्राप्त हो रहा है। इच्छा तो नहीं थी, कि वेदमन्त्रों के गान को त्याग करके आज हम देवस्वति सुब्रणी में आ जाएं। परन्तु मेरे प्यारे महानन्द जी! का यही कथन है, उनके अनुपम वाक् प्रारम्भ हैं, परन्तु वेदों का मनोहर गान इस प्रकार का था कि वाणी, हृदय, मुनिवरों! अन्तःकरण और इन्द्रिय सबका एक समागम हो रहा था, सब एक सूत्र में बंधते जा रहे थे। परिबद्ध होने जा रहे थे।

ऐसा मनोहर वेदों का गान मुनिवरों! आज तो बेटा! कुछ उच्चारण करने का समय नहीं, कोई समय था बेटा! जब इस वेद गान को हृदय से गाया जाता था तो मार्ग में विचरने वाले मृगराज भी चरणों में ओत प्रोत हो जाया करते थे। मैंने आज से पूर्व काल में, अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था कि हे पूज्यपाद! यह मृगराज आपके चरणों में है, इसका क्या कारण है? मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा था कि हे पुत्रवत्! मेरे चरणों में यह मृगराज और पक्षीगण सब शान्त है, इनका मूल कारण यह है कि जब आत्मा में इतना बल होता है, आत्मा इतनी बलिष्ठ होती है तो हिंसक प्राणी भी, अहिंसावादी बन जाता है, वह अहिंसावादी बन जाता है। अहिंसावादी बन करके अपने हिंसकपने को त्याग देता है। मेरे प्यारे! आज से

लाखों वर्षों पूर्व मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे निर्णय कराया। यह वह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अमूल्य आदेश दिया करते थे। बारम्बार यज्ञ की धारा चलती थी अन्तरिक्ष में।

मुनिवरों! जहाँ मेरे पूज्यपाद का आश्रम था आश्रम में उस महान वाणी से, उस विद्या से सुशोभित आश्रम था। जैसे मुनिवरों! वृक्ष के पुष्प आ जाते हैं, या फल वाले वृक्ष पर फल आ जाते हैं और वह वृक्ष फलों से सुशोभित रहता है, इसी प्रकार मेरे पूज्यपाद गुरुदेव के सदाचार और सतोगुण से आश्रम परिबद्ध रहता था, जिससे मृगराज भी बेटा! उस महानता के इच्छुक रहते थे, पक्षीगण भी शान्त थे, मानव कोई चला जाता तो उसका हृदय भी पवित्र हो जाता था।

मेरे भोले आचार्य जनों! वेदवाणी वह अमूल्य ज्ञान है, वेद वाणी वह महान, अहिंसावादी है, शिक्षा देता है, जिससे मानव का उत्थान हो जाता है। मुझे, मेरे प्यारे महानन्द जी! ने एक समय निर्णय कराया कि आज का संसार वेद की पोथी के पीछे है परन्तु जहाँ वेद के अनुकूल कर्म करने का विधान आता है तो वहाँ वेदवाणी से विमुख हो जाता है। परन्तु वेदवाणी की चर्चा, वेदवाणी का उच्चारण करना, उसका जीवन, उसी काल में सफल होता है जब हम उसके अनुकूल अपने आचरण को बना लेते हैं। जब तक हम अपने आचरणों को नहीं बना सकते तो इस वेदवाणीसे कोई भी लाभ न होगा। लाभ उसी काल में होता है जब मानव उसके अनुकूल, न करने से कुछ करना बहुत सुन्दर है। अरे, अधिक न करो कुछ तो करो, अपने आहार को ही ऊँचा बना लो, यह वेदवाणी का एक आदेश है।

मेरे भोले आचार्यों जनों! आज हमारा बहुत गम्भीर विषय था।

पूज्य महानन्द जीः प्रभु! था या उच्चारण करना है आपको।

पूज्यपाद गुरुदेवः उच्चारण कर रहे हैं भई! अभी तो अधिक समय है। तोमुनिवरों! आज हमारा बहुत गम्भीर विषय प्रारम्भ होने वाला है। परन्तु उसके पूर्व आज हम कुछ वार्ता और भी प्रगट करते चले जाएं। आज का हमारा वेदमन्त्र आत्मा के विषय में बड़ा सुन्दर वर्णन कर रहा था। आज के वेद पाठ में मानव के आत्मा का

प्रतिपादन किया गया है आत्मा, मानव के शरीर में विराजमान रहती है, परन्तु इस आत्मा का परिवार भी है, आत्मा का परिवार क्या है? आत्मा का परिवार बुद्धि है, मन है, और मुनिवरों! पाँच ज्ञानेन्द्रियां हैं, और पाँच कर्मे इन्द्रियां हैं और पाँच प्राण हैं। परन्तु यह सब इस आत्मा का परिवार माना जाता है। परन्तु इसी का परिवार माना जाता है, परन्तु इस परिवार को हमें विचारना है कि यह परिवार कौन कौन, क्या क्या कार्य करता है। मानव के मन में स्मरण शक्ति होती है, मन में विचारने की सत्ता होती है और कर्मे इन्द्रियों में कर्म करने की सत्ता होती है, मुनिवरों! ज्ञान इन्द्रियों में ज्ञान को पान करने की सत्ता होती है। मुनिवरों! इसी प्रकार यह बुद्धि है जो इन सबका अधिपति माना जाता है यह बुद्धि कर्मेन्द्रियो का, ज्ञानेन्द्रियों को दोनों का सबका अधिपति माना जाता है परन्तु यह अधिपति क्यों माना जाता है? अधिपति इसलिए माना जाता है, क्योंकि इसमें सबको ग्रहण करने की शक्ति होती है, प्रभु ने ग्रहण करने की शक्ति दी है इसमें, परन्तु उस शक्ति से ग्रहण करता है सत्य, असत्य, यथार्थ दोनों का निर्णय करता है। दोनों का निर्णय करके मुनिवरों! देखो, जो वार्ता होती है उसे मानो इस आत्मा के पश्चात, इस आत्मा में, आत्मा के निकट जो स्थान है, उसे हम अन्तःकरण कहते हैं। मानोदेखो, जो वाक्य बुद्धि में अंकित हुआ परन्तु बुद्धि उस वाक्य को अन्तःकरण में अंकित कर देती है, अन्तः करण वह स्थान है। जिसमें मानव के जन्म जन्मान्तरों के संस्कार विराजमान रहते हैं, परन्तु जन्म जन्मान्तरों के संस्कार इस अन्तःकरण में अंकित रहते है बेटा! देखो, इसके पश्चात यह आत्मा है। यह आत्मा इस परिवार के कारण यह मुनिवरों! बारम्बार शरीरों को धारण करता रहता है।

मुनिवरों! यदि यह परिवार न होता, तो आत्मा को संसार में आने की कोई आवश्यकता नहीं थी। परन्तु यह परिवार साथ साथ है जैसे मुनिवरों! गृहस्थ आश्रम में रहने वाला गृहस्थी, अपनी पत्नी, अपने प्यारे पुत्र आदि को त्याग करके मुनिवरों! वह वणज् करने के लिए द्वितीय राष्ट्रों में, द्वितीय प्रदेशों में रमण करता है। परन्तु उसे चिन्ता रहती है कि मुझे अपने परिवार में भी चलना है, मुझे अपने परिवार में

भी पंहुचना है, मेरे पुत्र है, मेरी पुत्री है, मेरे माता और पिता हैं, और मेरी पत्नी है, परन्तु सभी की वह चिन्ताएं सभी के कारण उसे गृह में, परिवार में आना अनिवार्य हो जाता है। चाहे उसे उस प्रदेश में कितना ही लाभ हो, परन्तु उसे इस परिवार में आना अनिवार्य होता है, क्योंकि वह क्रियावान उस परिवार से कर्म बध हो चुका है। इसी प्रकार मुनिवरों! यह आत्मा जो मानव के हृदय स्थल में विराजमान है, इस परिवार के कारण मुनिवरों! देखो, इसे आना अनिवार्य हो जाता है।

अब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि जब ये आत्मा इस शरीर को, इस परिवार को त्यागता है तो कौन कौन इस आत्मा के साथ साथ जाता है क्या द्रव्य जाता है? परन्तु मुनिवरों! हमारे दार्शनिक आचार्यों ने इसका उल्लेख देते हुए कहा है इसको विश्लेषण देते हुआ कहा इसको ऊँचा स्थान देते हुए कि जब यह इस शरीर को त्यागता है, स्थूल शरीर में कर्मेन्द्रिय रह जाती है परन्तु कर्मेन्द्रियो की जो सूक्ष्म धाराएं होती हैं, सूक्ष्म वासना होती है, वह उस अन्तःकरण में बेटा! अंकित हो चुकी है, जब इस शरीर को त्यागता है, पाँच जो कर्मेन्द्रियां हैं। उनका सूक्ष्म स्वरूप अन्तःकरण में व्यापक हो चुका होता है जब यह आत्मा इस शरीर को त्यागता है, जिसे हम सूक्ष्म शरीर कहते है मुनिवरों! उसमें पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त और अहङ्कार पाँच प्राण, पाँच प्रकृति के सूक्ष्म महाभूत मुनिवरों! देखो, इसमें रमण करते है बेटा! यह सत्रह तत्त्वों का माना जाता है, परन्तु यह इसमें रमण करते है और यह आत्मा के साथ आत्मा की स्थिति क्या होती है उस काल बेटा! देखो, उस काल में आत्मा की जो स्थिति होती है वह जो भी भावनाएं, जो भी अन्तःकरण में जो अङ्कुर अंकित हो गए हैं, उन अंकित हुए कर्मों को भोगने की इच्छा होती है। जो अन्तःकरण में अंकित हो चुका है, वह मुझे भोगना है, उसे आगे कर्म बध कर लेना है परन्तु वह इसकी इसकी धारणा होती है मुनिवरों! यह भी और भी वाक् है क्या जैसी इस शरीर में मनुष्यों की भावना होती है जैसी मनुष्यों प्रवृत्ति होती है, और जिस समय उसके प्राण शरीर से निकलते हैं, यह आत्मा जाता है उन्हीं विचारों वाली आत्माओं में अन्तरिक्ष में बेटा! यह आत्मा रमण किया करता

है।
मुनिवरों! इस अन्तरिक्ष में कई विचारों की आत्मायें रमण करती हैं एक तो वह आत्मायें हैं जो मोक्ष के निकट पहुंचने वाली होती हैं, एक वह आत्मा जो तमोगुणी होती हैं एक जो रजोगुणी होती हैं। एक वह आत्मा जो सतोगुणी होती है परन्तु सतोगुणी जो मोक्ष के निकट जाने वाली आत्मा है, उन्हे हम सतोगुणी आत्मा कहते हैं, निर्मल और पवित्र। मुनिवरों! देखो, जैसा भाव होता है, जैसे हम इस संसार में कर्म करते हैं, यदि हम देववत कर्म करते हैं तो हमारी देववत जो आत्माएँ होती है उन देववत आत्माओ में रमण करके बेटा! हमारे कर्मों के अनुसार हमारा जो देववत कर्म समाप्त हो जाता है और जो कर्म अन्तःकरण में अंकित हैं उसे भोगने के लिए संसार में आ पहुंचते हैं।
मुनिवरों! देखो, मेरे प्यारे महानन्द जी! ने मुझे एक समय वर्णन कराया था इन्होने क्या वर्णन कराया था एक समय मुनिवरों! इन्होंने कहा था कि तेरह दिवस तक अन्तरिक्ष में रमण करता है। यह तेरह दिवस का जो सिद्धान्त है, परन्तु इसको हम मान लेते है परन्तु यह मानने योग्य नहीं कहा जाता, क्यों नही कहा जाता क्योंकि यहाँ कुछ ऐसे प्रमाण मिलते हैं कि जिन्हें शरीर को त्यागते ही स्वतः ही शरीर को धारण करना अनिवार्य है और मुनिवरों! कुछ ऐसे प्रमाण भी मिलते हैं जो मुनिवरों! देखो, सौ सौ वर्ष भी अन्तरिक्ष में रमण करती हैं, आत्मा। ऐसे भी प्रमाण मिलते है, परन्तु दोनों प्रमाण मिलते हैं, परन्तु मेरा एक वचन था कि जैसी भी यहाँ भावनाएं हो, जैसे भी कर्म करते जाएंगे उसी के अनुकूल मुनिवरों! देखो, हमारी स्थिति होगी और उसी के अनुकूल हमें जन्म प्राप्त हो जाता है। और यदि हम तमोगुणी हैं, और तमोगुणी हमारे द्वारा परिवार है और तमोगुण से ही शरीर त्याग दिया है वह सूक्ष्म में, तो मुनिवरों! वह चौदह दिवस उन तमोगुणी आत्मा में रमण करके बेटा! उसे जन्म लेना अनिवार्य हो जाता है। उसे जन्म लेना होता है। परन्तु जो सतोगुणी आत्माएं होती हैं सतोगुणी आत्मा के, यदि उनके मन में यह विचार होता है कि शरीर को त्यागने के पश्चात भी मुझे संसार में अवश्य आना चाहिए तो

उसे एक मास के पश्चात संसार में आना अनिवार्य हो जाता है। और मुनिवरों! यह आत्मा ब्रह्मणो वचतीः सुप्रजा मनोति कामाः और ह कौन सी आत्मा महासतोगुणी होती है वह इस शरीर को त्याग करके बेटा! वह सौ सौ वर्ष तक विमुक्त आत्माओं के निकट बेटा! रमण करती रहती है। जैसे मुझे प्यारे महानन्द जी का मुझे प्रमाण मिलता है, महानन्द जी का प्रमाण मिलता है ऐसा, क्या इनकी आत्मा अन्तरिक्ष में रमण करती रहती है, परन्तु सूक्ष्म शरीरम् माध्य भवेति निश्चयताः यह माध्यम बना करके कोई वाक्यं भवते कर्मश्चति कर्म फलं अश्चति कर्म फल होने ने नाते यह सब कुछ कर्मबद्ध हो रहा है। परन्तु हमें इन वाक्यों में नहीं जाना। केवल वाक् यह कह रहा है ये प्रश्न हो जाता है कि जब सौ सौ वर्ष तक यह आत्म अन्तरिक्ष में रमण करता है तो क्या यह अन्तरिक्ष में निठल्ला ही रहता है? इससे कोई कार्य नहीं कराया जाता। जब दर्शन ये कहते हैं, दर्शन यह उच्चारण करता है कि बिना शरीर के यह आत्मा एक क्षण भर भी नहीं रहता, दर्शन यही कहता है परन्तु युक्ति यह कहती है, श्रुति भी यह कहती है।

परन्तु इसका उत्तर यह कि आत्मा निठल्ला किसी काल में भी नहीं रहता। क्यों नहीं रहता? मुनिवरों! देखो, जो तमोगुणी आत्मा होती है, वह तमोगुणी आत्माओं से मिलान होता है, तमोगुणी वायु में रमण करती है। और जो पूर्व जन्मों की उसकी स्मृति होती है, वह एक शृङ्गकेतु नाम की वायु होती है, उस शृङ्गकेतु नाम की वायु में वह तमोगुणी आत्मा पिरोया जाता है उसमें रमण करता है तेरह दिवस तक। अपने पूर्व जन्म की स्मृति को त्याग करके जन्म लेता है बेटा!।

मुनिवरों! देखो, यह है सिद्धान्त। आगे चलो बेटा! अब, जो सतोगुणी आत्मा होती है वह भी निठल्ली नहीं रहती। वह एक इन्द्र नाम की वायु होती है और एक मृचि नाम की वायु होती है और एक मुनिवरों! सौमभाम नाम की वायु होती है। इन तीन प्रकार की वायु में वह आत्मा रमण करता रहता है और जो वायु में पञ्च महाभूत सूक्ष्म रूपों से रमण करते हैं उन पञ्च महाभूतों पर यह आत्मा शासन करता हुआ मुनिवरों! देखो, वह शासन करता करता वह विमुक्त आत्माओं में विनोद

करता रहता है, आनन्द भोगता रहता है, और जो इस शरीर में कर्म किया, उस कर्म को भोग करके, बेटा! संसार में जन्म को प्राप्त होता है, ऐसा माना जाता है। अब बेटा! प्रश्न यह उत्पन्न होता है इसमें कि जब यह आत्मा वहां प्रकृति पर शासन करता है तो क्या यह आत्मा स्थूल है या सूक्ष्म है? क्योंकि प्रकृति पर शासन करने वाला तो आधुनिक काल के अनुसार, स्थूल होता है परन्तु जो हमारा ऊँचा यौगिक आदेश यह कहता है कि आत्मा में वह गुण अंकित हैं, जिन गुणों से इसने प्रकृति को अपने आधीन बनाया है, परन्तुजैसा सूक्ष्म स्वरूप आत्मा का हुआ और उन कर्मों का हुआ जिससे उसने प्रकृति पर शासन किया परन्तु इतनी सूक्ष्म प्रकृति बन जाती है, जितनी सूक्ष्म आत्मा है, परन्तु दोनों, एक दूसरे शासन करने लगते हैं। सुना बेटा! तुमने! आगे चल करके आत्मा भी सूक्ष्म और प्रकृति भी सूक्ष्म, अब सूक्ष्म पर सूक्ष्म शासन करता है। यहाँ बेटा! संसार में स्थूल पर स्थूल शासन करता है जैसे कृषि करने वाला वैश्य कृषि पर शासन करता है। मुनिवरों! अणु को, वायु को, अग्नि और स्थूल को जानने वाला, स्थूल को ही जानता है। सूक्ष्म वस्तु सूक्ष्म को जाना करती है। यह तुमने जाना नहीं, यह मानना ही अनिवार्य है क्योंकि यह हमारा दर्शन कहता है।

मुनिवरों! देखो, यहाँ बेटा! बहुत गम्भीरता में नहीं जाना है, आज केवल वाक्य यह चल रहा था कि आत्मा की क्या स्थिति रहती है जन्म लेने से पूर्व? परन्तु विषय तो यही था ना और इसका उत्तर आज मैंने भली भान्ति तुम्हें दिया, कि आत्मा के जन्म लेने से पूर्व वह स्थिति रहती है क्या उसके विचार संसार में आने वाले होते हैं, परन्तु उनके विचार संसार के लिए होते हैं, वह माता के गर्भ स्थल में प्रविष्ट होता है, माता के गर्भ स्थल में प्रविष्ट हुआ और माता से जन्म धारण करता है। जब माता ने पालन पोषण किया तो वह कर्म को करने के लिए उद्यत हो गया, बेटा! तो यह प्रवृत्ति रहती है।

अब मृत्यु के पश्चात क्या प्रवृत्ति रहती है? जब इस शरीर को आत्मा त्यागता है तो बेटा! इसकी क्या स्थिति रहती है? जब इस शरीर को त्यागता है, तो ऐसा विदित

होता है क्या आज तू जो यह तेरा शरीर रूपी वस्त्र था यह वस्त्र तेरा विहीन और केवल्य हो गया है और इस वस्त्र को त्यागना ही तेरा अनिवार्य है और उस वस्त्र को त्यागता है और शरीर रूपी वस्त्र को त्यागा, शरीर रूपी वस्त्र को त्याग करके वह उन आत्माओं में रमण करता है, जो उस आत्मा के विचार वाली आत्मा होती हैं। जैसे मैंने पूर्व काल में कहा है अभी अभी कहा है कि तमोगुणी आत्मा तमोगुणी आत्माओं में, सतोगुणी सतोगुणी में और रजोगुणी रजोगुणी में यह आत्मा रमण करता है। और यह आत्माओं के साथ आत्मा रमण करता है।

परन्तु एक वाक् और रह जाता है इसमे बेटा! जिस मानव का आत्मा, एक सिद्धान्त और ले लो बेटा! वैज्ञानिक चर्चा भी है और सिद्धान्त भी है जिस मानव का आत्मा बेटा! चक्षुओं के मार्ग से जाएगा यह नौ द्वार है, मानव के शरीर में जो मैने निर्णय कराए है, मुनिवरों! नौ द्वार है, नौ द्वार कौन से कहलाते है? दो चक्षु, दो घ्राण, दो श्रोत्र और एक मुखारबिन्द, उपस्थ और गुदा इन्द्रिय यह नौ द्वार हैं परन्तु दसवां द्वार योगी का होता है, जिसको ब्रह्मरन्घ्र कहते हैं। बेटा! वह दसवां द्वार कहते हैं इसको। परन्तु यह नौ द्वार होते हैं। जिसका आत्मा मुनिवरों! उपस्थ और गुदा इन्द्रियों से जाता है वह मुनिवरों! देखो, जो मल मूत्र वाला कीड़ा बनता है बेटा! अगले जन्म में। इनमें क्रीड़ा करते हैं। और जिसका आत्मा मुनिवरों! देखो, गुदा इन्द्रियों से जाता है उपस्थ इन्द्रियों से जो जाता है, इस शरीर से निकस करके, वह मल और मूत्र के कीडे बनते हैं। परन्तु उनमें वह क्रीड़ा करते हैं। मुनिवरों! जिनका आत्मा मुख से जाता है, वह बेटा! इस संसार में विषैले कीड़े बनते हैं जैसे सर्प आदि नाना विषैले जन्तु होते हैं, और भी नाना विषैले होते हैं और जिनका आत्मा घ्राण से जाता है वे अगले जन्म में मनुष्य बनते हैं बेटा! और जिनका आत्मा चक्षुओं से जाता है वह अन्तरिक्ष में विचरने वाले प्राणी बनते हैं बेटा! और मुनिवरों! जिनका आत्मा श्रोत्रों से जाता है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! आप एक वाक्य अशुद्ध उच्चारण कर गए हैं इसी समय।

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, क्या?

पूज्य महानन्द जीः भवेती श्रोत्रां भवति न चक्षुः न हिनं।

पूज्यपाद गुरुदेवः अशुद्धं भवति। तो मुनिवरों! अभी उच्चारण करते जा रहे थे क्या जो अन्तरिक्ष विचरणे वाले प्राणी हैं जिनका आत्मा इन श्रोत्रों के मार्ग से जाता है वे अन्तरिक्ष में विचरने वाले प्राणी कहलाते हैं। परन्तु जिनका आत्मा चक्षुओं से जाता है वे मुनिवरों! देखो, जलचर वाले प्राणी कहलाते हैं और मुनिवरों! जिनका आत्मा ब्रह्मरन्ध्र से जाता है बेटा! वे सतोगुणी और सत चित्त के वासी कहलाते हैं। मेरे प्यारे! आदि ऋषि मण्डल! मैने आज कुछ वर्णन किया परन्तु आज हमें इन वाक्यों से विचार लेना चाहिए कि हमारा जो यह नौ द्वार हैं, परन्तु नौ द्वारो के भी उस परमपिता परमात्मा रचयिता ने इन नौ द्वारो के भी विधान बनाएं है। बेटा! आज मेरे प्यारे! ऋषि मण्डल को विचार लेना चाहिए, हमें विचार लेना चाहिए जो घ्राण इन्द्रीय से जिसका आत्मा निकलता है वह प्राणी बना करते हैं, मनुष्य होते हैं, देवकन्याएं होती हैं। परन्तु इनमें भी अन्तर है। घ्राण में एक सूर्य एक चन्द्र स्वर होता है। परन्तु एक सूर्य स्वर कहलाता है, और एक चन्द्र स्वर कहलाता है, जिसका आत्मा चन्द्र स्वर से आत्मा जाता है वह तमोगुणी पुरुष बनते हैं बेटा! और मुनिवरों! जिनका आत्मा सूर्य स्वर से जाता है वह सतोगुणी या ऊँचे विशाल कर्म करते हैं या रजोगुणी और सतोगुणी दोनों कर्म करते हैं संसार में, और मुनिवरों! देखो, जिनका आत्मा ब्रह्मरन्ध्र से जाता है उनका आत्मा बेटा! मैने अभी अभी वर्णन किया है उनका आत्मा विमुक्त आत्मा, जो मोक्ष के निकट वाली आत्माएं हैं उनमें यह आत्मा रमण किया करता है। बेटा! वह इस संसार में जन्म लेता है किसी का उत्थान करने के लिए, किसी का उत्थान करने के लिए, राष्ट्र उत्थान करने के लिए या सामाजिक दृष्टि से उत्थान करने के लिए बेटा! देखो, नाना प्रकार के उत्थान करने के लिए जन्म लेता है। तो हे मेरे भोले आचार्य जनों! यह माता गार्गी का सिद्धान्त है बेटा! जो मैंने आज वर्णन किया।

परन्तु आज का हमारा आदेश यह चल रहा था, क्या इस शरीर को त्यागने के पश्चात इस आत्मा की क्या स्थिति होती है? और जन्म लेने से पूर्व क्या स्थिति

होती है? मैंने दोनों ही तुम्हारे समक्ष, निर्णयात्मक किए परन्तु यह विषय बहुत गम्भीर है। यह दर्शनो में भी है, दर्शनों में भी विचारने से प्राप्त होता है अन्यथा यह बहुत से वाक्य अनुभव से सिद्ध होते हैं। परन्तु हमारे यहाँ वेद की प्रणाली हमें वेद ज्ञान से इन्हें विचार लेना चाहिए, वेदों में यह सब विज्ञान हमें प्राप्त होता है।

हे मेरे आचार्यों जनों! यह आज का हमारा आदेश क्या कह रहा था बेटा! आज हमारा आदेश यह युक्तियाँ देता चला जा रहा था और दर्शनो की चर्चा करता चला जा रहा था यह आज का यह आदेश।

पूज्य महानन्द जीः तो गुरुदेव! आपका यह आत्मा ब्रह्मरन्ध्र से जाया हुआ है घ्राण से?

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य..... महानन्द जी! जो तुम उच्चारण करो वही बेटा! यथार्थ है, इसमें क्या बात है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! हमें तो कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि आपका आत्मा मुखारबिन्द से जाया हुआ है आपका।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य...... तो बेटा! तुम यह सब वार्ता विनोद की कर रहे हो, तुम विनोद की चर्चायें महानन्द जी! बेटा! यह विनोद की चर्चा बारम्बार न किया करो यह विषय विनोद का नहीं है और न यह समय ही विनोद का है।

हास्य..... मेरे भोले प्यारे पुत्रवत! तुम अंगृते विनोदं भवति आनन्दं वाक्यं भवते। बेटा! तुम हर समय विनोद की ही चर्चा करते रहते हो। इस विनोद में भी बड़ा एक आनन्द है। परन्तु संसार में जब मानव चिन्ता से विवश होता है, उस समय एक दूसरे से विनोद करने लगो, चिन्ता से विहीन हो जाओगे। चिन्ता से विहिन होते चले जाओगे। परन्तु यहाँ चिन्ता करने से कोई कार्य नहीं बनता। भावी प्रबल होती है किसी कार्य में, परन्तुसमय समय के अनुकूल प्रकृति का रूप बन जाता है और जैसा प्रकृति का रूप होता है वैसे मनुष्य के विचार होते हैं और जैसे विचार होते हैं वैसा ही संसार होता है और जैसी संसार की भावनाएं होती हैं ऐसे ही तत्त्व होते हैं जैसे तत्त्व होते हैं ऐसे ही मुनिवरों! देखो, वहाँ कार्य होने लगते

हैं, जब कार्य होते हैं तो उन कर्मों को भोगने के लिए यह सब आत्माएं आती हैं संसार में।

मुनिवरों! देखो, मेरे प्यारे महानन्द जी! उच्चारण किया करते हैं कि आज का संसार चिन्ता रत्त है, चिन्ता में लीन है, परन्तु ये चिन्ता में लीन का क्यों है क्या कारण है चिन्ता का, सबसे मुख्य चिन्ता का कारण है कि इसने आत्मा के आवेश को त्याग दिया, जब आत्मा के आवेश को त्याग दिया तो नाना प्रकार की चिन्तायें इस पर आ पहुंची। मुनिवरों! कभी हमें अपने जीवन की चिन्ताएं हैं, हमें अपने उदर पूर्ति की चिन्ताएं हैं, नाना प्रकार की चिन्ताएं है कभी राष्ट्र की चिन्ताएं हैं, यह सब चिन्ताएं क्यों हैं? इनका मूल कारण क्या है?

अरे, मानव अपनी मानवत्व को त्याग करके और जैसे इस मानव के विचार बनाता है वैसे ही वह वाक्य अन्तरिक्ष में रमण करते हैं, वह भावनाएं। और जैसी भावनाएं अन्तरिक्ष में रमण करती हैं वैसी वायु रमण करती है, वह वायु मेघों से, वैश्वानरों से और प्रकृति से उसका मिलान होता है, समूह हो करके वहीं विचार सूक्ष्म रूपों से इन पर छा जाते हैं, आक्रमण करने लगते हैं जब मेरे प्यारे! आक्रमण हो करके इनके द्वारा आते हैं और जब उनको भोगते हैं तो इन्हें कष्ट होता है। अरे, कष्ट क्यों होता है, जब तुमने यह किया है। जो तुमने किया है, उसको भोगने में कष्ट क्या? परन्तु हमें कोई कष्ट नहीं इस समय आज तुम्हें इस वाक्य को विचार लेना चाहिए।

मुनिवरों! आज मैं यह आत्मिक चर्चा, गम्भीर चर्चा क्यों कर रहा था? इसलिए कि मानव को ज्ञान होना चाहिए कि हम कौन हैं और कौन सा कर्म करना चाहिए जिससे बुद्धि प्रमरणोश्चते।

मेरे प्यारे ऋषि मण्डल! एक समय देव ऋषि नारद मुनि ने इस संसार में आ विचरण किया तो देखा कि सब की सब प्रजा गंगा स्नान को चली जा रही है। जब प्रजा गंगा स्नान को चली जा रही थी तो देव ऋषि नारद प्रजा से बोले कि हे प्रजा! तुम कहाँ जा रही हो? प्रजा बोली कि महाराज! गंगा स्नान को चले जा रहे हैं। अरे, क्यों? महाराज! हमने जो पाप किए हैं उन्हें हम गंगा में त्याग आयेंगे।

अब मुनिवरों! नारद मुनि ने विचारा कि जब गंगा प्रजा के सब पापों को अपने में धारण कर लेती है तो गंगा तो बड़ी पापनी है। वह सब प्रजा पापों को ले लेती है, अब वह बहते हुए गंगा के समक्ष जा पहुंचे और बोले कि हे गंगा! तुम बड़ी पापनी हो, महाराज क्यों? यह प्रजा तुम्हें सब पा देती रहती है और तुम एकत्रित करती रहती हो। तो तुम बडी पापिनि हो, गंगा बोली कि विधाता! मेरे द्वारा यह पाप क्यों होते, जैसे यह प्रजा मुझे पाप दे देती है ऐसे मैं इन्हें समुद्रों को अर्पित कर देती हूँ।

अब नारद मुनि महाराज बहते हुए गंगा को नमस्कार कर, वह समुद्रों के द्वार जा पहुंचे समुद्रों के चरणों में ओत प्रोत हो गएं समुद्र बोले अरे, नारद! क्या, महाराज मैं आपसे कुछ वार्ता प्रगट करने के लिए आया हूँ। अरे, क्या? महाराज! आज मैं मृत मण्डल से भ्रमण करता हुआ बह रहा था तो देखो, प्रजा गंगा स्नान को जा रही थी, मैंने प्रजा से प्रश्न किया कि कहाँ जा रही हो तो प्रजा बोली महाराज! गंगा स्नान को, मैने कहा क्यों? उन्होंने कहा कि हम सब पापों को गंगा को अर्पित कर आयेंगे। मुनिवरों! मैं गंगा के समीप जा पहुंचा और गंगा से कहा कि तुम बड़ी पापिनी हो गंगा ने कहा क्यों महाराज क्या प्रजा के पापों को एकत्रित कर लेती हो, गंगा बोली विधाता! जैसे प्रजा मुझे देती है मैं इन पापों को समुद्रों को अर्पण कर देती हूँ, अब मैं भगवन! प्रश्न करने आया हूँ कि तुम्हारे द्वारा बड़े पाप एकत्रित हो रहे हैं। मुनिवरों! समुद्र बोले कि अरे, नारद! बड़े भोले, यह पाप मेरे द्वारा क्यों होते, मैं तो इन सब पापों को एकत्रित करके मेघों को देता हूँ।

अब मुनिवरों! नारद मुनि वह मेघ मण्डलों के द्वारा जा पहुंचे और मेघों से बोले कि अरे, मेघ मण्डल! तुम तो बड़े पापी, महाराज क्यों? प्रजा अपने पापों गंगा को देती है, और गंगा समुद्रों को और समुद्र तुम्हें देते हैं और तुम्हारे द्वारा पाप एकत्रित होते हैं। मेघ मण्डल मग्न हो करके बोले कि अरे, नारद! यह पाप मेरे द्वार भी नहीं, मैं तो इन सब पापों की वृष्टि कर देता हूँ और प्रजा के पाप प्रजा के द्वार पहुंच जाते हैं। तो पाप मेरे द्वार क्यों होते।

तो मुनिवरों! देखो, यह वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय क्या है कि मानव का पाप, मानव के कार्य आता है। तो इसलिए मुनिवरों! आज आत्मिक तत्त्व जानने का कार्य करोगे तो तत्त्ववेत्ता बनोगे, मुनिवरों! यहाँ ऊँचे से ऊँचा कर्म किया जाएं जिससे आज यह प्रकृति तुम्हारे आधीन हो करके तुम्हारा जैसा तुम चाहो वैसा फल देने वाली बने। परन्तु वह कर्म न करो जिससे प्रकृति तुम्हारे ऊपर छा जाएं और छा करके तुमने वह कर्म देखो, जो तुमने किया, वह पाप मूल बन करके, प्रकृति तुम्हें देती है अपने जीवन में प्रकृति को अवसर मत दो और परन्तु परमात्मा को अवसर दो, परमात्मा की गोद में जाने का प्रयत्न करो।

तो मेरे भोले आचार्य जनो! अब हमारा यह आदेश अब समाप्त होने जा रहा है, आज मैंने संक्षेप वाक्य प्रगट किया।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! अभी तो आपका समय नहीं हुआ है।

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं बेटा! समय समाप्त हो चुका है, आज का हमारा प्रकरण ही इतना था। आज का हमारा जितना प्रकरण था उसके अनुकूल वाक्य उच्चारण किया। आज का हमारे आदेशो का अभिप्राय क्या था, आज का हमारा मूल आदेश क्या था कि हमें इस आत्मा के परिवार को विचारना है, आत्मा का जो भी परिवार है, जिसमें पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच कर्मेन्द्रिय, मन, बुद्धि और पाँच प्राण हैं। इन सभी को विचारना है, यह आत्मा का परिवार है मुनिवरों! देखो, यह सूक्ष्म रूपों से अन्तरिक्ष में रमण करता है। मानो यह सत्रह तत्त्वों का शरीर माना जाता है, जिसे सूक्ष्म कहते है पाँच ज्ञानेन्द्रिय, मन, बुद्धि, पाँच प्राण और पाँच महाभूत यह सत्रह तत्त्व हैं। मुनिवरों! इसके पश्चात एक कारण शरीर होता है जिसमें मुनिवरों! केवल ज्ञान और प्रयत्न रह जाता है। मन का सम्बन्ध भी शान्त हो जाता है, बुद्धि भी शान्त हो जाती है, ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रियां, भी शान्त हो जाती हैं, मुनिवरों! सब कुछ शान्त हो करके केवल आत्मा का जो स्वभाव है, जिसेज्ञान और प्रयत्न कहते हैं। वह होने के पश्चात उसे ही बेटा! मुक्ति कहते हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह जो मन है क्या यह मन अनादि नहीं है?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! यह मन जभी तक रहता है जब तक मानव के अन्तःकरण में कर्म हैं और कर्म या कोई वस्तु अंकित है परन्तु जब वह अंकित न रहेगी तो यह मन भी न रहेगा। मन अनादि जब तक है जब तक यह आत्मा संसार में जन्म लेने वाला है, जब तक संसार में आने जाने वाला है और जब मुक्त हो जाता है मुक्त होने के पश्चात मानो इस आत्मा से मन का सम्बन्ध पृथक हो जाता है मन का सम्बन्ध पृथक हुआ और यह आनन्द में रमण करता है।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन! जब यह आत्मा से पृथक, मन हो जाता है तो यह आनन्द को कौन अनुभव करता है? आनन्द को अनुभव करने वाला कौन है?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! आनन्द को अनुभव करने वाला यह आत्मा।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या आत्मा में भी विचार शक्ति है? क्या दुःख सुख को अनुभव करने की शक्ति मन में है या आत्मा में?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! यह मन में होती है।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन! (मुक्ति में) यह कैसे माना जाएं कि यह मन नहीं रहता वहाँ, क्योंकि वहाँ भी आनन्द अनुभव करता है तो किससे करता है?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! जब यह आनन्द में रमण करता है तो उस समय ज्ञान और प्रयत्न इसका, आत्मा के स्वाभाविक गुण रह जाते हैं।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा

जब यह स्वभाविक गुण रह जाता है इसका जो स्वभाव है, वह आनन्द स्वरूप है, और जिसका स्वभाव आनन्द स्वरूप है, वह अपने स्वभाव से आनन्द को भोगता है।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन! यह जो मन है मन को जैसे दुःख सुख को अनुभव करते हैं और यह आनन्द को वह इस स्थिति में ब्रह्मणो पृथ्वी सूक्ष्म वेती न अनुभवेति कर्मशः।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! यह सब प्रकृति का स्वरूपमाना जाता है प्रकृति का स्वरूप प्रकृति में रमण कर गया और बेटा! यह जो आत्मा निर्मल और पवित्र है यह ब्रह्म

में रमण करने लगा है, और इसके माध्यम की जो सीमा थी वह इसके परिवार की थी, वह समाप्त हो गई।

पूज्य महानन्द जीः चलो! वाक्य को मान लेते हैं, परन्तु अभी सन्तुष्टि नहीं हो पाई।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य.... बेटा! क्यों नहीं होती है सन्तुष्टि?

पूज्य महानन्द जीः भगवन! जब आप यह कहते हैं कि दुःख सुख अनुभव करने वाला मन है, तो इसमें स्वभाव, आत्मा में आनन्द के भोगने का स्वभाव कैसे माना जाएं?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! वह उसका स्वभाव है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! इससे कार्य नहीं बनेगा, आप यह कहने लगें कि सूर्य दो हैं, तो कौन बुद्धिमान स्वीकार कर लेगा, या हम कैसे स्वीकार कर लें।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! सूर्य दो नहीं परमात्मा की सृष्टि में अनन्त सूर्य हैं, तुम तो दो का उच्चारण कर रहे हो, पूर्व तुम सृष्टि विद्या को तो जानो, उसके पश्चात प्रश्न किया करो, परमात्मा की सृष्टि में असंख्य सूर्य माने गए हैं, वेद का प्रमाण है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! आप हमारे उत्तर को दीजीए कृपा करके।

पूज्यपाद गुरुदेवः हां! तो तुम्हारा आगे प्रश्न था कि मन दुःख सुख को अनुभव करता है। यह मन दुःख सुख को अनुभव तो करता है, परन्तु कौन से दुःख सुख को? जो प्रकृति से होने वाला है, जो प्रकृति से होने वाला दुःख सुख होता है और इन्द्रियों के द्वारा होता है बेटा! जो इन्द्रियो के द्वारा दुःख सुख होता है, उसे यह मन अनुभव करता है और बेटा! जो ब्रह्म में आनन्द का रमण है, आनन्द जो है वह उसमें स्वाभाविक रहता है। यह है तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर।

पूज्य महानन्द जीः धन्यवाद! हाँ! अब कुछ बात बनी, सन्तुष्टि हो गई।

पूज्यपाद गुरुदेवः यह मन प्रकृति से बनता है और प्रकृति के दुःख सुख को अनुभव करता है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह मन परमात्मा को अनुभव नहीं करता?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! इस मन का सम्बन्ध, मिलान जो रहता है, वह आत्मा से

रहता है, आत्मा का मिलान परमात्मा से रहता है, मन का मिलान आत्मा से और आत्मा का मिलान, परमात्मा से परन्तु जब तक इसे वह स्थिति जीव को प्राप्त नहीं हो जाती है आत्मा को, तब तक यह आत्मा के साथ साथ रहता है। और जब वह अमृती अब्रहे असुता वह जो कर्म बद्धता है प्रकृति में जो बद्धता है, परन्तु कर्मों में जो द्वितीय बद्ध हो चुका है वह बेटा! समाप्त हुई और मन का सम्बन्ध कर्म बद्ध के साथ साथ रहता है जब तक आत्मा के साथ प्रकृति का मिलान है। परन्तु जहाँ चैतन्य का मिलान हुआ, आत्मा का सम्बन्ध स्वयं छूट जाता है बेटा! जैसे मेरी कोई भोली माता गर्भवती है गर्भ से है। परन्तु जब उसका गर्भाशय नौ मास का उसका गर्भाशय परिपक्व हो जाता है तो जिन नाड़ियों से जो सम्बन्ध रहता था, जैसे पश्चम नाम की नाड़ी माता की लोरियों से चलती है और पश्चम नाम की नाड़ी का सम्बन्ध बालक की नाभि के द्वारा होता है, और माता की लोरियों में जो रस बनता है, वह पश्चम नाड़ी के द्वारा बालक के उदर में जाता है, परन्तु उससे माता का गर्भाशय बढ़ता है। परन्तु जहाँ उसका गर्भाशय पूर्ण हुआ इन नाड़ियों का सम्बन्ध बेटा! स्वयं छूट जाता है। इसी प्रकार यह आत्मा, जब परमात्मा के गर्भ में चला जाता है तो प्रकृति से इसका सम्बन्ध स्वयं छूट जाता है।

यह है बेटा! आज का हमारा आदेश, अब आदेश समाप्त हो गया है, कल समय मिलेगा तो शेष वार्ता कल होगी।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन! आज का आदेश बहुत प्रिय और सुन्दर लगा। परन्तु कल क्या आदेश होगा?

पूज्यपाद गुरुदेवः कल महानन्द जी जैसा तुम कहो बेटा! उसी के अनुकूल।

पूज्य महानन्द जीः कल भगवन! हमारी तो यह इच्छा है कि कल आप योग के सम्बन्ध में कुछ वाक्य प्रगट करें, कि मनुष्य योगी और ब्रह्मरन्ध्र से जो आत्मा जाता है, वह कौन सी युक्तियों से और कौन से कर्मकरने से जाता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा तो बेटा! कल जैसा समय होगा उसके अनुकूल वाक्य प्रगट करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः वह तो भगवन! समय आता ही रहेगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ बेटा! आता रहेगा तो वाक्य भी प्रगट होते रहेंगे। अच्छा अब शेष वाक्य कल।

पूज्य महानन्द जीः तो गुरु जी! कल हमारे प्रश्नों का उत्तर दे देना कृपा करे।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटा! कल जैसा समय आयेगा, देखा जायेगा, अब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है, कल समय मिलेगा कल और भी श्रेष्ठ वार्ता प्रगट की जाएगी, अब हमारा वेद पाठ होगा, इसके पश्चात वार्ता समाप्त हो जाएगी। ओ३म् रेवहानि ऋषाणा प्राधी वर्णाश्चति मानं देवं रथी रेणां प्रजाहं ते मयाः माणं तमी शन्नो इन्द्रा गृतो मनाह्म देवाः। ओ३म् मानं भवि तन्नो बृहते देवं शना प्राम् णाति देवाः मानाहम्। ओ३म् मणि तन्नो गृति अस्वा मनो तामा ते इधा अग्ने वाचन्नं ब्रह्मणा देवाः रेधि ता माहम्। ओ३म् ब्रह्मणोति देवम्। वेद पा।

3. 651031-दीपावली आहार, व्यवहार और विचार ऊँचा होना चाहिए

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पुनः की भान्ति, कुछ वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, आज की हमारी ये पवित्र वेद वाणी, हमारा हृदय, परमात्मा का अनुपम ब्रह्माण्ड है, यह इतनी पवित्रता में परणित है, परन्तु जब, परमात्मा मानव के जितना निकट है, परन्तु दृष्टिगोचर नही आता। वह प्रभु कितना विचित्र है, और मानव की दृष्टि कितनी विचित्र बन चुकी है, जो कि आत्मा और परमात्मा का बहुत घनिष्ट सम्बन्ध है, वही आत्मा हमारे इस शरीर में, परन्तु प्रभु के दर्शनों का अभिलाषी है, दृष्टिगोचर नही आता है वह प्रभु, ये प्रभु ने कितने सुन्दर नेत्र रचे, कितनी सुन्दर वाणी, कितना सुन्दर यह गृह है। परन्तु प्रभु, इनसे कितना दूरी और कितना निकट है, कितनी विचित्रता है, उस प्रभु की महिमा में। बेटा! आत्मा, परमात्मा कितने घनिष्ट हैं। परन्तु इस शरीर में आने के पश्चात, प्रतीत नही होता, वह प्रभु कितना दूरी चला जाता है हमसे, यदि हम गम्भीरता से, विचार विनिमय करते हैं, तो वह प्रभु हमारे बहुत निकट भी है, परन्तु यहाँ हमारे नेत्रों में ऐसी स्थूलता आ जाती है, क्या हम सूक्ष्म वस्तु को दृष्टिपात नही कर सकते, उनके लिए बेटा! सूक्ष्म तन्तुओं को जानने के लिए, हमारे नेत्रों में यह दर्पण है, जिससे परमात्मा को दृष्टिपात किया जाता है, जिसको सूक्ष्म से सूक्ष्म परमाणु को जाना जाता है, इन नेत्रों को बेटा! शनै शनै, हमें जल के द्वारा, जैसे मुनिवरों! पाप शुद्ध होता है, इसी प्रकार ज्ञान रूपी जल के द्वारा, इन नेत्रों की दृष्टि को सूक्ष्म बनाना होता है क्योंकि इसमें प्रकृति के आवेश आने ही है।

ज्ञान का स्वरूप

बेटा! मैं आगे का विषय तो कल ही वर्णन करूंगा, महानन्द जी की एक प्रेरणा मुझे आज प्राप्त होती चली जा रही है, परन्तु विषय, तो बहुत ही सुन्दरता से, आज स्मरण आ रहा था, इसको सूक्ष्म सा और आगे ले जाना चाहता हूँ। मुनिवरों! ये नेत्र हमें शुद्ध बनाने होंगे, घ्राण हमें ऊँची बनानी होगी, परन्तु इनको ऊँचा बनाने के लिए, हमें एक वस्तु की आवश्यकता है, और वह क्या है? ज्ञान। ज्ञान किसे

कहते हैं? परन्तु ज्ञान का अभिप्राय यह नही है, कि हम पोथी की पोथियों को एकत्रित करले, उनका स्वाध्याय करते रहें, तो उनसे ज्ञान प्राप्त हों। मेरा अभिप्राय यह भी नही की, उन्हें न स्वाध्याय किया जाए। परन्तु ज्ञान किसे कहते है? वह बहुत सूक्ष्मसा शब्द है, जिसे कहते हैं ज्ञान। परन्तु ज्ञान कहाँ है? और क्या है? वेदों की पोथी में भी ज्ञान है। परन्तु आरण्य संहिताओं में भी ज्ञान है, परन्तु ज्ञान के ऊपर आचरण करना तो ध्यान है, यहीं तो लेखनी बद्ध की है, ऋषि मुनियों ने। यदि उनको अपने जीवन में धारण किया जाएं, जीवन में धारण करने से ही हमारी सूक्ष्म और तीव्र बुद्धि बनती है। अन्यथा स्वाध्याय करते रहो, दूसरों को घृणा की दृष्टि से पान करते रहो, उसको ज्ञान नही कहते, ज्ञान किसे कहते हैं? बेटा! महर्षि पतञ्जलि और मुनिवरों! महर्षि जमदग्नि का एक शब्द है, एक समय महर्षि जमदग्नि से उनके पुत्र ने एक प्रश्न किया, उन्होंने कहा हे पिता! ज्ञान किसे कहते हैं? तो जमदग्नि ने कहा कि ज्ञान शब्द एक बिन्दु है, और वह हमारे शरीर में भी एक बिन्दु है, जिसे प्रकाश कहते हैं, उस प्रकाश को जानने का नाम ज्ञान कहलाता है। इसका अर्थ क्या हुआ, ज्ञान, ज्ञान भी कहते हैं, परन्तु उसी के आश्रित हो करके जमदग्नि ने यह कहा क्या मैने तो स्वयं इतना ही जाना है, ज्ञान तो बहुत ही सूक्ष्म है। मेरे आदि आचार्यों जनों! हमें संसार में पवित्रता लाने के लिए, उच्चता लाने के लिए, उस ज्ञान को प्राप्त करना है, जिससे हमारे जीवन में हम धारण करते चले जाएं, उसी का नाम ज्ञान कहलाता है।

दीपावली

आओ, अब हम महानन्द जी के वाक्यों पर चले जाएं, आज उनकी प्रेरणा हमें, इन्होंने हमें द्वितीय काल में भी प्रश्न किया, वह इनके मनों की भावना, कल्पना थी, इन्होंने कुछ प्रभु के विषय में, अपनी इच्छाएं प्रगट की, मुनिवरों! दीपावली और भगवान कृष्ण में जो गोवर्धन इत्यादियों का पालन किया, आज मैं बेटा! ऋषि मुनियों के वाक्यों पर ले जाना चाहता हूँ। इस वाक् को, हमारे यहाँ दीपावली का एक पर्व होता है, इसे महाभारत के काल से पूर्व, इसे दीप कहा जाता था, दीप

ग्रावली मानो दीपावली भी कहा जाता था, किन्हीं किन्ही स्थानों में, दीपावली का अभिप्राय क्या था? जो सर्व भूमण्डल में दीपावली का पर्व मनाया जाता है, आज तो प्रतीत नही कहाँ कहाँ मनाया जाता है, पातालपुरी में क्या, नाना राष्ट्रों में दीपावली को, राजा, महाराजा सभी इसका स्वागत किया करते थे। दीपावली का अभिप्राय यह है, जिसमें प्रकाश को लिया जाता है। भगवान राम से पूर्व, इसका कुछ और रूप था, भगवान राम से पूर्व इसका यह रूप था कि हमारे यहाँ दो पर्व माने जाते हैं, एक होली का पर्व होता है, होलिका का पर्व, एक दीपावली पर्व होता है। इसमें लक्ष्मी का अवतरण भी होता है। परन्तु वह कृषि करने वाले जन, अब शरद ऋतु में, पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना की जाती है, पृथ्वी के गर्भ में पृथ्वी की स्थापना की, तो वह किसी काल में यह नही विचारता, कि इसका कितना फल प्राप्त किया, वह जब इस पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना कर देने के पश्चात, प्रभु से याचना की जाती है बेटा! क्या उसमे पुरोहित जन, आचार्य जन प्रत्येक गृह में आओ, या वाणिक आओ, ऊँची ऊँची वनस्पतियों को एकत्रित करो, और सामग्री बनाओ, परन्तु वेदों के साम वेदाः, जो उपासना काण्ड है, उस उपासना काण्ड की उपासना करो यज्ञ और सामग्री के द्वारा देवताओं की, कहा क्यों? क्योंकि कृषि करने वाले वैश्य जन सब, जो भूमि में बीज स्थापित, स्थापित किया जाता था, स्थापित, उसमें से कुछ भाग को ले लिया जाता है और उस भाग को ले करके उसकी सबकी सामग्री बनाई जाती है। वनस्पतियों को सबको एकत्रित करके, सुन्दर सामग्री बना करके यज्ञ किया जाता है, प्रभु से याचना की जाती है, हे प्रभु! हमने जो पृथ्वी के गर्भ में, जो भी अन्न इत्यादि इसके गर्भ में स्थापित कर दिया है बीज, यह हमारे लिए सुन्दर हो, यह हमारे राष्ट्र के लिए, मानवत्व के लिए लाभदायक हो, मुनिवरों! यह सुन्दर रूपों से उपासना की जाती है। मानव वैश्य जन सब यज्ञशाला के निकट विराजमान होते हैं, पुरोहित जन, राष्ट्र गृहणी मेरे राष्ट्र में अन्न हो, जिससे मेरे राष्ट्र में अन्न की सूक्ष्मता न रहे। जब राजा, राष्ट्र गृहणी, उनकी पत्नी, उनके प्यारे पुत्र, पौत्र इत्यादि सब एकत्रित हो करके, यज्ञन

करते थे राजा के भाव, वह पुरोहित, भ्रमण प्राणी अति आहार अस्तुते राजनाः वह पुरोहित उसके अन्तःकरण में ध्यान करने वाले, ज्ञान का भरण कर देते थे। परन्तु देखो, दीपावली आई, तो उस तक आप कोई भी अशुद्ध कार्य न करो, यज्ञ करते रहो, मुनिवरों! देखो, यह हमारे यहाँ प्राचीन एक संस्कृति का प्रतीक है। आज मैं उस ऋषि प्राचीन मुनियों की परिपाटी को ले करके, जब हम चलते हैं। तो हमारा हृदय गद गद होने लगता है। हमारे हृदय में एक मानवता प्रायः आती है, एक नवीन जीवन आता है, इस ग्रीष्म ऋतु में, क्योंकि यह ग्रीष्म ऋतु हमें अमृत देती है, हमे अमृत देती है, स्वास्थ्य को सुन्दर बनाती है।

पूज्य महानन्द जीः इसको ग्रीष्म ऋतु ही क्यों कहते हैं?

कृषि की पवित्रता

पूज्यपाद गुरुदेवः परन्तु वाक् यह अपने अपने गृहों में उपासना पति सहित, पत्नी सहित, विराजमान हो करके परमात्मा की उपासना करनी है। हे परमात्मन्! हमारे कृषि को पवित्र बना, हमारी कृषि लाभदायक हो, इसमें किसी प्रकार का ऐसा परमाणु या किसी प्रकार का ऐसा स्वांग न छूए, जिससे यह नष्ट हो जाए। मुनिवरों! देखो, यह उपासना की जाती थी, इसके उपरान्त मानो यज्ञशाला में विराजमान हो करके, अनुसन्धान किया जाता था। अनुसन्धान किया जाता है, कि हमें अब इस कृषि को उपज करने के लिए, क्या क्या साधन जुटाने हैं, हमें पृथ्वी में इसके गर्भ में, बीज तो स्थापित कर दिया, अब इस पृथ्वी के लिए कौन सा खान पान होना चाहिए? जिससे इसके गर्भ में जो कृषि उत्पन्न हो वह महान और विशाल हो, ऊँची हो, और अधिक हो।

कृषक की भूमि का खान पान

मुनिवरों! उसके लिए उसी का प्रतीक हमारे यहाँ, परम्परागतों से उसके पश्चात अनुसन्धान किया जाता, अनुसन्धान करके यह विचार विनिमय किया जाता, उसके लिए, ऊँचे से ऊँचा उसका खान पान होना चाहिए पृथ्वी का, वास्तव में पृथ्वी का खान पान क्या होता है? पृथ्वी का खान पान, समय के अनुकूल उसको जल की

वृष्टि, समय के अनुकूल, उसको मुनिवरों! देखो, उसको गो का, मुनिवरों! गो अश्विनी मानो देखो, जो गो, खा करके, निगलकर, आहार के लेती है, चाट लेती है, उसको हमारे यहाँ खाद्याम् ग्रणा अस्ति आपांचात किया जाता है। उसको (गोबर को) संग्रह, संचित्त करने के पश्चात मानो उसको पृथ्वी में भू में स्थापित किया जाता है, जिससे मुनिवरों! देखो, पृथ्वी उत्तम अन्न उत्पन्न हो, और अधिक से अधिक हो, राष्ट्र में अन्न की सूक्ष्मता न रहे। मुनिवरों! अब अनुसन्धान करके और एक समारोह मनाया जाता है। सभी विद्वानों का, बुद्धिमान, वैज्ञानिकों का, निर्णय करो, कि पृथ्वी के लिए कौन सा अन्न देखो, अन्न को उपज करने के लिए, हमारे लिए कौन सी पृथ्वी के लिए, खान पान होना चाहिए।

पवित्र सन्तान

जैसा मुनिवरों! मेरी पवित्र माता, जब गर्भस्ति हम जैसे पुत्र, माता के गर्भ में होते हैं, तो माता के लिए हमारे बुद्धिमानो ने सुशील ऊँचा और स्वस्थ बालक को उत्पन्न करने के लिए, बुद्धिमानो ने एक चुनौती दी, और यह चुनौती दी कि माता को गर्भवती होने के, पश्चात क्या आहार, कौन सा आहार, पाना चाहिए देखो, जिससे उससे गर्भ से सुन्दर बालक उत्पन्न हो। मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा आचार्यों का, वेदों और संहिताओं में जो वर्णन होता है, वह बड़ा विशेष और सुन्दर माना जाता है। ऋषि मुनियों ने कहा भई! देखो, उनके लिए, सबसे विशेष गो दुग्ध होना चाहिए। यह गो दुग्ध मुनिवरों! गो का दुग्ध, घृत को दूहने के पश्चात, माता के गर्भ से विशाल बालक का जन्म लेता है, उसका स्वास्थ्य भी सुन्दर होता है, मुनिवरों! और भी जितने बालक होते हैं, उनको पाना ही मुनिवरों! देखो, सुन्दर और सुशील गृह में जन्म लेता है। इसी प्रकार आवृत्तियों में पृथ्वी की तुलना की है, कि जैसे गो दुग्ध को पान करने से, हमारा श्वांस ऊँचा होता है। तो गो का, अप्रे अस्ता त्यागा हुआ जो मल होता है। जो गोबर होता है उसको पृथ्वी की में स्थापित करने से अन्न उपज अधिक होता है। मुनिवरों! जो हमारे बुद्धिमानो ने दो प्रकार की उपज हमारे यहाँ होती है, एक उपज मेरी पवित्र माता, जिसको हम शकुन्तका कहते हैं।

शकुन्तका वास्तव में श्री, लक्ष्मी का नाम भी शकुन्तका कहा जाता है, परन्तु उस मेरी पवित्र माता का नाम भी शकुन्तका है। जो बेटा! शास्त्र, दर्शनों के अनुकूल, अपने गर्भ से प्यारे पुत्र को जन्म देने वाली होती है। उसको भी हमारे आचार्यों ने आदरणीय, जैसे पृथ्वी को माता कहा जाता है, ऐसे ही उस गर्भाणि को माता की दृष्टि से पान किया जाता है। क्योंकि उसकी उपज होती है, बुद्धिमानो की उपज होती है, मुनिवरों! माताओं को उन पुत्रों की उपज नही करनी चाहिए, जिसका पृथ्वी पर आ करके एक भार बन जाए।

जीवन में पुरूषार्थ

वह देखो, मुनिवरों! भगवान कृष्ण ने भी कहा है, क्या, जो अयोग्य मनुष्य होता है, जो अपने जीवन में पुरूषार्थ करना नही चाहता, केवल कर्म की कसौटी पर, अपने जीवन को निर्भर करना जानता है, वह कोई मनुष्य नही होता, उस मनुष्य का भार होता है, इस पृथ्वी पर। अपने जीवन में जो मनुष्य पुरूषार्थी नही होता, आलस्य होता है, प्रमादी होता है, मानो उसके द्वारा त्याग और तपस्या नही होती, उस मनुष्य का इस पृथ्वी पर भार होता है। उन मनुष्यों को संसार में जीवन धारण करने का अधिकार नही होता उन मनुष्यों को। मेरे आचार्यों ने ऐसा ही कहा है, मुनिवरों! इसी प्रकार मेरी पवित्र माता को हमारे प्राचीन काल में जब भगवान राम से पूर्व का काल था, महाराजा सूर्य वंश से ऊँचा जो काल था, परन्तु उसमें ऋषि मुनियों की एक परिपाटी चली आई और वह यह परिपाटी थी, गृह गृह में पुरोहितपने का कार्य करना, परन्तु उन मेरी पवित्र माताओं को ऊँचा ऊँचा उपदेश दे करके, उनसे ऋषि बालक जन्म लेते। परन्तु जमदग्नि जैसे और भी मुनिवरों! देखो, यहाँ महर्षि ध्रुन्द्री, जैसे नेत्रों का हीन भी कोई पुत्र होता, तो वह भी मुनिवरों! देखो, उसके हृदय में, माता विद्या का भरण कर देती, और माता उस विद्या का भरण करने के पश्चात, वह माता का ऋणी बालक कहलाता था। ऋणी बालक मुनिवरों! वह ऋणी होता है, और जो अयोग्य बालक होता है, जो उत्पन्न होता है, माता के गर्भ से, वह अयोग्य हो, तो जानो, माता का जीवन भी व्यर्थ और उसका

पृथ्वी पर भार होता है।

गो दुग्ध

मेरे आदि आचार्यों जनों यह ऊँचा बालक कैसे उत्पन्न होता है? जब मुनिवरों! माता गो दुग्ध का पान करती है, जैसे पृथ्वी में गो के मल को स्थापित करके, उससे शुद्ध और भूमि में उपज उत्पन्न की जाती है अधिक, इसी प्रकार गो दुग्ध के पान करने से अधिक ऊँचा बालक, बुद्धिमान बालक जन्म लेता है। हमारे यहाँ परम्परा से मुनिवरों! देखो, आज से नही, ये परिपाटी ऋषि मुनियों के काल से चली आई। भगवान विष्णु इत्यादियों ने इस परिपाटी को निर्णय किया।

विष्णु उपाधि

हमारे यहाँ सबसे पूर्व भगवान मनु जी के कथानानुसार, सबसे पूर्व यहाँ विष्णु उपाधि मानी जाती है विष्णु उपाधि जो सबसे प्रथम राजा, उसी का नाम विष्णु कहलाता था। मुनिवरों! यह मनु जी से पूर्व एक परिपाटी थी, भगवान मनु जी से पूर्व यह परिपाटी थी क्या, राष्ट्र तो होता नही, सेना नही होती थी, मुनिवरों! वहाँ और भी राष्ट्र के अधिपति नही होते, परन्तु क्या होता था, कि विष्णु राष्ट्र होता था। विष्णु राष्ट्र क्या होता है? विष्णु से कोई भयभीत तो होता नही था, उसमें केवल कर्तव्य की प्रणाली की शिक्षा थी, कर्तव्य प्रणाली की शिक्षा को, मुनिवरों! देखो, सब आचरण करने वाले, उसको हमारे यहाँ विष्णु राष्ट्र अहा! भगवान मनु जी से पूर्व यह था।

लक्ष्मी पूजन

भगवान मनु जी ने आगे चलकर राष्ट्र की प्रणाली को, मैं पूर्व उच्चारण भी कर चुका हूँ। आज तो केवल हमारे यहाँ महाराजा विष्णु ने यह परिपाटी संसार में निर्मित की, क्या लक्ष्मी का पूजन करो, कौन सी लक्ष्मी का पूजन करो? लक्ष्मी कहते हैं, हमारे यहाँ प्रकृति का नाम भी लक्ष्मी कहलाता है, प्रकृति का नाम लक्ष्मी कहलाता है, इस प्रकृति की भी पूजा करो, क्योंकि इस प्रकृति से हमारा यह शरीर बना हुआ है, यह प्रकृति से बना हुआ है, हमारे नेत्रों में, जो भी निर्णीत किए हुए यन्त्र

है, वह सब प्रकृति के धातुओं से बनते हैं। यह सब प्रकृति से उत्पन्न होते हैं, मानो देखो, अणु और महा अणु भी प्रकृति से उत्पन्न होते हैं, तो उसका पूजन करो, तो हमारे यहाँ दीपावली और दीपावली को हमारे यहाँ देखो, उसका पूजन होता है। इसका परम्परागतों के अनुकूल हमारे यहाँ लक्ष्मी का पूजन किया जाता है, लक्ष्मी के पूजन का अभिप्राय यह कि इसका पूजन करो, आज से हमें निर्णय करना है, दीपावली के दिवस यह जैसे प्रकृति जो कुछ हमें प्रकाश प्रतीत हो रहा है। यह भौतिक प्रकाश यह सब प्रकृति का प्रकाश है। जैसे प्रकृति हमें प्रकाशित तत्वों हमारे मानव शरीर में ओत प्रोत किए हैं, आज हमें उन तत्त्वों को जानना, उसी पर अनुसन्धान करना है। उसी से हमें अपने जीवन को ऊँचा बनाना है, लक्ष्मी का अभिप्राय यह, कि आज हमें वह प्रयत्न करना चाहिए, आज प्रभु की याचना करते हुए, लक्ष्मी का पूजन करो कि हम लक्ष्मी का दुरूपयोग नही करेंगे, लक्ष्मी राष्ट्र नायक होती है, राष्ट्रनायक कौन होती है? लक्ष्मी होती है। जिस राजा के राष्ट्र में लक्ष्मी नही होती, उस राजा का राष्ट्र भी नही होता, मानो राजा के राष्ट्र में लक्ष्मी होनी चाहिए। अब लक्ष्मी का पूजन होना चाहिए, प्रत्येक गृह में, प्रत्येक मेरे माता पिता क्यों इसका अभिप्राय यह कि बिना लक्ष्मी के हमारा कार्य नही चलता। बिना लक्ष्मी के हमारे जीवन का लक्ष्य पूरा नही होता, हम दान नही कर सकते, हम यज्ञ नही कर सकते, मानो संसार का जितना भी कार्य है, हम उच्चारण नही कर सकते, हम नेत्रों से दृष्टिपात नही कर सकते, मुनिवरों! हम अपने श्रोत्रों से कोई वाक् श्रवण नही कर सकते, यह सब प्रकृति का, लक्ष्मी का एक चमत्कार कहलाता है। इस चमत्कार की हमें पूजा करनी है, परन्तु इसको हमें अच्छी प्रकार पूजन करना है, मुनिवरों! पूजन क्यों किया जाता है? आज हम हमारे द्वारा यह प्रश्न आता है कि पूजन करने का अभिप्राय यह नही, हम आठो भुजों को एकत्रित करें, उसके आगे प्रार्थना, इसका यह अभिप्राय नहीं है हमें नियम बनाना है कि हमें इस लक्ष्मी का दुरूपयोग नही करना है, हमें कही दुरूपयोग नही करना है, हमें दुराचारों में लक्ष्मी को प्रयोग नही करना है। हमें वैदिक प्रचारों में, हमें यज्ञ कर्मों में परमात्मा

की प्रार्थना में ब्राह्मणों के सत्कार में बुद्धिमानो के और जहाँ भी हमारे लिए अधिक से अधिक कल्याण होता हो, हमें वहाँ लक्ष्मी को वहाँ लगाना है। वहीं से प्रयोग में लाना है। आज के दिवस मुनिवरों! देखो, इसका एक नियम बनाया जाता है, इसके भाग बनाए जाते हैं लक्ष्मी के, जो भी लक्ष्मी गृह में होती है, उसके भाग बनाए जाते हैं, कितनी लक्ष्मी मुझे परोपकार कार्य में लगानी है, कितनी लक्ष्मी मुझे अपने व्यापार में परणित करनी है, कितनी लक्ष्मी मुझे राष्ट्र के लिए अर्पित करनी है। इतनी लक्ष्मी मुझे पृथ्वी के लिए अर्पित करनी है। क्योंकि जिससे पृथ्वी में अन्न उत्पन्न हो। तो मुनिवरों! देखो, यह सब कुछ हमारे लिए लाभदायक कहलाता है।

आधुनिक काल लक्ष्मी का दुरूपयोग महानन्द जी

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव! आधुनिक काल में तो लक्ष्मी का कुछ और ही किया जाता है। आधुनिक काल में तो भगवन! आज के दिवस क्या, कल के दिवस क्या भगवन! इस लक्ष्मी का ऐसा दुरूपयोग क्या, भगवन! आधुनिक काल में उसे जुए की दृष्टि से कहा जाता है, और भी शब्द आधुनिक काल में प्रचलित है, मैं तो उनको शिक्षित नही कहा करता हूँ, परन्तु आधुनिक काल में वो शिक्षित कहते है, उनको आधुनिक काल में थलेश कहते हैं, यह तो प्रभु! इसको अच्छी प्रकार नही ज्ञान कराया जाता, परन्तु उसको और ही कुछ उच्चारण किया जाता है, तो लक्ष्मी का आधुनिक काल में इसका नियम बनाने के पश्चात इसका दुरूपयोग किया जाता है।

दीपावली का पर्व

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटा! तो मुनिवरों! अभी अभी मेरे प्यारे महानन्द जी! कुछ मूर्खों वाली वाक् प्रगट कर रहे थे, परन्तु इससे मुझे अधिक प्रयोजन नही, केवल अपने विचार प्रगट करूं, मुनिवरों! हमारे यहाँ प्राचीन प्रणाली, जो प्राचीन प्रणाली है, परन्तु वह इस प्रकार चली आई, आज हमें उस प्रणाली को अपनाना है जो प्रणाली हमारे ऋषि मुनियों की नियुक्त की हुई है, वह विशेष कहलाई जाती है,

परन्तु आज हम उस प्रणाली को अपनाते चले जाएं, जिससे हमारी दीपावली, हमारे जीवन में, एक पवित्र ज्योति जलती रहे, पवित्र ज्योति जो हमारे जीवन में जलते रहेगी, तो हम दीपावली का पर्व मनाने के अधिकारी कहलाएंगे। जिसका अभिप्राय यह नही, कि यह दीपावली यह किसी एक राष्ट्र में अपनाई जाती हो, यह दीपावली प्रत्येक राजाओं के राष्ट्र में अपनाई जाती। इसके उपलक्ष्य में सभी कुछ हम अपने अपने जीवन में कुछ न कुछ शिक्षा प्राप्त करते हैं, मानो कृषि करने वाले वैश्य जन यज्ञ करते हैं और यज्ञ करते हैं, क्यों? क्योंकि देखो, इस दिवस यह पर्व इसीलिए मनाया जाता है, क्या कृषि, भूमि के गर्भ में हम अन्न की स्थापना कर देते हैं। इसमें बीज की स्थापना कर देते हैं, और देखो, सबसे निवृतहो करके अब प्रभु से याचना करते हैं, प्रभु! जो पृथ्वी में अन्न स्थापित किया है, यह हमारे लिए लाभदायक हो, राष्ट्र के लिए, ऐसी अनुपम कृपा करो, समय समय पर वृष्टि करो, समय समय पर बुद्धिमानो की अनेक याचनाएं बेटा! कोई महत्वों के द्वारा परम पवित्र पुनीत अवसर और पुनीत दिवस का निर्माण किया जाता है। हमारे यहाँ यह केवल एक पुनीत में निर्माण होता रहता है।

गोवर्धन

आज मैं उस दिवस पर आ पंहुचा, जैसा महानन्द जी मुझे कुछ वाक् भी प्रगट करने हैं, आज वह दिवस है, जब भगवान कृष्ण ने देखो, गोवर्धन की पूजा की, गोबर एक धन कहलाया जाता है, गोबर एक गो का मल कहलाया जाता है, उसको गोवर्धन कहते हैं। धन का अभिप्राय है इससे हम कृषि में अधिक से अधिक प्रतिस्थापित करने से, इससे धन उत्पन्न होता है, मानो आज भगवान कृष्ण ने इस उपलक्ष्य में, आज के दिवस मानो देखो, इन्द्र को भी निमन्त्रण। इन्द्र ने कहा देखो, वहाँ इन्द्र की पूजा होती थी, गोवर्धन पर देखो, वह एक स्थान भी है, मानो जो वृन्दावन के रास्ते भगवान कृष्ण के जहाँ जन्म भूमि परन्तु उसी के द्वार पर मानो देखो, वह एक स्थान गोवर्धन, जहाँ इन्द्र की पूजा होती है। इन्द्र की पूजा होती है।

गऊओं की पूजा

मुनिवरों! इन्द्र की पूजा हुआ करती थी, भगवान कृष्ण से पूर्व, इन्द्र की पूजा जब इन्होंने बेटा! सब मानो देखो, गऊंओं को एकत्रित किया, और गऊंओं की पूजा की गई, गोर्वधन पर वृन्दावन के मानो देखो, सभी उस पर्वत पर आ पंहुचें, और वहां एक सुन्दर गऊओं की पूजा होने लगी। गऊंओं के चरणों को, भगवान कृष्ण का यह कार्य रहता था, कि भगवान कृष्ण प्रत्येक गऊं के दुग्ध को पान करते थे, मानो एक एक रूप में, उनके दुग्ध को पान करते, उन्हें निर्णित किया करते थे, क्योंकि भगवान कृष्ण अपने जीवन में एक बहुत ऊँचे वैज्ञानिक और अपने जीवन में अनुसन्धान करना उनका कार्य था यह। सबसे पूर्व उन्होंने यही अनुसन्धान किया, अपने राष्ट्र में अपने समाज में, प्रजा में हमें सबसे यह पूर्व विचारना है कि हमारे राष्ट्र के लिए, हमारे जीवन के लिए, स्वास्थ्य के लिए, सबसे ऊँची वस्तु क्या है? सबसे ऊँची वस्तु यदि कोई संसार में, गृहस्थी के आश्रम में विचारने के लिए तो अपने स्वास्थ्य के लिए है, जिस गृहस्थ में, जिस राजा के राष्ट्र में स्वास्थ्य ऊँचा होता है, स्वस्थ व्यक्ति होते हैं, वहाँ प्रशंसा होती है। भगवान कृष्ण ने सबसे पूर्व यह कार्य किया, तो गोवर्धन पर एक उन्होंने एक समाज एकत्रित किया, उस समाज में गऊंओं को एकत्रित किया, भगवान कृष्ण का यह आदेश था, कि भई! पूजन करो, किसका पूजन करो? गोवर्धन का गऊंओं की पूजा करो। गऊंओं की पूजा करने से आज हमारा स्वास्थ, हमारी मानवता, इससे ऊँची बनेगी, इसीलिए गऊंओं का पूजन किया गया। मुनिवरों! देखो, भगवान कृष्ण ने सबसे पूर्व देखो, गऊंओं का पूजन किया।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव! आधुनिक काल में गऊंओं का पूजन किया जाता है।

भगवान कृष्ण की गो सेवा

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, भई! तुम सुनों, जो वाक् उच्चारण हुआ उसको सुनों, श्रवण करो। तो मुनिवरों! ब्रह्मामे कस्मासि गो अस्वानि मुनिवरों! गऊंओं का पूजन करने से हमें यह सब कुछ प्राप्त हो जाएगा, एक वस्तु प्राप्त नही होती, आज वह वस्तु

प्राप्त होती है, उससे मुनिवरों! गऊओं का दुग्ध पीने से, हमारे जीवन में एक बुद्धिमानता आती है, श्वांस ऊँचा होता है और गऊओं के दुग्ध के पान करने पर हमारे शरीर में जो नाना प्रकार के जो रूग्ण हो जाते हैं वह भी नष्ट हो जाते हैं। नष्ट हो जाने के पश्चात अहा! देखो, उससे हमारा स्वास्थ्य ऊँचा बनता चला जाता है और वह कलिष्ट भोजन करने से मानव का स्वास्थ्य अङ्ग भंग हो जाता है, अङ्ग भंग हो जाने के पश्चात मुनिवरों! सबसे पूर्व यह विशेषता है, गऊ के दुग्ध पान करने में क्या मानव के जीवन में सदाचार की भावना आती है। प्रत्येक मानव प्रत्येक देव कन्या के द्वारा दुराचार की भावना न आ करके सदाचार की भावना आती है। क्योंकि गऊ के दुग्ध में, वह परमाणु होते हैं, वह स्नेह होता है, जिस स्नेह से देखो, जो स्नेह गऊओं में होता है। अहा! बेटा! देखो, गऊओं में, कितना भी क्रोध हो, परन्तु उस क्रोध में जब भी उन्हें एकत्रित होने का समय मिलेगा, तभी वह एकत्रित हो जाते हैं। इसी प्रकार उनमें कितना स्नेह होता है, ऐसे ही मानव मात्र में भी, इसी प्रकार का स्नेह हो जाता है। मेरे आदि आचार्यों जनों! मेरे पवित्र भोले ऋषि मण्डल! उस भगवान कृष्ण की चर्चा प्रगट कर रहे हैं। जिन्होंने बेटा! गऊओं की पूजा की। हमारे यहाँ भगवान कृष्ण से पूर्व भी देखो, गऊओं की पूजा होती चली आई, गऊओं की पूजा आज से नही, परन्तु परम्परा से होती चली आई है। मुनिवरों! देखो, सर्वत्र संसार में गऊओं की पूजा की जाती है, उसके दुग्ध को पान किया जाता है, घृत को पान किया जाता है, उसी में यज्ञ किया जाता है। देवता जन प्रसन्न होते हैं, वह समय समय पर मुनिवरों! देखो, मानव को स्वास्थ्य देते रहते हैं।

गोवर्धन पूजन

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव! हमने ऐसा सुना है, जैसे आपने गोवर्धन का अभी अभी वर्णन किया है जब इन्द्र की पूजा नही होती थी, इन्द्र ने वृष्टि की और भगवान कृष्ण ने गोवर्धन के पर्वत को ऊँचा अपने से ऊँचा उठाया था और वृन्दावन के जितने प्राणी थे सब उसकी छाया में चले गएं।

परमात्मा के नियम के अनुकूल कर्म

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! यह इसका अभिप्राय नही है, कि इन्द्र ने वृष्टि की, तो पर्वत को उन्होंने ऊँचा कर लिया, इसका अभिप्राय तो यह भी हो सकता है, क्या ऊँचा स्थान था, वृष्टि अधिक हुई और गोवर्धन के ऊपर बसने चले गएं, यह भी हो सकता है। परन्तु यह नही, कि प्रकृति के नियम के विरूद्ध माना जाता है, परन्तु भगवान कृष्ण परमात्मा के उस परमानन्द के बहुत निकट थे, बहुत निकट होने के पश्चात, जो जिसके निकट होता है, वह प्रकृति के विपरीत कोई कार्य नही करता, भगवान ने जो नियम बनाएं हैं, उनके विपरीत कोई कार्य नही करता, विपरीत कौन जाता है। जो बेटा! देखो, परमात्मा से दूरी हो जाता है, और जो परमात्मा के जितना भी निकट होता है। उतना ही वह प्रकृति के नियम को अङ्ग भंग नही करता, परमात्मा के नियम को नष्ट नही करता, वह उसके अनुकूल कार्य करता चला जाता है, स्वतः होता रहता है।

मेरे पवित्र आचार्यों जनों! मेरे प्यारे महानन्द जी! यह नही, परन्तु उनसे यह मान लेना चाहिए कि गोवर्धन से देखो, भगवान कृष्ण ने गऊओं की पूजा कराई। वहाँ इन्द्र की पूजा भी होती थी, परन्तु इन्द्र की पूजा को उसने शान्त कराया, क्या इन्द्र की पूजा इन्द्र के राष्ट्र में होनी चाहिए? परन्तु इन्द्र ने उन्हें कष्ट देने का प्रयत्न भी किया, मानो देखो, बकासुर इत्यादियों ने उनको कष्ट देना प्रारम्भ किया। भगवान कृष्ण ने अपने प्रकरण से, उनकी एकता से, उनकी मानव मात्र की सहायता से, छाया से, उसकी सेना को नष्ट किया, नष्ट करने के पश्चात, परन्तु यह हुआ। आज हमें देखो, इन्द्र हम किसे कहते है? आज हम देखो, इन्द्र केवल उसको नहीं कहते, जो सब राजाओं का राजा, परन्तु देखो, हम परमात्मा को इन्द्र कहा करते हैं। यहाँ इन्द्र यदि एक राजा को लिया जाए, तो वह वृष्टि क्या कराएगा, परन्तु देखो, वह अणु और परमाणुओं से वृष्टि करा भी सकता है, यह भी हो सकता है कि बहुत से यन्त्र ऐसे होते हैं, जो प्रकृति से निकासे जाते हैं। अनुसन्धान करने के पश्चात कि वह अन्तरिक्ष में उनका प्रहार करने के पश्चात, जल के द्वारा देखो, जलों का

उत्थान हो जाता है। उससे वृष्टि भी हो सकती है, परन्तु वह यन्त्र प्रकृति की नाना धातुओं से निकासा जाता है। मेरे आदि ऋषि मुनियों! इसको तुम प्रत्येक जानता होगा, कि भगवान कृष्ण की उस क्रिया को जाना करते थे, इन्द्र भी उस प्रक्रिया को जानते थे, परन्तु इन्द्र ने यह कराया, यह हो सकता है, परन्तु इन्द्र ने ऐसा किया नही था, यह अतिता यह मानव की एक कल्पना है। एक गोवर्धन को ऊँचा ले जाने के लिए, एक मानव की एक कल्पना है। यह एक श्रद्धांजलि और एक श्रद्धा का एक पाठ है। परन्तु यह इससे अधिक श्रद्धा से उसका वास्तविक वाक् का अङ्ग भंग हो जाता है। गोवर्धन की पूजा करने से मुनिवरों! देखो, भगवान कृष्ण ने अपने जीवन का उत्थान किया, अपनी प्रजा को ऊँचा बनाया है। मानो देखो, भगवान कृष्ण के यहाँ एक कार्य और भी होता था, नन्द की जितनी भी शोभा थी, मानो देखो, गऊओं का सब घृत सब राजा कंस के द्वारा चला जाता था राजा कंस के द्वारा जाता था, भगवान कृष्ण जो भी देवी उन्हें प्राप्त होती, जो भी माताएं उन्हें घृत ले जाती प्राप्त होती, उन्हें दृष्टिपात होती, उनसे छीन लेते और कहा करते कि यह कंस पापी है, तुम घृत को स्वयं पान करो, मानो देखो, भगवान कृष्ण ने यह कितने ऊँचे ऊँचे कार्य किए, उन्होंने कहा कि कंस इतना दुराचारी है, कि वह दूसरों के अधिकार को लेना चाहता है। संसार में उस व्यक्ति को नष्ट कर दो, जो दूसरों के अधिकार को छीनना चाहता है, दूसरे के अधिकार को छीनना यह मानवता नही कहलाई जाती है। इसीलिए हे मेरी पवित्र माताओं! हे मेरे पवित्र भद्र जनों! संसार में उस व्यक्ति को अपने द्वार पर न आने दो, जो दूसरे के अधिकार को छीनने वाला हो, उसे अपने अधिकार के, उसे अपने जीवन का, अपने द्रव्य का, अपनी लक्ष्मी का स्वयं देखो, उसे उसका अधिकार, उसका दायित्व बना रहे। इसीलिए आज मुनिवरों! देखो, भगवान कृष्ण का एक एक शब्दार्थ बडा महत्वपूर्ण है, हमें उन्हीं के आदेशों पर चलना चाहिए। क्योंकि उनका आदेश आर्यत्व में परणित कहलाया जाता है। उन्हें आर्य प्रणाली को, आर्य परम्परा को ऊँचा बनाने में, अपने जीवन को समाप्त किया, अपने जीवन को सर्वत्र देखो, संसार में समृद्ध उनका

जीवन व्यतीत होता रहा।

गणेश का पूजन

मुनिवरों! आज यहाँ दीपावली को, केवल गोवर्धन का ही पूजन नही होता है, गणेश का पूजन भी होता है, गणेश का अभिप्राय यह है, जहाँ लक्ष्मी का, जहाँ प्रकृति का, जहाँ, गऊ का पूजन किया जाता है, वहाँ परमपिता परमात्मा का पूजन भी किया जाता है। मुनिवरों! गणेश का पूजन क्यों किया जाता है? गणं ब्रह्मे अस्ति गणा मुनिवरों! देखो, जो गणों का स्वामी हो, गण संसार में प्रजा कहलाती है, उनका स्वामी गणपति कहलाता है। आज मुनिवरों! देखो, हमें गणपति की पूजा करनी है, जिस गणपति के पूजा करने से, हमारे हृदय में स्नेह आता है, हमारे हृदय में मधुरता आती है, हमारे हृदय में कर्तव्य की भावना आती है, हमारे हृदय में राष्ट्रीय भावना आती है। मानो देखो, यह सब भगवान की पूजा करने से प्राप्त होती है। क्योंकि परमपिता परमात्मा ने संसार को एक राष्ट्र रूप को निर्माणि किया है। इसका वाक् तो मैं कल ही प्रगट कर सकूंगा अच्छी प्रकार से, परन्तु आज का आदेश तो केवल यह उच्चारण करता चला जा रहा है। क्या हमें गणपति की उपासना करनी चाहिए। गणपति का पूजन करना चाहिए, हमारे यहाँ मुनिवरों! देखो, गणपति राजा को भी कहा जाता है। राजा का भी पूजन करना चाहिए, क्योंकि राजा का पूजन क्यों किया जाता है? राजा के पूजन का अभिप्राय यह नही, क्या उसके चरणों को छूआ जाए, राजा के पूजन का अभिप्राय यह है, क्या हम उसके प्रत्येक स्थानों से, बुद्धिमानो से, माताओं से और मेरी पुत्र पुत्रियों से राजा को यह प्रेरणा देनी चाहिए, राजा के हृदय में, क्या हे राजन! मेरी पौत्र माता को तो यह अधिकार देने चाहिए, कि वह हमारा अधिपति है, तू गणेश है, तू राजा है, हमारे शृङ्गार की तू रक्षा कर। पुत्रियों को राष्ट्र के द्वारा, राजा को यह संदेश देना चाहिए। हे देव! हे राजन! तू हमारा राजा है, और हमारे जीवन का उपकार वास्तव में तो परमात्मा के ऊपर है, परन्तु कुछ तुम्हारे द्वारा भी है। इसीलिए हमारे विधाता, हमारे जीवन में जो भी मानवता आए, उसका चुनौती आप लेते रहें।

मुनिवरों! देखो, यह सब मानव के लिए ही, क्या संसार के राष्ट्र की रक्षा, राष्ट्र के नियम, राष्ट्र के जो भी कुछ अवृत्ति होते हैं, वह सब आपके भुजों में इन्हे अच्छी प्रकार बनाते रहो, यह सब मुनिवरों! देखो, एक प्रजा का कर्तव्य होता है, तो इसी परमात्मा की उपासना करना, गणेश जी की उपासना करना, महर्षियों ने महानन्द जी ने एक समय ऐसा वर्णन किया कि गणेश जी तो महाराज शिव के पुत्र कहलाते हैं, और जिनके द्वारा एक हाथी का एक बहुत बड़ा मुख उनके अनुसार परणित किया जाता है। मेरे आदि आचार्यों जनों! महानन्द जी ने मुझे एक समय ऐसा प्रगट कराया, परन्तु इसके साथ साथ मैं यह वाक् प्रगट करता चला जाऊं, कि देखो, गणेश जी का ऐसा नही, परन्तु गणेश जी महाराज शिव के पुत्र भी थे। परन्तु यहाँ गणेश जी भगवान को कहा जाता है, जो हाथी इतना विशाल होता है, इतने विशाल शरीर वाला होता है, मानो देखो, वह कितने ही अन्नों को, कितने ही वनस्पतियों को अपने उदर में ओत प्रोत कर लेता है, उसी से उसका जीवन सञ्चार होता है, इसी प्रकार हमारे यहाँ परमात्मा के द्वारा देखो, यह सर्वत्र भूमण्डल होने के नाते, यह सर्वत्र भूमण्डल उसका है। नाना प्रकार के लोक लोकान्तर हैं, यह सब देखो, परमात्मा के गर्भ में परणित हो रहे हैं, सब प्रकाशित हो रहे हैं, उसी की प्रेरणा, उसी का पाठ, उसी के मुनिवरों! एक एक, कण कण में परमात्मा के गणेश के व्यापक होने के नाते, उन सबका अधिपति होने के नाते अहा! उसका देखो, इतना विशाल मस्तिष्क भी है। उसका इतना विशाल उदर भी है, मानो देखो, वह सबको अपने में परणित कर देता है, मुनिवरों! प्रलय काल में भी सबको निगल जाता है। अपने गर्भ में, अपने उदर में सबको परणित कर लेता है, मुनिवरों! उसका इतना विशाल उदर है, इतना विशाल उसका मुखारबिन्द है, मुनिवरों! देखो, जिससे परमात्मा को हमारे यहाँ गणेश जी कहा जाता है। गणेशा ब्रह्मणे जो गणों का स्वामी हो, गणों का स्वामी हो मानो देखो, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों का स्वामी हो, उसको हमारे यहाँ गणपति की चुनौती दी जाती है। अहा! भगवान शिव के पुत्र का नाम भी गणेश जी है, ऐसा अभिप्राय यह नही कि किसी के पुत्र

का नाम गणेश जी हो, तो परमात्मा को गणेश जी नही कह सकेंगे। अहा! मुनिवरों! देखो, जहाँ हम भगवान को गणेश जी कहा जाता है, किसी के पुत्र का नाम भी गणेश उच्चारण कर सकते हैं। क्योंकि वह तो एक गौणिक नामों से परणित किया जाता है।

मेरे आदि आचार्यों जनों! आज मैं यह चर्चा कर रहा था, कि आज दीपावली के पर्व में और गो की पूजा करने के दिवस से हमें भगवान कृष्ण और हमें अपनी परम्परा को विचारना है। जो संसार में देखो, परम्परावादी संस्कृति को नही विचारता, आह, उसका जीवन एक भार रूप में माना जाता है, संसार में आलसी और प्रमादी बन करके अपने जीवन को हमें व्यर्थ नही करना है। परन्तु देखो, आज हमें सभी वाक्यों पर विचार करना होगा, जैसे हम भूमि की रक्षा करते हैं, मुनिवरों! इसी प्रकार मेरी जो पवित्र माता है, जिसके गर्भ से हम जैसे पुत्रों का जन्म होता है, भगवान कृष्ण, भगवान राम, महाराज शिव मुनिवरों! देखो, अनेकों अनेक महान विभूतियों का जन्म होता है। जैसा मुनिवरों! देखो, यहाँ ऋषि मुनियों का जमदग्नि, जैसे महर्षि पारा, महर्षि लोमश, महर्षि कणाद, आदित्य ऋषि महाराज, महर्षि अंगिरा इत्यादि आचार्य ऋषि जन हुए, यह सब मेरी पवित्र माताओं के गर्भ से जन्म लेते हैं। जिनके बड़े सौभाग्य होते हैं, जिनकी त्याग और तपस्या में एक आहुति है, त्याग और तपस्या से मानव की माता की प्रवृत्तियों से, मानव के अन्तःकरण में उनकी भावनाओं से देखो, उससे पुत्रों का जन्म होता है। मुनिवरों! देखो, इससे हमें सभी वाक्यों पर विचार करना है। हमें जब हम प्रत्येक वाक् पर हम अपने परम्परावादी जो हमारी प्राचीन ऋषि मुनियों की प्रणाली है।

आज भगवान राम, भगवान राम देखो, यह वह भी दिवस है, जब भगवान राम, माता सीता और हनुमान मुनिवरों! देखो, लक्ष्मण इत्यादि देखो, लंका को विजय करके अपनी अयोध्या में आ पंहुचे थे, अपनी अयोध्या में आने के पश्चात मानो देखो, मुनिवरों! देखो, जब राजा रावण को विजय किया, विजय करने के पश्चात, लंका का राष्ट्र उनके विधाता विभीषण को लंका का स्वामी बना करके, पुष्प विमान

में विराजमान हो करके, अपनी अयोध्या में लौट आए, परन्तु आज का देखो, वह दिवस, आज नही, परन्तु आज को तो वह दिवस है लंका को विजय करके, जब भगवान राम ने माता सीता ने लक्ष्मण ने हनुमान ने विराजमान हो करके देखो, भरत ने इत्यादि शत्रुघ्न ने माताओं के सहित और गुरुजनों के सहित मानो यज्ञ किया। आज वह दिवस है, परन्तु प्रत्येक प्राणी को यह ज्ञान हो गया कि आज भगवान राम लंका को विजय करके आ रहे हैं, उस समय प्रत्येक गृह में जो दीपावली का पर्व जो कृषक देखो, कृषकों के हृदयों के क्रान्ति स्थापित हो चुकी थी, क्या भगवान राम नही आएंगे, न प्रति क्या होगा, परन्तु जब यह प्रतीत हुआ, वैश्य जनों को भी, राम की विजय हो गई है। लंका से आ गएं हैं, उसी समय अयोध्या में एक प्रकाश, सर्वत्र एक आनन्द के उनके हृदयों में क्या मुनिवरों! देखो, आनन्द के गीत प्रकाशित हो गएं, बेटा! वह लंका में भी वह पर्व मनाया गया, परम्परा के संस्कृति के अनुकूल मनाया गया, परन्तु रहा देखो, अयोध्या में, भगवान राम, सीता और लक्ष्मण, हनुमान जब वह अयोध्या में आए, तो भरत ने राम के चरणों को छुआ, उन्होंने सीता के चरणों को स्पर्श किया, और उनके स्नेह की उनके प्रेम की कोई सीमा नही थी बेटा! जैसे दीपावली के दिवस मानो अपने गृहों को प्रकाशित करता है, और अपने मनों को प्रकाशित करता है, इसी प्रकार महाराजा भरत और शत्रुघ्न और माताओं का जो हृदय था, वह इतना प्रफुल्लित हो गया, इतना प्रकाशमान हो गया, कि दीपावली और सूर्य का प्रकाश भी उनके आगे अन्धकारमय प्रतीत होता था। मेरे आदि आचार्यों जनों! यह प्रेम का प्रतीक है, यह हमारा आदर का प्रतीक है, भरत ने जब सीता के चरणों को छुआ, उस समय कहा मातेश्वरी! मुझे आपकी बड़ी प्रतीक्षा थी मेरे नेत्र थकित हो गएं, मेरी दृष्टि सूक्ष्म से सूक्ष्म हो गई, आपको दृष्टिपात करते करते, यह बेटा! कितना ऊँचा आदेश था। मेरे उन ऋषि मुनियों का महान विभूतियों का आज मुझे बेटा! ऐसा प्रतीत हो रहा है, जैसे आज अयोध्या में वाक् उच्चारण कर रहे हो बेटा! आज यह आर्यों वाली वाक्यों को हमें पुनः से प्रकाशित करना है। इतना समय हुआ इस प्रतीक से आज हमें इससे

कुछ शिक्षा प्राप्त करनी है। जिन शिक्षाओं को ले करके हम आज गऊओं का पालन क्या, दीपावली का पर्व क्या, इनको हम अपने जीवन में धारण करें, और इनको हम अपने जीवन में कुछ न कुछ अच्छाईयों को अपनाते चले जाएं।

मानसिक विचारों का प्रभाव

महर्षि जमदग्नि ने जितनी सूक्ष्मता का परिचय दिया। परन्तु वह एक महान सराहनीय है। जब महर्षि जमदग्नि की पत्नी के विचार देखो, विचारों में एक महान देखो, दूषित क्रान्ति आ गई, दूषित क्रान्ति आ गई, तो अपने पुत्र पर प्रहार कर रहा है, क्यों? क्योंकि उन्होंने कहा कि मैं अपने गृह को, मैं अपने आश्रम को श्मशान भूमि नही बनाना चाहता हूँ, मैं इसको ऋषि की भूमि बनाना चाहता हूँ। मुनिवरों! देखो, यह उस ऋषि के विचार हैं, ऋषि के विचार बहुत सूक्ष्म हैं इसी प्रकार यदि प्रजाओं के विचार एक दूसरें के नष्ट करने वाले हो जाते हैं, और एक दूसरे को नष्ट करना, अपने उदर की पूर्ति हो, दूसरा नष्ट हो जाएं या कुछ हो, इस प्रकार के विचार बन जाते हैं। तो क्या होता है? यह विचार जमदग्नि के कथनानुसार, यह विचार सब अन्तरिक्ष में रमण करते हैं, और जब अन्तरिक्ष में रमण करते हैं, अहा! सूर्य की किरणें आ करके मिलती हैं, जल के परमाणु जाते हैं, अग्नि के तीक्ष्ण परमाणु जाते हैं, वायु का मिलान होता है, उनका जब आपस में देवताओं का, देवताओं का एक समाज एकत्रित होता है, और देवताओं के द्वारा यह मानसिक विचार जाते हैं, देवता इनको सींचते हैं, सींच करके क्या होता है? क्या देवता इनके लिए, इनके विचारों को द्वितीय रूपों में परिणित कर देते हैं बेटा!। पहले प्रकृति के आक्रमण होते हैं, तो किसी राष्ट्र में देखो, राष्ट्रीय संग्राम हो रहा है, तो कहीं मुनिवरों! देखो, अकाल पड़ रहे हैं, कहीं वृष्टि नही होती, वृष्टि होती है, तो अनावृष्टि होती है। यह सब देखो, मानव के मानसिक विचारों का आहार और व्यवहार का फल कहलाता है। यह महर्षि जमदग्नि का कथन है, महर्षि जमदग्नि के विचार बेटा! एक महान विचार कहलाए जाते हैं, हमारे ऋषि मुनियों ने महर्षि जमदग्नि को विचारधारा में सबसे अग्रणीय माना है, अग्रणीय माना है, कारण क्या है? क्या उनके विचार, वह

अपनी मानसिकता को ऊँचा बनाने के लिए, अपने सूक्ष्म विचार संसार को देते हैं। उन विचारों का यह परिणाम रहा, क्या उनके वाक् उच्चारण करने का आज हमें पुनः से सौभाग्य प्राप्त हो रहा है।

मेरे आदि आचार्यों जनों मैं केवल यह शब्द उच्चारण कर रहा था, वह यह क्या हमें उन सब वाक्यों के विचार करने का अभिप्राय यह मानवता और हमारा विचार ऊँचा होना चाहिए, विचित्र से विचित्र होना चाहिए, जिससे मुनिवरों! देवताजनों की गोष्ठी में भी उनके समाज में भी हमारे विचार चलें, हमारी भावना जाए, तो वह हमें विष न दें। दैत्यों में परणित नही करना है। जिससे बेटा! हम देवता बनें और और देवत्ताओं के समाज में पंहुचे, देवता वाले विचार बन करके, हमारे लिए बेटा! हम अमृत देने वाले बनें, विषन तो किसी को दें अरे, किसी को विष देंगे, तो विष हमें अवश्य प्राप्त होगा, अमृत देंगे, तो परमपिता परमात्मा के इस कल्प वृक्ष के नीचे विराजामन हैं। हम किसी को अमृत देंगे, तो अमृत ही सीचेंगे, विष देंगे तो विष ही सीचेंगे, इसीलिए हमें संसार में क्यों न अमृत देना चाहिए। यह है बेटा! आज का हमारा आदेश, आज का आदेश यह समाप्त होने जा रहा है, कल समय मिलेगा तो मैं शेष भी चर्चाएं कल भी प्रगट कर सकूंगा।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव! आपका विचार कुछ सुन्दर भी लगा और कुछ असुन्दर भी लगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, क्यों?

पूज्य महानन्द जीः भगवन! हमारे यहाँ प्रश्न का वाक् आता है, आप वहाँ उस वाक् को मिला जाते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य..अरे, क्यों?

पूज्य महानन्द जीः भगवन! अभी अभी आप से प्रेरणा रूपों में प्रगट किया, कि माँस आहार करना बहुत अनिवार्य है।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! तुम किया करो, उसमें क्या है, हमें तो इससे कोई विरोध नही, परन्तु हमें तो महान आत्माओं के विचार तुम्हारे समक्ष प्रगट किए और जैसा

तुमने बनना है, वैसे बनते चले जाओ।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! यह तो हमारे प्रश्नों का कोई उत्तर नही है, हमारे प्रश्नों का एक यही उत्तर तो अवश्य देते चले जाईएं, अभी आप ने कहा अमृत दोगे, तो अमृत प्राप्त होगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य... नही महानन्द! यह बेटा! विनोद क्या करने लगे, आज के हमारे आदेशो का जो शीर्षक था, वह यही था कि अपने महान विचारों के लिए हमें अपने आहार और व्यवहार पर अवश्य अनुसन्धान करना चाहिए, तुम बेटा! हर समय विनोद की चर्चा प्रगट करते हो, हम समय विनोद का नही होता, समय मिलेगा तो तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर कल दिया जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन! जैसी आज्ञा।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरों! आज का यह आदेश समाप्त होने जा रहा है आज के आदेशों का अभिप्राय क्या हमारा, कि हमें अपने आहार व्यवहार सूक्ष्म सा विचार का, यह हमें सब उत्पन्न करना है, यदि हमें अपने राष्ट्र को, अपनी मातृ भूमि को ऊँचा बनाना है, तो हमें पुनः मानसिकता को उत्पन्न करना है, जिससे हमारे द्वारा स्नेह एक दूसरें में एक दूसरें के विचार से अवगत होते हों, तो हम कर्तव्य की भावनाओं में संलग्न, राष्ट्रवाद, मानसिकवाद सब हमारे द्वारा परणित हो करके, हम परमपिता परमात्मा की छत्र छाया में पनपते हैं, उसी की छत्र छाया में हम अपने विचार को ऊँचा बनाते चले जाएं, यह आदेश आज हमारा समाप्त हो गया, कल समय मिलेगा, तो मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा आज का आदेश समाप्त होता गया कल शेष चर्चाएं प्रगट करेंगे अब वेद का पाठ होगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन! आज्ञा।

पूज्यपाद गुरुदेवः आनन्द मङ्गलम भवति। वेद पाठ।

4. 690412-ब्रह्म की चेतना, ब्रह्म की चेतना

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, कुछ मनोहर, वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने, पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, उस मनोहर पवित्र वेदवाणी, जो आनन्दमयी कल्याण प्रदायिनी, उस वेदवाणी का प्रसारण, उसकी महिमा, मानव के मस्तिष्क में समाहित हो जाती है, तो मानव का कण्ठ, उस महामना माता की, उज्ज्वल धारा में परणित हो जाता है। जब हम ये विचार, हमारे यहाँ परम्परागतों से ब्रह्म विचार भी होता रहता है, आत्म चिन्तन भी होता रहता है। परन्तु इससे पूर्व शब्दों में, हमारे यहाँ कुछ संस्कृत शब्दों में ब्रह्म विचार चल रहा था, ब्रह्म की चेतना के सम्बन्ध में, विचार विनिमय होता चला जा रहा था। हमारा यह वाक् हमारी जो अनुपम प्रतिभा है वह नाना प्रकार के पठन पाठन में सुगठित रहती है। जैसे हमारे यहाँ वेदमन्त्रों के नाना प्रकार होते हैं, जैसा हमने कल के शब्दों में भी उच्चारण किया था, कि जटा पाठ, घन पाठ, माला पाठ, विसर्ग पाठ, उदात्त, अनुदात्त और भी नाना प्रकार होते हैं।

माला पाठ

हमने इन वाक्यों को बहुत पुरातन काल हुआ बेटा! जब इनका अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हो गया था। आज हमें पुनः से, उस महामना देव की अनुपम दया से, हमें पुनः से यह अवसर प्राप्त होता चला जा रहा है, कि हम अपने विचार, अपने उद्गम विचारधाराओं को उच्चारण करते रहे। हमारे यहाँ एक माला पाठ होता है, बेटा! इससे पूर्व शब्दों में भीहमने उच्चारण किया है, कि माला पाठ किसे कहते हैं? मैने बेटा! कल के वाक्यों में कहा था, कि धागा और मनके दोनों सुगठित हो करके एक माला दीप होने लगती है। इसी प्रकार यह जो जगत हमें प्रतीत हो रहा है, यह जो ब्रह्माण्ड, लोक लोकान्तरों वाला प्रतीत हो रहा है, बेटा! यह सब, उस ब्रह्म और प्रकृति के व्याप्य और व्यापकता का सम्बन्ध होने के नाते, शृङ्खलाबद्ध प्रतीत होता चला जा रहा है। क्योंकि उसी की शृङ्खला है और उस शृङ्खला में जब

हम विचार विनिमय करने लगतेहैं, कि उस ब्रह्म की, आनन्दमयी जो अनुपम ज्योति है, चेतना है, वह जब प्रकृति के आङ्गन में ओत प्रोत हो जाती है तो बेटा! प्रकृति का स्वभाव स्वतः उत्पन्न होने लगता है। परन्तु मैं इससे पूर्व शब्दों में ऋषि मुनियों के विचारार्थ प्रगट कर रहा था। हम यह उच्चारण करते चले जा रहे थे कि आदित्य मुनि महाराज का क्या सिद्धान्त है और अंगिरा जी क्या उच्चारण करते चले जाते हैं और वायु जी ने क्या कहा है, ये विचार थे।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! इन विचारों में कुछ हमारा परम्परा से मत भेद रहा है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हां, उच्चारण करो।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! हमारा मतभेद यह है कि जैसा आपने वायु मुनि के शब्दार्थों में कुछ वाक्य कहा था, कि वायु जी इन तीनों को इसी प्रकार स्वीकार करते हैं, तो इससे तो भगवन! ये जो नाना प्रकार के ऋषियों के सिद्धान्त हैं, यह अमिट हो जाते हैं और नास्तिकवाद की तरंगे उत्पन्न होने लगती हैं।

नास्तिकवाद

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य..... बेटा! यह कैसे माना जा सकता है कि अभी तक हम यही नहीं विचार पाए हैं कि नास्तिकवाद कहते किसको हैं? नास्तिक उसको कहते हैं, जिसको स्वयं अपना आत्मविश्वास नहीं होता, क्योंकि संसार में जितना नास्तिकवाद होता है, वह केवल उसकी आत्मा को, अपने ऊपर स्वयं अधिकार न होने के नाते ही, वह स्वतः ही नास्तिक कहलाए जाते हैं क्योंकि संसार में केवल प्रभु का चिन्तन करने वाला ही आस्तिक नहीं होता, मानो प्रभु का चिन्तन जो आत्मिक श्रद्धा से करता है और आत्मा के स्वरूप को जानता है, वह संसार में वास्तविक आस्तिक होता है। रहा यह वाक्य कि नास्तिकवाद की तरंगे उत्पन्न होने लगती हैं, आज हम यही नहीं जान पाते। बेटा! तुम्हारे शब्दों से यही हमारे में नाना प्रकार की शङ्काएं उत्पन्न हो जाती हैं, कि नास्तिक तो मैं परम्परा से उसे कहा करता हूँ, जो बेटा! वेद की पोथी को जानने वाला है, परन्तु वेद के स्वरूप को

नहीं जानता, वह वास्तव में नास्तिक होता है। बेटा! परन्तु रहा यह वाक्य कि प्रभु! को नहीं स्वीकार करना, मानो प्रभु को हम अमिट कर देते हैं, तो इससे आज मानव यह स्वीकार नहीं कर सकता कि हम नास्तिक बन गएं हैं, अथवा यह नास्तिकता है। हम प्रभु के अस्तित्व को अच्छी प्रकार जानने लगते हैं, जब त्रैतवाद का हम समर्थन करते हैं, तो इसमें नास्तिकवाद का कोई शब्द आना ही नहीं चाहिए, और न इसमें हमें नास्तिकवाद प्रतीत होता है, रहा यह वाक् क्योंकि मैने पूर्व काल में यह वाक् प्रकट करते हुए कहा है, कि हम जब यह विचार विनिमय करने लगते है, कि हम त्रैतवाद को, या प्रभु को अकर्त्ता स्वीकार करते हैं। क्या प्रभु अकर्त्ता है, क्योंकि उसकी अकर्त्ता में ही कर्त्ता की प्रतीति होने लगती है। क्योंकि मानव ने जो सिद्धान्तों में जो नाना प्रकार का भेदन आ जाता है, आगे चल करके, बेटा! बुद्धि की जो पराकाष्ठा है, उसमें जा करके तो एक ही तुलना हो जाती है। रहा यह वाक्य कि हम नास्तिकवाद में परणित हो जाएं, तो यह वाक्य सुन्दर नहीं होता, क्योंकि इसमें मुझे तुम्हारे शब्द प्रतीत नहीं हो रहे है, मुझे तो कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि यह वाक्य तुम कहीं से चुनकर लाए हो।

पूज्य महानन्द जीः हास्य..... भगवन! ऐसा तो नहीं है।

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं, मुझे यह प्रतीत हो रहा है, क्योंकि मैं इस वाक्य को कैसे स्वीकार कर सकता हूँ। अच्छा, बेटा! उस वाक्य को चलने दो, जो हमारा विषय चल रह था। इन वाक्यों में जाने के लिए हमें इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा, क्या हम इस वाक्य में चले जाएं, कि यह संसार नास्तिक है, आस्तिक है, परन्तु हम तो यह जानते हैं, कि संसार में प्रत्येक मानव को, प्रत्येक प्राणी को आस्तिक होना चाहिए, क्योंकि आस्तिक पना ही मानव की आत्म उन्नति है। क्योंकि आत्मा की उन्नति का यदि कोई मूल कारण है, तो उसका आस्तिकवाद है, क्योंकि आस्तिकवादी प्राणी बेटा! संसार में, किसी भी काल में बेटा! वह निराशा को प्राप्त नहीं होते। वह सदैव आशावादी होते हैं। आशावादी जो प्राणी हुआ करते हैं, वह वास्तव में बेटा! अपनी आत्मा को उन्नति करके संसार सागर से पार हो जाते हैं। जो ये

संसार हमें नाना के मान अपमान का हमें प्रतीत हो रहा है, जिसमें मान अपमान के भंवर है, जिसमें मानव को सदैव यह अकृत रहता है, कि इसमें नष्ट न हो जाऊं, परन्तु मानव इनसे उपराम होकर के अपने जीवन को उन्नत बनाता चला जाता है।

प्रकृति का स्वभाव

तो बेटा! मैं अपने वाक्यों को प्रारम्भ करने जा रहा था, कि महर्षि वायु मुनि महाराज और आदि ऋषियों का जब समाज एकत्रित होने लगा, उसमें एकत्रित होते हुए तो मुनिवरों! आगे चल करके देखो, महर्षि भृंगी जी ने एक वाक कहा महर्षि वायु जी से, क्या महाराज! जब आप यह स्वीकार करते हैं, कि इस प्रकृति का स्वयं चेतना स्वभाव उत्पन्न हो जाता है, चेतना के प्रभाव से, चेतना के सूक्ष्म से सन्निधान से, मानो प्रकृति का स्वभाव उत्पन्न हो जाता है, क्या इस आत्मा का भी इस प्रकार स्वभाव उत्पन्न हो जाता है, अथवा यह भी प्रकृति का ही स्वभाव माना गया है। मेरे प्यारे ऋषिवर! उस समय महर्षि वायु जी ने कहा कि हमारा तो यह विश्वास है, वेद का शब्द कहता है, वेद का ऋषि, और वेद कहता है कि आत्मा ब्रह्मेव्रतं प्रभा वसुकृति रुद्रो व्यापम् गति तक प्रमाणः अस्ति सुकृति रुद्रो कामा वेद का आचार्य कहता है, हमारे यहाँ महर्षि वायु जी का जो सिद्धान्त है, परन्तु मैं उसको तुम्हारे समक्ष, नियुक्त कर रहा हूँ। उन्होंने यह कहा है, कि यह जो मानव का शरीर है, यह भी प्रकृति का, जैसे यह ब्रह्माण्ड है, जैसे ब्रह्माण्ड में देखो, परमात्मा की सूक्ष्मसी चेतना उत्पन्न होने पर, प्रकृति का स्वभाव उत्पन्न हो जाता है, इसी प्रकार यह तो आत्मा इस सूक्ष्म से ब्रह्माण्ड में क्योंकि इस संसार की कल्पना की है। जैसा यह ब्रह्माण्ड जैसा यह जगत हमें प्रतीत हो रहा है, इसी प्रकार हमारा जैसे यह ब्रह्माण्ड है ऐसे यह सूक्ष्म सा पिण्ड स्वीकार किया जाता है, इसी प्रकार इस बाह्य जगत में, इस बाह्य ब्रह्माण्ड में इस सर्वश लोक लोकान्तरों वाले जगत में, जैसे प्रकृति की स्वयं, चेतना उत्पन्न हो जाएँ, स्वयं उसका स्वभाव चेतना से उत्पन्न होता है, एक अणु की चेतना से उत्पन्न होता है, परन्तु उसी चेतना

से हमारा जो ये मानव शरीर है, इसमें भी आत्मा व्याप्य और व्यापक रूप से इसका सन्निधान होने पर, मानो इस शरीर में भी, चित्त इत्यादियों का स्वभाव स्वतः उत्पन्न होने लगता है। परन्तु जैसे ब्रह्म को स्वीकार किया गया है, इसी प्रकार हमारे यहाँ आत्मा को भी स्वीकार किया गया है। महर्षि वायु मुनि महाराज ने जब यह वाक्य उच्चारण करते हुए मुनिवरों! देखो, जब यहाँ ऋषि मुनियों में एक क्रान्ति उत्पन्न हो गई। वहाँ महर्षि वायु मुनि महाराज के समक्ष मुनिवरों! महर्षि सन्धुत ऋषि महाराज जो मुनिवरों! महाराज कुरकात्री मुनि के पौत्र कहलाए जाते थे, परन्तु वह भी उनके समीप, और महर्षि कुरकात्री मुनि उनके समीप आ पहुंचे। परन्तु देखो, आगे आदित्य जी महाराज और महर्षि अंगिरा जी, इन सभी ऋषियों का समाज एकत्रित हो गया। एकत्रित हो जाने के पश्चात मुनिवरों! देखो, सभा क्योंकि मंगलेत्वर ऋषि महाराज के आश्रम में थी, मंगलेत्वर ऋषि महाराज को सभापतित्व चुना। परन्तु सभापति होने के नाते, वहाँ मुनिवरों! देखो, वाद विवाद की श्रृङ्खला प्रारम्भ होने लगी। मानो देखो, हमारे यहाँ, ऋषि मुनियों का, आध्यात्मिक वेत्ताओं का वाद विवाद इस प्रकार का नहीं होता, जो मानव मानव को नष्ट करने की चेतना उनके हृदय में उत्पन्न हो। मानो देखो, अपने आत्मा के उत्थान के लिए, और आत्म तत्त्व के लिए, उनका विचार विनिमय चला करता है।

आत्मा और ब्रह्म की चेतना की भिन्नता

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! जब मंगलेत्वर महाराज से जब महर्षि भृंगी आदि ऋषियों के प्रश्न, उत्पन्न होने लगे, तो उस समय मुनिवरों! वायु मुनि महाराज को पुनः समय दिया गया, और यह कहा गया मंगलेत्वर ऋषि महाराज ने यह कहा कि महाराज! आज आप कुछ इनके प्रश्नों के उत्तर दीजिए। उन्होंने कहा ऋषि मुनियों ने कहा, कि महाराज! हम यह जानना चाहते है आप हममें सबसे श्रेष्ठ प्रतीत होते हैं, हम आपको मन ही मन में प्रणाम करते हैं, परन्तु हमारा यह प्रश्न है कि आप आत्मा को भी जैसे ब्रह्म की चेतना को स्वीकार करते हैं, ऐसे ही आत्मा की चेतना को स्वीकार करते हैं, क्या हम यह जानना चाहते हैं, कि चेतना भी भिन्न भिन्न होती

है, संसार में? क्या एक ही चेतना ब्रह्म की हम स्वीकार करते है, क्या आत्मा की चेतना भिन्न होती है? उन्होंने मुनिवरों! देखो, जब इस प्रश्न को स्वीकार किया और उनके प्रश्नों का आदर करते हुए, महर्षि वायु मुनि जी ने कहा है कि वास्तव में ब्रह्म की चेतना, महान सूक्ष्म है और उससे कुछ स्थूल रूप में आत्मा की चेतना स्वीकार की गई है। रहा यह वाक्य की कि तुम ऐसा स्वीकार करने लगते हो, कि ब्रह्म की जो चेतना है, ब्रह्म ही इस आत्मा में स्वीकार किया जाएं, ब्रह्म ही इस आत्मा गर्भ में स्वीकार किया जाएं, तो इसको मैं कदापि भी स्वीकार नहीं कर सकूंगा।

परन्तु जब वायु मुनि महाराज ने यह वाक्य, ऋषि मुनियों के समाज में एकत्रित होने लगे ऋषि मुनियों ने पुनः यह वाक कहा कि जब ब्रह्म अति सूक्ष्म है, ब्रह्म देखो, मानो जैसा तुमने अभी अभी इन शब्दों में उच्चारण किया था और इससे पूर्व विचारधाराओं में, क्या यह जो आत्मा है, यह मानो केश के गोल भाग के साठ विभाग किए जाएं और साठवां जो भाग है उसके निन्यानवें भाग किए जाएं उस निन्यानवें भाग को आत्मा को स्वीकार किया गया है और ब्रह्म का जो आकार स्वीकार किया गया बुद्धि के आङ्गन में, वह केवल जो निन्यानवां भाग है, उसके निन्यानवें भाग करो और जो निन्यानवां भाग है उसके साठ भाग करो और साठवां भाग आपने ब्रह्म को स्वीकार किया है, क्यों नहीं तुम आत्मा में ब्रह्म का प्रविष्ट स्वीकार कर रहे हो?

परन्तु इसका उत्तर देते हुए, महर्षि वायु मुनि महाराज ने वेद के कुछ शब्दों को उच्चारण करते हुए कहा, कि ब्रह्म व्यापय प्रभे अस्तिः अप्रति रुद्रो मा माश्च प्रति कृतानि रूद्राः अश्वेति रुद्रो भागं मम्वेति अक्सत्म् आभांचि आत्मा मध्यम् प्रमेणे अविस्त सुप्रजा। उन्होंने कहा कि यदि हम आत्मा के स्वभाव को भिन्न स्वीकार करते हैं, तो ब्रह्म को उसमें प्रविष्ट होने की आवश्यकता क्या है, हम क्यों स्वीकार करें? इसका हमें उत्तर दीजिए। परन्तु महर्षि इसमें भृंगी जी ने कहा कि क्या, उसको इसलिए स्वीकार किया जाए, क्योंकि एक ही ब्रह्म जगत में, जो महान

सूक्ष्म है, और वह सब जगह ओत प्रोत है, मानो वह आत्मा और प्रकृति सब में ओत प्रोत हो रहा है। इसमें महर्षि वायु मुनि जी ने कहा है, कि यह वेद का शब्द कहता है, सन्निधानं प्रभे अकृति रुद्रो अणु प्रमाणाः अकृति रूद्राः उस समय वायु जी ने कहा कि मैं इस वाक्य को इस प्रकार स्वीकार किया करता हूँ कि ब्रह्म को वास्तव में सर्वत्र ओत प्रोत स्वीकार करने में हमारा कोई मतभेद नहीं है। परन्तु यदि यह स्वीकार किया जाएं, कि आत्मा में ही ब्रह्म प्रविष्ट होता है, मानो इससे तो यह प्रतीत होता है, कि आत्मा के गर्भ में, ब्रह्म विराजमान है। वह जो ब्रह्म की चेतना है, वह जब मानो प्रकृति का स्वभाव उत्पन्न कर देती है, तो क्या इसी प्रकार आत्मा के स्वभाव को उत्पन्न नहीं कर सकेगी?

आत्मा का स्वभाव

परन्तु जब यह वाक् उत्पन्न हुआ, तो महर्षि भृंगी ने कहा, सौमां प्रति बद्धयं नाम प्रणो अस्ति व्यापं ब्रह्मे व्यापको नित्य प्रमाणाः आस्ति सुप्रजाः परन्तु उस समय जब महर्षि भृंगी जी ने कहा कि महाराज! क्या वही व्याप्य और व्यापक का स्वरूप जब उत्पन्न होने लगता है, जब प्रकृति में चेतना उत्पन्न हो जाती है, प्रकृति का स्वभाव उत्पन्न हो जाता है, परन्तु आत्मा का स्वभाव क्या है? मैं यह जानना चाहता हूँ, उस समय मुनिवरों! देखो, महर्षि वायु जी ने कहा कि आत्मा का जो स्वभाव है, मानो वह भी जैसे ब्रह्म में कुछ चेतना है, इसी प्रकार चैतन्य देव, चेतनता इसमें स्वीकार की जाती है और जब इसमें चेतना स्वीकार की जाती है, तो हम यह जानना चाहते हैं कि आत्मा की चेतना का स्वभाव क्या है? उस समय महर्षि वायु जी ने कहा कि आत्मा की चेतना का जो स्वरूप है, यह केवल वाणी का विषय नहीं है, यह सब अनुभव का विषय माना गया है। परन्तु जब वायु मुनि जी ने ऐसा कहा, तो महर्षि भृंगी जी ने का कि जब जब यह अनुभव का विषय है, तो ब्रह्म का विषय भी अनुभव का स्वीकार कर लेना चाहिए। क्या यह कैसे स्वीकार किया जाता है? क्या व्याप्य और व्यापक जो है मानो देखो, प्रकृति की स्वयं चेतना उत्पन्न हो जाती है, प्रकृति का स्वभाव क्या है? उस समय ऋषि ने कहा, कि प्रकृति का

जो स्वभाव है, वह जड़ता है, मानो देखो, उसमें जड़पन है, जड़वत होने के नाते, सूक्ष्म सा सन्निधान होते ही उसका स्वभाव उत्पन्न हो जाता है? मानो उन्होंने कहा कि उसका स्वभाव क्या है? क्योंकि उसका व्याप्य और व्यापक होते ही उसका स्वभाव क्या है, जो उत्पन्न हो जाता है। उन्होंने कहा कि प्रकृति का स्वभाव है, रचना, उसकी रचना उत्पन्न होने लगती है जैसे ब्रह्म की चेतना से यह बाह्य जगत उत्पन्न हो जाता है? इसका प्रसारण हो जाता है, इसमें व्यापकवाद की उत्पति हो जाती है, मानो उसको स्वभाव उत्पन्न हो जाता है, इसी प्रकार आत्मा की जो चेतना है, आत्मा की चेतना का आभास चित्त पर आते ही, चित्त अपना व्यापार कार्य प्रारम्भ कर देता है।

उन्होंने कहा कि क्या आत्मा चित्तवत है? उन्होंने कहा कि आत्मा चित्तवत भी स्वीकार किया जाता है और नहीं भी किया जाता। परन्तु उस समय वायु मुनि जी के विचारों में मुनिवरों! देखो, एक महान क्रान्ति प्रारम्भ होने लगी। महर्षि भृंगी जी ने जब यह कहा कि आत्मा में क्या तुम चित्त को स्वीकार करते हो? उन्होंने कहा कि वास्तव में आत्मा में, व्यापार में चित्त स्वीकार करते हैं, वास्तव में देखो, वह चित्त से भी क्योंकि किसी काल में भिन्न स्वीकार की गई है। ऐसा भी स्वीकार किया गया है, कि आत्मा में चित्त को स्वीकार करने से आत्मा इसमें सन जाती है, इसमें लिपायमान हो जाती है, किन्तु परन्तु यहां यह वाक्य कहा जाता है जहाँ चित्त में लिपायमान होने का प्रश्न उत्पन्न हो जाता है, वहाँ यह भी उत्पन्न हो जाता है कि यह जो आत्मा की चेतना है, आत्मा की जो परिस्थिति है, मानो ये केवल चित्त के ऊपर उसका आभास आता है, उसका एक प्रतिबिम्ब आता है, जैसे सूर्य का प्रतिबिम्ब मानो देखो, कुम्भाकार में आता है, मानो देखो, वहाँ सूर्य उसमें लिपायमान नहीं हो जाता है।

तपस्या से विश्वास

परन्तु इस प्रकार जब ऋषि मुनियों में यह वाक्य प्रारम्भ होने लगा, तो और वायु मुनि महाराज का मुनिवरों! देखो, ओर भी ऋषि मुनियों ने क्रान्ति आ गई, वायु

मुनि महाराज के प्रति। महर्षि आदित्य मुनि महाराज ने कहा कि महाराज! यह वाक्य तो तुम्हारा सुन्दर है, परन्तु इसका हम आदर करते हैं, परन्तु हम कैसे स्वीकार करें? हमें आत्मा में कैसे इसका विश्वास हो? उन्होंने कहा कि आत्मा में विश्वास जब होगा, जब तुम इसके ऊपर तपस्वी बन जाओगे। तो मुनिवरों! देखो, यहां जब महर्षि वायु मुनि जी ने यह घोषणा की मानो देखो, नाद किया कि तपस्वी बनो, तो ऋषि मुनियों में एक और भी क्रान्ति उत्पन्न होने लगी। महर्षि मंगलेत्वर ऋषि महाराज ने कहा कि हम क्या जितने मानव हैं, क्या इनमें तुमसे अधिक कोई तपस्वी ही नहीं है? परन्तु देखो, जब यह कटु शब्दों का प्रतिपादन होने लगा, तो वायु मुनि महाराज मौन हो गएं और मौन होकर के यह कहा कि मेरा विषय नही है वाद विवाद का, ये मेरा इस प्रकार कटु शब्दों में आ जाना, मेरा कोई विषय नहीं है। परन्तु मैं तो एक वाक्य जानता हूँ, कि जो वाक्य तुम्हारे आङ्गन में या मेरे विचारों में नहीं आयेगा, परन्तु वह केवल अनुभव का विषय रह जाता है, उसको वाणी उच्चारण नहीं कर सकती, क्योंकि ब्रह्म का जो वास्तविक रचना है, ब्रह्म का जो वास्तविक स्वरूप है, आत्मा को जो स्वरूप है, मानो देखो, उसके बुद्धि से तुम उसको स्वरूप को जानकारी में नहीं ला सकोगे। इसीलिए उसको अनुभव किया जाएं और अनुभव करने के पश्चात उस समय देखेंगें कि तुम कोई वाक्य भी उच्चारण कर सकोगे। परन्तु आदित्य मुनि महाराज ने कहा कि वास्तव में वाक्य तो आदरणीय है, इस वाक्य को हम आदर पूर्वक स्वीकार करने के लिए तत्पर हैं, क्योंकि ब्रह्म का विषय, आत्मा का विषय अन्तिम जो इसकी परम्परा है, मानो देखो, वह सब अनुभव का विषय रह जाता है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! हमारे यहाँ, परम्परागतों से यह स्वीकार किया गया है, कि हम ब्रह्म की चेतना में संलग्न हो जाएं, और आत्मा की चेतना को स्वीकार करते हुए, हम वास्तव में उन वाक्यों को अनुभव में लाने का प्रयास करें। जब मुनिवरों! मानव इसका अनुभव कर लेता है, बुद्धि से परे इसका अनुभव हो जाता है, तो उस समय बेटा! उसकी वाणी यहाँ संसार के तत्त्वों में उसकी वाणी उच्चारण करने

के लिए तत्पर नहीं होती।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! आज का यह वाक् हमारा क्या कहता चला जा रहा है, कि हमारे यहाँ एक जटा पाठ होता है, परन्तु जटा पाठ की जो शृङ्खला है, वह इस प्रकार मानी गई है, इस प्रकार हमारे यहाँ स्वीकार की गई है क्या जैसे वह जैसे माला में, धागे और मनके होते हैं, आज मेरे प्यारे! ऋषि मुनियों ने यह कहा है क्या, माला पाठ को कैसे स्वीकार करें? बेटा! देखो, वेद की जो प्रत्येक ऋचा है, वेद का जो प्रत्येक वाक् है, वह ओ३म् रूपी धागे से पिरोया हुआ है। बेटा! ओ३म् रूपी धागे से पिरोया हुआ होने के नाते से वह मानो देखो, वह शृङ्खलाबद्ध हो रहा है। इसी प्रकार मुनिवरों! वह जो ब्रह्म की चेतना है, इस ब्रह्म की चेतना में मानो देखो, ये सब जितना जगत है, यह मनके के स्वरूप में परणित हो रहा है। परन्तु जैसे धागा पृथक है, अकर्त्ता है, क्योंकि इसमें वह शृङ्खला बद्ध है क्योंकि प्रकृति के स्वभाव में शृङ्खला बद्ध होने के नाते। इसलिए बेटा! हम उस परब्रह्म परमात्मा की याचना किया करते हैं, कि हे परब्रह्म परमात्मान! हे चैतन्य देव! हम आपकी आराधना कर रहे हैं, क्योंकि आपका ही स्वरूप हमें प्रकृति में प्रतीत होने लगता है, प्रभो! इसलिए हम आपको बारम्बार नमस्कार कर रहे हैं।

कर्त्ता अकर्त्ता के विषय में गुरुदेव का निष्कर्ष

आज मैं इसको वाद विवाद का विषय नहीं बनाना चाहता हूँ बेटा!। मैंने बहुत पूर्व के काल में, कल के वाक्यों में यह कहा था कि हमारा निजी क्या विचार है इस सिद्धान्त में हमारा निजी क्या विचार है। क्योंकि मैंने कई काल में देखो, परमात्मा को कर्त्ता भी स्वीकार करता चला आया हूँ, परन्तु कई काल में इसको अकर्त्ता भी स्वीकार किया गया है। तो मेरे प्यारे ऋषिवर! हमारा जो सार्वभौम सिद्धान्त है, विचारधारा है, बुद्धि की जो अन्तिम प्रणाली है, बेटा! हम भी वायु मुनि जी के सिद्धान्त को स्वीकार करते चले आएं हैं। रहा यह वाक्य, कि इस वाक्य को इस प्रकार स्वीकार करने लगूं, कि हमारा प्रधिअस्तवम् ब्रह्मे आभ्यास्ति सुद्रा यह संसार कैसे यह स्वीकार करता है ब्रह्म को। बेटा! इस वाक्य में मुझे अधिक जानकारी

नहीं है, परन्तु मैंने ऋषि मुनियों के सिद्धान्त तुम्हारे समक्ष, नियुक्त किए हैं, जो भी तर्कवाद से, मानो देखो, बुद्धि संगत होता है, उस वाक्य को अन्तिम परम्परा कहते हैं, और उसको मानना बुद्धिमानो का कर्तव्य होता है, बेटा!। सबसे ऊँचा जो कर्तव्य है, वह इसको इसी प्रकार स्वीकार किया जाता है।

पूज्य महानन्द जीः गुरु जी! मैं आपसे एक प्रश्न करने वाला था। उसमें दो प्रश्नों के लिए कहा था, क्योंकि आधुनिक काल का जो जगत है वह दो प्रकार का सिद्धान्त स्वीकार करता है। एक तो ये करता है कि वह जो ब्रह्म है, वह आत्मा में विराजमान है और आत्मा को, प्रकृति को, गति ब्रह्म देने वाला है और एक यह स्वीकार करता है, कि जैसे कुम्भाकार में जल है और उसी जल को समुद्र में अर्पित कर दिया जाएं, तो वह भी समुद्र बन जाता है, इसी प्रकार एक ही ब्रह्म है और एक ही ब्रह्म में यह सर्वश जगत ओत प्रोत है। एक सिद्धान्त यह है जो आधुनिक काल में परणित हो रहा है, क्योंकि वर्तमान काल में मैं दृष्टिपात कर रहा हूँ। आज मैंने सूक्ष्म शरीर से कुछ मानव की प्रवृत्तियों का भी कुछ निरीक्षण किया है, परन्तु जहाँ यह वाक् प्रारम्भ हो रहे है यह बहुत सुन्दर अस्ति सुप्रजातो भगवन! कुछ इस प्रकार की विचारधाराएं हैं। भगवन! कुछ मानवों में मुझे यह गति प्रतीत हुई है, कि एक आधुनिक काल के प्राणियों में यह गति कि एक आचार्य दयानन्द जी हुए हैं, जिनको हम ऋषि भी कहते हैं क्या उन्हें पूर्व काल में शमीक ऋषि के नामों से उसकी आत्मा का उत्थान स्वीकार करते हैं। (प्रवचन का कुछ भाग शब्द ध्वनि के रूप में उपलब्ध नहीं है.....) आपने और मैंने पूर्व काल में इस वाक्य को स्वीकार किया था, आधुनिक काल में उसको दयानन्द के नाम से परणित किया जाता है, तो उन्होंने आपके काल के शब्दों से कहा है कि ऋषि दयानन्द के सिद्धान्त को समाप्त कर दिया।

ब्रह्म का जो स्वरूप

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य.....बेटा! वास्तव में यदि वह पुनीत पवित्र आत्मा शमीक ऋषि की थी, उस समय यह वाक्य होते तो हम यह जानकारी कर लेते। इसमें

क्या बात है, रहा यह वाक्य कि आधुनिक काल का समाज किसी के, गुरु के सिद्धान्त को हम स्वीकार नहीं करते, तो इसका अभिप्राय यह नहीं कि हमें उनके वाक्यों को स्वीकार ही करता है, क्योंकि यदि संसार में मानव यह स्वीकार करने लगे, कि एक मानव ने जो शब्द उच्चारण किया है, वह सार्वभौम सिद्धान्त हो गया है। इसका अभिप्राय यह नहीं है। यह तो मानव की बुद्धि है, मानव का तर्क है, मानव का सिद्धान्त है, इसमें सब स्वतन्त्र है, क्योंकि यह जो ज्ञान है, यह भी परमात्मा की एक अनुपम धारा है। यह अनन्त है, जैसे ब्रह्म अनन्त है, और प्रकृति अनन्त है इसी प्रकार उसमें जो ज्ञान उत्पन्न होता है, वह भी अनन्त है। इस अनन्तता को तुम सीमितता में लाना चाहते हो, तो बेटा! यह वाक्य तो मेरे आङ्गन में स्वीकार नहीं किए जाते, क्योंकि यह न आने वाले वाक्य है, रहा यह वाक्य, कि आधुनिक काल का यह समाज यह क्या कहता है, कि एको ब्रह्मा मानो एक ही ब्रह्म के गर्भ में है, तो मैंने पूर्व ही आदित्य और महर्षि अंगिरा जी के सिद्धान्तों का प्रतिपादन करता चला आ रहा हूँ, और उनको तर्कवाद पर लाने के लिए मैं सदैव तत्पर रहता हूँ। रहा यह वाक्य कि चाहे कोई दयानन्द आचार्य हो, कोई भी मानव हो, और इस संसार के ज्ञान विज्ञान को एक सूक्ष्म सी बुद्धि से अपने आङ्गन में लाना चाहता है। तो बेटा! मैं यह वाक्य स्वीकार नहीं कर सकता, क्योंकि परमात्मा का ज्ञान अनन्त है। बेटा! तुमने यह स्वीकार किया होगा कि आत्मा कितनी सूक्ष्म है, और उससे अति सूक्ष्म ब्रह्म है। ब्रह्म की जो अति सूक्ष्मता है, चेतना है, अति ब्रह्म का जो स्वरूप है, क्या, उसे मानव वाणी से उच्चारण कर सकता है? परन्तु यह असम्भव है। रहा यह वाक्य कि वेदों से यह वाक्य आते हैं, क्योंकि वेदों का ज्ञान अनन्त है। एक एक शब्द की अनेक कामनाएँ, व्याख्याएं होती हैं। एक ही व्याख्या नहीं होती, अनन्त व्याख्या हो सकती है, और नाना प्रकार की व्याख्याएं होती हैं और नाना प्रकार के ज्ञान विज्ञान की धाराएं भी उत्पन्न हो सकती हैं, परन्तु मैं कोई संदेह का वाक्य नहीं उच्चारण करना चाहता, जो सार्वभौम सिद्धान्त है, मैंने उन वाक्यों को तुम्हारे समक्ष, प्रगट किया है। तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा

है। यह वाक्य बहुत पूर्व काल के पश्चात, यह वाक्य बेटा! तुम्हारे समक्ष आ गया, मै इन वाक्यों को उच्चारण करने के लिए तत्पर नहीं होता हूँ, यह तो इसलिए क्योंकि तुम्हारा गम्भीरता से प्रश्न था न प्रति कहाँ से तुम इस वाक्य को लाए हो, इसलिए मैंने उत्तर दे दिया है। मैं तो सदैव ही ब्रह्मा की महिमा को गाता रहा हूँ और उसकी महिमा का गुणगान गाना ही चाहिए, प्रत्येक प्राणी को। अब रहा यह वाक्य कि आधुनिक काल में कोई सम्प्रदाय या कोई भी अस्वस्त स्वीकार नहीं करता है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! आप ऐसा उच्चारण नहीं कर सकते, क्योंकि ऋषि दयानन्द को हम सम्प्रदाय स्वीकार नहीं करते।

पूज्यपाद गुरुदेवः हां हां बेटा! तुम्हारा यह वाक्य सत्य है, कि तुम सम्प्रदाय स्वीकार नहीं करते हो, परन्तु सम्प्रदायवाद वहाँ आ जाता है, जब एक ही ऋषि के वाक्यों की सार्वभौम सिद्धान्त स्वीकार कर लेते हैं। तो बेटा! उसमें रूढ़ि आ जाती है, और रूढ़ि आ जाने का नाम ही हमारे यहाँ सम्प्रदाय कहते है। इसमें ऐसा कोई वाक्य नहीं, कि तुम्हें इस पर क्रोध आ जाएं। ऐसा प्रतीत होता है, कि तुम दयानन्द के सिद्धान्त को स्वीकार करते हो।

पूज्य महानन्द जीः हास्य..... भगवन! ऐसा तो नहीं है, क्योंकि ऋषि मुनियों के तो सभी विचार स्वीकार कर लेने चाहिएं।

तपे विचारों में अपरिवर्तनता

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ हाँ, हमारा इसमें कोई पृथक विचार तो नहीं है, हम इन वाक्यों को स्वीकार करते हैं। प्रश्न यह है कि जो महान व्यक्ति होते हैं, उनकी प्रशंसा करनी ही चाहिये। परन्तु रहा यह वाक्य, कि हमारे विचारों में परिवर्तन लाना चाहता है। तो बेटा! जो तपे हुए विचार होते हैं, उनमें परिवर्तन किसी भी काल में नहीं आया करता है, क्योंकि हमारे विचार परम्परा से तपे हुए हैं। अब तुम इन संसार के वाक्यों को चुनकर हमारे समीप लाओ, तो यह वाक्य स्वीकार नहीं किया जाता, क्योंकि जहाँ परमात्मा की दया को स्वीकार करते हैं, बेटा! अन्तिम प्रणाली जो

बुद्धि की होती है, उस पर जाना चाहिए। क्योंकि नीचे यह वाक्य स्वीकार कर सकते हैं, कि परमात्मा न्यायकारी भी है, दयालु भी है, किन्तु जब उसको तर्कवाद पर लाते हैं, बुद्धिवाद पर लाते हैं, प्रज्ञावादी बुद्धि के आङ्गन में लाते हैं। तो उस समय हमें यह सिद्धान्त प्रतीत होता है। परन्तु नीचे तो सभी को यह स्वीकार कर लेना चाहिए क्योंकि यदि इन वाक्यों को, जो मैंने अभी अभी तुम्हारे समक्ष नियुत किए है इस सिद्धान्त से अपठित प्राणियों में क्रान्ति आ सकती है, क्रान्ति आने की संभावना रहती है इसलिए हमें प्रारम्भ में यह वाक्य उच्चारण में कोई दोषारोपण नहीं होता। क्योंकि परमात्मा न्यायकारी है दयालु है। ज्ञानमार्ग में और भक्तिमार्ग में बड़ी भिन्नता होती है, क्योंकि जो भक्तजन होते हैं, वह सर्वश परमात्मा को कण कण में स्वीकार करते हुए, उसकी याचना करते हुए, अपने को संसार से पार ले लाते हैं। परन्तु उन मानवों का संसार में गिरने का भय रहता है। भय की प्रतीति इसलिए होती हैं क्योंकि उनमें विवेक तो होता है, कण कण में होने के नाते, परन्तु बुद्धिवादी का जो ज्ञान है, उस ज्ञान को जो विवेक है, वह उसके समीप न होने के कारण, यहाँ गिरने का सन्देह रहता है। मैं इस वाक्य को अधिक विडम्बना में नहीं लेना चाहता हूँ। रहा यह वाक्य कि यह मानव क्या स्वीकार करता है बेटा! यह वाक्य बहुत गम्भीर है। यह कोई शास्त्रार्थ का विषय नहीं रह जाता है। यह तो केवल अपने विचारों का और अनुभव का विषय है, तपस्या का विषय है, क्योंकि जो प्राणी संसार में तपते नहीं है, उन प्राणियों को एक एक वाक्य का भय रहता है और भय इसलिए रहता है कि वह यह जानते रहते हैं, कि कहीं तुम्हारा वाक्य नष्ट न हो जाएं, कहीं तुम्हारा वाक्य मिट न जाएं, तो यह मानव के मन में प्रवृत्ति रहती है। प्रत्येक मानव यह चाहता है की जिस सिद्धान्त को वह स्वीकार कर लेता है, उसकी वह पुष्टि करता है कि वह वाक्य मिट न जाए, अमिट रहना चाहिए। बेटा! यहाँ यह वाक्य तो है नहीं। तुमने यदि इसका प्रश्न किया है, तो मैंने उसका सुन्दर रूप से उत्तर दे दिया है। तुम परम्परा से जानते हो, कि मैंने कितने समय प्रश्चात इन वाक्यों का उच्चारण किया है। यह भी तुम्हारे प्रश्नों के अनुसार हम वाद

विवाद की वेदी पर न जाएं, परन्तु इसको विचार की वेदी बनाएं, विचार करें और तर्कवाद पर ले जाएं और तर्कवाद से भी सिद्ध न हो, तो तपस्वी बनें, मौन हो जाएं, उस ब्रह्म की चेतना में, आत्मा की चेतना में, अपने को अनुभव करें। आत्मा में विश्वास धारा को उत्पन्न करें, तो बेटा! यह सब वाक्य सिद्ध हो सकते हैं। इसमें कोई विवाद नहीं है।

रहा यह वाक्य कि आधुनिक काल का मानव एक ही ब्रह्म को स्वीकार करता है। वास्तव में मानव को ऐसा प्रतीत होने लगता है, कि एक ही ब्रह्म है, क्योंकि जिस समय यह आत्मा ब्रह्म के स्वरूप को अपने में एकत्रित कर लेती है, और ब्रह्म के स्वरूप को यह जान लेती है, केवल अगम्मता से और उस अनुभव से जो वाणी से उच्चारण नहीं किया जाता, उस योगी को ऐसा प्रतीत ही होने लगता है, कि संसार में एक ही ब्रह्म की चेतना है। यह जो जगत है, यह परिवर्तन होने वाला है और ब्रह्म की एक चेतना है, जो संसार में चेतनित मानी गई है। तो बेटा! यह वाक्य उस काल में होता है, जब मानव का बुद्धिवाद समाप्त हो जाता है। मैंने तो तुम्हारे समक्ष, बुद्धिवादियों की चर्चा प्रगट की है और वह बुद्धिवादियों के वाक्य भी तर्क संगत हैं, इसलिए इस वाक्य को स्वीकार करने में किसी प्रकार का दोषारोपण नहीं होना चाहिए। यदि इस वाक्य को मैं और गम्भीरता से ले जाँऊ तो यह भी मुझे शोभा नहीं देता।

परन्तु मैंने ब्रह्म के, आत्मा के, और ब्रह्म और प्रकृति और आत्मा के, कुछ रूप को वर्णन किया है। अब तुम भी बेटा! इस सिद्धान्त को परम्परा से स्वीकार करते चले आए हो। इसलिए मैं कहा करता हूँ कि तुम इस वाक्य को कहीं से लाए हो? क्योंकि मैं का शब्द हमें शोभा नहीं देता, कि हम मैं का उच्चारण करें। क्योंकि मैं में ही तो प्रकृतिवाद होता है। जितना भी यह मानव है, यह मैं में ही प्रकृतिवादी होता है। जैसे ओ३म् का उच्चारण होता है अ, उ और म्, मानो ओ३म् जो शब्द है यह सार्वभौम शब्द है। यह ब्रह्म का वाची है और उ आत्मा का वाची है और यह जो म् है यह प्रकृति का वाची है। क्योंकि प्रकृतिवादी ही मैं का उच्चारण किया

करते हैं। यह मेरा आश्रम है, यह मेरा शरीर है, यह मेरी आत्मा है, यह मेरा परिवार है, यह मेरा जगत है, यह मेरा देश है, मानो इस प्रकार जो मैं की प्रवृत्ति प्रकृतिवाद में आती है।

प्रकृतिवाद

तो बेटा! मैं यह उच्चारण करना चाहता हूँ, तुम मुझे मैं का शब्द का उच्चारण नहीं करना चाहते। जितना भी मैं वाद है वह सब प्रकृतिवाद है। और जितना ओ३म् वाद है, मानो विचारवाद है, हम वाद है, यह सब ब्रह्मवाद माना गया है। इसलिए हमें मैं का प्रतिपादन मैं का उच्चारण करना भी हम यह स्वीकार करते हैं कि मैं का संस्कार चित्त में यदि अंकुरित हो गया है, तो इसका वृक्ष होगा, और वृक्ष होगा तो बेटा! प्रकृतिवाद में पुनः से आना होगा। तो इसलिए हमारा जो यह शब्द है, इस वाक्य को तुम मैं में न लाना, क्योंकि जब अधिक कुतर्क होने लगता है, तो मानव को मैं में आना स्वाभाविक हो जाता है, इसलिए कुतर्क नहीं होना चाहिए, केवल तर्कवाद होना चाहिए।

महात्मा दयानन्द

रहा यह वाक्य, कि हम यह स्वीकार करते रहते हैं, जैसे तुमने दयानन्द की आत्मा का प्रश्न किया, जब वह आत्मा शमीक ऋषि के रूप में थी, तो बेटा! वह इन्हीं वाक्यों का समर्थन करती थी। इन्ही वाक्यों को स्वीकार करती थी, उन्हीं वाक्यों को ले करके उन्होंने त्रैतवाद को स्वीकार किया है। यदि उनके पुरातन के संस्कार नहीं होते, शमीक ऋषि वाले, माँ की जो प्रीति, ऋषिवर का वाक्य था अटूटी जी, यदि वह माता उसे सुन्दर नहीं बनाती, उसका सुन्दरत्व न होता तो यहाँ संसार में बेटा! जैसा हमें प्रतीत हुआ है, वायु मण्डल से, परमाणुवाद से, देखो, उस भयंकर काल में आ करके, उस महान विभूति ने, त्रैतवाद की घोषणा की और उनका वह शब्द अकाटय रहा है। इसलिए उनका आदर करना चाहिए। उस पवित्र ऋषि आत्मा का आदर करना हमारा स्वभाव है, क्योंकि आदर करने में हमारा कोई अग्रित नहीं होता, हम अकटित नहीं होते। अन्यथा जहाँ एकवाद हो, वहाँ त्रैतवाद की कोई

महत्वता नहीं रह जाती है, वहाँ त्रैतवाद नहीं रह जाता है। इसलिए त्रैतवाद का प्रसार अधिक हुआ, क्योंकि वह एकवाद से अधूरे थे। अधूरे इसलिए थे, क्योंकि एकवाद वह प्राणी उच्चारण कर सकता है, जो मानव ब्रह्म के स्वरूप में अपनी आत्मा को परणित कर देता है और वह अनुभव का विषय, मानो वह एकवाद की घोषणा, वह किसी भी काल में नहीं कर सकता, बेटा! इसलिए हमारा जो यह वाक्य है, वह इसलिए है क्योंकि वास्तव में संसार के प्राणियों में ज्ञान की प्रतिभा होनी चाहिए। आज इन वाक्यों में ज्ञान की प्रतिभा होनी चाहिए। आज हम इन वाक्यों को लेकर अधिक टिप्पणी नहीं करना चाहते, क्योंकि वाक्य का समय समाप्त ही होने जा रहा है।

आज के वाक्यों का अभिप्राय यह है कि हमारा जो विचार का विषय है, उसको विचारमय बनाना चाहिए। जो विवाद का विषय है, विवाद किन वाक्यों का करोगे? मानो, जो मानव संसार में दुराचारता में रहता है, जो आत्म विश्वासी नहीं होता, बेटा! उसका तुम सदैव संसार में विरोध करते रहो, उसके प्रति अपना वाद प्रगट करते रहो और जो मानव चिन्तनवादी है, ब्रह्म का चिन्तन करता है, आत्मा का चिन्तन करता है, प्रकृति का चिन्तन करता है, सिद्धान्त में ऊँचा चला जाता है, उसका सदैव आदर करना चाहिए, और संसार में नास्तिक प्राणी वही होते हैं, जो वेद के पठन पाठन करने वाले होते हैं। जो वेद को यह कहता है कि मैं वेद को स्वीकार नहीं करता और वह चरित्र को स्वीकार करता है, वह नास्तिक नहीं। एक मानव वेद का पठन पाठन करने वाला, अक्षरों का, परन्तु दुराचार में है, तो बेटा! जो वेद को स्वीकार नहीं करता, वह उस वेदपाठी से सुन्दर कहलाया जाता है इसलिए वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है, कि वेद का नाम प्रकाश है, प्रकाश में मानव को परणित हो जाना चाहिए। मानव को अन्धकार में नहीं रहना चाहिए। इस प्रकृति के आवेशों में रहना है, परन्तु इनके इतने आवेशों में नहीं रहना चाहिए कि उसकी आत्मा को जो विश्वास है, आत्मा में तो तन्मय हो जाना है उससे वह दूर हो जाएं।

इसीलिए महापुरूषों की परम्परा से यह कर्तव्य चला आया है, कि जो मानव दुराचार में परणित होते हैं, उससे शान्त रह करके, उसका मन ही मन में विचार करो, मानो मन ही मन में उसके प्रति घृणा उत्पन्न हो जानी चाहिए। वास्तव में ऋषि मुनियों ने तो यहाँ तक कहा है कि घृणा से भी मानो संस्कारों का जन्म होता है, इसलिए घृणा मत करो। परन्तु यदि घृणा करनी है, तो आत्मा से नहीं, वह शब्दों से करो, क्योंकि शब्दों की जो घृणा है, वह संस्कारों का जन्म नहीं देती, और जो मन का चिन्तन घृणा का है, वह मानव को जन्म जन्मान्तरों में ले जाता है। इसीलिए हमारे यहाँ मन से भी घृणा नहीं करनी चाहिए। केवल शब्दों से घृणा करनी चाहिए। हमारे यहाँ ऋषि मुनि स्पष्ट उच्चारण किया करते थे। मुझे स्मरण आता रहता है जब माता गार्गी राजा जनक की सभा में पहुंची। महान सभा थी, वह नग्न रहती थी, उस समय राजा जनक ने कहा गार्गी! तुम मेरी सभा में नग्न आ रही हो, तुम्हें लज्ञा नहीं आती, उस समय सात्विक शब्दों में क्या कहा था, गार्गी ने, कि हे राजा जनक! क्या तू ब्रह्म ज्ञान में परणित होना चाहता है? जब तुम एक कन्या को नग्न नहीं दृष्टिपात कर सकते, तो तुम ब्रह्म ज्ञान को क्या प्राप्त कर सकोगे। बेटा! जब इन शब्दों का राजा जनक के अन्तःकरण में प्रहार हुआ, तो राजा उनके चरणों में ओत प्रोत हो गए।

वाक्यों के उच्चारण करने का क्या अभिप्राय है? कि मानव को शब्दों से ही घृणा करनी चाहिए, यदि घृणा करनी है, तो राजा जनक की सभा में गार्गी ने वह वाक्य प्रगट किए, जिन्हें कोई मानव श्रवण नहीं कर सकता था। परन्तु राजा जनक सात्विक था, और मन से घृणा नहीं थी। जो मानव मन से घृणा करता है, उसका संसार में कहीं आदर नहीं होता है। जब उसका आत्मा में ही आदर नहीं होता, मानव के शरीर में ही उसके विचारों का आदर नहीं होता है, तो यह ब्राह्य जगत भी उसका आदर नहीं किया करता है।

तो हमें विचार विनिमय करना है, हम विचार की वेदी पर आए हैं, हमें सब वाक्यों

को विचार विनिमय करके चलना हैं। क्योंकि वास्तव में मानव विचारों का क्षेत्र है। आज का हमारा यह वाक्य समाप्त होने जा रहा है। आज के हमारे वाक्यों का अभिप्राय है कि हम ब्रह्म की चेतना को स्वीकार करते हुए, (शब्द ध्वनि के रूप में उपलब्ध.....)

मुनिवरों! देखो, उस ब्रह्म में परणित होते चले जाएं, उस ब्रह्म में लीन होते चले जाएं, जो ब्रह्म मानो सर्वत्र ओत प्रोत है, प्रकृति उसी के सन्निधान से अपना कार्य कर रही है, परमात्मा अकर्त्ता रहता है। परन्तु देखो, उसी में हमारा परणित हो जाना, उसी में समाहित हो जाना, बेटा! देखो, वह मुक्ति का एक प्रबल साधन हमारे यहां, उन्नत प्रदीप, कहा गया है। जैसे हमने कपिल के शब्दार्थों में, हमने कुछ वाक्य प्रगट किए गएं थे, बेटा!। महर्षि कपिल मुनि महाराज ने बहुत ही सुन्दर शब्दों में प्राण की और मन की महत्वता स्वीकार की। परन्तु इन दोनों के मध्य में, आत्मा की चेतना को भी उन्होंने भी स्वीकार किया था, उस समय। यदि कोई आत्मा की चेतना को स्वीकार नहीं करेगा और इसको गुण और गुणी स्वीकार कर लोगे, तो बेटा! इसमें नाना प्रकार के दोषारोपण आ सकते हैं। इसलिए देखो, इस वाक्य को स्वीकार करना हमारा सभी का कर्तव्य है, और परमात्मा की याचना करते हुए, हमें बेटा! इस संसार सागर से जो मान अपमान वाला संसार है, इससे हमें पार होना है, इसके साथ हमारा वाक्य समाप्त हो गया है। आज का वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन होगा, इसके पश्चात यह वाक्य समाप्त होता गया।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन! तो भगवन! मैं तो आप से कल भी प्रश्न करने वाला था।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य.....बेटा! समय आयेगा प्रश्न करते रहना, इसमें क्या वाक्य हैं?

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन!।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो अब वेद का पाठ होगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन! आज्ञा।

पूज्यपाद गुरुदेवः ओ३म् गता रयित्वनाः आत्मा भद्राणि गयश्चमा रेवं आभाहम्।
ओ३म् उदुग्रीवा चरी इदं मां धेनु गया आभा मनो प्राची रथा अमृता माणां देवं भागाम्
ओ३म् देवं मया सर्वं भद्रा ब्रह्मणाम्।

5. 690412-परमात्मा कर्त्ता या अकर्त्ता

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने, पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, नित्य प्रति वेदमन्त्रों का पठन पाठन प्रायः होता ही रहता है। क्योंकि वेदों के, पठन पाठन के, भी नाना प्रकार होते हैं उच्चारण करने के, जैसे जटा पाठ, घन पाठ, माला पाठ, विसर्ग पाठ, उदात्त, अनुदात्त और भी नाना प्रकार होते हैं। हमारे यहाँ एक माला पाठ होता है, मेरे प्यारे महानन्द जी! यह कहा करते हैं, कि हम इन पाठों के जो भेदन है, इनके नाना जो प्रकार हैं, उनमें एक माला पाठ होता है। इसे माला पाठ क्यों कहा जाता है? हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने एक वाक कहा है। इसके सम्बन्ध में, है कि माला कहते हैं जहाँ मनके और धागा होता है। धागे में पिरोएं हुए मनके होते हैं। उसको माला कहते है। इसी प्रकार यह माला पाठ इसलिए कहा जाता है कि वेद का जितना भी ज्ञान है, अथवा इसका विज्ञान है और वेद की जो प्रत्येक ऋचा है, प्रत्येक मन्त्र है, वह ओ३म् रूपी धागे में पिरोया हुआ है। इसीलिए हमारे ऋषि मुनियों ने जब वेदमन्त्र का उच्चारण करना प्रारम्भ होता है। तो प्रारम्भ में ओ३म् का उच्चारण किया जाता है। क्यों किया जाता है? इसीलिए किया जाता है, क्योंकि जितना यह जगत है, यह ब्रह्माण्ड है, यह उस परमपिता परमात्मा की महानता में पिरोया हुआ है। जो दृष्टिपात आता है। क्योंकि मानव ज्ञान और विज्ञान के शिखर पर पहुंच जाता है, अथवा कोई भौतिक विज्ञान में चला जाता है, कोई आध्यत्मिक विज्ञान का विश्लेषण करने लगता है। परन्तु वह सब उस परमपिता परमात्मा में पिरोया हुआ है।

सृष्टि का प्रार्दुभाव

हमारे यहाँ जब यह माना जाता है कि ज्ञान, यह वास्तव में परमात्मा से ही कटिबद्ध है, उसी से सुगठित है, तो यह ब्रह्माण्ड भी, जितना भी परमाणुवाद है, जितने भी ये प्रपञ्च हैं, अथवा सर्वशः जगत है, यह उस परमात्मा में ही पिरोया हुआ है।

परन्तु इन वाक्यों में नाना प्रकार के दोषारोपण आ सकते है यदि इस सर्वश जगत को उस परमपिता परमात्मा में पिरोया ही स्वीकार कर लेते है तो वह नाना प्रकार के अवगुण मानव में आते रहते हैं, अथवा प्रकृति में आते रहते हैं, क्या वह भी परमात्मा से ही सुगठित है? तो यहाँ इसका ऋषि मुनियों ने उत्तर दिया है, और कहा है, कि वह परमात्मा, नाना प्रकार के जो अवगुण है, उनसे वह दूरी रहता है। उनसे वह पृथक रहता है। जब मुनिवारों! विचारने लगते हैं कि सृष्टि का प्रार्दुभाव कैसे होता है? क्या सृष्टि का प्रार्दुभाव मनके रूपों से होता है जैसे धागा और मनके होते हैं इसी प्रकार होता है अथवा इससे पृथक होता है तो हमारे यहाँ आदि आचार्यों के भिन्न भिन्न प्रकार के उसमें विचार हैं। महर्षि वायु जी का विचार कुछ और है, अंगिरा जी का विचार और है? परन्तु मैं इन विचारों को तुम्हारे समक्ष, नियुक्त किए देता हूँ। अब जो तुम्हारे आङ्गन में आए उसे स्वीकार कर लेना।

एक ही ब्रह्म में सर्वस्व जगत

महर्षि अंगिरा जी कहते है, सबसे प्रथम तो वायु जी, आदित्य जी, आदित्य जी कहते है, कि वह जो परमात्मा है, उसमें ही सर्वश जगत पिरोया हुआ है। वह जो प्रकृति है, यह मानो परमात्मा के गर्भ में विराजमान रहती है और परमात्मा का जो महतत्त्व है, उसी के आश्रित मानो देखो, महतत्त्व के उत्पन्न होते ही, यह प्रकृति और परमात्मा दोनों देखो, प्रकृति का सन्निधान ब्रह्म से होता है, प्रकृति रच जाती है, मानो इसका व्यापक रूप बन जाता है। व्याप्य और व्यापक दोनों में सुगठिता दोनों में रहने के नाते मानो देखो, उसमें एक विकृत अध्यान धारा, आश्रित होने लगती है। ऐसा हमारे यहाँ वायु जी ने कहा है। मैं संक्षिप्त परिचय कराऊंगा, अधिक इसमें विवेचना नहीं दे सकूंगा, परन्तु यहाँ अंगिरा जी कहते हैं, कि नहीं, संसार में मानो एक ही ब्रह्म है। उसी ब्रह्म का देखो, यह सर्वस्व जगत है उसी में यह व्याप्त है, उसी में यह सब कुछ हो रहा है। वह जो अज्ञान छाया हुआ है वह मानो जो अज्ञान छाया हुआ है वह मानो देखो, जीव रूप में परणित होता रहता है। परन्तु जहाँ जीव का अज्ञान दूर हो जाता है तो वह एकां ब्रह्मे हो जाता है। यह

ऐसा महर्षि अंगिरा जी का विचार है।

तीन पदार्थों की स्वीकार्यता

परन्तु देखो, मैं तुम्हें अभी अभी बेटा! निर्णय कराऊंगा, कि इसमें हमें कौन से वाक्य को स्वीकार करना है। महर्षि अंगिरा जी ने जब ऐसा कहा, कि एको ही ब्रह्म की ही सत्ता इस जगत में विराजमान रही है, यह सब हमें ब्रह्म का स्वरूप ही प्रतीत हो रहा है, जैसे मानो गो के दुग्ध में मानो देखो, घृत ओत प्रोत है। इसी प्रकार मानो जैसे वायु मण्डल में सर्वत्र विद्युत विराजमान है, ऐसे ही वह ब्रह्म है। परन्तु देखो, प्रकृति भी इसी का स्वरूप माना जाता है, उसी के गर्भ में रहती है और यह सर्वस्व जगत उसी के गर्भ में ओत प्रोत रहता है। यह महर्षि अंगिरा जी का विचार है। परन्तु उनका निदान किया हुआ, एक वाक्य है। उसके पश्चात आदित्य, अंगिरा वायु जी का जो विचार है, वायु जी का ये विचार है, कि संसार में देखो, कारण, उपादान कारण, निमित्त कारण, मानो देखो, उन्होंने तीन प्रकार के पदार्थ स्वीकार किए हैं। मानो देखो, जैसे जीव है, उन्होंने जीवात्मा, ब्रह्म और प्रकृति, ये तीनों ही उन्होंने स्वीकार किए है, परन्तु उन तीनों को स्वीकार करके उन्होंने कहा है, कि यह जो जीवात्मा है, यह इस मानव के शरीरों में व्याप्त रहता है, क्योंकि जीवात्मा अनन्त हैं, इनकी कोई गणना नहीं हो सकती है, जीवात्मा अनन्त है, परन्तु यह जो प्रकृति है, प्रकृति और ब्रह्म दोनों ये सर्वत्र नित्य माने जाते है, यह किसी भी काल में नष्ट नहीं होते। प्रलय काल में भी अपने अपने स्वरूप में रमण करते रहते हैं। अपने स्वरूप में यह विराजमान रहते है परन्तु जब यह स्वीकार किया जाता है वायु जी ने कहा है, एक वेदमन्त्र को ले करके उन्होंने कहा है व्यापं ब्रह्म आत्म ब्रह्मे ब्रह्मवस्ती सुप्रजा कथन नविस्ति सुप्रजाः यहाँ महर्षि वायु जी ने कहा है, वायु जी ने कहा है कि यह जो तीनों हैं, परन्तु इसमें ब्रह्म जो है, परन्तु ब्रह्म इस प्रकृति के, प्रकृति और ब्रह्म दोनों का सन्निधान होता है परन्तु दोनों के सन्निधान से, दोनों की अकृति होने के नाते, मानो जो इस प्रकृति में जो जगत है, यह प्रकृति रूप में रच जाता है जो हमें दृष्टिपात आता है। मानो वह जो ब्रह्म है,

वह महान सूक्ष्म, महा सूक्ष्म है परन्तु यदि उसमें यह माना जाता है कि इस महान प्रकृति का जगत का रचयिता, जगत का रचयिता ब्रह्म है, तो वायु जी ने ऐसा स्वीकार नहीं किया। वायु जी ने कहा है कि अहं ब्रह्मे आकृतिः मा माश्चम् ब्रह्मे अस्त सुप्रजो व्याप्म् ब्रह्म नित्य प्रति रुद्राः वायु जी ने कहा है, कि वास्तव में ब्रह्म का, प्रकृति का, दोनों का व्याप्य और व्यापक स्वरूप माना जाता है, परन्तु देखो, वह अपृति, प्रकृति का अपना भी कोई अस्तित्व होता है। ब्रह्म व प्रकृति जहाँ दोनों का सूक्ष्म सा सन्निधान होता है सूक्ष्म से सन्निधान से ही मानो देखो, इस प्रकृति में व्यापकता आ जाती है, प्रकृति में एक रचना का भाव आ जाता है, क्योंकि रचना का जो स्वाभाविक गुण है, वह महर्षि वायु जी ने प्रकृति में स्वाभाविक माना है। परन्तु देखो, जैसे ब्रह्म का स्वाभाविक गुण, उसकी चेतना है, परन्तु वह ब्रह्म की ही चेतना प्रकृति में कुछ सूक्ष्म सन्निधान होने से ही मानो देखो, प्रकृति का जो स्वाभाविक गुण है, वह उमड़ आता है। मुनिवरों! देखो, उमड़ने के नाते, इस संसार की रचना हो जाती है। मानो ब्रह्म जो है, वह इस प्रकृति का वास्तव में वायु मुनि जी ने कर्त्ता ही स्वीकार नहीं किया।

देखो, जो यह जीवात्मा है, यह इस प्रकृति के आङ्गन में विराजमान हो करके, अपना कर्म करता रहता है। इसमें ही मानो देखो, चित्त का आभास जीव के अब्रह्म में है। परन्तु वह जो ब्रह्म है, ब्रह्म में चित्त स्वीकार नहीं किया। यदि ब्रह्म में चित्त स्वीकार किया जाता, तो वायु जी कहते है कि यदि ब्रह्म में चित्त स्वीकार किया जाता, तो उसकी रचना में यह प्रतिभा अकृत होती, क्या वह उसका परिणाम भी ब्रह्म में अनिवार्य है, क्योंकि जो भी चेतना हो, अचेतना हो, परन्तु जो भी रचना रचता है, उसके परिणाम की उसे जिज्ञासा अवश्य होती है, क्योंकि यह उसका स्वभाव रहता है। जैसे एक मानव है, परन्तु जो भी मानव कोई रचना रचता है, किसी भी प्रकार की रचता है, वह योग की रचो, आध्यात्मिकवाद की रचो, परन्तु भौतिकवाद की रचो, ज्ञान विज्ञान में पहुंच जाओ, परन्तु अन्त में उसके परिणाम कि, उसे जिज्ञासा अवश्य होती है। इसी प्रकार वायु जी ने कहा है, सम्भवन्यानम्

ब्रह्मे व्यापम् ब्रह्मा प्रति अस्ति विश्वा रधोन्तमम् प्रमाणः वेद के ऋषि ने कहा है, वायु जी ने कहा है कि वास्तव में यदि ब्रह्म को यह स्वीकार किया जाएं, कि ब्रह्म ही सृष्टि का कर्त्ता धर्त्ता है, तो उस ब्रह्म में सदैव परिणाम की जिज्ञासा होना स्वाभाविक हो जाता है।

मानव का असम्भव विचार

परन्तु देखो, ऐसा वायु जी ने स्वीकार किया है, तो मैं भी इसका समर्थन प्रत्येक वाक् का अभी तक नहीं कर रहा हूँ। मैं केवल ऋषियों के विचार तुम्हारे समक्ष, नियुक्त कर रहा हूँ, क्योंकि कोई भी मानव अपने मन में, अभिमान करने लगे, इसलिए मैं नियुक्त कर रहा हूँ। मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है बेटा! वायु मण्डल के परमाणुओं से, वायुमण्डल के परमाणु मुझे ये बाध्य भी कर रहें है, कि यदि कोई मानव अभिमान करने लगे, कि मैंने संसार में नवीन कोई रचना रची है, नवीन ब्रह्म के विषय में कुछ निर्णीत किया है, तो यह मानव का असम्भव विचार है। यह मानव का निजी विचार नहीं होना चाहिए, क्योंकि ज्ञान नित्य है। देखो, वह ब्रह्म का जो ज्ञान है, वह अनित्य है, मानो देखो, उसकी कोई सीमा नहीं है। हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने भिन्न भिन्न प्रकार के विचार, हमारे समक्ष नियुक्त किए हैं। नाना प्रकार के विचार हैं बेटा! यदि तुम कहो, तो मैं यहाँ सहस्रो ऋषियों के विचार तुम्हारे समक्ष, नियुक्त कर सकता हूँ, परन्तु मैं इस सम्बन्ध में नही जाना चाहता, मैं परमाणुवाद या वायुमण्डल के इन वाक्यों में नहीं जाना चाहता हूँ। केवल वाक्य यह प्रगट करना है कि वायु मुनि जी ने क्या कहा है।

ब्रह्म के सन्निधान से रचना

वायु मुनि जी ने बहुत से प्रमाण दिए। उन्होंने कहा कि वास्तव में देखो, ब्रह्म के सूक्ष्म से सन्निधान से ही प्रकृति का स्वभाव उमड़ आता है और उसी स्वभाव से पञ्च महाभूतों में क्रिया आ जाती है। क्योंकि, जितना प्रकृतिवाद है, वह पञ्च महाभूतों में विराजमान है और महाभूतों के एक एक गर्भ में, जो जो उनका गुण है, उनका जो स्वभाव है, मानो वह शान्त रूप से विराजमान है। ब्रह्म का सूक्ष्म सा सन्निधान

होते ही, सूक्ष्म सा वृत्त होते ही मानो देखो, उनके स्वभाव उमड़ जाता हैं और पञ्च महाभूतों का यह ब्रह्माण्ड रच जाता है बेटा! परन्तु देखो, किसी लोक में, कोई तत्त्व प्रधान हो जाता है, अपने स्वभाव से और किसी लोक में कोई तत्त्व प्रधान हो जाता है, जैसे मैंने पूर्वकाल में भी कहा है, इस पृथ्वी पर देखो, पार्थिव तत्त्व प्रधान होता है, परन्तु सूर्यमण्डल में अग्नि तत्त्व प्रधान होता है और बृहस्पति मण्डल में वायु तत्त्व प्रधान होता है, ध्रुव मण्डल में बेटा! जल तत्त्व प्रधान होता है।

परन्तु इसी प्रकार अपने अपने तत्व को यहाँ, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की रचना, इस पञ्च महाभूतों से कोई पृथक नहीं होती। इन्हीं पञ्च महाभूतों के अन्तर्गत बेटा! नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की रचना होती रहती है। जैसे हमारा यह सूर्य मण्डल है, जैसे यह हमारा, ये पृथ्वी मण्डल है, मानो पृथ्वी मण्डल में, पार्थिक तत्त्व वाले प्राणी विचरण करते हैं, परन्तु देखो, वागेश्वरीय मण्डल में अग्नि तत्त्व वाले प्राणी हैं और बृहस्पति मण्डल में वायु तत्त्व प्रधान प्राणी हैं। वैसे ही प्राणी, वैसी ही योनियाँ विचरण करती रहती हैं। परन्तु देखो, यहाँ आत्मा अनन्त होने के नाते बेटा! यहाँ अनन्त प्रभु के ब्रह्माण्ड में, मानो इस प्रकृति मण्डल में, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की अनन्तता है। दोनों में प्रकृति में भी अनन्तता है, उसकी कोई सीमा नहीं है। परन्तु जैसे ब्रह्म की चेतना की कोई सीमा नहीं है, इसी प्रकार देखो, प्रकृति, उसी के आङ्गन में रमण होने के नाते, उसकी भी कोई सीमा स्वीकार नहीं की गई है।

ब्रह्म कर्त्ता या अकर्त्ता

महर्षि वायु जी ने कहा है, कि मेरा जो अपृत विचार है वह किसी ऋषि से भिन्न नहीं हो सकता। परन्तु उन्होंने कहा है, कि मेरा जो अन्वेषण है, मेरा जो विचार है, हमारा यह विचार माना गया है, क्या, वह जो ब्रह्म है, वह अकर्त्ता है। परन्तु सूक्ष्म सा सन्निधान प्रकृति से अवश्य होता है। परन्तु हम उस सूक्ष्म से मिलान को हम क्या कह सकते हैं? उसको हम कर्त्ता स्वीकर करें अथवा न करें? इसके ऊपर भी हमारा कुछ बल है, परन्तु यहाँ वेद के कुछ मन्त्र स्पष्टता देते चले जा रहे हैं,

उन्होंने कहा है, वेद के मन्त्रों में कहा है ब्रह्मे विश्वा रहनमम् आप्रति रूद्रों असवत्रि कृति रूद्राः वेद का आचार्य कहता है, वेद के मन्त्र को लेकर के कि वास्तव में देखो, सूक्ष्म से सन्निधान से, सूक्ष्म से मिलान से, मानो यह नहीं हो सकता, कि वह प्रकृति का रचयिता हो गया है, इस ब्रह्माण्ड का रचयिता हो गया है, क्योंकि जैसे यदि बेटा! यह स्वीकार किया जाएगा, कि इस प्रकृति का, इस संसार में कोई अस्तित्व नहीं है, तो प्रकृति का नित्य मानना असफल हो जाएगा। वह मानव के लिए सुन्दर नहीं होगा। यदि यह स्वीकार किया जाएं, कि केवल ब्रह्म में ही प्रकृति रमण करती रहती है, यह ब्रह्म का ही स्वरूप माना गया है, तो बेटा! यह जो नाना प्रकार के दोषारोपण हैं, यह भी ब्रह्म में स्वीकार करने हो जाएंगे।

परन्तु इससे ब्रह्म परिणामी होता चला जाएगा, यह महर्षि वायु जी का विचार है, बेटा! उन्होंने कहा है कि मैं इस वाक्य को स्वीकार नहीं करूंगा, परन्तु देखो, एक समय महर्षि वायु जी के समीप बेटा! देखो, महर्षि आदित्य जी और महर्षि अंगिरा जी, आदि ऋषियों का एक समाज एकत्रित हुआ। परन्तु उसमें उनके विचारों को, विचार विनिमय करने के लिए, महाराज! हम आपके विचारो से सहमत नहीं है, परन्तु हम आपके विचारो को स्वीकार नहीं करते, महर्षि वायु जी ने कहा कि मैं यह नहीं कहता, कि तुम मेरे विचारों को स्वीकार करो, परन्तु जो वेद कहता है, परम पुनीत विद्या कहती है, मैं तो उसके आधार पर अवश्य प्रगट कर रहा हूँ। रहा यह वाक्य कि तुम स्वीकार करो या न करो, परन्तु जो मेरा यह विचार है, परन्तु ये यह वायुमण्डल में विचरण करेगा और मानो जो वेद की पवित्र विद्या है उसमें से मैंने इन वाक्यों की जानकारी की है, इसका निदान किया है। इसको विचारा है और मेरे विचारों को तुम नष्ट नहीं कर सकते।

परन्तु जब तत्त्व मुनि ने कहा कि भई! हम आपके विचारों को नहीं, परन्तु हमें भी तो इसका कुछ ज्ञान हो जाएं, क्योंकि जब हम एक ही ब्रह्म को स्वीकार करते हैं, एक ही ब्रह्म है, मानो देखो, यह प्रकृति उसी के गर्भ में विराजमान रहती है। रहा यह वाक्य, कि हम यह स्वीकार करें, कि दोषारोपण जो होते हैं, वह प्रकृति के हैं,

अथवा ब्रह्म के हैं, क्योंकि देखो, यह जो प्रकृति है इसमें जड़ता है। जड़ता होने के नाते, हम यह कैसे स्वीकार करेंगे, कि इसका भी या ब्रह्मे ब्रह्मे अस्ति सुक्रता। मानो ब्रह्म के सन्निधान होते ही से क्योंकि ब्रह्म की चेतना तो प्रकृति को प्राप्त होती है, उसके पश्चात ही प्रकृति अपना कार्य करने लगती है। आज हम यह स्वीकार करते हैं कि प्रकृति भी उसी का स्वरूप है। ऐसा हम सभी ऋषिवर स्वीकार करते है हमारे वाक्यों को तुम कैसे नष्ट कर सकोगे। परन्तु वायु जी ने कहा कि हम तुम्हारे वाक्यों को कोई भी नष्ट नहीं कर रहा है, परन्तु क्योंकि विचारों में प्रत्येक मानव संसार में स्वतन्त्र है। मैं भी स्वतन्त्र हूँ। आप भी स्वतन्त्र हैं। परन्तु जहाँ स्वतन्त्रता का प्रश्न आया, वहाँ ऋषि मुनियों ने कहा है कि भई! यह वाक्य तो सुन्दर है, क्या तुम विचारों में तो स्वतन्त्र हो, मैं भी विचारों में स्वतन्त्र हूँ, परन्तु प्रत्येक प्राणी मात्र संसार में अपने अपने विचारों में स्वतन्त्र है, परन्तु स्वतन्त्रता वह भी सुन्दर नहीं होती, जिस स्वतन्त्रता में आगे चलकर के परतन्त्रता आ जाती है।

न्याय के गर्भ में प्रभु की दया

उन्होंने कहा कि मेरे विचारो में, मुझे परतन्त्रता प्रतीत नहीं होती है, उन्होंने कहा कि तो क्या परमात्मा की दया स्वीकार करना असम्भव हो जाएगा? उन्होंने कहा कि परमात्मा की दया, परमात्मा का सदैव न्याय होता है, उसके न्याय के गर्भ में ही उसकी दया होती है, परन्तु न्याय के ही गर्भ में दया होती है। इसीलिए मैं इस वाक्य को स्वीकार नहीं करूंगा। परन्तु ऋषि मुनियों में एक विवाद हो गया। इस विवाद में महर्षि आदित्य जी ने कहा कि तुम्हारा वाक्य तो सुन्दर है, कि न्याय के गर्भ में ही दया है। परन्तु देखो, जब न्याय और दया प्रभु की स्वीकार करते अथवा नहीं, परन्तु जब न्याय दया स्वीकार करते हो, तो यह देखो, ब्रह्म तुम्हारे विचारों से परिणामी हो गया है।

परन्तु जब यह वाक्य महर्षि वायु मुनि जी के समीप आया, तो वायु मुनि जी ने विचारा और वायु मुनि जी ने विचार करके कहा कि वास्तव में वाक्य सुन्दर है, परन्तु इसके ऊपर विचारा जाएं। विचार विनिमय होने लगा। महर्षि वायु जी ने

विचार करके, कुछ मानो समाधिष्ट होकर के, विचार विनिमय करके उन्होंने बुद्धि के सुन्दर पटल में जा करके और चित्त के आङ्गन में जा करके, चित्त और बुद्धि के दोनों का सन्निधान करते हुए, वायु जी ने उत्तर दिया कि वास्तव में मानो देखो, मैं इस वाक्य को स्वीकार इसलिए नहीं कर रहा हूँ, कि ब्रह्म की न्याय और दया मैं इस रूप से स्वीकार करूं। परन्तु मेरा जो वास्तविक जो वेद का विचार है, वह ऐसा है कि वह जो ब्रह्म है, क्या मानो देखो, ब्रह्म की जो न्याय और दया है, केवल वह वहीं तक सीमित रहती है जहाँ तक उसका प्रकृति में सूक्ष्म सा सन्निधान होता है, क्योंकि प्रकृति का यह स्वाभाविक गुण होता रहता है, क्योंकि जीव के, जीवात्मा और प्रकृति दोनों के सन्निधान से मानो देखो, न्याय और दया स्वाभाविक होती रहती है। वह कही नहीं जाती। परन्तु जब इस वाक्य को स्वीकार किया गया, तो यहाँ नास्तिकवाद की तरंगे उत्पन्न होने लगीं। परन्तु जब नास्तिकवाद की तरंगे उत्पन्न होने लगी, तो इसमें भी भिन्न भिन्न प्रकार के विचारोपण होने लगे। उस समय मुनिवरों! यह स्वीकार किया गया, कि आज हम वास्तव में यह वाक्य कैसे स्वीकार करें, तो ऋषि मुनियों के लिए किसी द्वितीय काल में विचार विनिमय करने के लिए, समय प्रदान किया गया।

जीवात्मा का आकार

इसमें बेटा! देखो, महर्षि मंगले केतु महाराज के आश्रम में एक सभा हुई। परन्तु उस सभा में महर्षि वायु मुनि जी महाराज, महर्षि तत्त्व मुनि महाराज, सोमकेतु भृंगी ऋषि, आखूती ऋषिवरों का बेटा! पुनः एक समाज हुआ। परन्तु समाज में यही प्रश्न उत्तर होने लगे। उस समय महर्षि तत्त्व मुनि महाराज और महर्षि अंगिरा जी और आदित्य मुनि महाराज यह सभी आदि ऋषिवर विराजमान हो गए। परन्तु उन ऋषियों के समाज में पुनः से संघर्ष होने लगा, विचार विनिमय होने लगा और परन्तु अन्त में देखो, यह विचार हुआ, महर्षि वायु जी ने कहा, वास्तव में जब हम यह स्वीकार कर लेते हैं, कि परमात्मा वास्तव में क्या है? मानो उन्होंने कहा, अम्ब्रः ब्रह्मे कृत्रि रुद्रा वह जो ब्रह्म है वह सूक्ष्म से भी सूक्ष्म अणु माना गया है। परन्तु

ऋषि मुनियों के विचार में, एक वाक्य आया, कि आत्मा को कितना सूक्ष्म अणु स्वीकार करोगे? उस समय बेटा! महर्षि वायु जी ने कहा है, कि मानव के सिर का जो केश होता है, एक बाल होता है परन्तु उसका गोल विभाग कर लिया जाएं और उसका गोल विभाग के साठ भाग करोगे और जो साठवां जो भाग होगा, उसके भी निन्यानवे भाग करोगे, वह जो निन्यानवेवां भाग है, उसके बराबर जीवात्मा स्वीकार की गई है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! महर्षि वायु मुनि महाराज ने जब ऐसा कहा, आदित्य मुनि महाराज मानो, बौखला गए, उनके हृदय में महान तरंगे उत्पन्न होने लगीं। उन्होंने कहा कि वास्तव में हम यह स्वीकार कर सकते है, कि अब इस प्रकार स्वीकार करने में हमें कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु जब हम अब, परमात्मा को, ब्रह्म को कितना अणु मानोगे? उन्होंने कहा है, कि ब्रह्म इतना अणु है, इतना सूक्ष्म है, कि यह जीवात्मा का निन्याननेवां भाग है, मानो इसके ९९ भाग ही किए जाएं और ९९वां जो भाग है उसके ६० भाग किए जाएं, इतना सूक्ष्म ब्रह्म स्वीकार किया गया है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! आज हम ये स्वीकार कर सकते हैं, क्या जीवात्मा के लिए क्या, ब्रह्म के लिए क्या, क्या क्या हम स्वीकार करें, परन्तु जब यह वाक्य बहुत ही अस्तो में आता है, मानो संघर्ष का एक विषय बन जाता है, उस समय महर्षि वायु जी ने कहा है, कि भई! मेरा तो यह विचार है कि मैं तो ब्रह्म को अकर्त्ता ही स्वीकार करता हूँ। देखो, आदित्य मुनि जी ने कहा, कि वास्तव में तुम ब्रह्म को स्वीकार कर लो, कि वास्तव में, यह जो ब्रह्म है, यह अकर्त्ता है, परन्तु जब प्रकृति को सूक्ष्म सा भी इसमें व्याप्य और व्यापक स्वीकार करोगे, तो मानो तुम ब्रह्म को अकर्त्ता स्वीकार कर लो, परन्तु यदि देखो, सूक्ष्मता भी स्वीकार कर लोगे। (पुस्तक से)

तो उसी समय देखो, ब्रह्म संसार का रचयिता माना जाएगा। जब यह वाक्य उनके मस्तिष्कों में आया, तो वायु मुनि जी और आदित्य जी दोनों के विचार विनिमय

होने लगे। जब दोनों का विचार विनिमय होने लगा, तो दोनों के विचारों में व्यापकता आने लगी और उस समय वह स्वीकार किया गया, कि वास्तव में इस विवाद में न जाओ, क्योंकि ब्रह्म का जो विषय है, वह बुद्धि का विषय नहीं, केवल अनुभव का विषय रह जाता है। आदित्य मुनि जी ने जब यह एक वाक्य कहा, तो उस समय वायु मुनि जी ने कहा, कि यह तो हम वास्तव में स्वीकार कर सकते हैं। अन्त में ब्रह्म को नेति नेति उच्चारण कर सकते हैं, परन्तु जहाँ तक बुद्धि की सीमा है, जहाँ तक शब्दों की सीमा है, वहाँ तक मैं ब्रह्म को अकर्त्ता ही स्वीकार करता रहता हूँ, क्योंकि वास्तव में मुझे उसमें कोई प्रतीति प्राप्त नहीं होती है इसीलिए मैं उसे कर्त्ता स्वीकार कर ही नहीं सकता। वायु मुनि जी ने यह वाक्य स्वीकार करके, आदित्य मुनि ने कहा कि क्यों नहीं कर सकते? क्योंकि इसमें तो तुम्हारा सिर नीचे हो जाएगा, क्योंकि जब भी कोई यौगिक वाक्य आएगा, उसी समय तुम्हारा सिर नीचा हो जाएगा, सिर नीचा हो जाना ही ऋषि के लिए मृत्यु के तुल्य स्वीकार किया गया है। जब आदित्य जी ने यह वाक्य उच्चारण किया, तो वायु जी ने कहा कि वास्तव में, मैं इस वाक्य को कैसे स्वीकार करूं? मैं क्या इन वाक्यों को, एक ही ब्रह्म स्वीकार कर लूं। उन्होंने कहा कि नहीं, एक ब्रह्म को स्वीकार मत करो, परन्तु इन तीन पदार्थों को नित्य स्वीकार कर लो। देखो, आत्मा, परमात्मा और प्रकृति तीनों ही वाक्यों को ले कर चलो। जहाँ सूक्ष्म सा भी व्याप्य और व्यापक भाव दोनों में आ जाएगा, उसी समय उसी की चेतना स्वीकार की जाएगी। वहाँ उस चेतना में यह स्वीकार मत करो, कि यह जो चेतना आई है, उसका परिणाम ब्रह्म होगा। ब्रह्म उसका परिणामी नहीं होगा, क्योंकि उसका परिणामी केवल जीवात्मा अथवा प्रकृति ही होगी, क्योंकि ब्रह्म को तो उस रूप में तुम वास्तव में अकर्त्ता स्वीकार कर लो, मत स्वीकार करो, यह तो तुम्हारा विचार है, परन्तु जहाँ यह विचार स्वीकार किया जाएगा, कि व्याप्य व्यापक रूप दोनों का आते ही, मानो उसमें तुम्हें कुछ न कुछ स्वीकार करना ही होगा, और कोई न कोई तुम्हारे समीप, क्योंकि ब्रह्म की जो चेतना है, वह ब्रह्म की चेतना प्रकृति में

स्वीकार करनी होगी। क्योंकि वास्तव में प्रकृति की जो रचना है, उसकी रचना तुम स्वाभाविक स्वीकार कर लोगे। परन्तु यदि रचना स्वाभाविक स्वीकार कर ली, और वह स्वीकार भी उस रूप से, तुम स्वीकार कर रहे हो, जबकि ब्रह्म की व्याप्य और व्यापक रूप आ जाएगा। जब व्याप्य और व्यापक रूप दोनों को स्वीकार करोगे, तो प्रकृति में जो चेतना है, वह सूक्ष्म सी ब्रह्म को स्वीकार करने के नाते, मानो देखो, उस महान प्रकृति की रचना तुम्हें स्वाभाविक स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं, क्योंकि यह सार्वभौमिक सिद्धान्त हो सकता है। सार्वभौम सिद्धान्त स्वीकार करने में हमें कोई आपत्ति नहीं है, और न किसी ऋषि को हो सकती है।

ब्रह्म भी एक सूक्ष्म अणु

परन्तु रही यह वार्ता कि परमात्मा की दया और न्याय जो एक वाक्य संसार में रह जाता है की परमात्मा न्याय करता है, अथवा दया और न्याय दोनों ही किया करता है, तो वेद का ऋषि कहता है, आदित्य जी कह रहें, कि वह जो दोनों की चेतना है, दोनों की जो प्रधि अस्ति है, मानो देखो, यह स्वीकार करने में हमें कोई आपत्ति नहीं है, क्योंकि ब्रह्म भी एक सूक्ष्म अणु है और वह जो अणु है उस सूक्ष्मता में ही एक महान चेतना है, प्रबल चेतना है, उस चेतना के प्रभाव से ही जहाँ जहाँ उसका चेतना भाव जाता है, वहीं एक सुन्दर रचना, कहीं चित्त की रचना होती रहती है, कहीं प्राण की सुन्दर रचना होती है, कहीं मन की रचना होती है, कहीं इन्द्रियों की रचना है। यह रचना उसके प्रतिबिम्ब से ही स्वीकार की जा सकती है। परन्तु वह जो पञ्च महाभूत हैं, उसमें तो प्रकृति का स्वाभाविकत्व और परब्रह्म परमात्मा की सुन्दर व्याप्य और व्यापकता का भाव वहाँ आ ही जाता है। परन्तु जहाँ यह स्वीकार किया जाता है कि ब्रह्म में वह जो आत्मा है, आत्मा इस मानव शरीर में स्वतः जहाँ जहाँ उसका प्रतिबिम्ब जाता है, वहीं वहीं रचना होती चली जाती है, जैसे प्रकृति में सुन्दर रचना होती चली जाती है और प्रकृति में रचना कहीं मानो देखो, यह जगत रच गया, परमाणुओं में गति आ गई, लोक लोकान्तर रच गए, परमाणुओं के सुगठित होने से ही मानो यह सुन्दर रचना हो गई। इसी प्रकार देखो, यह

आत्मा जहाँ प्रतिबिम्ब जाता है, वहीं सुन्दर से सुन्दर रचना होती चली जाती है। वह कहीं चित्त बन गया, कहीं अहङ्कार बन गया, कहीं बुद्धि का निर्माण हो गया, कहीं मन की रचना हो गई, ज्ञानेन्द्रिय, कर्म इन्द्रियों की रचना हो गई। इसी का व्यापक रूप बनता चला जाता है। (शब्द ध्वनि से)

प्रकृति के पांच गुण

परन्तु इसी को संकुचित्त किया जा सकता है क्योंकि मैंने प्रकृति में पांचों गुण, मैंने तुम्हें पूर्व काल में उच्चारण करते हुए कहा है, कि प्रकृति के पांच गुण हैं, देखो, जिनको हमारे यहाँ ध्रुवा, ऊर्ध्वा, व्यापकता, प्रसारण और आकुञ्चन कहा गया है। यह प्रकृति के पांचो गुण हमारे यहा स्वीकार किए गएं हैं मानो देखो, यही पांचो गुण हमारे यहाँ देखो, यह जो मानव के शरीर में चित्त है, अहङ्कार है, बुद्धि है, मन है, मानो देखो, इनमें भी वह पांचों गुण और प्राण हैं, इनमें स्वीकार किए जाते हैं, इनमें हमें भास होता रहता है। कि वास्तव में इनको व्यापिक भी किया जाता है, और इनको आकुञ्चन, बहुत सूक्ष्म भी बनाया जा सकता है।

हमारे यहाँ, ऋषि मुनियों ने तो ऐसा कहा है, ऋषिजन जो होते हैं इसीलिए वह मैं इस वाक् को स्वीकार करते है, क्या वह प्राणों को और मन को देखो, संकुचित्त बना करके, अपने सूक्ष्म शरीर में भी पहुँच जाते हैं और इनको व्यापक बना करके, स्थूल शरीर में भी आ जाते हैं मानो देखो, इन वाक्यों से हमें सिद्ध होता है कि वहाँ आत्मा को माता के गर्भ की भी आवश्यकता नहीं रहती।

परन्तु मैं इस वाक्य की चर्चा तो मैं किसी काल में करूंगा। मैं वाक्य उच्चारण करते करते दूर चला जा रहा हूँ। वाक तो बेटा! मैं वहीं चला जाँऊ, जहाँ तुम्हारा वाक्य चल रहा था, क्योंकि तुम भी प्रश्न करने वाले होगे, क्योंकि तुम्हारी बुद्धि में भी सदैव नाना प्रकार की तरंगे उत्पन्न होती रहती हैं। मुझे उसमें कोई संकोच नहीं है, यहाँ बेटा! ऋषि मुनियों के जो विचार, जो विचारधारा है उनको उच्चारण किया करता हूँ। रहा यह वाक्य, कि हमारा कोई निजी विचार हो, उस वाक्य को भी मैं किसी काल में या अभी प्रगट कर सकूंगा। परन्तु केवल आज तो यह उच्चारण

करते चले जा रहे थे, कि आदि ऋषियों में यह संघर्ष होता चला आया है। परन्तु इस संघर्ष से हमें यह स्वीकार होता है, इस संधर्ष में हमें यह प्रतीत होता चला जा रहा है कि परमात्मा मानो देखो, न्याय और दया का प्रश्न चल रहा था। परमात्मा में न्याय है अथवा दया है, मुनिवरों! ऐसा स्वीकार किया गया है, कि यह जो प्रकृति का निदान होता है, व्याप्य और व्यापक दोनों का जो स्वरूप आता है, मानो देखो, इसी के गर्भ में, उसके व्याप्त होने में ही, मुनिवरों! उसके अग्रित में, परमात्मा निर्गुण और सगुण की चर्चा चल रही थी। मैं इसकी भी चर्चा करता चला जा रहा था। परमात्मा निर्गुण है अथवा सगुण है।

परमात्मा का निर्गुण व सगुण रूप

मुनिवरों! परमात्मा एक रूप में निर्गुण माना गया है, उसमें अकृति है और मानो किसी किसी स्थान में उसको, ऋषि मुनियों ने बेटा! सगुण भी स्वीकार किया है, क्योंकि प्रकृति में उसकी चेतना होने के नाते उसी की चेतना से बेटा! ब्रह्म को सगुण स्वीकार किया गया है और वह क्योंकि निदान मात्र से ही, उसको पृथक ऋषियों ने स्वीकार किया, उसको कहा कि निर्गुण है, इसमें कोई गुण नहीं है, मानो वह तो एक अणु है, वह केवल प्रकृति में सूक्ष्म सी चेतना दे देता है। यह स्वीकार किया है परन्तु देखो, इसमें कौन से वाक् को स्वीकार किया जाएं, यह वाक्य बेटा! मैं अपना वाक्य कोई प्रगट नहीं करना चाहता। मुझे तो ऋषि मुनियों के विचार, उनकी जो धाराएं हैं, उनको उच्चारण करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहता है। यह परमात्मा की मेरे ऊपर अनुपम कृपा है कि वह दया कर देते हैं, मानो देखो, उसी में अप्रति विचार हैं।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! आगे विचारधारा चल रही थी, कि ऋषि मुनियों ने परमात्मा को निर्गुण और सगुण दोनों ही स्वीकार किया है। रहा यह वाक्य कि किस ऋषि की दृष्टि में कौनसा वाक्य यथार्थ है, तो ऋषि मुनियों ने कहा है, कि परमात्मा निर्गुण रूप में ही स्वीकार करना बहुत ही सुन्दर होगा। रहा यह वाक्य हम देखो, इस वाक्य को भी और गम्भीरता में ले जाना चाहते थे। चाहते हैं। थे नहीं, क्योंकि

थे में तो सन्देह हो जाएगा, मैं सन्देह में नहीं जाना चाहता हूँ। केवल वाक्य यह प्रगट करना चाहता हूँ, कि वास्तव में जब हम ब्रह्म को देखो, ऐसे निर्गुण स्वीकार कर लेते हैं, तो इसमें हमें कोई आपत्ति नहीं होती, क्योंकि आत्मा का अपना अस्तित्व होता है, प्रकृति का अपना अस्तित्व होता है। रही परमात्मा की न्याय और दया का वाक्य, क्योंकि प्रत्येक मानव यह कहता है, कि परमात्मा न्यायकारी है, वह न्याय करता रहता है, क्योंकि न्याय ही परमात्मा, न्याय के गर्भ में ही परमब्रह्म की दया विराजमान रहती है। ऐसा कहते है, परन्तु देखो, बेटा! आदि ऋषियों ने इसके ऊपर भी मन्थन किया, आदि ऋषियों ने भी इसके ऊपर मन्थन किया कि कोई जीवात्मा अपराध करने के पश्चात वह कारागार में नहीं जाना चाहता। परन्तु देखो, वह जीवात्मा इस काल में देखो, अपने कारागार में नहीं जाना चाहता है, क्योंकि जहाँ तक वह सीमा में रहता है, क्योंकि जब तक यह जो शरीर है, जब तक शरीर का बन्धन है, मानो स्थूल शरीर का बन्धन है, वहीं तक देखो, यह अज्ञान रहता है, कि वह जाना नहीं चाहता, परन्तु जहाँ इसमें स्वतन्त्र भाव आ जाता है, स्वतन्त्र भाव में बेटा! क्योंकि प्रकृति में ऐसी ऐसी सूक्ष्म रचना हैं, कि एक दूसरी वायु, एक दूसरा मण्डल, एक दूसरी तरंगे, प्रकृति की होती हैं, उसमें ही ऐसा स्वभाव होता है कि वही जीवात्मा को कारागार में और देखो, कारागार से पृथक करने का उसमें भी स्वभाव आता है।

व्याप्य और व्यापक भाव

परन्तु इसमें यह फिर से यह प्रश्न उत्पन्न होता है, कि यह जीवात्मा प्रकृति के अधीन हो गई। क्योंकि देखो, जीवात्मा प्रकृति के अधीन हो गई, ऋषि मुनियों ने कहा कि नहीं, जैसे परमात्मा और प्रकृति में व्याप्य और व्यापक रूप होता है, इसी प्रकार जीवात्मा में और प्रकृति में दोनों में व्याप्य और व्यापक भाव होता है। व्याप्य और व्यापक भाव से बेटा! देखो, अपने अपने भोगों को भोगती रहती है। ऐसा भी स्वीकार किया गया है कि परन्तु देखो, मैं इस वाक्य का समर्थन नहीं कर रहा हूँ। परन्तु महर्षि वायु जी ने बहुत कुछ संघर्ष किया है, इस सम्बन्ध में। उनके

विचारों में, उन्होंने बेटा! ऋषि मुनियों को इस वाक्य में बाध्य कर दिया है। बाध्य करने के पश्चात, जैसी अन्तिम परम्परा है, बुद्धि की अन्तिम पराकाष्ठा है, आगे ऋषि मुनियों ने यह कहा कि भई! आगे चल करके तो यही वाक्यमानो देखो, केवल अनुभव का रह जाता है। आगे का वाक्य अनुभव पर त्यागना चाहिए, परन्तु जहाँ तक बुद्धि का निदान है, बुद्धि की जहाँ तक सीमा है, वहाँ ऋषि मुनियों ने यह स्वीकार किया है, कि न्याय और जो दया होती है यह प्रकृति के ही गर्भ में विराजमान होती है, प्रकृति में ऐसी सुन्दर रचनाएं होती हैं, ऐसी तरंगित होती हैं, मानो देखो, क्योंकि जितने कारागार हैं, वह सब कारागार प्रकृति के आङ्गन में रहते हैं। वह ब्रह्म के आङ्गन में नहीं रहते, मानो वह प्रकृति के आङ्गन में रहते है, चाहे राष्ट्रीयवाद हो अथवा वह सूक्ष्मवाद हो। मानो देखो, जैसे मानव के मन में एक तो स्थूल से पाप करता है उसको धिराज, राजा के कर्मचारी स्वीकार कर लेते हैं, परन्तु वह राजा के कारागार में भी पाप कर लेता है वह मानसिक पाप करता है, जब मानसिक पापों को कौन स्वीकार करता है? बेटा! यह जो प्रकृति का वाद है, प्रकृति का जो मण्डल है मानो देखो, चित्त का जो मण्डल है, उस चित्त में पुनः संस्कार उत्पन्न होते रहते है, और उन्ही संस्कारों से बेटा! वह संस्कार स्वयं चित्त में से उत्पन्न होते रहते हैं, उन्हीं संस्कारों के अनुसार इस जीवात्मा का आवागमन होता रहता है। बेटा! ऐसा स्वीकार किया गया है।

अरबों वर्ष पूर्व के ऋषियों का विमर्श

परन्तु मैं बेटा! देखो, इन वाक्यों को कहाँ ले जा रहा हूँ। आज तुम्हें बेटा! बहुत पूर्व काल के पश्चात, मुझे इन वाक्यों का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, उच्चारण करने का, मैं और भी गम्भीरता में जाना चाहूँगा, क्योंकि मैं इससे पूर्व शब्दों मैं इसका और भी गम्भीरता से विश्लेषण करूंगा। आज तो केवल मैं इतना वाक्य उच्चारण करने जा रहा हूँ, कि महर्षि वायु मुनि महाराज, अंगिरा जी, आदित्य जी, महर्षि तत्त्व मुनि महाराज, सोमकेतु मंगलांग ऋषि महाराज, सौमाञ्ची, अन्वाष्णी ऋषि आदि ऋषियों का समाज बेटा! यह आज नहीं हुआ, इन वाक्यों को बेटा! लगभग अरबों

वर्ष हो गएं जब यह समाज एकत्रित होता था, मानोयह ऋषि मुनियों के विचारार्थहोते थे। परम्परा से होते चले आए हैं, आज कोई नवीन वाक्य नहीं है।

मंगलेतरु ऋषि महाराज

आज का मानव जैसा, मेरे प्यारे महानन्द जी! ने मुझे उच्चारण किया है, मानो उन्होंने कहा है, ब्रहेस्ति सुप्रजा मानश्चति प्रणस्ती। आज का मानवदेखो, इसको ढकोसला उच्चारण कर देता है, तो मैं महानन्द जी के वाक्यों पर नहीं जाना चाहता, क्योंकि न जाने ये कहाँ कहाँ से, क्या क्या वाक्य लाया करते हैं। इन वाक्यों में मैं ही नहीं जाना चाहता हूँ। केवल हमारा यही विचार है, कि जीवात्मा का सन्निधान भिन्न है और प्रकृति का भिन्न है और जहाँ ब्रह्म और प्रकृति का व्याप्य और व्यापक स्वरूप है इसी प्रकार जीवात्मा और प्रकृति का व्याप्य और व्यापक स्वरूप है, परन्तु अपने अपने व्याप्य और व्यापक स्वरूप में अपनाअपना कार्य कर रहे हैं क्योंकि प्रकृति को ही ऋषि मुनियों ने बेटा! अकर्त्ता ही स्वीकार किया है। अन्त में यह निर्णय हुआ, मंगलेतरु ऋषि महाराज का यह निर्णय किया, क्या यह वाक्य वास्तव में, सर्वोपरि सिद्धान्त हो सकता है। परन्तु आगे चल करके, इस सिद्धान्त में सूक्ष्मता आ सकती है, यह अमिट हो सकता है, परन्तु जो सार्वभौम, जो बुद्धि की पराकाष्ठा है, परा परम्परा है, परा प्रणाली है, परन्तु उस दृष्टि से अमिट नहीं होगा, परन्तु यह निर्णय होने के पश्चात सभा समाप्त हो गई। सभा समाप्त हो जाने के पश्चात, परन्तु देखो, मैंने अभी अभी अपने कुछ सूक्ष्म से विचारों को प्रगट किया है बेटा! यह वाक्य तो ऐसा भंयकर वन है, इसमें जाने के लिए बेटा! किसी काल में जाते थे, अब तो समय इतनी आज्ञा नहीं देता है, अब तो भोगो की प्रतीति होने के, भोगो को भोगने के नाते, सब कुछ होता रहता है। परन्तु देखो, कोई काल था, जब इन गम्भीर वाक्यों पर कई कई माह वाक् चलता रहते थे। बेटा! आज मुझे इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा है। आज का यह वाक्य अब समाप्त भी होने जा रहा है। आज के वाक्यों का अभिप्राय यह है, कि हम परमात्मा को वास्तव में क्या स्वीकार करें। बेटा! कल मुझे समय मिलेगा, तो इसमें मैं भी अपने में कुछ

निजी विचार प्रगट कर सकूंगा, कि मेरा स्वतः, हमारा सिद्धान्त क्या रहा है? इसमें कुछ अपने और कुछ महर्षि कपिल इत्यादियों ने, इस वाक् को क्या स्वीकार किया है, कल मुझे समय मिलेगा, तो इसके ऊपर कुछ सूक्ष्म से विचार दिए जा सकेंगे। व्यापक नहीं, सूक्ष्म सूक्ष्म विचार। आज भी मैंने सूक्ष्म विचार दिए हैं, क्योंकि इसके ऊपर नाना प्रकार के तर्कवाद भी हो सकते हैं और होते रहते हैं। तो ये वाक्य अब समाप्त होने जा रहा है, कल मुझे समय मिलेगा, तो शेष चर्चाएं कल प्रगट की जाएगी।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन!

पूज्यपाद गुरुदेवः तो बेटा! आज का वाक् तुमने स्वीकार कर लिया तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! अभी मेरे विचारों में सूक्ष्मता रह गई है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य..... अच्छा बेटा! इसका देखो, किसी काल में और बहुत सुन्दर रूपों से वर्णन करेंगे। उत्तर प्रश्नों के रूप में होगा।

पूज्य महानन्द जीः हां भगवन! मैं भी यही चाहता हूँ, कि उत्तर प्रश्न भी हों।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटा! कल तुम्हारे दो प्रश्न हो सकते हैं।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन!

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरों! आज का यह वाक्य अब समाप्त। अब वेदों का पाठ होगा, इसके पश्चात यह वार्ता समाप्त हो जाएगी।

ओ३म् मानं भागा वसुः रेवं माणां चरी वन्धना ब्रह्म माणाम् ओ३म् रेवं भागा मनु प्रागणा देवं आ भा ना........।

6. 811216-त्रिवर्धा

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जो अन्तमयी, स्रोतमयी आभामयी कहलाता है। मानो जिस प्रभु का ये अनुपम जगत हमें प्रायः दृष्टिपात आ रहा है। उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में मानो उस प्रभु की चेतना हमें दृष्टिपात आ रही है। क्योंकि चाहे ये जगत जड़वत के रूप में हो, चाहे चैतन्य के रूप में हो। परन्तु दोनों में से परोक्ष में हो और चाहे प्रत्यक्ष में। परन्तु इस सर्वत्र आभा में, उस सर्वत्र मूल में, वह मूल्यदेव मानो जिसकी प्रतिभा में ये संसार मानो उसकी आभा में निहित रहने वाला है।

बेटा! मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें ये निर्णय देते हुए कहा थाकि ये संसार त्रिवर्धा कहलाता है। मानो त्रि आभा में ये रमण करने वाला ये जगत। जिस भी काल में ये सृष्टि का सृजन होता है तो इस संसार के सम्बन्ध में, निर्णय करने वाले निर्णयवेत्ताओं ने मानो इसकी रचना का मूल भी त्रिवर्धा में माना है। वेद का मन्त्र भी त्रिवर्धा में रमण कर रहा है। मानो इसीलिए हमें अपने में और प्रभु की आभा में त्रिवर्धा का पठन पाठन करना चाहिए।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! त्रिवर्धा से क्या अभिप्राय है आप का।

पूज्यपाद गुरुदेवः सम्भवा वस्तुतं देवं ब्रह्माः त्रिगर्भश्चतम् मानो त्रिवर्धा से अभिप्राय यह है कि इस संसार की रचना करने वाले प्रभु ने मानो तीनों गुणों का सृजन किया। जिनमें रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण आते हैं। परन्तु इसमें एक ऐसा विचित्र नृत्य हो रहा है, जिस नृत्य के ऊपर मानो बहुत गम्भीर चिन्तन करने वाले ऋषि मुनि और विज्ञानवेत्ता मानो देखो, इस संसार में त्रिगुणात्मक स्वीकार करते हैं, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड को। जिस समय अग्नि का अग्न्याधान होता है। तो अग्नि भी

मानो त्रिकोण कहलाती है और अग्नि भी त्रिकोण बनकर के क्योंकि परमाणु भी तीन ही कहलाते हैं। यह जो परमाणुवाद है ये भी तीन ही होते हैं। परन्तु वायु गमन हैं और अन्तरिक्ष में वह गति करती है। परमाणुओं को लेने वाली वायु है और वह गति कराती हैं और यह जो अवकाश है उसमें परमाणु गति करते हैं।

प्रभु की रचना

तो इसीलिए ये प्रभु की रचना मानो त्रिवर्धा कहलाती है। इसी प्रकार तीनों में त्रि में रमण करने वाला त्रिमात्राएँ। जितनी भी संसार की लेखनियाँ हैं। मानो चाहे वे किसी भी देवभाषा में हों। चाहे जन जीवन की भाषा में हो। चाहे वे सूर्य मण्डल के प्राणियों की भाषा हो, चाहे वे किसी भी लोक लोकान्तरों में रहने वाला प्राणी हो परन्तु सर्वत्र भाषाओं में त्रिमात्रा कहलाती है और त्रिमात्रा वाला शब्दः मानो एक ओ३म् बन करके रहता है और तीन ही संसार में व्याहृति मानी जाती है। परन्तु व्याहृति में तीन है सम्भवाः बन्धनम् मानो जैसे भूः, भुवः स्वः। ये तीन व्याहृति मानी जाती है। तो यह त्रिवर्धा संसार कहलाता है। परन्तु प्रत्यक्ष में भी तीन ही दृष्टिपात आते हैं। रचना, रचयिता और भोग, ये तीन कहलाते हैं। परन्तु देखो, इसी प्रकार तीन प्रकार के परमाणु है जो वैज्ञानिकों के मध्य में आया है। संसार का जितना भी विज्ञानवाद अब तक हुआ है। चाहे वह राम के काल से ले करके वर्तमान काल तक ले लिया जाए। चाहे वे विष्णु राष्ट्र सतोयुग के काल से लेकर के त्रेता के काल तक ले लिया जाए परन्तु ये संसार में जितना भी विज्ञानवाद हुआ है। उसमें तीनों परमाणुओं की प्रतिभा की जाती है। तीन प्रकार के परमाणुओं का आभास किया है। तीन प्रकार के परमाणुओं में सर्वत्र तरंगे ओत प्रोत हैं। तरंगे भी तीन प्रकार की हैं। ऊर्ध्वा, अन्वेषणाः, कृतिका, मानो ये तीन प्रकार की तरंगे होती हैं। जिनसे ये ब्रह्माण्ड तरंगित हो रहा है। और मानव समाज भी इसी में तरंगित हो रहा है। परन्तु देखो, जैसा तुम ये गम्भीरता से जानना चाहते हो, कि मैंने बेटा! तुम्हारी प्रेरणा के आधार पर ये त्रिवर्धा शब्द और विषय को लिया है। ये त्रिवर्धा जो शब्द हैं मानो देखो, ये संसार केवल त्रिवर्धा में दृष्टिपात आ रहा है।

त्रिकोण यज्ञशाला

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! एक समय आपने हमें ये वर्णन कराया था कि त्रिकोण यज्ञशाला होती है और चतुष्कोण भी होती है और पञ्चम कोण का भी आपने वर्णन किया। परन्तु आपने चौबीस कोणों से ले करके और भिन्न भिन्न प्रकार के कोणों की विवेचना आपने की, परन्तु उन विवेचनाओं में, मैं आज त्रिकोण के सम्बन्ध में ही आपसे प्रश्न करने वाला हूँ और वह यह कि बहुत पुरातन काल हुआ, जब एक समय हम सब विद्यमान थे तो उस समय एक त्रिकोण याग की रचना की गई। बहुत पुरातनकाल काल हुआ परन्तु त्रिकोण का अभिप्राय क्या है, और इन नाना कोणों की चर्चाएं तो मैं पुनः ही करूंगा। क्योंकि हमारे यहाँ सबसे प्रथम चारों कोणों का सर्विदम् अब्रहात कहा जाता है और उसके पश्चात ईशान और उत्तरायण और पश्चिमान्त और दक्षिणान्त मानो देखो, इनके कोणों को ले करके छहऔर आठ कृतिका बनती हैं जैसा आपने पुरातन काल में वर्णन किया हुआ आठ कोणों वाला याग बन जाता है। परन्तु इसमें जैसे भगवान ने, परमपिता परमात्मा ने यह जगत रचा है। तो इस ब्रह्माण्ड की रचना में मानो नौ विरान कहे जाते हैं और नौ विरान मानव के इस शरीर में भी आपने किसी काल में वर्णन किया। परन्तु देखो, उन कोणों में, उन आभाओं में सबमें बहुत पूर्व में विज्ञान की तरंगे हमें दृष्टिपात आयी थीं। अब हम आपसे यह जानना चाहते हैं। कि त्रिकोण का अभिप्राय क्या है?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! यह तो बहुत पुरातन काल में ये वाक सब निर्णय हो चुके हैं। ये बहुत समय व्यतीत हुआ था जब एक समय राजा रावण के यहाँ भी एक सभा हुई थी और राजा राम के यहाँ भी एक सभा हुई तो उसमें जितने भी वैद्यराज थे, राजा रावण के यहाँ सुधन्वा नामक जो वैद्यराज थे उनको प्रायः दृष्टिपात नहीं किया गया। महात्मा भुञ्जु के दोनों पुत्र अश्विनी कुमार थे। अश्विनी कुमारों के गुरु थे त्रेतकेतु ऋषि। वे आयुर्वेद के मर्म को जानते थे। परन्तु वे भी उस सभा में विद्यमान थे और महाराजा कुंभकर्ण और मेघनाद अहिरावण को भी आयुर्वेद में पूर्ण

विज्ञान इनके समीप रहता था तो मानो वे भी उस सभा में आए।

तो सभा में ये विचार विनिमय होने लगा कि मानव के जो शब्द है यज्ञशाला में विद्यमान हो करके यज्ञमान के शब्द मानो अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वे कुछ लोकों में रमण करते हैं। जिन लोकों से मानव के जीवन का प्रायः सम्बन्ध होता है।

लोको की उड़ाने

जैसा पुरातन काल में माता अरूणधति और वशिष्ठ मुनि महाराज जब दोनों याग करते थे तो वे वैज्ञानिक तन्तुओं को लेकर के याग करते थे। तो मानो उनके विचारों की तरंगे अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, वे बृहस्पति लोको तक उड़ान उड़ते थे। परन्तु दोनों उन तरंगों के ऊपर चिन्तन भी करते थे। मानो बृहस्पति में अरूणधति मण्डल में, और वशिष्ठ मण्डल में मानो देखो, इन तीनों लोकों में उनकी उड़ान विशेष कर रही थी।

विभिन्न लोको से जीवन का सम्बन्ध

तो उन्होंने यह निर्णय किया है इस सम्बन्ध में, कि हमारे जीवन का जो सम्बन्ध है वह लोक लोकान्त्रों से विशेषकर माना गया है। क्योंकि परमपिता परमात्मा ने यज्ञ सृष्टि का सृजन किया था। तो पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एक भी कल्पना की है। पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एक कल्पना होने से मानो देखो, उन यागों का, लोकों का इस शरीर रूपी याग से विशेषकर समन्वय हुआ। परन्तु रहा यह कि ये पूर्ण, किन प्राणियों को, विशेषकर इनकी जानकारी होती है।

मानो जैसा मैंने बहुत पुरातन काल में बेटा! तुम्हें निर्णय भी कराया था और वह वाक भी आया था। एक समय में कि राजा राम के यहाँ वह जो सभा हुई वैद्यराजों की, तो वैद्यराज सब एकत्रित हो करके यज्ञशाला में विद्यमान हो करके जब याग करने लगे और जब याग की प्रतिभा आने लगी, तो उन्होंने त्रिकोण याग का मानो देखो, निर्माण किया और उन्होंने वेद के मन्त्रों को लेकर के और त्रिवर्धा को लेकर के एक याग का आयोजन किया। परन्तु इस याग को लेकर के इसी याग की

प्रतिभा को लेकर के महाराजा कुम्भकरण ने त्रिकोण याग हिमालय की कन्दराओं में एक विज्ञानशाला की आभा में मानो वहाँ एक याग करते थे। और उसके पश्चात वैद्यराज जो औषधियों की तरंगों को जानना चाहते हैं। औषधि विज्ञान को जानना चाहते हैं। औषधि विज्ञान में रुग्णों को जानना चाहते हैं तो वे भी त्रिकोण याग मानो प्रायः होता रहा है। राजाओं के यहाँ भी इस प्रकार का विधान माना गया है। क्योंकि मुझे बहुत पुरातन काल में यागों के सम्बन्ध में, बहुत अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है।

ब्रह्मचर्य व्रत

परन्तु यदि यज्ञमान यह चाहता है कि मैं त्रिकोण यज्ञशाला में याग करना चाहता हूँ तो उस प्रकार का कुछ विधान भी होना चाहिए उसी प्रकार का साकल्य भी होना चाहिए। परन्तु उसमें विशेष कर तो साकल्य होता है। और वह साकल्य होता है जिसमें अग्नि और जलतत्व दिव्य औषधियों में प्रधान होते हैं। मानो देखो, जल और अग्नितत्व औषधियों में प्रायः पाए जाते हैं। तुलसी कृतिका एक औषधि होती है। गोणाकृतिका अन्वेषणी एक औषधि होती है। पीपल की समिधाएँ होती है और मजीद होता है, सुन्नकांच कुरूत होता है और बहुतसी औषधियाँ इस प्रकार की होती है जिनमें अग्नि प्रधान होती है। परन्तु कुछ औषधि होती हैं जिनमें जल प्रधान होता है। तो वह औषधि उन तरंगों को जो यज्ञशाला में विद्यमान होते हैं। वे जब याग करते हैं तो मानो देखो, जल की मात्रा को लेकर के, कुछ जलों में औषधियों का मिश्रण करके मानो कलश अस्वात स्थिति किए जाते हैं उनके स्थित करने पर उन औषधियों का मानो देखो, वे अग्नि की तरंगे वहाँ मिलान करती हैं तो जल का शोधन किया जाता है। उसमें पीपल, दाख, कंच, शानकेतु, चन्दन इत्यादियों की कुछ समिधाएँ होती हैं। परन्तु देखो, उनकी तरंगे जल के ऊपर और देखो, अग्नि की औषधियों को, जिसमें अग्नि तत्त्व प्रधान होते हैं। वह औषधि अग्नि में मिश्रित हो जाती है। परन्तु मिश्रित होने से मानो यज्ञ का देखो, प्रारम्भ होता है। याग में यज्ञमान को भी मानो ब्रह्मचर्य व्रत में रहना चाहिए। ब्रह्मचर्य व्रत का अभिप्राय यह

है कि ब्रह्म में अपने श्वांस को मानो देखो, प्राण और मन दोनों का एक सन्निधान, सम्मिलान मानो देखो, श्वांस की प्रतिभा उसमें ब्रह्मवर्चोसि में बिंदी होनी चाहिए। ब्रह्मचर्य का अभिप्राय केवल इतना ही है कि प्रत्येक श्वांस की प्रतिक्रिया उस ब्रह्म में पिरोई होनी चाहिए। उस ब्रह्म में पिरोई होने से उसका ब्रह्मचर्य व्रत मानो देखो, पुष्टिकारक बन करके वह अपने में औषधिकृत कहलाता है। परन्तु जो ब्राह्मण, कर्मकाण्डी, पाण्डित्व होता है उसके द्वारा भी ब्रह्म का चिन्तन और ब्रह्मवर्चोसि रहना चाहिए।

कुम्भकरण

परन्तु देखो, पुरातन काल में तो पुत्रो! मुझे स्मरण है कि राजा राम के यहाँ जब वह याग हुआ था तो उस याग में मानो देखो, राजा रावण ने अपने विधाता कुम्भकरण और कुम्भकरण जी की पत्नी थी मानो देखो, जिसका नाम शुभभोमकेतु कहलाता है। शुभभोमकेतु मानो देखो, हिमालय के पाल्य एक राजा थे, जिनका नाम श्वेतकेतु कहलाता था वह उनकी कन्या थी। वह वेद की विदुषी होने से क्योंकि वह महर्षि श्वांककेतुक ऋषि के द्वारा अध्ययन करती थी। परन्तु उनके अध्ययन करने का विषय, वेद का बड़ा विचित्र रहा और उनके मानो देखो, राजा के मन में यह सङ्कल्प जागा था, किसी काल में कि मेरी कन्या का संस्कार ऐसे राजकुमार से होना चाहिए, ऐसे वैज्ञानिक से होना चाहिए मानो देखो, जो दोनों का जीवन सम में व्याप्त होना चाहिए, परन्तु देखो, उनका संस्कार राजा ने लंकेश्वर मानो देखो, महाराजा पुलत्स्य मुनि के पौत्र कुम्भकरण के यहाँ उनका संस्कार हुआ। क्योंकि कुम्भकरण त्रि, ओ३म् में प्रातःकाल नित्यप्रति याग करते थे। और कन्या भी मानो देखो, उनकी पत्नी जिससे उनका संस्कार हुआ वह भी इसी प्रकार का याग करती थी। परन्तु दोनों के याग का परिणाम, उनके याग का परिणाम ये कि उनकी विचारधारा देखो, लोक लोकान्तरों में भ्रमण करती थी और उसके पश्चात मानो देखो, त्रिकोण याग की दशा में महाराजा कुम्भकरण की परिवर्तित हो गई। जब परिवर्तित हुई तो उन्होंने त्रिकोण यज्ञशाला के आकार का उन्होंने एक यन्त्र

का निर्माण किया। त्रिकोण यन्त्र का निर्माण किया, जिस यन्त्र में मानव के चित्र आने लगे। मानो देखो, जैसे वे याग करते थे त्रिकोण में तो जिस भी लोक में वह शब्द गति करता था चित्र के सहित मानो देखो, उन्होंने जिस यन्त्र का निर्माण किया था, उसमें मानो देखो, उसकी छाया आती रहती थी।

तो मैं बेटा! तुम्हें ये वाक दूरी नहीं ले जाना चाहता हूँ। कि विचार ये देने के लिए आया हूँ कि राजा रावण के यहाँ एक त्रिकोण यज्ञशाला का निर्माण हुआ। जिसमें अश्विनी कुमार, महाराजा सुधन्वा और याग में यज्ञमान का जो निर्वाचन हुआ तो वह महाराजा कुम्भकरण का हुआ और महाराजा कुम्भकरण और उनकी पत्नी जब दोनो विद्यमान हो गए मानो दोनों के विद्यमान होने से मेरे पुत्रो! देखो, श्वंजनं वृत्ति कस्सुतां देवाः जब दोनों याग का प्रारम्भ करने लगे तो उस याग के जो ब्रह्मा बने थे, उस याग में जिन ब्रह्मा का निर्वाचन हुआ। मेरे प्यारे! वह गोलंगगेत केतु ऋषि महाराज थे। गोलंगगेतकेतु ऋषि महाराज अंगिरस गोत्रीय कहलाते थे।

रूग्ण विनाशक तरंगें

मानो देखो, जब याग प्रारम्भ हुआ, याग के जब मन्त्रों का उच्चारण हुआ तो उच्चारण करते करते मेरे प्यारे! देखो, उसमें से भिन्न भिन्न प्रकार की तरंगों का जन्म होने लगा। मानो देखो, उस यज्ञशाला में से रूग्णों का विनाश होने वाली तरंगों का जन्म होने लगा। मानो देखो, आयुर्वेदाचार्यों ने नाना प्रकार के यन्त्रों का मानो देखो, नाना प्रकार की अपनी विचार धाराओं का उस याग में परणित कराया। मेरे प्यारे! देखो, कलश विद्यमान है उन्होंने स्वर्ण के कलश और स्वर्ण के कलशों में धातु पिपाद मानो जैसे ताम्रपत्र है, चान्द्रकेतु पात्र है और भी कुछ धातु इस प्रकार की उन्होंने कलशों का निर्माण किया। मानो देखो, वह जल उस त्रिकोण यज्ञशाला में जब उसका विधान हुआ मानो उसको प्रतिपादित किया गया तो उस जल में मुनिवरों! देखो, केशरां श्वांजान धीत, कंसवांचनी इन चार औषधियों का बेटा! देखो, जल में मिश्रण किया गया। तो उस जल को मुनिवरों! देखो, जब अग्नि की तरंगें उन कलशों को छूती थी तो उस जल के पात्रों में अग्नि की ऊष्णा तरंगें मानो देखो,

प्रवेश कर जाती थी। उस अग्नि की मानो देखो, उन औषधियों की तरंगें उस जल में मिश्रित होती जिससे मानो देखो, याग के साकल्य का निर्माण किया गया। मेरे प्यारे! देखो, उससे आयुर्वेद की बहुतसी औषधियों का वे निर्माण करते रहते थे। परन्तु देखो, वह कुछ ऐसे रूग्णवाले मानो देखो, साधकों को उस साधना में परणित कराते थे याग के द्वारा मानो देखो, उससे भी उनका मानो देखो, रूग्णशान्त होता था। इसी प्रकार मन की, हृदय की शान्तिमानो देखो, दोनों की एकता में ये याग सहायक होता है।

इसके पश्चात बेटा! मुझे एक वाक और ऐसा स्मरण आता है। राजा रावण के यहाँ जब याग हुआ तो महाराजा सुधन्वा ने एक वाक कहा था। महाराजा सुधन्वा और अश्विनी कुमार ये बारी बारी अपना विचार देने लगे। महाराजा सुधन्वा ने यह कहा कि जब मैं भयंकर वनों में यह अनुसन्धान कर रहा था कि भिन्न भिन्न प्रकार की औषधियों में मानो देखो, उसमें नृत्य करने वाला बनूँ। तो मैंने मानो देखो, भयंकर वनों में जाजा कर त्रिकोणवादी औषधियों को एकत्रित किया क्योंकि संसार में जब भी प्रभु ने, परमपिता परमात्मा ने इस मानव के शरीर का निर्माण किया तो ये भी त्रिकोणी यज्ञशाला ही कहलाती है। मानो त्रिकोणवादी यज्ञशाला में जैसे त्रिविद्या है। वेद में तीन प्रकार की विद्या कहलाती है। और उस विद्या का, दोनों का अविवांग कांचनं गृतिः मानो देखो, वह उन त्रिविद्या को लेकर के मानो देखो, याग जैसे कर्मों का कर्मकाण्ड में त्रिपाद का वर्णन प्रायः आता है।

त्रिदोष

परन्तु देखो, महाराजा सुधन्वा ने ये कहा कि मैं देखो, अग्नि में औषधियों को तपाता रहता हूँ तो मानो देखो, तीन से इसका बड़ा सम्बन्ध रहता है। तीन से इसका सम्बन्ध इसलिए रहता है क्योंकि अग्नि में जब हम किसी औषधि को तपायमान करते हैं। तो तीन से उसकी मानो पुट देते हैं। तीन पुट मानो देखो, किसी और औषधियों में देते हैं। इसी प्रकार तीन ही प्रकार पुट की होती हैं। मानो देखो, ये तीन प्रकार की पुट होने से इसका एक नृत्योत्कृति और श्वांग मानो देखो, औषध

पुष्टिकारक बन जाता है। इसी प्रकार मानव को त्रिकोण यज्ञशाला में याग करने से मानव के द्वारा जो तीन प्रकार के दोष है मानो जैसे मानव के शरीर में तीन दोष कहलाते हैं। तीन दोषारोपण होते रहते हैं। जैसे वाक है मानो देखो, अग्निप्रधान में इसको पिताधृष्ट कहते हैं। परन्तु देखो, इसको वायु सम्भात कहते हैं। मानो देखो, ये जो त्रिदोष है ये त्रिदोष भी इस त्रिकोण याग के करने से, ये त्रिदोष भी मानो देखो, अपने अपने रूप में, यथार्थ रूप में गति करते रहते हैं। यदि हम उसके आधार पर अपने आहार को उसी प्रकार बनाए। आहार और व्यवहार भी हमारा त्रिकोण होना चाहिए। आहार और व्यवहार त्रिकोण कैसा हो?

त्रिकोण आहार, व्यवहार

मानो देखो, आहार में तीन प्रकार का रस होना चाहिए। मानो उसमें पुष्टिकारक हो, रसदायक और मानो देखो, ऋतु के अनुकूल हो। इस प्रकार का भोजन भी मानव के लिए बहुत अनिवार्य त्रिकोण कहलाता है। ये त्रिकोण अन्न कहलाता है। मानो त्रिकोण व्यवहार कहलाता है। त्रिकोण व्यवहार कैसा? मानो देखो, बाह्य व्यवहार, हृदय में मानो देखो, उसी प्रकार की प्रतिभा और मानो देखो, उसमें यौगिकवाद भी होना चाहिए। तीन प्रकार के मानो देखो, हमारे व्यवहार होने चाहिए। वेद का भाष्य करने वाला, वेद के अर्थों को जानने वाला मानो तीन प्रकार की प्रतिभा वाला होना चाहिए। मानो उसका व्यवहार स्वतन्त्र रूप से विचित्र होना चाहिए, वाणी में, बाह्य जगत में पवित्रता हो। मानो उसका आहार और व्यवहार दोनों पवित्र हो, तो व्यवहार स्वतः ऊँचा बन जाता है।

विज्ञान

उसके पश्चात मानो देखो, उसके आधार पर उसका क्रिया कलाप वैज्ञानिक हो। क्योंकि विज्ञान का होना बहुत अनिवार्य है। विज्ञान किसे कहते हैं? इन्दियों की प्रतिभा को जानना, इन्द्रियों के व्यापार को जानना, इन्द्रियों के परोक्ष रूप को जानना, मानो उसको बाह्य जगत से उसका समन्वय करना ये मानो देखो, विज्ञान कहलाता है। उसके पश्चात उसमें जो...में कुछ कृतिका होती है। परन्तु उन

कृतिकाओं के साथ में उसका एक मानो देखो, यौगिकवाद मानो देखो, समुद्र में चला जाता है। समुद्र में से नाना प्रकार के रत्नों को लाता है। हृदय रूपी बेटा! ये समुद्र है और समुद्र में से नाना प्रकार के रत्नों को लाता है, उसे यौगिकवाद मानो देखो, पिपात बनाता है। पिपात बना करके वह जो आत्म चेतना है। उसका अघात जो समुद्र है उस समुद्र में प्रवेश करने से मेरे पुत्रो! देखो, अघात आभा में रत्नों की धाराओं को जन्म देता है और वह योगेश्वर बनकरके मानो देखो, वेद के तीन ही प्रकार के विषय कहलाते हैं। यहाँ तीन प्रकार की धाराएँ हैं। मानो देखो, व्यवहारिक, वैज्ञानिक और यौगिक कहलाएँ जिसको आध्यात्मिकवेत्ता कहते हैं।

त्रिविद्या

परन्तु देखो, इसी प्रकार वेद में तीन प्रकार की विद्या होती है। तीन प्रकार की विद्या का देखो, सबसे प्रथम ज्ञान, उसके पश्चात कर्म और देखो, उसके पश्चात उपासना। मानो देखो, ज्ञान उसे कहते हैं। मानो देखो, किसी वस्तु का हमने उच्चारण किया है। उस उच्चारण शब्द में क्या ज्ञान है। मानो उस ज्ञान को बाह्य जगत में लाना उसके पश्चात मानो उसके अनुसार हमें क्रियात्मक कर्म करना और कर्म करने के पश्चात उन धाराओं का उस कर्म में से जो भी तरंगें उत्पन्न होती है। मानो यथायोग्य उसको हमें क्रिया में लाना, उसको अपने में धारण करना बेटा! उसको उपासना कहते है।

तो परिणाम क्या? मानो देखो, सदुपयोग का नाम उपासना हो गया और जानना मेरे प्यारे! ज्ञान हो गया और जानकर उसी प्रकार व्यवहार का नाम कर्मकाण्ड हो गया।

जीवन में महानता

तो मेरे प्यारे! देखो, वेद में त्रिवर्धा आता है। तो मैं बेटा! कहाँ चला गया हूँ तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देतेदेते। मैं त्रिवर्धा में ही चला गया। विचार क्या मानो देखो, मैं उच्चारण कर रहा था बेटा! देखो, राजा राम के राष्ट्र की चर्चाएं मानो देखो, राजा राम के यहाँ त्रिकोण याग होता रहता है और त्रिकोण का अभिप्राय यह कि मानो

हमें रूग्णों से शान्त होना है। हमें अपने राष्ट्र के प्रति, अपने समाज के प्रति मानो देखो, यह भावना लानी है। कि हमारे यहाँ किसी प्रकार का अरुग्ण न होना चाहिए। हम उस विज्ञान को जाने जो विज्ञान मानो देखो, तरंगों में ओत प्रोत रहता है। उन तरंगों में तरंगित रहता है। उस विज्ञान को जानने से हमारे जीवन में एक महानता की प्राप्ति होती है।

तो मानो देखो, इसी प्रकार वे महाराजा कुंभकरण मानो देखो, हिमालय की कन्द्राओं में रहते और मानो देखो, लंका में भी रहते। वे जब याग कर्म करते थे तो याग कर्म करते करते मानो देखो, त्रिकोण में, वह अपने में मानो देखो, रत्त रहते थे। उसके पश्चात औषधियों का जहाँ समन्वय होता है। वहाँ विज्ञान की धारा भी उसी से उत्पन्न हुआ करती हैं। तो परिणाम क्या है पुत्रो! मैं मानो देखो, विशेषता तुम्हें देने नहीं आया हूँ विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, मानो देखो, स्वस्थ कहलाया जाता है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! आपने जो कुम्भकरण का वर्णन किया है। कुम्भकरण को तो आधुनिक काल में प्रायः ऐसा स्वीकार नहीं करते जैसा आप वर्णन कर रहे है। मानो देखो, उसको राक्षसीप्रवृत्तियों में आधुनिक समाज स्वीकार करता है। आप उसको बहुत विशेष याज्ञिक और, वैज्ञानिक वर्णन करते हैं। परन्तु देखो, आधुनिक जो साहित्य है मानो देखो, उसमें महाराजा कुम्भकरण के जो संस्कार का विधान नहीं प्राप्त होता। आप ये नवीन वार्ता कहाँ से लाते है?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! हम नवीन वार्ता नहीं लाते। हम तो प्रायः जो भी कुछ होता है जो मानो उस काल की प्रतिभा मानो प्रायः साहित्य में रही है। उसी को हम उच्चारण करते रहते है क्योंकि हमें मिथ्या उच्चारण करने से कोई लाभ नहीं है। मानो देखो, हम किसी प्राणी को राक्षसी श्रेणी में ला करके उद्गीत करे तो ये तो हमारा कर्तव्य नहीं है। रहा ये कि इसमें जो विशाल मानो देखो, ऋषि के जो पौत्र थे उनका राष्ट्र ही बड़ा विशाल था। तो क्या तुमको कुछ संस्कार में कोई हानि है या किसी भी कोई ऐसा विधान है कि संस्कार नहीं होना चाहिए।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! होना तो चाहिए। परन्तु आधुनिक काल में कहीं वर्णन प्राप्त नहीं होता।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! ये अभिप्राय नहीं है कि आधुनिक काल में कोई वस्तु न प्राप्त हो तो अतीत में न हुई हो। इसमें ये कोई निश्चय नहीं होता। परन्तु देखो, महाराजा कुम्भकरण के विषय में तो तुमने मुझे एक समय वर्णन कराया था कि वे मांसों का भक्षण किया करते थे।

कुम्भकरण का वास्तविक जीवन

पूज्य महानन्द जीः प्रभु! ऐसा तो आधुनिक जगत में कहते हैं कि जब वे छहमाह की निन्द्रा से जागरूक होते थे तो वे बहुतसा मांस भक्षण करते थे और सुरापान करते थे।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! किन्तु ये तो पामरों की चर्चाएं हैं। ये बुद्धिमानो का विषय नहीं है। मानो देखो, जो असुर पान करता है या मांस इत्यादि का भक्षण करता है बेटा! ये पाम्बरों का वाममार्ग कहलाता है। ये मानो जो शुद्ध, विशुद्ध मार्ग हैं, उससे जो विपरीत मार्ग को अपनाने वाले हैं। वो सुरापान और मांस की चर्चा करते रहते हैं। प्रायः इतिहास में ऐसा प्राप्त नहीं होता। मुझे तो बेटा! ऐसा हमारी जानकारी में नहीं है परन्तु तुम जैसा उच्चारण कर रहे हो। ऐसा भी हमने किसी काल में श्रवण नहीं किया है। रहा ये कि कुम्भकरण का संस्कारण हुआ हो। बेटा! महाराजा कुम्भकरण एक वाक बहुत ऊर्ध्वा में कहा करते थे। महाराजा कुम्भकरण यह कहा करते थे कि मैं याज्ञिक हूँ और याज्ञिक रहूँगा। मानो देखो, मेरा आहार और व्यवहार प्रभु से प्रार्थना करता हूँ मेरा शुद्ध होना चाहिए।

शुद्ध आहार

मानो देखो, शुद्ध आहार वह होता है। मैंने पुरातन काल में त्रिवर्धा में तुम्हें वर्णन किया। पुष्टिकार हो, रस दायक हो और बुद्धिनृत्त करने वाला हो। मानो देखो, बुद्धि उत्पन्न करने वाला हो। जिसमें प्रभु की प्रतिभा हो। तो मानो देखो, ऐसा जो आहार होता है। वही आहार पवित्र होता है। तो वह आहार महाराजा कुम्भकरण किया

करते थे। मानो देखो, मुझे तो बेटा! उनका जीवन प्रायः स्मरण आता रहता है। वह छहछः माह तक मानो देखो,।

बेटा! एक समय जब यागों का हम किसी काल में जब अनुसन्धान कर रहे थे तो उस समय महाराजा कुम्भकरण एक समय बेटा! उस यज्ञशाला में पधारे थे जब हम उस समय में मानो देखो, सप्तकोण की यज्ञशाला का निर्माण करते रहते थे, उनमें याग करते रहते थे। मानो देखो, कुछ समय के पश्चात उन्होंने याग के कर्मकाण्डों को जानने का प्रयास किया था। उस समय बेटा! हमने उनके आहार और व्यवहार को प्रायः श्रवण किया था। उनका आहार और व्यवहार बड़ा पवित्र था। उनकी पत्नी, मानो देखो, एक समय यज्ञशाला में पधारी और देखो, जिस भी काल में यज्ञशाला के उत्सव या नृत्य होते रहते थे तो उस काल में मानो देखो, वे यज्ञ में विराजमान हो करके प्रभु की स्तुति, नमस्कार मानो देखो, अपनी आभा में सदैव रमण करती रहती थी।

कुम्भकरण का पूर्वनाम मृचिकेतु

तो बेटा! ऐसा हमने कहीं कोई दृष्टिपात नहीं किया। अब रहा ये कि तुम्हारे कथनानुसार इन वाक्यों को उच्चारण करने लगे। तो बेटा! जैसे तुम पाम्बरों वाली चर्चा कर रहे हो ऐसी हम भी पाम्बरों वाली चर्चा करने लगे तो ये कोई शोभनीय नहीं है। परन्तु रहा ये वाक्, वेद की बेटा! हम चर्चा करते रहे हैं। वेद के अनुकूल बेटा! जिन्होंने विज्ञान को जाना है। जिन्होंने अपनी प्रतिभा को जाना है। उसी आधार पर बेटा! देखो, हम प्रायः चर्चाएं करते रहते हैं। क्योंकि कुम्भकरण का नामोकरण इसीलिए उच्चारण किया जाता था क्योंकि वे कुम्भाकार जैसे मानो देखो, कुम्भाकार जैसे उनके विचार थे। ऐसे वे मानो देखो, नृत्त कराते रहते थे। ऐसी उनकी रचना रहती थी जैसे मानो कुम्भ अपने में मानो देखो, जैसे घटा होता है उसमें जल होता है। स्वाति होते हैं। परन्तु देखो, इसी प्रकार वह लाभप्रद होता है ऐसे उनका मस्तिष्क कुम्भाकार वाला होने से मानो उसमें ज्ञान और विज्ञान की उपज उत्पन्न होती रहती थी। तो उनको मानो देखो, ऋषि मुनि कुम्भाकार वाले

कुम्भकरण कहते थे। कुम्भाकार वाले इसीलिए कहते थे उनका नाम तो बेटा! बाल्यकाल में मृचिकेतु नाम था। मानो देखो, मृचिकेतु जो नाम है वह मानो देखो, बाल काल में, क्रोध विशेष करते थे। तो आचार्य उन्हें मृचिकेतु कहते थे। वे कहते थे कि जैसे मानो देखो, मृचि होता है। मृचि नाम का एक नक्षत्र होता है। मानो देखो, मृचि नक्षत्र में सदैव अग्नि की धाराएं जन्म लेती रहती है। अग्नि की तरंगें उत्पन्न होती रहती है। इसी प्रकार उनको मृचिकेतु कहते हैं।

तो विचार विनिमय में क्या मेरे पुत्रो! मैं आज तुम्हें ये उच्चारण कर रहा था कि राजा रावण के यहाँ त्रिकोण याग हुआ वो याग मानो औषध विज्ञान के लिए मानो विशेषकर त्रिदोषों को अपनी आभा में लाने के लिए त्रिकोण याग परम्परागतों से बेटा! हमारे यहाँ वैदिक साहित्य प्रायः में नृत्त करता रहा है। और जैसा तुमने कहा कि आधुनिक काल में त्रिकोण का कोई वर्णन नहीं है तो बेटा! ये कोई अभिप्राय नहीं है कि त्रिकोण का आधुनिक काल में वर्णन नहीं है तो प्रायः वह नहीं है। कोई वस्तु किसी काल में उसका नामोकरण अज्ञानता के कारण भी लुप्त हो सकता है। और देखो, रूढ़िवाद के कारण भी वह लुप्त हो सकता है। मैं इस वाक को नहीं जानता हूँ। इसको तो तुम ही भली भान्ति जानते होगे कि इसका नामोकरण लुप्त क्यों हो गया? कर्मकाण्ड लुप्त क्यों हो गया? परन्तु सर्वत्र सदैव सत्य है कि किसी भी याग में हमारे यहाँ हिंसा का वर्णन नहीं है। क्योंकि जो भी याग होते हैं वे लाभ के लिए होते हैं। राष्ट्र समाज को ऊँचा बनाने के लिए होते हैं। मानो रुग्णों को शान्त करने के लिए होते हैं। और वे होते उसी काल में हैं। जब अहिंसा परमो धर्मः होता है। परन्तु जिनमें हिंसा होती है वे याग नहीं होते हैं। मानो देखो, रहा ये वाक कि परम्परगतों से आहार और व्यवहारों में मानो देखो, नाना प्रकार का नृत्त होता रहा है। ये तो बेटा! परम्परागतों से होता रहता है।

सुकर्म

परन्तु याग शब्द जहाँ आता है तो उसका अभिप्राय ये है सुकर्म करना। याग का अभिप्राय यह है कि मन में भी हिंसा न रहना, याग का अभिप्राय यह है कि क्रोध

भी न आना, याग का अभिप्राय यह है काम की वासना भी उत्पन्न न होना, बेटा! याग का अभिप्राय यह है कि बेटा! मन को एकाग्र करना। मानो देखो, याग का अभिप्राय यह है कि मन को मुनिवरों! देखो, प्राण में उसका सन्निधान कर देना। मानो देखो, याग का अभिप्राय ये है, दोनों वस्तुओं का मिलान करना, योग में प्रवेश होना है। परन्तु देखो, योग में प्रवेश होने के पश्चात मानो देखो, संसार को जानने का नाम याग है। परन्तु इस संसार को जान करके प्रभु में स्थित होने का नाम पुत्रो! याग कहा जाता है।

तो बेटा! मैं कहाँ तक वर्णन करूंगा। तो विचार विनिमय ये कि याग में बेटा! हिंसा नहीं होती। जो याग हमें पृथ्वी लोक से लेकर के द्यौ लोक तक ले जाकर और हमें देखो, ब्रह्म की प्रतिभा में मानो ब्रह्म लोको में ले जाता हुआ चेतना में रत्त होने का हमें ज्ञान कराता है तो बेटा! उसमें हिंसा नहीं होती। मेरे पुत्रो! आज तो मैं अपने विचारों की भूमिका बनाने आया हूँ क्योंकि तुमने विषय ही ऐसा लिया है कि मुझे भूमिका बनानी है। मानो देखो, ये भूमिका क्या बनी कि हमें बेटा! इतिहास साहित्य को विशुद्ध रूपों से जानना है उन्हें जानकर के इस संसार को त्रिवर्धा रूपों में स्वीकार करना है।

स्वाहा का प्रभाव

मेरे पुत्रों! देखो, हम जो स्वाहा उच्चारण करते हैं। उनका सम्बन्ध बृहस्पति लोको तक हमारी तरंगें जाती है। उससे हमें लाभ क्या है शरीर में? कि हमारा जो पिण्ड है मानो उसमें बुद्धि का क्षेत्र है। जो मन का क्षेत्र, बुद्धि का क्षेत्र है उसमें मुनिवरों! देखो, लोक लोकान्तरों का विधान आता है। लोक लोकान्तरों से जो तरंगें आती है। उन तरंगों का हम जब यौगिक क्षेत्रों में, विज्ञान के क्षेत्रों में प्रवेश होकर के मिलान मिलाते हैं तो मुनिवरों! देखो, उनका समन्वय बृहस्पति लोकों से हो जाता है तो परिणाम बेटा! यह गम्भीर विषय हैं। यह चर्चाएं मैं तुम्हे कल प्रगट करुंगा। क्योंकि तुम्हारा विषय बहुत गम्भीर बनेगा यह विचार क्या मानो यह विषय एक महान है विचार क्या बेटा! मैं बहुत पुरातन काल में मानो देखो चरणों में ओत प्रोत

हो करके शिष्य मण्डली विराजमान होती बेटा! जैसा तुम्हारा प्रश्न हैं मैं उत्तर देता जाऊंगा, तुम करते रहना, परन्तु देखो, आज तो केवल एक भूमिका अपने विचारों की बनाई है क्योंकि यह विचार एक ऐसा बना है जैसे हमारे यहां त्रिकोण याग कैसे कैसे होता है इसके कर्मकाण्ड का विषय बेटा! मैं कल इसके सम्बन्ध में चर्चा करुंगा। परन्तु देखो, औषधियों की चर्चा भी इसी सम्बन्ध में होती रहेगीं। आज का विचार क्या है हमारा इसमें देखो, विशुद्ध रुपों से अपने क्रियाकलाप में सदैव रत्त रहें। देखो, मुनिवरों! अपनी आभा में सदैव आभायित रहे, आज के वाक् उच्चारण करने का हमारा अभिप्रायः क्या क्या मुनिवरों! हमारे यहां राजा महाराजा प्रायः यागों में रत्त रहते थे और ऋषि मुनि भी याग कर्म करते हुए शुभ कर्मों में सदैव रत्त रहते थे, जिनके मुनिवरों! देखो उनका अन्तरात्मा, उनका क्रियाकलाप, उनका मानो देखो, विचारों की प्रतिभा देखो महान बनती चली जाए, यह देखो, परम्परागतों से इसका विधान सृष्टि के प्रारम्भ से होता चला जा रहा है, आजका विचार क्या बेटा! देखो हमने तुम्हारे समीप एक भूमिका की रचना की है, इसके विज्ञान की चर्चाएं हम तुम्हे कल प्रगट करेगें। आज का वाक समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा। ओ३म् देवाः ......।

7. 820513-महानन्द जी के प्रश्न उत्तर

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने, पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप माना गया है। क्योंकि यज्ञ ही उसका आयतन माना गया है। तो वह अपने गृह में वास करता रहता है। ये ब्रह्माण्ड रूपी जो, एक गृह बना हुआ है। उस गृह का स्वामी वह मेरा प्रभु कहा जाता है। वह कैसी अनुपमता में रहता है? मानो वह स्वामी बन करके, गृह में वास करके गृह को चला रहा है। गति करा रहा है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! मैं आपसे कोई प्रश्न करने वाला हूँ। सम्भवः वरुणो वृत्यम् पंचां यज्ञम् ब्रहे वृताम् स्वस्ति रुद्रा। पभु! आपने बहुत पूर्वकाल में, कुछ स्वस्ति यागों का वर्णन किया था, जिसमें स्वस्ति याग और वाजपेयी याग दोनों का महत्व आपने वर्णन किया था। परन्तु उनके सम्बन्ध में, मैं आज आपसे पुनः कुछ प्रश्न कर रहा हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! तुम ऐसा प्रश्न क्यों कर रहे हो?

पूज्य महानन्द जीः समय वृतान्त बन्धनम्।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य.... बेटा! स्वस्ति यागों के सम्बन्ध में, वाजपेयी और अग्निष्टोम और ये तीन याग कहलाते हैं। स्वस्ति याग उसे कहते है। जहाँ रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण को त्याग करके उपराम होने वाला याग है। उसे स्वस्ति याग कहते हैं। वह स्वस्ति याग कहलाता है, जिसको ऋषि मुनि करते हैं। जिसको ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म को निहारते रहते हैं और वह उस याग को करते हैं। पूर्वाभिमुख हो करके, सूर्य की किरणों के साथ अपनी स्वस्ति को लगाते हैं और उसके द्वारा जो याग होता है उसे स्वस्ति याग कहते हैं।

पूज्य महानन्द जीः क्या इसका स्पष्टीकरण नहीं हो सका है।

पूज्यपाद गुरुदेवः सम्भवति स्पष्टीकरण यह है कि अपनी जो प्राण की तरंगें हैं, जो श्वांस स्वतः गति कर रहा है उस गति का समन्वय सूर्य की किरणों से समन्वय किया जाता है। परन्तु उस समय एक आध्यात्मिक रूप बन जाता है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या प्रभु! इसका भौतिक रूप क्या है?

पूज्यपाद गुरुदेवः भौतिक रूप अश्विनी कहलाता है। यज्ञमान! तुम्हें तो यह प्रतीत होगा, जिस काल में विभाण्डक ऋषि के यहाँ एक अनुसन्धानशाला का निर्माण हुआ था और उस यज्ञशाला के निर्माण में, एक अनुसन्धानशाला का भी निर्माण हुआ। और उसमें मानो वृष्टि याग, पुत्रेष्टि याग, त्रि अनवासन याग इन यज्ञशालाओं का निर्माण किया गया था, यह वह काल तो तुम्हें प्रतीत ही होगा। परन्तु उस काल में जब स्वस्ति और अग्निष्टोम दोनों यागों को प्रदीप्त किया गया, तो उसके कर्मकाण्ड के कुछ मन्त्रों का अध्ययन हुआ और वह महर्षि विभाण्डक और महर्षि वैशम्पायन के द्वारा हुआ था। तो तुम्हें यह स्मरण होगा, वृष्टियाग के लिए, और पुत्रेष्टि, अग्निष्टोम और स्वस्ति याग, अब उन यागों का जो भौतिक स्वरूप बनता है, भौतिक स्वरूप में लाने के लिए वह वैज्ञानिकों का विषय है।

तो राम के काल में बेटा! तुम्हें तो प्रतीत होगा, क्या राम के जो महामन्त्री थे हनुमान जी, वह उन यज्ञ शालाओं में निमन्त्रित किए गए थे और उस समय वह याग हुआ। उन्होंने सूर्य की किरणों को जानने के लिए त्रिकोण उन्होंने एक अष्टांग बनाया, त्रि कोण। क्योंकि सूर्य की जो किरण होती हैं, उनकी धाराएं होती हैं उनमें त्रिकोण चलता है। वह जहां जहां भी सूर्य की किरण, जैसे सूर्य की किरण पृथ्वी के गर्भ में, जल को जब शक्तिशाली बनाती हैं तो एक ऋणात नाम की किरण होती है। वह ऋणेतकेतु नाम की जो किरण होती है, वह जल में जाती है। पृथ्वी के गर्भ में। तो उसका मुख होता है त्रिकोण और त्रिकोण बन करके मानो जब वह त्रिकोण बन करके पृथ्वी के गर्भ में, वसुन्धरा के गर्भ में जल को शक्तिशाली बनाया जाता है और जल को शक्तिशाली बना करके मानो उन किरणों को उन्होंने यन्त्रों

में लाने का त्रिकोण एक कृताक यन्त्र उन्होंने निर्मित किया था जो त्रिकोण यज्ञशाला में आहुति देता रहता है और उसमें सुगन्ध आती रहती है, उसमें धाराओं की उपलब्धि होती है और वह धाराएं सूर्य की किरण में मिश्रित हो करके उन किरणों को वैज्ञानिक अपने यन्त्रों में लाता है। उन यन्त्रों में यह विशेषता है सूर्य की किरणों को जान करके जैसे वह जल पृथ्वी का जल त्रिकोण से शक्तिशाली बनाया जाता है। वही जल शोधन हो करके यन्त्रों का कार्य करता है, यन्त्र देखो, वाहन बन करके गति करता है। इसी प्रकार वही सूर्य की किरण जब जल को शोधन करती है, वही नम्र हो करके यन्त्र में जब प्रवेश होती है, तो बेटा! वह मानो देखो, उनको एकत्रित करके कुछ ही किरणों को एकत्रित करने से वाहन गति करने लगता है, उन किरणों के द्वारा। तो ऐसे यन्त्रों का निर्माण महर्षि विभाण्डक मुनि के यहाँ हुआ था।

परन्तु रहा यह कि जमं ब्रीहि कृतं सुता परन्तु देखो, यज्ञमान! जैसे तुमने अभी प्रश्न किया है क्या त्रिकोण अप्रात क्या होता है? त्रिकोण जो अप्रात है, यह जो संसार है यह त्रिकोण कहलाता है। इसमें रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण उससे कटिबद्ध होने वाले यह चतुष आभा कहलाती है। मानो देखो, इसी प्रकार जैसे त्रिकोण में जैसे त्रिगुण कहलाए जाते हैं, अब त्रिगुणों में क्योंकि ही तीन प्रकार के परमाणु होते हैं। तीन प्रकार के परमाणु भी त्रिकोण कहलाते हैं। जैसे एक परमाणु है देखो, पार्थिव जो गुरुत्व को धारण कर रहा है। एक परमाणु है जो मानो देखो, जल से सम्बन्धित है, वह शीतलता को प्रदान कर रहा है और एक परमाणु है जो तेजोमयी कहलाता है। इन दोनों को अपने में धारण करता है घारण करके और इसकी जो गतियाँ गति करती रहती हैं वह दक्षिणाएं कहलाती हैं तो यह चतुष कोण बन गया, तो यह त्रिकोण बन करके चतुष कोण बनता है जब इसमें दक्षिणाय का समन्वय हो जाता है। तुम मुझे बहुत गम्भीर विषय में ले गए हो पुत्र! परन्तु कोई वाक नहीं। इसका मैं निर्णय कुछ किए देता हूँ बहुत पूर्व काल में इस विषय को लिया है। यह विषय तो बहुत गहन है, परन्तु इस गहन विषय को भी विशुद्ध रूप से लिया

जा सकता है। तो वह त्रि अणवत कहलाता है। परन्तु जब वैज्ञानिक इसका निर्माण करते हैं। जैसे विभाण्डक और भारद्वाज मुनि के यहाँ भी प्रायः ऐसा ही होता रहा। तो उन परमाणुओं को जब वह गति करते हैं उन गति किए हुए परमाणुओं को जब यन्त्रों में लिया जाता है। यन्त्रों में भी उसी प्रकार की गति करते हैं। परन्तु गतियाँ जो हैं वह ध्रुवा और ऊर्ध्वा कहलाती हैं। तो जैसे गुरुत्व की जो गति है वह ध्रुवा है, और तेजोमयी जो परमाणु हैं उनकी गति ऊर्ध्वा है। दोनों का समन्वय हो करके, ध्रुवा और ऊर्ध्वा बन करके और मानो देखो, शीतल और अश्वान गति को मानो जो पृथ्वी में विश्राम करने वाला परमाणु है। उस परमाणु को अपने में धारण करने लगती है और धारण करके इनकी गति पुनः दक्षिणाय बन जाती है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! यह दक्षिणाय क्या होता है?

पूज्यपाद गुरुदेवः दक्षिणाय स्वस्ति कहलाता है। यह दक्षिणाय स्वस्ति कहलाता है जहाँ ये अपनी धाराओं को ले करके गति करता है और गतिशील हो करके उसमें प्रवेश कर जाता है। प्रवेश को दक्षिणाय कहते हैं और मानो गति अनवासन कहती है। परन्तु इन दोनों की गतियों से एक गुरुत्व पृथ्वी में विश्राम करने वाला परमाणु और तेजोमयी परमाणु इनको ले करके वह दक्षिणाय में गति करके वह अन्तरिक्ष को प्राप्त हो जाता है। जिसको हम द्यौ कहते हैं। वह द्यौ में ओत प्रोत हो जाता है, जहाँ अनन्त परमाणुओं का भण्डार माना गया है, उसमें वह गति कर जाता है।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! यह जो त्रिकोण यज्ञमान यज्ञशाला में याग करता है तो त्रिकोण का क्या अभिप्राय है?

पूज्यपाद गुरुदेवः त्रिकोण का अभिप्राय यह है कि अब इसमें आयुर्वेद भी आता है, इसमें आयुर्वेद भी आता है विज्ञान भी आता है और इसमें कर्मकाण्ड की और भी धाराएं आती हैं, जैसे एक यज्ञमान त्रिकोण यज्ञशाला में विद्यमान होता है तो वह पूर्वामुख हो करके आज्या आहुति देता है। आज्या आहुति जब देता है तो पृथ्वी में विश्राम करने वाला जो परमाणु है, उसको अग्नि की धुकधुकी से मन्त्रों की धारणा से मानो देखो, उसको ऊर्ध्वा में ले जाता है और वह उसकी गति भी देखो, इनमें

रमण तेजों में रमण करके उसकी भी गति दक्षिणाय को प्राप्त होती है। परन्तु देखो, जैसे एक रुग्ण प्राणी है, आयुर्वेद का आचार्य कहता है, आयुर्वेदाचार्य कहता है कि त्रिकोण तुमने याग का निर्माण किया है तो शरीर में तीन दोष, रूप कहलाते हैं, त्रिवर्धा कहलाता है, यह शरीर तो त्रिवर्धा में जैसे तेज है, तेजोमयी है, वायुमयी है, और इसमें कफोवृति प्रधानता में रहती है। तो त्रिवर्धा किसे कहते हैं? और भी साधरण रूपों से माना जाए जैसे वायु, रजतम् और तेजोमयी, मानो ये तीन प्रकार के परमाणु बने जैसे ग्रहा स्वस्ति गुरुत्व जैसे वृणति अस्वेतण ये तीन आभा बनीं। तो इसी प्रकार वैद्यराज जो हैं, एक नाड़ी की आभा को ले करके तीनों दोषों को जान लेते हैं। जब भी कोई दोष आ जाता है तो उस दोष के आने पर मानो, देखो, उसको निवारण करने के लिए यज्ञमान एक यज्ञशाला का निर्माण करता है। क्योंकि मानव के शरीर में, जो रसना त्रिकाठ और दुद्धि के निचले विभाग में, लोरियों के निचले विभाग में जो त्रिकोण बना हुआ है इससे मानव का जीवन संचालित होता है। जैसे मेरे पुत्र! तुम्हें तो प्रतीत होगा शविश्वत कहलाता है। वह जो दोनों शविश्वत हैं वह त्रिकोण कहलाते हैं। परन्तु उनमें त्रिदोष हो जाते हैं। जैसे वायु है, पित जागनि जिसे कहते हैं और देखो, उसी के रूप में कफावृति कहलाता है जिसे हम रज कहते हैं। तो इन तीनों प्रकार के परमाणुओं को मानव सन्तुलनता में लाने के लिए वह याग करता है और एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके उसी प्रकार का वह आहार बनाता है, उसी प्रकार का व्यवहार बनाता है और उसके पश्चात वह याग करता है उस याग में भिन्न भिन्न प्रकार की समिधाएं होती हैं जैसे क्रीकिल की समिधा होती है। आँगानि समिधा होती हैं देखो, शेलकानिका समिधाएं होती हैं। पीपल की समिधाएं होती हैं। त्रिकाठ की समिधाएं होती हैं मानो इन समिधाओं के द्वारा एक समिधा जो पृथ्वी में परमाणु विश्राम कर रहा है, उसको जागरूक करना है तो तुम्हें क्रीकल के समिधाओं के द्वारा तुम्हें अग्नि को प्रदीप्त करना है। यदि तुम्हें तेजोमयी स्वस्ति में जाना है तो पीपल और आका की इन दोनों समिधाओं के द्वारा अग्नाध्यान करना होगा। परन्तु देखो, वही परमाणु उन समिधाओं के और

सामग्री साकल्य के जो हैं। परन्तु जब उसमें स्वाहा कहा जाता है तो वही परमाणु मानव के शरीर में नासिका के छिद्र के द्वारा, नेत्रों के छिद्रों के द्वारा वह शरीर में जो नाना छिद्र हैं, त्वचा के द्वारा वह परमाणु आन्तरिक जगत में गति करते हैं। तो जैसे वायु मण्डल में परमाणु एक दूसरे परमाणु को दूषित को निगलता चला जाता है, विशुद्ध वातावरण उत्पन्न करता चला जाता है। इसी प्रकार मानव के शरीर में भी ये परमाणु मानो देखो, विशुद्धता को प्रदान करा देते हैं। इसके पश्चात वह त्रिकोण वाला तीन प्रकार का प्राणायाम करता है। उसके पश्चात जब वह प्राणायाम करता है। वह प्राणायाम में रेचकानि, कृतिकानी श्वंधनं मानो देखो, इसमें प्राण में एक ध्वनि होती है एक तो वह प्राणायाम होता है, एक रेचकानि होता है मानो देखो, स्थिर आभा में रमण करा देना है। उसके पश्चात त्रिकाठ कहलाता है। तो यह जो प्राणायाम है इनके करने के पश्चात मानव के शरीर का शोधन हो जाता है। मानव अपनी मानो देखो, इसको लगभग छहमाह के करने पश्चात मानव की जितनी भी कामनाएं होती हैं, कामवासना की प्रवृत्तियाँ होती हैं, इसके ऊपर यज्ञमान अधिपथ्य कर लेता है। उसे हम शारीरिक विजय याग कहते हैं। उसे शारीरिक विजय याग कहते हैं।

परन्तु मैं इस सम्बन्ध में कोई गम्भीरता में तुम्हें नहीं ले जाँऊगा। केवल विचार यह, क्या तुम्हारे प्रश्नों का मैं उत्तर दे रहा हूँ। श्वञ्जन, कृतिका, श्वंर्धन, वेणुकृतां, अस्वतिकेतु मानो देखो, इस प्रकार के मन्त्रों को तुम्हें वेदमन्त्रों में जानना होगा और जानकर के इसके द्वारा विश्वसनीय याग करना होगा। तो इस प्रकार का जो याग है यह त्रिकोण कहलाता है। परन्तु देखो, चतुषकोण की आभा में ले आओ। चतुषकोण उसे कहते हैं वास्तव में याग तो त्रिकोण ही होते हैं। त्रिकोण में इसकी धाराएं चलती हैं। त्रिकोण वाला शब्द बन करके चलता है। त्रिकोण वाले ही परमाणु जल, अग्नि में वास करते हैं। त्रिकोण वाला जो याग है यह स्वस्ति कहलाता है। इसको स्वस्ति याग, विजय याग, अजयमेध याग, गो मेध याग, सोमकेतु याग, नाना प्रकार के यागों का कर्मकाण्ड उसके गर्भ में निहित होता है। परन्तु देखो,

रहा यह कि आगे चल करके, जिसे चतुष्कोण है, ये देखो, दक्षिणाय का इसमें भाग और समन्वय कर लेते हैं। समन्वय कर तो यह चतुष याग बन जाता है। चतुष याग की जो धाराएं होती हैं। परन्तु वह द्यौ लोक को जाती हैं। यदि उसमें विशुद्धता है, शुद्धता है, यज्ञमान का हृदय पवित्र है तो देखो, वह धाराएं संसार के अशुद्धवाद को समाप्त करके द्यौ लोक को प्राप्त होती रहती हैं, परन्तु रहा यह कि आगे चल करके हम पञ्चकोण में जाते हैं। मानो पञ्चकोण इसीलिए कि हम एक भाग तो जल का निहित कर लेते हैं जिसको हम वरुण कहते हैं और एक पृथ्वी का भाग स्थित कर देते हैं और तृतीय जो भाग है वह जल का स्थित कर देते है और तेजोमयी देखो, जल का पृथ्वी का अग्नि का और वायु का और मानो देखो, ईशाण कोण का तो इसका मिलान करके हम पञ्चम बन जाते है। तो यह पांच कोण का यज्ञ कहलाता है। इसमें जो धाराएं उत्पन्न होती हैं, क्योंकि अग्नि जो है यह आभा कहलाती है। इस अग्नि में अग्नि सप्तजिह्वा वाली कहलाती है एक धारा का नाम देखो, शावन्य नाम की की धारा है और एक अग्नि का नाम विषधारिणी आभा है और एक जिह्वा का नाम शक्तिशालिनी है और चतुर्थ आभा का नाम शुन्नधनेनु कहलाती है। परन्तु परन्तु यह देखो, पञ्चजिह्वा वाली अग्नि कहलाती है। ये पञ्चजिह्वा वाली जो अग्नि है यह मानो देखो, पञ्च जो महाभूत है। पञ्च महाभूत कौन से हैं, जैसे पृथ्वी है, जल है, अग्नि है, वायु है और अन्तरिक्ष है, ये पांच पञ्चमहाभूत कहलाते हैं। परन्तु इन भूतों को त्याग दिया जाए तो अब देखो, दिशाओं को लिया जाता है। इसमें चार दिशाएं हैं और पञ्चम ईशाण कोण को मिला करके यह पञ्चम धारा बन जाती हैं। पञ्चमधारा बन करके जब यज्ञमान इसमें आहुति देता है। तो यज्ञमान की आहुति देते ही मानो यह पञ्चजिह्वाओं की जागरूकता हो जाती है। इस पञ्च जो जिह्वाएं हैं अग्नि की यह पञ्च जो मानो देखो, पञ्च जो दोष कहलाते हैं मानो देखो, उनको विशुद्ध करने लगती है और उसमें अग्नि प्रचण्ड और विशेष हो जाती है। वह अग्नि का सम्बन्ध सीधा द्यौलोक से होता है। तो हमारे ऋषि मुनि जब बेटा! इस याग को करते थे तो तुम्हें प्रतीत है जब इस पञ्चम याग को ऋषि

मुनि करते थे तो मानो देखो, उनकी जिह्वाओं का सम्बन्ध इस अन्तरिक्ष से हो करके वायु में गति करता हुआ, यह पञ्च जो प्राण शरीर में वास करते हैं, प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान यह पांच जो प्राण है इन प्राणों को शोधन किया जाता है। प्राण जैसे यह मानव के शरीर में गति करता है। ऐसे ही यह बाह्य जगत में भी गति करता है, बाह्य जगत जो है यह भी पांचों ही प्राणों से सुगठित हो रहा है अथवा दसां प्राणों से भी सुगठित हो रहा है। गठित होता हुआ इनका अपनाअपना विशेष गुण है। इन गुणां की चर्चा तो अब नहीं कर पाऊगा परन्तु विचार केवल इतना है कि यह जो पञ्चमकोण की यज्ञशाला है, इस यज्ञशाला में याग करने से अग्नि की सप्तजिह्वाओं को जानना है।

सप्तजिह्वा क्या है? मुनिवरों! देखो, जैसे एक शालिनी जिह्वा कहलाती है। शालिनी उसे कहते हैं जो मानव के और बाह्य जगत दोनों में तीक्ष्ण कार्य होता है और देखो, एक शक्तिशालिनी होती है, एक वह जिह्वा है जो शक्ति देती है। तृतीय जिह्वा का नाम त्रिवारीणी कहलाता है। वह त्रिदोषों को समाप्त करने वाली है। इसी प्रकार सिन्धवी मानो जो जिह्वा कहलाती है, वह नाना दिशाओं से और सिद्धाओं से मानो देखो, सिद्धियों को प्राप्त कराती है। इसी प्रकार जो पांचवीं धारा है, जिह्वा है वह हमें द्यौलोक में ले जाती है। तो परिणाम क्या है पुत्रो! इनका? क्या मानो देखो, यह अग्नि है। अग्नि की जिह्वाओं को जानना और दिशाओं का सम्बन्ध क्या है? जैसे प्राचीदिग् है, दक्षिणी दिग् है, उदीचिदिग है मानो देखो, इसी प्रकार ईषाण कोण कहलाती है। ईषाण कोण से यह चारों दिशा कटिबद्ध हो रही हैं। इसीलिए इस दिशा में कलश का उत्थान होता है। कलश को धारण किया जाता है।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! आधुनिक काल में चार कलश को यज्ञशाला के चारों भागों में परणित किया जाता है क्या यह अशुद्ध है?

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ! असम्बन्दी ग्रतं ब्रहा असवे ये पुत्रो! मैं तो इस कर्मकाण्ड को इतना नहीं जानता, परन्तु इतना जानता हूँ, जो कर्मकाण्ड की पद्धति कहती है, एक कलश होता है, क्योंकि वरुण केवल एक ही दिशा में रहता है। वरुण केवल

एक ही तत्त्व माना गया है। तो वरुण जो होता है। वह ईषाण कोण में, उस कलश की स्थापना होती है। परन्तु यह जो नाना कलशों की प्रथा है, यह किसी वैज्ञानिक रूप से हो सकती है। परन्तु कर्मकाण्ड की धाराओं में कहीं नहीं होती। एक ही कलश होता है। जो ईषाण कोण में रहता है। वह पञ्चम अग्नि व्रात कहलाता है। परन्तु देखो, ऐसा मुझे कर्मकाण्ड का प्रतीत है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या प्रभु! ये जो आधुनिक जगत में प्रायः ऐसा हो रहा है ईषाणाय, त्रिणाय, त्रिषाण, स्वस्ति जो यह जो चारों कोणों में कलश की स्थापना है, क्या यह होनी नहीं चाहिए।

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं, यह तो नही देखो, जल तो जितना भी परोक्षण जल जितना यज्ञशाला के समीप हो जाएं, उसमें कोई अशुद्धियाँ नहीं हैं। परन्तु मैं कर्मकाण्ड की पद्धति से, कर्म काण्ड की आभा से प्रगट कर रहा था कि कर्मकाण्ड ऐसा कहता है। रहा यह कि जल किसी भी कोण में जल की स्थापना हो सकती है। इसमें ऐसी कोई मानो वार्ता नहीं है। परन्तु रहा मैं उसको अशुद्ध क्यो कहूँ जो देवता है। देवता सर्वत्र विद्यमान होता है। परन्तु देखो, जहाँ याग जैसे जो परमपिता परमात्मा ने जल की स्थापना की है सृष्टि के प्रारम्भ में। वह ईषाण कोण का उन्होंने निर्धारित किया है। क्योंकि ईषाण कोण से दक्षिणाय को गति करती हैं उसकी धाराएं। तो समुद्र की ईषाण कोण है और देखो, द्वितीय उसकी जो कोण है वह मानो देखो, तवि अस्वाण कोण कहलाती है। परन्तु देखो, ईषाण कोण में देखो, जल का महत्व विशेष माना गया है। क्योंकि यज्ञमान पूर्वामुख होकर के जब यज्ञ करता है और अग्नि की जो तरंग हैं वह सीधी देखो, अग्नि की जो धाराएं आती है वह पूर्व से आती है, पूर्व से जैसे अग्नि की धारा आई तो वह जल को ईषाण कोण से जल को स्पर्श करके यज्ञमान के मुखारविन्द पर उसकी धाराएं, धाराओं का समन्वय रहता है। उसकी धराओं का जो समन्वय है, परन्तु देखो, वह उसके मस्तिष्क को शीतल बनाती हैं। उसके मस्तिष्क में जो ग्रन्थियाँ मानो देखो, स्पष्ट नहीं हुई हैं, वह भी हो सकती हैं। जैसे जल का मन्त्र उच्चारण करते हैं। वरुणाश्चम

ब्रह्माः वरुणो ब्रहे व्रताम्, वरुणो दिव्याम् गतप्रह्वाः वरुण प्रह्वेः अस्वातमं ब्रह्मेः यज्ञाः मानो देखो, ये वेदमन्त्र का उच्चारण किया जाता है और वरुण को पुकारा जाता है। कलश की स्थापना करने से उसकी तरंगें सीधी मानव के मस्तिष्क को जाती हैं। प्राण से उसका समन्वय रहता है। जब प्राण से समन्वय रहता है तो उससे उसकी आभा भिन्न भिन्न प्रकार की तरंगें यज्ञमान के शरीर और उसकी जो धाराएं हैं मानो दक्षिणाय, उत्तरायण सबको प्राप्त होती हैं। इसीलिए देखो, हमारे यहाँ यह जो पश्चिम दिशा है, पूर्वामुख है यह प्रकाश में रमण कराता है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! क्या पश्चिम में मुखारविन्द किया जाए तो प्रकाश नहीं आता?

पूज्यपाद गुरुदेवः ऐसा क्यों? क्योंकि सृष्टि का विधान जैसा है, सृष्टि का जैसा चक्र है मैं उसके आधार पर तुम्हें उच्चारण करा रहा हूँ। परन्तु जैसे हम पश्चिम दिशा को मुखारविन्द करते हैं। परन्तु जब करते है तो उसमें वहाँ वरुण रहता है। वहाँ अस्वातम् रहता है, और वहाँ कुबेर रहता है। कुबेर का अभिप्राय यह कि जितना द्रव्य है, जितना धन है वह सब पश्चिम दिशा में वास करता है। वह पश्चिमाय कहलाता है, परन्तु उस को मुखारविन्द करने से नहीं यह उदासीनता नहीं होती। इसमें कर्मकाण्डी ऋषि मुनियों ने यह कहा है, कि पश्चिम दिशा जो कुबेर का भण्डार है। वह मानो पिछले विभाग में हो और देखो, दोनों भुजों से हम याग जैसे कर्मों में उसकी आभा प्रकाश में देते रहें। क्योंकि यदि द्रव्य का जीवन प्रकाशमय नहीं होगा तो यह प्रकाश यज्ञमान की मृत्यु कर सकता है। मृत्यु क्या है? क्या द्रव्य की लोलुपता में यह द्रव्य के अन्धकार में अविश्वसनीय कार्य भी कर सकता है। तो इसमें यह भाव ऋषि मुनियों ने प्रगट किए हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! उत्तरायण और दक्षिणायण में मुख करने से क्या हाँ दक्षिणाय में मुखारविन्द करने से सोम की प्राप्ति होती है।

पूज्यपाद गुरुदेवः यह तो मैने पूर्व काल में कहा है। उस समय ब्रह्मा उसमें विद्यमान होता है, ब्रह्मा का वह स्थान है वह जो शब्द है, वह यज्ञमान को छूता हुआ मानो

देखो, वह उत्तरायण को प्राप्त हो करके प्रकाश को होता हुआ वह दक्षिणाय को प्राप्त होता है। परन्तु कहीं शब्द दक्षिणाय को चलता है, कहीं उत्तरायण से दक्षिणायण को गति करता है। तो शब्दों की भिन्न भिन्न प्रकार की गतियाँ होती हैं। इसीलिए भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का चयन ऋषि मुनियों ने किया है। परन्तु याग का जो मैं कर्मकाण्ड उच्चारण कर रहा हूँ, बहुत पुरातन काल में इसका अध्ययन किया था। आज तो इतना समय नहीं जो पूर्णरूपेण इन वाक्यों को प्रगट कर सकूँ। परन्तु केवल उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय हमारा यह है कि हम यह तुम्हें उच्चारण कर रहें है कि यह जो याग है, इस याग में बहुत प्रकार के भेद माने गए हैं नाना भेदन हैं। आज उन भेदनों में हम जाना नहीं चाहते हैं। विचार केवल यह, कि जैसे पञ्चकोण हैं, चतुषकोण है, पञ्चम है, सप्तकोण कहलाता है। ये जो इस मानव शरीर की जब प्रभु ने रचना की थी, तो इस शरीर रूपी यज्ञशाला में प्रभु ने सात ऋषियों का निर्माण किया। वह सप्त ऋषि कहलाता है। तो सप्तऋषि कौन से है? दो नेत्रों में विद्यमान हैं और दो नासिका के छिद्रों पर और दो श्रोत्रों पर, एक अत्रि कहलाता है जो वाणी कहलाता है। यह इसीलिए अत्रि कहलाती है क्योंकि अति आहार करती है। परन्तु इसमें कश्यप है जमदग्नि है और भी नाना प्रकार के भेदन हैं। परन्तु यह सप्तम् कहलाता है। सप्तकोण वाला जो ऋषि विराजमान हुए, सातों उनके स्थान हैं। परन्तु वह सप्तकोण जैसा मानो आकार बना हुआ है और वह सप्त कोण जो याग है जैसे इस ब्रह्माण्ड में मानो देखो, सप्त तरंगें गति करती रहती हैं। सप्तजिह्वा वाली जो अग्नि है यह सात जिह्वा वाली अग्नि है जो पूर्ण रूपेण अग्नि की सप्त जिह्वा कहलाती है और वह सातों जिह्वाएं अपने अपने तेजों को प्राप्त होती हैं, ऋषित्व को प्राप्त होती रहती हैं। मानो कहीं कोई सूर्य को जा रही है धारा, कोई चन्द्रमा को जा रही है, कोई धारा बृहस्पति को जा रही है कोई धारा ध्रुव को जा रही है कोई धारा मानो रेणकेतु को जा रही है। तो यह सात प्रकार की तरंगें मानो अपने अपने मार्ग को प्राप्त होती रहती हैं। इसी प्रकार यह जो यज्ञ है यज्ञ सप्तकोण वाला भी कहलाता है और इसका सम्बन्ध शरीर से

विशेषकर रहता है। यह मानव शरीर सप्त ऋषि, सातों देवता ऊँचे स्वरूप से याग हो सके ऐसा विधान प्रायः दर्शन शास्त्रों में आता रहता है। कर्म काण्ड की पद्धितियों में आता रहता है।

आज मैं इस कर्मकाण्ड की पद्धति में विशेष नहीं जाँऊगा। विचार क्या? मानो देखो, सप्तजिह्वा वाली अग्नियों का सम्बन्ध समुद्रों से होता है। इसीलिए समुद्रों में से जब जलों का उत्थान होता है और वह अग्नि मानो सप्तजिह्वा वाली अग्नि इन्द्र बन करके इस वरुण को जल को अपने में धारण करती है, धीमीधीमी वृष्टियाँ प्रारम्भ होती हैं। मानो देखो, उससे यह नाना प्रकार की वनस्पतियों का जन्म होता है। वनस्पतियों के जन्म होने पर मानो देखा मानव का जीवन उद्बुद्ध हो जाता है। सुगन्धपना आ जाता है। वायुमण्डल में रस परणित हो जाता है। इसी से इसका सम्बन्ध रहता है। परन्तु भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान इसमें दोनों प्रकार की धाराएं होती हैं और दोनों प्रकार की धाराओं के द्वारा ही मानव के जीवन की उद्बुद्धता आती है। परिणाम क्या कि सप्तजिह्वा वाला याग का मैंने तुम्हें वर्णन किया है। क्योंकि अग्नि की सबसे प्रथम तीन जिह्वा होती हैं इसीलिए त्रिकोण होता है। वह अग्नि की जिह्वाएं क्या हैं? सबसे प्रथम आरण्य नाम की अग्नि, गृहस्पत्य अग्नि, वैश्वानर नाम की अग्नि, इसी प्रकार जब तीन धारा बन करके वायुमण्डल में तीन धारा बनी, परन्तु देखो, इसी प्रकार यह जब चतुर्थ घारा बनती है तीन धारा बन करके जब एक धारा को यह दक्षिणाय को अपना लेती है तो यह चतुष बन जाती है परन्तु यही चतुष कोण ले करके इस ईषाण अग्नि को मिला करके जब यह गति करती है तो पञ्चम बन जाती है। परन्तु इसी प्रकार जब यह सप्त ऋषियों को ले करके सातों अश्वनियों को ले करके यह सप्तजिह्वा बन करके मानो इस लोक में, बाह्य लोक में दोनों में गति करके इस संसार को महान बना देती हैं।

तो विचार क्या है? क्या यज्ञमान जब याग करना चाहता है, परन्तु देखो, साकल्य, समिधा, नाना प्रकार की आभाओं को एकत्रित करने लगता है। वह द्रव्य की आभा को वायुमण्डल में प्रसारित कर देता है। परन्तु ये विशेषकर होता है यह यज्ञ उस

काल में मानव के मस्तिष्क में उत्पन्न होते हैं जबकि आहार और व्यवहार परन्तु देखो, उसी प्रकार का हो जैसा हम याग करना चाहते हैं। परन्तु यदि आचरण और विचारधारा इसके विपरीत होती हैं तो गृह में शान्ति और सुख की स्थापना नहीं होती। ऐसा मुझे बहुत परम्परागतों से स्मरण है। एक वार्ता मैं तुम्हें प्रगट करा रहा हूँ। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज जब याग करने लगे तो यागों के विपरीत, उनका आचरण बन गया था प्रारम्भ में। परन्तु आचरण विपरीत क्या बना क्या वह राजा से सहायता तो ले आए। परन्तु देखो, जब वह याग करने लगे तो एक श्वेनकेतु ऋषि महाराज की कन्या शकुन्तकेतु उनके द्वार पर आईं और आ जाने के पश्चात परन्तु देखो, उन्होंने ऋषि से कुछ प्रश्न किया। वह प्रश्नों का उत्तर देते रहे परन्तु उन्होंने ब्रह्मवर्चोसि का एक प्रश्न किया। परन्तु ब्रह्मवर्चोसि प्रश्न का उत्तर देते देते उनकी प्रवृत्ति चञ्चल बन गयी। जब चञ्चल बन गई तो ऋषि कन्या ने कहा, ऋषिवर! आपकी प्रवृत्तियाँ मेरे अन्तःकरण को नहीं छू रही हैं अब भारद्वाज मुनि महाराज मौन हो गए। वह बोले, अवश्य नहीं छू रही, क्योंकि मेरी प्रवृत्तियों में चञ्चल भाव आ गया है। परन्तु ऋषि कन्या ने वहाँ से प्रस्थान किया। ऋषि कन्या ने तो जब प्रस्थान किया तो भारद्वाज मुनि के हृदय में वह चञ्चल रूपी अग्नि बलवती हो गयी। बलवती हो जाने के पश्चात वह ऋषि के द्वार पर पहुंचे और कन्या के दर्शनार्थी कृतं मानो कन्या के दर्शन किए। और दर्शन करके वह विशाल अग्नि कुछ शान्त हुई परन्तु देखो, जब वह विशाल अग्नि शान्त हुई उसके पश्चात देखो, वह भ्रमण करते हुए हम उस काल में विभाण्डक मुनि महाराज के यहाँ तपस्या कर रहे थे। और पुत्रेष्टियाग के कर्मकाण्ड को वेदों से जान रहे थे, परन्तु देखो, जब वह भारद्वाज पहुंचे। तो भारद्वाज का आचार्य विभाण्डक से उनका मिलान हुआ तो विभाण्डक को उन्होंने अपनी गाथा प्रगट करायी। गाथा प्रगट करने के पश्चात उन्होंने कहा, श्रृङ्गी जी विद्यमान हैं, तुम उनके द्वार पर जाओ। परन्तु उस काल में यज्ञों का हम एक आचरण कर रहे थे। क्योंकि याग का करना बहुत आसान कहलाता है परन्तु उस याग के अनुकूल अपने विचारों को बनाना, प्रवृत्तियों को बनाना, उसी प्रकार

की हृदय में अग्नि को जागरूक करना यह तपस्या का कार्य बन जाता है। उस समय वह तप कर रहे थे। जब वह पुत्रेष्टि याग करने का तप कर रहे थे क्योंकि आचार्य ने यह कहा था, क्या देखो, अब तुम लगभग चौदह वर्ष का तप करो। और चौदह वर्ष का तप करने के लिए अन्न भी बहुत सूक्ष्म प्राप्त होता था। क्योंकि हृदय की अग्नियां को जागरूक करना था इस हृदय में पञ्चम रूप नाम की अग्नि प्रदीप्त रहती है, सप्तम अग्नि जागरूक रहती है। यह इन अग्नियों को जागरूक करना है तो करने के पश्चात पुत्रेष्टि याग उस काल में सिद्ध होता है। सिद्ध होने के पश्चात परन्तु जब महर्षि भारद्वाज पहुंचे तो भारद्वाज यज्ञशाला के ईषाण कोण में विद्यमान हो गए। परन्तु देखो, वह ईषाण कोण में विद्यमान हो गएं तो उस समय एक प्रश्न किया गया और कहा हे भारद्वाज! तुम ईषाण कोण में क्यों विद्यमान हो गए हो? ईषाण कोण में तो तमोगुणी प्राणी रहता है। तो उस समय भारद्वाज ने कहा कि महाराज! मेरी प्रवृत्ति वास्तव में तमोगुणी हो रही है। क्योंकि जहाँ जैसे नाना प्रकार के वस्त्र होते हैं और वस्त्रों के पांच प्रकार के उसके चित्रण होते हैं तमोगुणी जो रंग का चित्रण होता है वह भिन्न होता है। सतोगुण का रंग श्वेत होता है। इसी प्रकार यज्ञशाला में जो अपनी ही प्रेरणा से वह स्थान को ग्रहण करता है तो उसकी आन्तरिक प्रवृत्ति का प्रतीत होता है क्या इसकी प्रवृत्ति सात्विक है। राजसिक है, तामसिक है अथवा इसकी प्रवृत्ति कौन से विधान की है? तो उस समय जब भारद्वाज मुनि ईषाण कोण में विद्यमान हुए तो ईषाण कोण तमोगुणी स्थान कहलाता है। परन्तु देखो, उससे यह प्रश्न किया गया कि भई! तुम ईषाण कोण में विद्यमान हो गये? हो उन्होंने कहा कि महाराज! मेरी तमोगुणी प्रवृत्ति बन गई है रजोगुण वाला मानो देखो, दक्षिणाय में विद्यमान होता है। इसी प्रकार जब ऋषि को यह कहा गया, उन्होंने कहा प्रभु! आप तपस्वी हैं। आप मेरे आश्रम में चलें और मैं इस समय मानो देखो, चौबीस कोणों वाले याग का अवधान कर रहा हूँ। उसको मैंने प्रारम्भ किया है। परन्तु मुझे उसके कर्मकाण्ड की क्रिया को व्यक्त करें। उस समय कहा गया कि हम तुम्हारे आश्रम में नहीं जा सकते। क्योंकि यहाँ हम तपस्या

कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि तपं श्वञ्जनं में वाचा वर्णा स्वस्ति सुप्रजा क्योंकि देखो, हम यहाँ तपस्या कर रहे है तुम्हारे आश्रम में हम नहीं प्रवेश कर सकते जब हम नहीं प्रवेश कर सकते श्वञ्जनं ब्रीहि व्रतां तो देखो, उन्होंने प्रार्थना की तो विभाण्डक से यह प्रार्थना की गई। तो महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज ने मानो देखो, वहाँ से हमारा प्रस्थान हुआ और भारद्वाज मुनि के आश्रम में प्रवेश किया। चतुष्कोणों वाले जो याग का विधान है यह जो ब्रह्माण्ड है, यह जो ब्रह्मचक्र है यह चौबीस खम्बों वाला है। मानव का शरीर भी चौबीस खम्बों वाला है। गायत्री छन्द में भी चौबीस ही अक्षर कहलाते हैं। मानो ब्रह्माण्ड की भी चौबीस ही धारा कहलाती हैं। इसी प्रकार यह चौबीस खम्बों वाला याग जो ऋषि ने प्रारम्भ किया था तो उसका हम कर्मकाण्ड नियुक्त करा करके परन्तु देखो, जब पुनः आश्रम में प्रवेश किया उनकी सतोगुणी प्रवृत्ति बारह वर्ष पर्यन्त अन्न को त्यागने, जल और औषधियों के ऊपर नियुक्त करा करके सात्विक प्रवृत्ति हो गयी।

तो मूल परिणाम यह है यह जो याग का कर्मकाण्ड है, आन्तरिक अग्नि को जागरूक करना, बाह्य अग्नि को जागरूक करना, दोनों को समन्वय करना, यह देखो, प्रवृत्तियों से विशेष सम्बन्ध होता है। परन्तु देखो, यदि तुमने मुझे कर्मकाण्ड में बाध्य किया है। तो बेटा! मैं भिन्न भिन्न प्रकार के यागों के कर्मकाण्ड का चयन कराता रहूँगा। परिणाम क्या है भारद्वाज मुनि महाराज अपनी प्रवृत्तियों से महान बने। इसके पश्चात वह वैज्ञानिक बने। पहले याज्ञिक बने। याज्ञिक से वह वैज्ञानिक बने। क्योंकि याग और विज्ञान दोनों का जो सम्बन्ध है यह जो देवताओं को सूक्ष्म रूप को जानता है और उनके प्रभाव को जानता है, उनका आकार बनाता है, यन्त्र बनाता है तो वह वैज्ञानिक नास्तिक नहीं होता। वह वैज्ञानिक प्रभु का भक्त बन करके प्रभु के विज्ञान में रमण करता है और रमण करके दोनों प्रकार के विज्ञानवेत्ता को प्राप्त हो जाता है। इसीलिए याग और याग के पश्चात विज्ञान और विज्ञान के पश्चात आध्यात्मिक वेदना और आध्यात्मिक वेदना के पश्चात प्रभु को प्राप्त होना। तो यह पुत्रो! मैंने तुम्हारे प्रश्न का उत्तर, तुम्हारे विचारों में यह प्रश्न कैसे आया यह तो

मुझे प्रतीत नहीं परन्तु अपने क्रियाकलापों में हम यह प्रायः करते रहे हैं उसका प्रायः यह उत्तर हमने तुम्हें प्रगट किया है। अब समय बहुत चला गया है। समय अब समाप्त होने वाला है।

पूज्य महानन्द जी : क्या भगवन! यह और जानना चाहता हूँ, सम्भवति अन्वेषणां सवेति भूषणां मृतिका अन्भाषणां, क्या प्रभु! यह जो याज्ञिक पुरुष होते हैं, क्या यह इस प्रकार के यागों को करने का अभिप्राय तो यह है कि अपने जीवन में जैसे जन्म लिया और उस कार्य को हम इसी में परणित कर दें। यही हुआ, कि संसार का जो प्रपञ्च है, संसार का जो यह मायावाद है, इससे तो कोई समन्वय नहीं रहा?

पूज्यपाद गुरुदेव : नहीं पुत्र! यह नहीं। विचार यह है कि इस मायावाद को जानना है। जिस मायावाद में हम आ गए हैं। हम द्रव्यवाद में आ गएं हैं मानो देखो, यह जो मानव को मोहने वाली ममत्व है इसके जब आङ्गन में आ गए हैं, तो इस ममत्व को जानना कि यह वस्तु है क्या? तो इसके जानने के लिए हम याग, शुद्ध हृदय, शुद्ध अन्तःकरण को बनाने के लिए हम सर्वत्र प्रयत्नशील रहते हैं। इसका उत्तर तो यह है परन्तु रहा यह कि इस मायावाद में हम रमण करते चले जाएं, नहीं पुत्रो! जैसे एक यज्ञमान ने यह विचारा। यज्ञमान ने एक मन्त्र का उच्चारण किया और वह मन्त्र क्या आया याग में पुत्रों! भवस्वाणां ब्रहे वर्णप्रव्हा वस्तुतं बहुधा रतो अस्तुति सुप्रजा तो मानो देखो, उसने इस मन्त्र का उच्चारण किया कि हम पुत्रों! आभा वृणप्रति स्वाहाः हम, पुत्र! एक से बहुत हों जाएं, यह कामना जागी है। परन्तु देखो, जब इसके अनुकूल हम अपने को बनाते हैं तो हमें पुत्रेष्टि याग करना है। पतिपत्नी दोनों याग कर रहे हैं और याग के पश्चात पुत्रेष्टि याग की इच्छा हुई। तो उन्होंने पुत्रेष्टि याग किया। क्योंकि वह जो वनस्पतियों का रस है मानव के शरीर में जो गतियाँ कर रहा है उस रस को हम रज में मिलान करते और रज में दोनो मिलान करते हुए करके परमपिता परमात्मा की दिव्य जो यज्ञशाला है उसमें याग किया, तो उससे पुत्र की उत्पत्ति हुई। तो केवल हम इतना ही इस

सम्बन्ध में अपना निर्णय दे सकते हैं। क्या वह क्या हुआ कि जैसे वेदमन्त्र में ज्ञान विज्ञान आया पुत्रों! एको बहुधा ब्रह्मेः करोति अस्ताः हम संसार में आए हैं तो हम बहुत हो जाएं। तो बहुत होने से पत्नी बनी। पत्नी से मानो पुत्रोः यागाम् ब्रह्मे उन्होंने पुत्रेष्टि याग किया। क्योंकि वह भी याग है वह भी वनस्पतियों का याग है जो वनस्पतियां के रस का याग है दोनों का याग करने से संसार के जिस क्षेत्र में हम आए हैं उनमें हमने पुत्रेष्टि याग किया और उसका परिणाम हुआ, पुत्र हुआ, सङ्कल्प हुआ। सङ्कल्प से ही पुत्र है। सङ्कल्प से ही इस शरीर के द्वारा हमारा उससे समन्वय है और उसको हमें सुयोग्य बनाना है। क्योंकि जैसे सतोयुग के काल में सोमकेतु नाम के राजा हुए थे। सोमकेतु राजा के राष्ट्र में एक ददेतकेतु नाम के ऋषि हुए, जो अंगिरस गोत्रीय कहलाते थे। परन्तु वह महान तपस्वी थे। उनको लगभग पिच्चासी वर्ष तपस्या करते हो गएं थे। तो एक समय वह वेद का अध्ययन कर रहे थे। वेदमन्त्र यह था, एको बहुधा ब्रह्मणां सुस्ति ब्रह्मणा अस्सुते मानो देखो, वेदमन्त्र यह था, इच्छा बनी कि एक से दो हो जाएं। तो वे राजा के समीप पहुंचे। राजा ने अपने स्थान को त्यागा। आइए भगवन! वह तपस्वी थे क्योंकि राज्य का जो अन्नवत होता है, निचोड़ होता है, वह तपस्वी होते हैं। तो उन्होंने कहा, कहिए भगवन! आज कैसे गमन किया? उन्होंने कहा, हे राजन! तुम्हारे यहाँ एक कन्या है उसका संस्कार करो। उन्होंने कहा बहुत प्रिय और कन्या के द्वार पर पहुंचे। कन्या ने कहा, कहिए पिता! आज कैसे? शान्तम् मङ्गलम् वृत्ति आप मग्न हो रहे हैं। उन्होंने कहा, पुत्री! आज मैं बड़ा सौभाग्यशाली हूँ। एक महान तपस्वी जिसको पिच्चासी वर्ष तपस्या करते हो गए हैं। अखण्ड ब्रह्मचारी है, वह प्राणायाम करता है। प्राणों की आभा में रमण करता है आज वह चाहते हैं कि मेरा राज कन्या से संस्कार हो जाए। राज कन्या मग्न हो गई। उसने कहा प्रभु! इससे और मेरा सौभाग्य क्या होगा। तो राजा ने उसका संस्कार कर दिया। अब ऋषिवर और देवी भयंकर वनों में चले गए। तपस्या करते रहे। इसके पश्चात भी मानो वह देवी भी तपस्या करने लगी। और ऋषि भी तपस्या करने लगा क्योंकि एक से बहुत की इच्छा की थी।

उस समय कुछ काल के पश्चात मानो देखो, जब देवी को लगभग ३१ वर्ष तपस्या करते हो गए तो ऋषि को एक समय वेद का अध्ययन करते हुए आया पुत्रों! ब्रह्मणा कृतो भवतां गच्छतं मेघा वर्णा सुत्पव्हा वरुणो वर्णातं देवं प्रव्हा स्वस्ति देवा में जन्म बुद्धिकाम् तो यह वेद का मन्त्र उन्हें स्मरण आया और वेद का मन्त्र यह कह रहा था कि पुत्र भूषां ब्रहेः हम पुत्र याग करें। तो उस समय ऋषि ने देवी से कहादेवी! अब हमें पुत्र याग करना चाहिए। ३१ वर्ष हो गए तपस्या करते हुए। उन्होंने कहा प्रभु! ये वेद का मन्त्र भी आपको प्रतीत है यह वेदमन्त्र क्या कहता है? क्या देवी कौनसा यह वेदमन्त्र है सुभणोति मङ्गलम् मङ्गलम् भूषणम् प्रत्येवस्ताम राजां नमः ब्रह्मणेः कन्या द्रव्याणि गच्छतम् वेद का मन्त्र कहता है कि गृह आश्रम में जाना है द्रव्य भी होना चाहिए। ऊँचे ऊँचे स्वस्ति गृह होने चाहिए जिससे हम याग करें तो देवताओं की छाया भी परोक्ष रूप से जाए प्रत्यक्ष रूप से न जाए। तो ऋषि ने जब यह मन्त्र अध्ययन किया तो पुनः तपस्या करने लगे। तपस्या करते करते बहुत समय हो गया तो वेद का अध्ययन करके, राजा के द्वार पर पहुंचे। राजा ने पुनः आसन को त्याग दिया और राजा ने कहा कहो ऋषिवर! कैसे आगमन? उन्होंने कहा मेरा एक गृह का निर्माण कराओ। अब मैं पुत्रां ब्रह्मणे पुत्र गति अप्रणाः दिव्या गतं ब्रह्मा मैं पुत्र याग करूंगा। तो उस समय मानो देखो, मुझे स्मरण है उन्होंने गृह का निर्माण कर दिया। द्रव्य की बहुतायत हो गयी, और दोनों ने पुत्रेष्टि याग किया, जब पुत्रेष्टि याग किया तो पुत्र उत्पन्न हुआ। ऋषि और ऋषि पत्नी ने कहा चलो देवी! अब भयंकर वन को चलें। दोनों उसके निर्माण में लग गए। उस पुत्र का निर्माण किया। कैसे पुत्र का निर्माण किया? शिक्षा देते रहे, मुझे स्मरण है बेटा! वही प्रकहणं ब्रहे अस्ताः मानो वही ऋषि गाड़ीवान रेवक बनकर रहा।

तो परिणाम क्या? वह रेवक मुनि की उपाधि को प्राप्त करने वाला, सबसे प्रथम रेवक मुनि उत्पन्न हुआ। उसका नामोकरण दर्शन शास्त्रों की विज्ञान की धारा में विद्यमान है। तो बेटा! यह मैं इसीलिए उच्चारण कर रहा हूँ कि यह बहुत विशाल एक विज्ञान है। मैं इसकी धाराओं को वर्णन करता पर बहुत समय की आवश्यकता

है। मैं इसके कर्मकाण्ड की शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूंगा।

आज का वाक अब समाप्त हो गया है। तुम प्रश्न करते रहोगे, मैं तुम्हारे प्रश्नों के उत्तर देता जाऊगा। क्योंकि प्रभु! की अनुपम कृपा है। प्रभु! के ज्ञान विज्ञान की कोई सीमा नहीं हैं ज्ञान की भी कोई सीमा नहीं है प्राणी के द्वारा। तो यह वाक्य अब समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा।

8. 820611-परमात्मा का औषध प्रसाद

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा वरणीय माने गए हैं। मानो जो मानव उसको अपने में वरण कर लेता है तो वह प्रायः उसी को प्राप्त हो जाता है क्योंकि उसको अपना वरूण बना लेना चाहिए। वह महान और पवित्र है और उसकी पवित्रता में इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड की आभा बनी हुई है और उस ब्रह्म की आभा में ही यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड आभाहित हो रहा है और गति कर रहा है और गतिशील होने वाला यह ब्रह्म चक्र कहलाता है इसे ब्रह्म चक्र इसलिए कहते है क्योंकि जो भी वस्तु हमें दृष्टिपात आ रही है चाहे वे वनस्पतियों के स्वरूप में हो, चाहे वह मानो जितने भी प्राणवर्धक है, प्राणधारी है। वे सर्वत्र मानो एक ब्रह्मचक्र की कृतिभा बनी हुई है और वह कृतिभा बन करके मानव को एक महानता की आभा से प्रकट करा रही है।

यागेष्टि

परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र हमें इस मार्ग के लिए प्रेरित कर रहा है इससे पूर्व काल में, हम मानो कुछ यागों का वर्णन कर रहे थे और उसमें विशेषकर वाजपेयी याग का वर्णन आ रहा था। परन्तु द्वितीय रूपों में, हमारा जो याग का प्रकरण है वह अमावेष्टि और पूर्णेष्टि कहलाता है। प्रत्येक गृह, स्थलियों में ये दो याग हमारे यहाँ विशेष कर माने गए हैं। एक अमावेष्टि और एक पूर्णेष्टि है। एष्टि कहते हैं जो मानव अपने में कुछ स्था, अपनी पूर्ति के लिए याग कर रहा है। मानो देखो, याग उसको कहते हैं जो उसके अनुकूल अपने जीवन में मन, कर्म, वचन को लगाकर रखता है, उसी में तन्मय रहता है, तो वह यागेष्टि कहलाता है।

एक मानव याग के द्वारा अपने जीवन का शोधन करना चाहता है। वो नाना

साकल्यों को एकत्रित करता है और साकल्यों को एकत्रित करता हुआ उसमें मानो देखो, समिधा भी उसी प्रकार की लाता है। परन्तु वो याग करता है तो उसके जीवन का शोधन हो जाता है।

काके ऋषि के शिष्य

हमारे यहाँ पूर्व काल में नाना ऋषि हुए है जो याग करते थे, परन्तु वो यागों के द्वारा अपने मानव जीवन का शोधन करते थे। एक समय सोमकेतु ऋषि महाराज, काके ऋषि के द्वार पर पहुँचे। तो काके ऋषि के यहाँ मानो उनके एक शिष्य थे, तुरूणा। तो तुरूणा का सोमकेतु से ईर्ष्यामयी जीवन बन गया। और बना कैसे? एक मजिष्ठकेत नाम के ऋषि हुए। तो मृचीषि नाम के ऋषि के द्वारा दोनों अध्ययन करते थे। जब वे अध्ययन करते थे, तो गान गाने में वे दोनो अमावेष्टि याग करते थे। परन्तु याग करते हुए, उनके हृदय में एक ईर्ष्या की अग्नि जागरूक हो गई। क्योंकि सोमकेतु उस याग के द्वारा लोकों की उड़ान उड़ते थे और ब्रह्मचारी तुरूणा वह लोकों की उड़ान न उड़ करके, वे लोक की उड़ान उडते थे। परन्तु इन्हीं विचारों में, दोनो में संघर्ष हो गया। परन्तु सोमकेतु तो उदार थे। वे लोकों की उड़ान उड़ते रहते थे। परन्तु तुरूणा ब्रह्मचारी को एक ईर्ष्या उत्पन्न हो गई। ईर्ष्या के उत्पन्न होने से, मानो जब वे काके ऋषि के द्वार पर पहुँचे। क्योंकि वह जो तुरूणा थे, वह काके मुनि महाराज के पुत्र थे। वे काके के द्वार आ पहुँचे। तो वे काके के द्वारा क्यों पहुंचे? क्योंकि ये राम, रावण के काल का वर्णन है। तो उस समय जो सूर्य उदय होता था वह लालिमा को विशेष लेकर के होता था और जब वह अस्त होता तो वह भी लालिमा को लेकर के अस्त होता था। परन्तु वो लालिमा एक प्रचण्ड अग्नि थी। तो काके ऋषि महाराज उस विद्या को जानते थे। परन्तु सोमकेतु उनके द्वार पर पहुँचे और सोमकेतु ने काके से ये कहा कि महाराज! ये जो लालिमा हो रही है, जो अन्तरिक्ष में ओत प्रोत होने वाली लालिमा है। सूर्योदय के साथ है, और सूर्यास्त होने के साथ है। यह क्यों है?

पृथ्वी पर लालिमा

तो उस समय काके ऋषि ने सोमकेतु से कहा था कि यह जो लालिमा आ रही है यहाँ कोई संग्राम होने वाला है। विज्ञान की कुछ तरंगें समाप्त होने वाली है। एक वाक और यदि यह नहीं होगा तो कुछ नक्षत्रों की धाराएँ एक सूत्र में आ जाती है। जैसे मानो देखो, पृथ्वी के अन्तर्गत एक सूर्य की आभा में, क्योंकि पृथ्वियाँ गति करती रहती हैं। कुछ मानो देखो, यह शनि मण्डल भी और सूर्य और बृहस्पति एक धारा में जब आ जाते हैं तो मानो देखो, यह जो अन्तरिक्ष है जहाँ से सूर्य तपती लता है, उस द्यौ मण्डल में परमाणुओं का संघर्ष हो जाता है और उसमें अग्नि प्रचण्ड हो जाती है। उस अग्नि का परिणाम यह होता है कि मानो या तो राष्ट्रीय संग्राम होते हैं और या अकाल की प्रवृत्तियाँ बन जाती है। कुछ पृथ्वियाँ इस प्रकार की होती है जिसमें वायु अपने वेग में, अग्नि के परमाणु लेकर के गति करती है और मानो देखो, अनावृष्टि होकर के खाद्य पदार्थों को विनाशता के मार्ग पर ले जाती है।

तो यह काके ऋषि ने सोमकेतु को वर्णन किया। परन्तु जब उन्होंने तुरूण से कहा हे बालक! हे ब्रह्मचारी! देखो, सोमकेतु आएँ हैं इनको कुछ पान कराओ मानो देखो, तुरूण ब्रह्मचारी के हृदय में अग्नि प्रदीप्त हो रही थी। सोमकेतु विवेकी थे उन्हें कोई स्मरण नहीं रहा। परन्तु उन्होंने जल और तुष्टाम् में मानो देखो, उन्हें एक विषधर का पान कराया। उन्हें जब विष का पान करा दिया तो वहाँ से सोमकेतु ने जैसे ही गमन किया तो वह अपने आश्रम में पहुँचे, परन्तु आश्रम में जाते ही, उनकी त्वचा विकृत हो गई। मानो अस्थियों में विकृत्तियाँ आ गई, प्राण सखा मानो देखो, जाने के लिए तत्पर हो गया। सोमकेतु उस समय मानो देखो, आयुर्वेद का, आयु का अध्ययन करने लगे। जहाँ वे लोकों का अध्ययन करते थे वहाँ वे आयुवर्धक याग का अध्ययन करने लगे।

अमावेष्टि याग

जब उन्होंने इस प्रकार का अध्ययन किया तो अध्ययन में आया कि एक ब्रह्माणि, सोमकृतिभा और त्रेणकेतु इन तीन औषध का उन्होंने पिपाद बनाया और अग्नि में

उसको तपाने के पश्चात उसको खरल किया, स्वाति नक्षत्र में। तो स्वाति नक्षत्र में जब उसको खरल करने लगे तो उसका पान किया गया तो मानो शरीर में, अस्थियों में, त्वचा में जो भी विषधर मानो देखो, विष उसमें जाग गया था तो उन औषधियों ने, विष को अपने में धारण कर लिया और सोमकेतु का जीवन, इन्हीं औषधयों के द्वारा वे याग करने लगे। परन्तु देखो, औषधियों के द्वारा जब याग करने लगे तो उनके गृह के परमाणु जैसे ही शुद्ध हुए, ऐसे श्वांस के द्वारा आन्तरिक जो हृदय था वह भी शोधन होने लगा। परन्तु जब वह शोधन होने लगा तो उस याग को हमारे यहाँ देखो, अमावेष्टि याग उच्चारण करने लगे उसे अमावेष्टि याग कहा जाता है। वह पूर्णोष्टि यागां ब्रह्मे सुताः परन्तु देखो, ये याग होने लगे।

तो परिणाम क्या मुनिवरों! देखो, उन्होंने नाना प्रकार की और औषधियों को एकत्रित किया और उनके द्वारा जैसे मजरीठ होता है, यह एक औषध का नाम है। मजीष्ट, एक औषधि का नाम है संुजना तृतीय औषध का नाम है सेस्कृतिका मानो चौथी औषध का नाम है ध्रुवकेतु पञ्चमी, औषध का नाम है मानो देखो, इन औषधियों के द्वारा सोमकेतु नित्य प्रति याग करते थे। उन यागों का परिणाम ये हुआ कि उनके मस्तिष्क की ग्रन्थियों में स्पष्टीकरण आया और वह लोकों की वार्ता जानने लगे।

वह शुद्ध होकर के, पवित्र होकर के पुनः काके ऋषि के द्वार पर पहुँचे काके ऋषि के द्वार जब पहुँचे तो काके ने कहाआओ, ब्रह्मचारी! तुम विराजमान हो। मानो उन्होंने पुत्र तुरुण को कहा हे तुरुण! मुझे यह प्रतीत नही था कि तुम इतनी अग्नि में मानो द्वेष की अग्नि में परणित हो गए हो। तब उन्होंने आश्चर्य चकित होकर कहा कि क्या तुम सोम हो? उन्होंने कहा मैं सोम हूँ। मानो तेरे विष से मेरी मृत्यु, मेरा प्राणान्त नहीं हो सकता क्योंकि मैं तेरे गुणों को जानता हूँ। तेरे गुणों की आभा को मैं जान गया हूँ। क्योंकि तुम लोकाचार को, विषधरों को अपने में लाना चाहते हो। परन्तु देखो, यह वाक तुम्हारा कोई प्रियतम नहीं रहा।

परन्तु जब तुरुण ने यह सुना तो मानो वह नतमस्तिष्क हो गया और सोम से कहा हे सोम! तुम सोम हो और वह गिच की भान्ति मानो जैसे अग्नि में जल मानो

देखो, भस्म हो जाता है ऐसे ही मेरा जीवन भस्म होने जा रहा है। मेरी यह मृत्यु हो गई है।

द्वेष युक्त कार्यों से हानि

तो मुनिवरों! विचार विनिमय क्या? इन वाक्यों का, कि मानव को द्वेषयुक्त कोई कार्य नहीं करना चाहिए। क्योंकि द्वेष युक्त होने से, मानव के शरीर में मानो भयंकर अग्नि ओत प्रोत हो जाती है। उस अग्नि में गिच की भान्ति वह मानो नष्ट हो जाता है।

तो इसी प्रकार आज का हमारा यह वाक क्या कह रहा है। तो उस समय सोम ने कहाआओ, तुरुण ब्रह्मचारी हम देखो, इन वाक्यों पर विचार करें। तुम अपने को इतना आभा में न ले जाओ मानो तुम गिच की भान्ति न बनो। आओ, आज हम तुम्हे देखो, सोम के, आयुर्वेद में ले जाना चाहते है। मानो देखो, काके ऋषि ने कहा कि जाओ, ब्रह्मचारी! तुम सोम के द्वार जाओ। परन्तु उन्होंने कहा पितर! मैं क्या करूँ? मेरा अन्तर्हृदय, मेरे हृदय में जो पाप कर्म आ गए हैं वे पापकर्म मुझे उनके आश्रम तक नहीं जाने देते। परन्तु देखो, काके ने कहा कि तुम अध्ययन करो।

तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने सोमभू और त्रिणि दोनों औषध को लेकर के त्रिकात को मानो तीनों औषधियों को मिलाकर के, ब्रह्मचारी को मानो पिता थे, उन्होंने पान कराया और पान कराने से मानो देखो, उनका हृदय स्वच्छ बन गया। मानो घृणा से, पापों की आभा से वे रहित होने लगे। उन्होंने कहा तुम एक वर्ष तक गायत्री की गोद में चले जाओ। वे औषधियों का पान करते हुए देखो, जो त्रिस्पत अन्न होता है उसे समाप्त करके, औषधियों का पान कराकर के एक वर्ष तक गायत्री का जाप, गायत्री का मन्थन किया और गायत्री का अध्ययन करने से उसी के द्वारा औषधियों का याग करते थे। परिणाम यह हुआ कि वे सोमकेतु के द्वार पर पहुँचे। सोमकेतु के द्वार पर जब पहुँचे तो सोमकेतु के चरणों का स्पर्श किया। सोमकेतु ने कहा हे ब्रह्मचारी! हे तुरुण! तुम मानो देखो, इतने आभामय नम्रतामय कैसे बने?

उन्होंने कहा प्रभु! इस प्रकार का मैं अमावेष्टि याग कर रहा हूँ और वो जो याग मैं कर रहा हूँ जैसे मानो देखो, पूर्णिमा के दिवस मैंने याग को प्रारम्भ किया। इसी प्रकार देखो, मैं याग करता रहा जैसे चन्द्रमा की कलाएँ सूक्ष्म होती गई, ऐसे मैं याग करता रहा। अमावस्या के दिवस मैंने द्वितीय औषधियों का याग प्रारम्भ किया जैसे चन्द्रमा उदय होता रहा उसी प्रकार मानो देखो, मेरे पापों की आभाएँ समाप्त होने लगी। मानो मेरे जो हृदय में रूग्ण था। विष की धाराओं का जन्म हो गया था। द्वेषअग्नि के द्वारा वे सर्वत्र मानो अमावस्या और पूर्णिमा मानो देखो, इसी प्रकार वे समाप्त हो गए।

चन्द्रमा की कला पर अनुसन्धान

मेरे पुत्रो! मुझे स्मरण है जब इस प्रकार के याग हमारे यहाँ सोमकेतु मुनि ने किए। तो तुरुण और सोमकेतु दोनो याग करते हुए मानो देखो, चन्द्रमा की कला के ऊपर अनुसन्धान करने लगे। चन्द्रमा की कला सोम देती रहती है और वह सोम आता है वनस्पतियों में वह रसों को प्रदान करते रहते है। उसको हमारे यहाँ सोम कहा जाता है। मानो देखो, और भी औषधियों को लेकर के हम सूर्य की सम्पन्न कलाओं के ऊपर, अनुसन्धान करने लगे। अनुसन्धान करते हुए, सूर्य के अन्तर्गत मानो जो एक रेखा में आने वाले मण्डल हैं जैसे देखो, ये लगभग पाँच वर्षों के पश्चात मण्डल एक धारा में आते है एक सूत्र में आते है। देखो, समाज की इससे जन समूह में नाना प्रकार की हानियाँ भी हो सकती है। परन्तु देखो, इससे जनकृतिका भी हो सकती है। परन्तु देखो, इसमें कई प्रकार के काल बना करते है।

दोनों ब्रह्मचारी उस लालीमा के ऊपर चिन्तन करने लगे। लालिमा में यह आता है जैसे किसी किसी काल में सूर्य में भी इसी प्रकार की अग्नि प्रचण्ड हो जाती है। सूर्यमण्डल में भी, शनिमण्डल में भी जब प्रकोप आते है तो अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। परन्तु किसी किसी काल में देखो, इस महा मण्डलेस्ता में मानो जिसे हम विद्युत कहते है। जिसे हम द्यौ कहते हैं जहाँ से सूर्य प्रकाश लेकर के प्रकाशित हो

रहा है। चन्द्रमा सोम लेकर के सोमेश्वर कहलाता है। परन्तु देखो, जैसे शनि त्राण को लेकर के त्रिंगत कहलाता है। परन्तु वह कहाँ से द्यौ मण्डल से लेता है। द्यौ से लेता है। तो द्यौ में भी किसी किसी काल में अग्नि प्रचण्ड हो जाती है। अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। उस अग्नि का परिणाम यह होता है कि नाना पृथ्वियों पर कुछ मण्डलों पर, मानो उसका भयंकर स्वरूप बना करता है।

पूज्य महानन्द जीः ये तो मैं जानता रहता हूँ, आप से, बहुत पुरातन काल में नम्रता से निवेदन भी किया था कि जिन औषधियों का जिन यागों का आप वर्णन करते हैं उस वर्णित रूप में, आपकी जो औषध है आधुनिक विद्वानों के समीप उसकी कोई जानकारी नहीं है।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो पुत्र! हम क्या कर सकते हैं। जिन औषधियों की आधुनिक विद्वानों के समीप कोई जानकारी नहीं है तो पुत्र! हम क्या कर सकते हैं?

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! इनका रूप ऐसा नहीं बन सकता जैसा आधुनिक नामोकरण में हो।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! ये तो भाषाओं का और विवाद का अन्तर बना रहता है। औषधियाँ एक ही स्वरूप में रहती है। परन्तु जैसे इनके रूप में, औषध को आदर से हम उसको बहुत महत्व देकर के उसमें कुछ शब्दों की प्रतिभा लगा देते है। जैसे पीपल का वृक्ष है तो उस वृक्ष को हमारे यहाँ सोमऋद्धि कहते हैं। उसे हमारे यहाँ सोमऋद्वि क्यों कहते हैं? क्योंकि ये वृक्ष सोमकेतु, सोम कहलाता है। तो सोमऋद्धि ऐसे शब्द कहते हैं। जैसे वट वृक्ष है जैसा तुमने किसी काल में वर्णन कराया था। जैसे वट वृक्ष है। वट वृक्ष को हमारे यहाँ कृधिका भी कहते हैं और पुष्टिवर्धक है। पुष्टि कांगिनी कहते है। परन्तु देखो, यह हमारे आलस जी सूचक कहलाती है। और श्वांगकेतु नामक एक औषध होती हैं उसे श्वांग कहते और सुंजनी भी कहते हैं। और यह प्रतीत नही कि आधुनिक काल में किस नाम से उच्चारण करते है। ये तुमने मुझे दो शब्दों की, दो वृक्षों की आभा बहुत पुरातन काल में वर्णित की थी। परन्तु ऋद्धिका हमें यह प्रतीत नही है कौनसा वृक्ष है। आधुनिक

काल में क्या कहते है इसको यह तो प्रतीत है, क्या, हम उस वृत्त को तो जानते हैं। रहा यह कि जैसे शैलखण्डा एक औषध है तो शैल खंडा को भी जानते हैं। परन्तु शैलागिनी शैलखण्डा श्रीधांगणि यह एक मानो एक ही सूत्र की औषध कहलाते है।

सूत्र उसे कहते है कि जिन औषधियों में मानो देखो, एक ही धारा के गुण कहलाते है। मानो किसी में उष्मता है, किसी में शीतलता है तो किसी में मानो गुरुता है और गुरुता होने से जब तीनों एक ही सूत्र में इसलिए क्योंकि वह एक दूसरे का मिलान होकर के, उनका एक ही गुण बन जाता है। एक गुण बनकर के उसी में मानो देखो, रूग्ण की औषध बन जाती है। इसी प्रकार हम इसको आधुनिक जगत की औषधियों का नामोकरण स्मरण नही तो तुम्हारे स्मरण हो तो उच्चारण करो। हमारे आधुनिक नाम भी इसी प्रकार का बनता है।

परन्तु है वे उन औषधियों को उतने रूप से नही जानता जैसे कृति अंजन्म् जो विद्वानजन जो शब्द बना है वो मानो देखो, उसमें उष्मता कहलाती है और आधुनिक काल में क्या कहते हैं इसका कोई प्रतीत नहीं है।

पूज्य महानन्द जीः क्या, आधुनिक काल में भगवन! उसको कुलंजनी कहते है। आधुनिक जगत में तो उसको कुलंजनी कहते है। जो पानेसुन्दरी होता है। जो यागों में कार्य आता है। मानो देखो, उस पाने के जो, जिसमें पानो की भिज रहती है जिसे हम जटिका कहते हैं। मानो देखो, उसका नाम कुलंजनी, वृञ्जनी कहलाता है। चलो, यह आपके स्मरण हो गया।

पूज्यपाद गुरुदेवः परन्तु सुधानु किसे कहते हैं? सुधानु तांचनी है, ताञ्चनी और सुधानु दोनों है वो एक ही सूत्र की दोनो औषध कहलाती है।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन! वो सुधानु को तो हमारे यहाँ सहदेवी जटामासी दोनो एक ही सूत्र में आती है और दोनो मस्तिष्क के लिए बहुत ही ऊँचा कार्य करती है। चलो ये भी तुम्हें स्मरण हुआ, परन्तु देखो, जनकेतकेतु है ये ऋति और कंचकेतु है तो ऋति, कंचकेतु का तुम क्या नाम उच्चारण करोगे?

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! इनको तो हम कंचेतकेतु कहते हैं और आधुनिक काल में भी कचेतकेतु कहेंगे। परन्तु वह औषध मानो देखो, विज्ञानों के समीप सूक्ष्म, इसी प्रकार जैसे अश्विनी कुमारों ने इन मोतियों के ऊपर बहुत अनुसन्धान किया। अश्विनी कुमारों ने राजा राम के यहाँ जब वो मानव के हृदय और शरीर दोनों को देखो, उन औषधियों में स्थिर करते थे। जैसे स्वाति है, जनकेतु है, समिधानकेतु है, चाटन कंचनी है और कंचनी और काष्टात्याची मानो ये छहऔषध कहलाती हैं। इन औषधियों का, इनके वृक्षों की छाल, मानो इनका पाङ्गाङ्ग छयो औषधियों का पाङ्गाङ्ग लिया जाता है। पाङ्गाङ्ग को लेकर के उससे शरीर मानो देखो, ज्यों का त्यों बना रहता, अग्नि में तपाने से और इसी प्रकार जैसे स्वाति है, कद्धान है, कन्धारता त्रिजनकेतु ये तीनों औषधियों इस प्रकार की हैं। जिनके पाङ्गाङ्ग को लेकर के और इनका पिपाद बना करके इसमें मानव के हृदय को स्थिर किया जाता है तो वो छहछः माह तक मानो देखो, हृदय ज्यों का त्यों बना रहता और ज्यों का त्यों बना रहने से जैसे मंजीठ, तासकेतु, चंकिका, नुतकेतु ये चार औषध होती है जिनको मानो देखो, हम पिपाद बनाकर के हृदय को और शरीर दोनों का समन्वय करके हम श्वंजनी के द्वारा मानो देखो, इन औषधियों का लेपन करते है। लेपन के पश्चात वो पुनः गतिवान बनकर के मानो संसार में विचरण करने लगता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो ये सब औषधियाँ मानो देखो, तुम्हें कही प्राप्त हो जाएं। पुत्र! मानो देखो, सुधन्वा नामक जो वैधराज थे राजा रावण के यहाँ, उस सुधन्वा के द्वारा ऐसा मानो देखो, उन्होंने एक वैध राजन मेककेतु एक पोथी का निर्माण किया था। वो पोथी तुम्हें कहीं प्राप्त हो जाएं तो प्रायः उसमें इस प्रकार की औषधियाँ प्राप्त होती है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! वो औषधियाँ की पोथी कहाँ प्राप्त हो सकती है?

पूज्यपाद गुरुदेवः पुत्र! यह हम नहीं जानते कि वह पोथी कहाँ हैं। मानो इस पोथी

का, तुम आधुनिक काल की चर्चा करते रहते हो। वह आधुनिक काल की चर्चाओं का उच्चारण करोगे तो मानो कही तुम्हें इसका आस्वान प्राप्त हो जाएगा या नहीं होगा, इसको मैं नहीं जानता।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! इसका सूक्ष्म वर्णन कर सकता हूँ। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव और ऋषिवर! बहुत पुरातन काल हुआ, महाभारत के काल में महाराजा धन्वेतकेतु एक वैधराज हुए। परन्तु धन्वेतकेतु नाम के जो वैधराज थे वे विराटी कहलाते थे। उन्होंने कुछ औषधियों को जाना। परन्तु वह एक समय व्यास जी के द्वार पर पहुँचे। तो महाराज व्यास जी के जो पिता थे, धुनकेतु, तो धुनकेतु के यहाँ पहुँचे और धुनकेतु महाराज इस वैध की प्रतिक्रिया को जानते थे। परन्तु महाभारत का जो काल हुआ, तो महाभारत के काल में सर्वत्र एक राज्य में महाभारत के संग्राम में मानो देखो, उनकी सेवा करने के लिए गए। राष्ट्रीय आभा से और पाला मुनि भी इस विद्या को जानते थे। परन्तु देखो, वह सुधन्वा, नाना पोथी उनके समीप रहती थी। तो उसमें पुनः पुनः जीवन देने की शक्ति थी। परन्तु महाभारत काल के पश्चात उन पोथियों का विद्विता न रहने के कारण, वह पोथी ज्यों की त्यों इस भूमि के, विश्वविद्यालयों में कहीं, कहीं पनपती रही। परन्तु जहाँ हमारी इस राष्ट्र में यह आकाशवाणी जा रही है कुछ काल के पश्चात महाभारत के काल के पश्चात जन्मेजय का राज हुआ, जन्मेजय के पुत्र का नाम जनेतकेतु था। तो जनेतकेतु राजा के राष्ट्र, राष्ट्रीयता होने के पश्चात मानो देखो, उसके पश्चात मरेच नामक राजा था उसका राज्य हुआ, और वह राज्य यहाँ आकर के, यह महाभारत प्रणाली, पाण्डु प्रणाली का अन्त हो गया।

उसके पश्चात यहाँ एक श्वेनकेतु नामक बुद्धिमान ब्राह्मण थे। क्योंकि जातीयता की आभा परणित हो गई थी। महाभारत के पश्चात ही जातीयता आ गई थी। तो वे ब्राह्मण थे तो यहाँ ब्रह्मणावत व्रत का राज्य हुआ। तो राज्य क्योंकि जो बुद्धिमान आत्मवेत्ता जिसे बनना था वे राष्ट्रीय आभा में परणित हो गए। उन्होंने क्षत्रियों के कुछ वंशजों को समाप्त किया। परन्तु वह राज ब्राह्मण करते रहे। वो राज तिलक

१०० वर्षो तक, चला। परन्तु राष्ट्र चलता रहा, उसके पश्चात ब्राह्मण राष्ट्र समाप्त हो गया। जब घृणा आ गई, तो घृणा आ जाने से देखो, क्षत्रीय विद्रेककेतु नाम के राजा हुए। विद्रेककेतु नाम के राजा ने राज किया। उनके वंशजो की लगभग बीस प्रणालियों ने राज्य किया।

बीस प्रणालियों के राज्य करने के पश्चात यहाँ मानो देखो, एक इष्टी के रूप में, उस काल में एक सूक्ष्म सा राज्य था जो उस राष्ट्र में निर्णय था। एक ही राष्ट्र था। परन्तु देखो, उस आभा में, उसी राष्ट्र के एक आंगन में भावो अपलेनकेतु नाम के एक आचार्य हुए, अपलेनकेतु आचार्य ने एक सम्प्रदा का निर्माण किया। जिस सम्प्रदा को अग्नि होमकेतु कहते थे। उस सम्प्रदा का नाम अग्नि होमकेतु था। परन्तु जिसे आधुनिक काल में बासकीय के नाम से वर्णन करते है।

परन्तु उसके पश्चात यहाँ शुनेचन्दनम् मानो देखो, महात्मा बुद्ध आए। और बुद्ध के अनुयायियों ने मानो देखो, अहिंसा, परमोधर्मः वेद की पोथी को नहीं लिया। उन्होंने याग जैसे कर्मों को मिथ्या उच्चारण करना प्रारम्भ कर दिया। प्रारम्भ करने के पश्चात जैन काल आया। उसके पश्चात जैन काल का राज्य हुआ। राज्य होने से उन्होंने देखो, विश्वविद्यालयों में जितनी पोथियाँ थी उनको अग्नि के मुख में परणित कर दिया और वैद्यराज सुधन्वा की वैद्य की पोथियों वो अग्नि के मुख में परणित कर दिया। अग्नि के मुख में चली गई। मुख में चली जाने से वह औषधियों और मानो देखो, वह चिकित्सा अब हमें कहीं प्राप्त नही होती। अब हम उसे नहीं जानते हैं। आप जैसे मेरे पूज्यपाद गुरुओं के मुखारविन्द से उन औषधियों का वर्णन होता रहता है।

परन्तु देखो, आधुनिक जगत में भी इस प्रकार की औषधियाँ है। परन्तु वह औषधियाँ जो सुधन्वा नामक वैधराज के यहाँ थी जिनसे मस्तिष्क की ग्रंथियों का स्पष्टीकरण होते रहते है। परन्तु आधुनिक काल के वैधराज, जो औषधियाँ हमें जंगलो में प्राप्त होती है उन्हें लाते हैं परन्तु देखो, सुधन्वा और सम्भूति वह नहीं रही, परन्तु देखो, कणटक और बागानकेतु नाम के आचार्य हुए। उन्होंने आयुर्वेद को लिया। आयुर्वेद

से उन्होंने औषधियों को एकत्रित किया उन औषधियों को निघण्टकेतु ने उन्होंने देखो, उसमें उसको स्थित कर दिया।
स्थित करने के पश्चात उन्होंने अपनी अपनी पोथियों में निर्माण किया। कुछ औषधियों का उसमें गुणावादन प्राप्त होता रहता है। कुछ के मानो सुधन्वा नामक, जितनी वे जानते थे उनके रूपरेखा में परिर्वतन आ गया। परन्तु देखो, उनके नामो में भी परिर्वतन आया। अब उन नामों के हम उच्चारण करते रहते है तो उससे हमें कहीं कहीं कुछ प्राप्त हो जाता है।
तो इस प्रकार आधुनिक काल का जो वैधराज है। उस वैधराज ने राष्ट्रीयकरण मानो उन औषधियों का नहीं किया गया। आधुनिक काल में जिन औषधियों का राष्ट्रीयकरण होना चाहिए था। जैसे नाना प्रकार की भस्मिका है मानो जैसे स्वर्ण पीताम् भस्मिका है जैसे पारंगगति भस्मिका जैसे आन्नकेतु भस्मिका है। जैसे सारंग कृतिभा भस्मिका है परन्तु जैसे चन्द्रकेतु भस्मिका है आन्नकेतु और देखो, चन्द्रसन्धि की इन नाना प्रकार की धातुओं की मानो देखो, भस्मिका का निर्माण प्रायः होता रहता है। परन्तु उसका राष्ट्रीयकरण होना चाहिए, जो नहीं हो पाया। क्योंकि यह औषधियाँ मानव के सर्वांग रोगों में देखो, कार्य करती रहती है और लाभ को प्राप्त होती रहती है।
परन्तु देखो, जहाँ तक मैं यह उच्चारण कर सकता हूँ मेरे पूज्यपाद तो सतोयुग की वार्ता प्रकट करते है। सतोयुग के काल में, त्रेता के काल में, मध्यकाल में प्रायः ऐसा रहा है कि उस काल में मानो देखो, औषधियों का जन्म कुछ यागों के द्वारा, परमाणुवाद के द्वारा कुछ मानो पान करने के द्वारा मानो ये चिकित्सा देखो, मुख्यतः रही है। आधुनिक काल में यह मानो देखो, अग्नि की तरंगों में औषधियाँ नही दी जाती। यह आधुनिक जगत में कुछ औषधियों का जिनका राष्ट्रीयकरण होना चाहिए था। परन्तु वह न होने से केवल पानपान रह गया है। अग्नि में, याग के द्वारा, मन्त्रों के द्वारा नही रहा। परन्तु यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि हम मन्त्रों के द्वारा, याग में याग की चिकित्सा को कैसे स्वीकार करते हैं? यह कैसे है?

मन्त्र चिकित्सा

परन्तु देखो, प्रश्न के उत्तर में यह हमें प्राप्त होता है कि वेदमन्त्र का जब हम विशुद्ध रूप से, गान रूप में जब हम परिणित करते है तो बहुतसी ग्रन्थियाँ ऐसी है जो उस मन्त्र के चिन्तन करने से, मन्त्र को स्वरों से उच्चारण करने से मानव के मस्तिष्क की ग्रन्थियों में स्पष्टीकरण आ जाता है और वो जो मनुष्य के मस्तिष्क की ग्रन्थियाँ जहाँजहाँ स्पष्टीकरण होती है जहाँजहाँ धारा जाती है वहाँ रूग्ण का विनाश होता रहता है। बहुत से रूग्ण इस प्रकार के हैं जो आधुनिक काल की औषधियों से मानो देखो, उससे परी बन जाते हैं।

रुग्ण की उत्पत्ति

तो वहाँ आचार्य यह कहते हैं, कि प्रभु का चिन्तन करने से यह औषध मानो देखो, प्राण शक्ति प्राप्त होती है क्योंकि मन की विकृतता, विशेष होने से मन को देखो, विशेष भौतिकवाद से लगाने से भी हमारे द्वारा बहुत से रूग्ण उत्पन्न होते है। बहुत से रूग्ण ऐसे हैं जो वासना के द्वारा मानो उत्पन्न होते है। बहुत से रूग्ण इस प्रकार के हैं जो मानो हमारे में एक दूसरे से ईर्ष्यावत उत्पन्न हेते हैं। कुछ ऐसे रूग्ण होते हैं जो हमारे आहार रूपी प्रवृत्तियों से उत्पन्न हो जाते हैं।

मानो देखो, जिस समय हम वेद का उच्चारण करते हैं उसकी टिप्पणियों में जाते हैं तो वेद के मन्त्रों से हमें आयुर्वेद की ग्रन्थियों की आभाएँ उसमें प्राप्त होती रहती है। क्योंकि ज्ञान के मार्ग में जब स्वाध्याय शील प्राणी बनता है तो वह यह कहता है कि यह संसार तो कुछ नहीं है यहाँ मान भी और अपमान भी दोनो ही हानिप्रद है। ये दोनों ही नाश के, विनाश के सूत्र में बन्धे हुए है।

परन्तु देखो, यह इसे हमें अपने से दूरी कर देना चाहिए। यह दूरी कैसे होगा? स्वाध्याय से, चिन्तन और मनन करने से, याग कर्म करने से। उस समय हमारे हृदयों की ग्रन्थियाँ उन्हें स्पष्ट प्राप्त हो जाती है। मानो देखो, मुझे स्मरण है एक समय एक रूग्ण मेरे पूज्यपाद गुरुओं के द्वार पर आया। परन्तु उसको कामादि ग्रन्थियों में मानो देखो, एक विष उत्पन्न हुआ। कामों की ग्रन्थियों में जब विष उत्पन्न

हो जाता है तो सोम रस का, एक सोम नाम की औषध होती है जो आज भी मानो देखो, ग्रन्थियों में, पोथियों में प्राप्त हो जाती है। अहा! वह सोम कैसे बनता है? सोम बनता है मानो जैसे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी वर्णन किया देखो, जैसे मंजीठ होता है और देखो, लाजवन्ती होती है श्वंजनाकेतु होता है। आधुनिक काल में उसको सुपामकेतु कहते है। उनको पान के रस में मानो देखो, छत्तीस दिवस तक उनको खरल किया जाता है और उसमें काकूरी, आन्वेषणी और केशणीकेतु इन तीनो का मिश्रण करते हुए इसमें मानो देखो, जायफलिका, घृत बनता रहता है उसको पान करने से और यागकर्म करते हुए मन्त्रों का उच्चारण करने से मानो वो काम की ग्रन्थियों में जो निष्क्रियत आ गई थी वो मानो भस्म हो जाती है और मानव स्वस्थ बन जाता है।

तो इस प्रकार के मैंने कुछ अंक उच्चारण किए है। परन्तु मैं इस संम्बन्ध में कोई विशेषता देने नहीं आया हूँ। क्योंकि पूज्यपाद ने मुझे आज्ञा दी है मैंने कुछ सूत्मसा वर्णन किया है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रश्न करता रहता हूँ और क्योंकि मैं परम्परागतों से इनसे जो भी वस्तु प्राप्त होती है वो केवल प्रश्नों से प्राप्त हुई है। बिना प्रश्नों के ये मानो अपने मुखारविन्द से किसी वाक का स्पष्टीकरण नहीं कर पाते। यह इनकी बड़ी मानो देखो, मैं इस सम्बन्ध में कोई वाक उच्चारण नहीं कर पाता। मानो देखो, मैं प्रश्न करता रहता हूँ और ये उत्तर देते रहते हैं। इनकी उत्तरावली एक मानो विशेष और बड़ी विचित्र मानी गई हैं। मैं बहुत परम्परा से इनकी आभा में अपृत करता रहता हूँ। तो अब मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कुछ वर्णन किया है।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो क्या पुत्र! यहाँ महाभारत के काल में कुछ ब्राह्मणों का राज रहा है।

पूज्य महानन्द जीः हाँ भगवन! ऐसा ही दृष्टिपात किया गया।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो सम्प्रदायों का प्रादुर्भाव महाभारत के काल में हुआ। परन्तु ये जो सुधन्वा नामक वैद्यराज की औषधियाँ हैं तुमने बेटा! यह श्रवण किया होगा कि

जिस समय रामायण काल में युद्ध हो रहा था, संग्राम हो रहा था और लक्ष्मण मूर्छित हो गया था। मेघनाथ के अस्त्र से और अस्त्र शस्त्र का जो प्रभाव था वो शक्तिपात था।

रुद्रयाग की प्रतिभा

परन्तु शक्तिपात कैसे होता है? एक यन्त्र बनाया जाता है और वो यन्त्ररुद्रयाग से बनता है हमारे यहाँ एक याग होता है रुद्रयाग, तो रुद्रयाग से उसे बनाया जाता है। तो महाराजा रावण के पुत्र ने जब इन्द्र को विजय किया था, इन्द्रपुरी प्राप्त हो गई। तो इन्द्रपुरी में वो रहते थे, तो वहाँ वो रुद्र याग करते थे और रुद्र याग में कुछ वनस्पतियों को एकत्रित करके, और उससे जो रुद्र याग किया उन्होंने तो उसमें जो तरंगे उत्पन्न होती थी उसको बहुत अनुसन्धान करने के पश्चात वे तरंगे उन्होंने किसी यन्त्र में एकत्रित की और यन्त्र को मानो उसको कुछ सोगांग यन्त्र में लगाया। और वह ऐसा परमाणु था जिसके प्रहार करने से मूर्छित हो जाता था और मूर्छित यदि वो सूर्योदय, जैसे हमने मध्यदिवस उसका प्रहार किया और वह मूर्छित हो गया, रात्रि आ गई है। रात्रि के आ जाने से और जहाँ सूर्य को वो प्रातशमणी किरण शरीर से स्पर्श हुई तो उससे उसका प्राणान्त हो जाता था।
तो ये उस रुद्र याग से जो यन्त्र बनता था उसमें यह विशेषता थी। परन्तु सुधन्वा वैधराज इस औषध को जानते थे। तो वह गिरी कानन्दनकेतु जो पर्वत था वे औषधियाँ वहाँ प्राप्त होती थी। तो उन औषधियों में, चन्द्रमा की कान्ति में, जब चन्द्रमा उदय रहता था, चन्द्रमा जब तक उदय रहता था उन औषधियों पर चन्द्रमा जैसी छटा दृष्टिपात होती थी। परन्तु उन औषधियों को लाया गया, उस औषधि का नाम है चन्द्रीकान्त और द्वितीय नाम है उसका सोमकृतिभा तो दोनो औषधियों को वो खरल बना करके और लक्ष्मण को जब दी गई तो लक्ष्मण मानो विशुद्ध हो गए। तो शक्ति का प्रभाव समाप्त हो गया। वो रुद्र याग की प्रतिभा समाप्त हो गई। तो ऐसे, ऐसे याग हमारे यहाँ प्रायः औषधियों के द्वारा प्राप्त होते रहे हैं। मैं पुत्र! इस आयुर्वेद के वन में बढ़ना नहीं चाहता हूँ। मैं किसी काल में आयुर्वेद में पहुँचूँगा

तो तुम्हे कुछ गुणों का वर्णन कराऊँगा। आज का समय तो इतना ही है अब समय समाप्त होने वाला है।

परन्तु आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय कि हम देखो, अमावेष्टि और पूर्णोष्टि याग करते रहें। जैसे जैसे चन्द्रमा उदय होता है मानो उसको अमावेष्टि कहते है। जैसे जैसे चन्द्रमा का समय समाप्त, अस्ताचल को जाता है त्योंत्यों उसमें यागों की, उसी प्रकार देखो, औषधियों के द्वारा जो याग करते हैं वो अमावेष्टि वृष्टियाग कहलाता है। देखो, हमारे यहाँ मेरी पुत्रियाँ जिनके गर्भस्थल में आत्मा का जैसे प्रवेश हुआ, उस काल में अमावेष्टि देखो, नौ माह तक इन यागों को करना वह माताएँ करती थी। आधुनिक काल का तो पुत्र मुझे प्रतीत नहीं, परन्तु वर्तमान काल में देखो, अतीत के काल में सदैव मेरी माताएँ पवित्र क्योंकि इन माताओं से हमने जन्म लिया वह माताएँ प्रायः ऐसा करती रही।

मुझे स्मरण आता रहता है एक समय मेरे पिता से यह प्रश्न किया गया देखो, जनेतकेतु ने एक समय पिता से यह प्रश्न किया। हे ऋषिवर! यह ब्रह्मचारी इतना मौन और गम्भीर क्यों रहता है। इसके मूल में क्या है इसे ब्रह्मज्ञान, संसार की आभा का ज्ञान है, इसका क्या कारण है? तो उस समय पिता ने कहा कि हम दोनों याग करते रहें हैं। मेरी देवी सदैव याग करती रही है। सोमलताओं के द्वारा और देखा, नाना प्रकार की औषधियों के द्वारा पान करती रही। उन औषधियों का पान करना उन्हीं के द्वारा याग करना, तो बाह्यजगत, आन्तरिक जगत दोनों के शोधन में परणित हो जाते है। विचारों में मौन रहना, ज्ञान में सदैव दृष्टि रखना तो ये माताओं के जीवन की आभाएँ हमें प्राप्त होती है।

तो जब माताओं का जीवन इस प्रकार का रहा है। अशुद्ध आहार करना उनके लिए मानो एक विष के तुल्य रहता है आधुनिक काल में यह स्वीकार करते रहते है जैसा पुत्र तुमने मुझे वर्णन कराया था एक समय में, कि वो कहते हैं कि धासम् पान करना हमसे नहीं आता। परन्तु में यह कहा करता हूँ कि इनको घास नहीं कहते, इनको औषध कहते हैं। औषधियों का पान करना यह मानव के लिए बहुत

प्रियतम है। क्योंकि यह सर्वत्र औषधि है, इनके उपयोग में, इनकी महानता इनके रसों से हमें प्राप्त होती है। परन्तु रहा ये कि हम दूसरों के रक्तों को जैसा तुमने मुझे वर्णन कराया। दूसरे के रक्तों का पान करना उनमें भी मानो देखो, वही अंजाम विचरता रहता है। परन्तु उनके इस दाह में, कि जब वह उस रक्त की आभा में संगति होती है परन्तु ज्यों का त्यों तो जितनी हमारे शरीर में ग्रन्थियाँ हैं वो ग्रन्थियाँ उस रूप में उसको नहीं पचापाती जिस रूप में औषधियों के रसों को पचा करके ओज, तेज और बुद्धि की उसमें उत्पत्ति होती है। अहिंसा परमो धर्म की तरंगे उत्पन्न होती है।

जीवन का उद्देश्य

परन्तु ये परमात्मा का दिया हुआ सर्वत्र एक औषध प्रसाद है। इस प्रसाद को पान करता हुआ मानव अपने को सौभाग्यशाली जब स्वीकार करता है तभी उस मानव की बुद्धि में नाना अङ्कुरों का जन्म होता है उन अङ्कुरों से एक आभा उत्पन्न होती है। गृहस्थाश्रम में पति, पत्नी का केवल सन्तानो तक देखो, उद्देश्य रहता है। उसके पश्चात वह संसार के क्षेत्र में दोनों समिश्रण होकर के ऊँचे ऊँचे कार्य यागों के द्वारा, कर्मठ होकर के और देखो, वह अपनी विद्या का प्रसार करने वाले बने। परन्तु यही जीवन का उद्देश्य होता है।

परिणाम क्या, मुझे इन वाक्यों के उच्चारण करने में कोई विशेषता, मैं तुम्हें पुत्र! उच्चारण करने नहीं आया हूँ। विचार यह कि मेरी माताएँ, सदैव अमावेष्टि और पूर्णेष्टि दोनो यागों में, क्योंकि मानव का जीवन ऐसे ही पनपता रहता है। ऐसे विचारो में तप्त ध्वनि आती रहती है। मानो देखो, जैसे पूर्णिमा का उदय होना देखो, पूर्णिमा के दिवस, चन्द्रमा की कला समय समय अमावस्या के आङ्गन में पहुँचना और अमावस्या के पश्चात चन्द्रमा की कला का मानो देखो, पूर्णिमा के आङ्गन में सम्पूर्णता को प्राप्त होना ऐसे ही माताएँ प्रार्थना करती रहती है। हे माँ कस्सुतं देवाः हे प्रकृति चन्द्रो केतो प्रहाः अब्रहेम् अस्सुतां यज्ञनि यज्ञतां दिव्यं। भवति अस्सुतां केतु हिरण्यं रथां केतु ब्रह्माः स्वस्ति

इन मानो देखो, मन्त्रों के शब्दों का उच्चारण करती हुई मानो प्रार्थना करती है कि हमारा जो पुत्र है वो चन्द्रमा के तुल्य, सोम को पान करने वाला हो। जैसे समुद्रों से सोम का पान किया जाता है। ऐसे विद्यारूपी जो सोम है इसे पान करने वाला यह प्रायः माताओं का कर्तव्य रहा है।

मेरी माता ने सदैव यह प्रार्थना की तो पिता ने जब यह वाक निर्णय कराया तो ऋषि शान्त हो गए और ऋषि ने नतमस्तिष्क किया। तो मानो देखो, इस प्रकार कि विद्याएँ परम्परागतों से ही, हमारे यहाँ आती रही हैं। आज का यह वाक समाप्त अब वेदों का पठन पाठन। विशेष चर्चा हमें प्रकट करनी नहीं, यह तो विचारों का वन है, मैं देता रहूँगा, तुम श्रवण करते रहोगे। समय समाप्त होता चला जाएगा। परन्तु देखो, वार्ता समाप्त नहीं होती, समय प्रायः चला जाता है। अब वेदों का पठन पाठन। ओ३म् मा गतं रथाः वाचन्न मप्राचीः गा तां मनो आभ्यां रूद्राः। ओ३म् शन्नौवृताः आभ्यां मनुः वाचा रथं गायन्त्वाः। ओ३म् ब्रह्मणस्पति वनु गाता वसु मां हृदाः। ओ३म् यं सर्वां रूद्रं वाचा रथं गताः।

9. 820709-आत्म कल्याण के लिए याग

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस ममतामयी, यज्ञोमयी स्वरूप का वर्णन होता रहता हैं, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप माने गएं हैं, क्योंकि याग ही उसका आयतन माना गया हैं अथवा उसका गृह माना गया हैं। प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, उस महान देव की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं। क्योंकि यह ब्रह्माण्ड की गाथा गाने वाली अनुपम पृथ्वी कही जाती है, परन्तु ब्रह्म का गान गाने वाली, यह वाणी मानी गई हैं। जैसे ब्रह्माण्ड की गाथा गाने गानी वाली पृथ्वी है, इसी प्रकार ब्रह्म की गाथा गाने वाली वाणी मानी गई हैं। मानो एक एक आभा में रमण करने वाला, एक विज्ञानमयी आभामयी मानो एक सूत्र माना गया हैं, जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, प्रायः अनुसन्धान करता रहा हैं।

क्योंकि हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने बहुत अनुसन्धान किए और अनुसन्धान करते ही रहते हैं, एक एक वस्तु के ऊपर अनुसन्धान करने से ऐसा प्रतीत होता है, जैसे हम एक महान धारा में रमण कर रहे हैं, क्योंकि धारा में गति करने वाला मानो उस परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाता हैं। परन्तु आज मैं विशेष चर्चाएं तुम्हें देने नही आया हूँ, मेरे प्यारे महानन्द जी! नाना प्रकार की वार्त्ताएं प्रगट करते रहते हैं, उन वार्त्ताओं का, उन मूल प्रहा कृतं ब्रह्मा मानो उनकी विवेचना होती रहती हैं। परम्परागतों से ही, आभा में रमण करने वाला और वन्दना करने वाला, एक महान सूक्ष्म धाराओं को प्राप्त होता रहता है।

याज्ञवल्क्य मुनि महाराज का अनुसन्धान

आओ, मेरे प्यारे! हमारे यहाँ, आज का वेदमन्त्र, कुछ सूक्ष्म संकेत दे रहा हैं और वह संकेत क्या है श्वंजनं ब्रह्मे वर्णः अस्सुतां दिव्यां गतं प्रमाणां ब्रह्मे लोकाः सम्भविताः

वेद का मन्त्र कहता है, कि प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, विचार विनिमय करता रहा हैं, कि मैं ब्रह्म की आभा में रमण करना चाहता हूँ, अथवा ब्रह्म को जानना चाहता हूँ। परन्तु इस प्रकार की उड़ान, परम्परागतों से ही, मानवीय क्षेत्र में रही हैं। आज मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के आश्रम में ले जाने के लिए आया हूँ, जहाँ याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के आश्रम में, ब्रह्मचारी कवन्धि उनके चरणों में ओत प्रोत हो गया और ब्रह्मचारी कवन्धि ने यह कहा, कि प्रभु! आपके इस महान लेखनीबद्ध में, यागों का बहुत विशेष वर्णन होता रहा है। क्या वास्तव में याग इसी प्रकार के, मानवीय आभा में रमण करते रहते हैं। तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने उसका उत्तर दिया। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा हे ब्रह्मचारी कवन्धि! हमारे यहाँ अनुसन्धान होता रहता हैं, यागों का चलन होता रहा है, परन्तु भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का वर्णन, हमारे वैदिक साहित्य में होता रहा हैं। जैसे हमारे यहाँ अग्निष्टोम याग हैं और अमावेष्टि और पूर्णोष्टि और वाजपेयी गन्धवाहन और भी नाना प्रकार के यागों का चयन होता रहा है, परन्तु हमारे यहाँ अमावेष्टि याग और पूर्णोष्टि का बड़ा विशेष वर्णन होता रहा है। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा है क्या, इन यागों का चलन, परम्परागतों से ही, मानवीय मस्तिष्कों में रहा हैं। ये वैज्ञानिक तरंगों में भी रमण करता रहा है, परन्तु हमारे यहाँ अमावेष्टि और पूर्णोष्टि यागों का अभिप्राय क्या है, हम अपने में पूर्णता को प्राप्त होना चाहते हैं अमावेष्टि का अभिप्राय है कि हम अन्धकार में रहना नही चाहते। परन्तु उन यागों को करना कौन चाहता है? जो अपने आत्मकल्याण को चाहता हैं, आत्मा के स्वरूप को जानना चाहता है, वह बाह्य जगत और आन्तरिक जगत दोनों की आभा में उड़ान उड़ना चाहता हैं, अथवा उस उड़ान को उड़ने वाला, मानो परम्परागतों से मानवीय क्षेत्र में महान रहा हैं। तो मुनिवरों! देखो, तुमने यह जान लिया होगा, कि हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के कर्मकाण्ड होते हैं, भिन्न भिन्न प्रकार के स्थान होते हैं जिसके ऊपर प्रायः हम अपनी आभा में रमण करना चाहते हैं।

सम्भूति याग

पूज्य महानन्द जी: क्या भगवन! मैं यह जानना चाहता हूँ, सम्भूति रूप में जो याग करना चाहता हैं, उसका अभिप्राय क्या है?

पूज्यपाद गुरुदेव: बेटा! सम्भूति यागों को तो तुम परम्परागतों से जानते ही हो, सम्भूति याग उसे कहते हैं, जो बाह्य जगत और आन्तरिक जगत दोनों में एक रस हो करके विचरण करता हैं, वह सम्भूति याग कहलाता हैं। जैसे हमारे यहाँ यागों का चलन तो बहुत कुछ रहा हैं, परन्तु सम्भूति का अभिप्राय यह है कि अपने को सम बनाना हैं, और जब तक अपने को सम नही बनाया जाता, जब तक हम सम्भूति याग या किसी भी प्रकार का याग करने का हमें अधिकार प्राप्त नही होता।

पूज्य महानन्द जी: क्या भगवन! जो मानव दोषारोपण करता रहता है, और नाना प्रकार की संसार की वासनाओं का चयन करता रहता है क्या उसे इन यागों का अधिकार प्राप्त होता हैं।

पूज्यपाद गुरुदेव: क्या, पुत्र! ऐसा तो नही होता, जैसा तुमने कहा है, कि संसार की विलासता और कामातुर वाला यागों में कितना वह अग्रणीय बन सकता हैं। अपने को ऊर्ध्वा बना सकता हैं, यह तो उसके चलन के आधार पर हैं। परन्तु रहा यह वाक्, तुम उच्चारण करना क्या चाहते हो? इस रहस्य को नही जान पाएं।

पूज्य महानन्द जी: क्या भगवन! मैं यह जानना चाहता हूँ, जैसा आपने कहा, कि हमारे वैदिक साहित्य में यागों का चलन और अमावेष्टि, पूर्णोष्टि, वाजपेयी, और अग्निष्टोम, सम्भूति नाना प्रकार के यागों का चलन तो होता ही रहा है, परन्तु इन चलनों में हम केवल इतना ही जानना चाहते हैं, कि यह अधिकार भी तो होना चाहिए।

पूज्यपाद गुरुदेव: हाँ, पुत्र! अधिकार तो होना ही चाहिए।

पूज्य महानन्द जी: तो भगवन! प्रथम तो आप, अधिकार की चर्चाएं कीजिए, क्या अग्निष्टोम याग कौन कर सकता हैं? अमावेष्टि कौन कर सकता हैं? पुत्रेष्टि कौन कर सकता है? वाजपेयी कौन कर सकता हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या पुत्र! तुमने यह कौनसा प्रसंग लिया हैं? इस प्रसंग को तो ऋषिजन जानते हैं। अधिकार, अनधिकार की चर्चा तो वही जान सकते हैं, जो जिस मार्ग को जानते हैं। परन्तु हो सकता है कि हम यागों के मार्ग को इतना नही जानते, इतना चलन हम नही चला सकते।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! हमने एक समय यह ऐसा चलन किया था, बहुत पुरातन काल की वार्ता थी, जब आपके आश्रमों में अध्ययन किया करते थे, तो एक समय हम मगध राष्ट्र में चले गएं और मगध राष्ट्र में यह चर्चा हो रही थी, त्रेणकेतु ऋषि मगध राजा के पुरोहित थे। परन्तु वह वाजपेयी याग कराना चाहते थे। तो त्रेणकेतु ऋषि ने यह कहा था, क्या तुम कजली वनों में चले जाओ और वहाँ तुम्हें वाजपेयी यागों का वर्णन प्राप्त होगा, परन्तु हम भी उस समय भ्रमण करते हुए, त्रेणकेतु ऋषि के द्वार पर पंहुचेऔर त्रेणकेतु के समीप जब यह प्रश्न आया, तो हमे सम्बोधित किया गया, क्या तुम कजली वनों में रहते हो, तुम यह याग करो। तो उस समय मैने कहा, कि मेरे पूज्यपाद जानते हैं, जब पूज्यपाद का हमने परिचय दिया, तो त्रेणकेतु ने यह कहा, कि वास्तव में वह जानते हैं, जाओ, तुम कजली वनों में चले जाओ। तो पूज्यपाद उस समय कजली वनों का साथ नही बना और हम उस याग को जानते नही थे, तो उस समय मानो हमें यह ज्ञान हुआ, कि आप जैसा उच्चारण करते हैं, प्रायः उस वाक को गोपनीयता में धारण करना चाहते हैं

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य..... मेरे पुत्र! यह जो संसार का जितना भी विषय है, ज्ञान और विज्ञान का जितना भी विषय है। कर्म काण्ड का जितना विषय है, यह सब गोपनीय होता हैं। परन्तु रहा यह कि तुम बहुत पुरातन वार्ता प्रगट कर रहे हो, क्या मगध राष्ट्र में तुमने यह श्रवण किया होगा, हम इसका खण्डन नही कर रहे हैं, परन्तु इसका मण्डन भी होता रहता है। परन्तु इस वाजपेयी याग इत्यादियों का जो वर्णन है, इन याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बहुतसी लेखनियाँ बद्ध की हैं। परन्तु ओर भी नाना ऋषि हुए हैं। जिन्होंने लेखनियाँ बद्ध की हैं, उनके कर्म काण्ड का

वर्णन किया हैं और उसका अधिकार भी उन्हें प्राप्त हुआ।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! आप इस याग का वर्णन नही कर सकते?

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं, यागों का वर्णन तो कर सकते हैं। इसमें कोई वाक नही है, परन्तु तुम याग जब करना नही चाहते, तो तुम याग का वर्णन क्यों चाहते हो?

पूज्य महानन्द जीः पूज्यपाद गुरुदेव! सम्भवतां वन्धनं मेघा वर्णसुतः प्रवी अस्सुता जैसे भगवन! मेघों की वृष्टि होती है, और उससे सर्वत्र वनस्पतियां प्रफुल्लित हो जाती हैं, इसी प्रकार प्रत्येक प्राणी ज्ञान चाहता हैं, जैसे नाना प्रकार की वनस्पतियां मानो सूक्ष्मतम रहस्य को पाना चाहती हैं, इसी प्रकार हमें भी जानकारी और हमारी, आकाशवाणी मृत मण्डलों लोकां ब्रह्मे स्वाहा, यह हमारी वाणी मृत मण्डल में जाती है, इसीलिए हमारी इच्छा है जितना आपके मुखारविन्द से यह ज्ञान का उपार्जन हो जाएं, उतना ही प्रियतम हैं। क्योंकि हमारे यहाँ एक चलन रहा है, वर्तमान काल में, क्या यह जो वाजपेयी याग है, इसका हिंसा से कुछ सम्बन्ध कहते हैं और ऐसा मैंने श्रवण भी किया है। महाभारत के काल में वाजपेयी यागों की बलि का भी वर्णन किया हैं, एक सुधन्वाकान्त केतु था, जो वाममार्गी था, उन्होंने एक समय पूज्यपाद! यह अपना वाजपेयी किया और उसमें गऊ की बलि प्रदान की गई, परन्तु उसका परिणाम यह हुआ, कि समाज में नास्तिकवाद आ गया। वेदों के प्रति, मन्त्रों के प्रति, आस्था न रही। तो क्या, भगवन! आपके ही, आप तो परम्परा की वार्ता जानते रहते हैं, क्या भगवन! वास्तव में यागों में हिंसा का चलन रहा है या नही, क्योंकि मध्य काल में रहा हैं। इसीलिए वैदिक साहित्य लुप्त हो गया।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! ऐसा तो नही है, कि हिंसा का वर्णन तो कहीं नही आता, और किसी भी याग में हिंसा का वर्णन नही आता।

वाजपेयी याग का सूक्ष्म स्वरूप

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! यह जो मन्त्र हैं, मन्त्र हैवर्णा स्वस्ते स्वाहा। वाचन्नमां ब्रह्मे स्वाहा अस्वान कृति ध्वस्णां स्वाहा, क्या भगवन! यह वाजपेयी यागों में स्वाहा

के वर्णन आते हैं, क्या इसके स्वरूप को आप क्या उच्चारण करेंगें।

पूज्यपाद गुरुदेवः पुत्र! यह तो यह है, कि वरशवन्ध श्वान सुवर्णाः ब्रहे व्रतः स्वस्ति मानो जैसे स्वस्ति अस्वान हैं। मानो देखो, जैसे बैल का स्थान हैं, यह तृण का स्थान हैं, आपका अभिप्राय यह है कि तृण को पान करने वाला बैल और बैल को याग में हूत किया जाता हैं। यही तो मन्त्र कहता हैं परन्तु इसका ऊर्ध्वा मुख यह है, क्या तृण कहते हैं अन्न के निचले भाग को और बैल कहते हैं उसको पान करने वाले को और उस याग में उस बैल को अर्पित किया जाएं, ऐसा कहा जाता हैं, परन्तु यहाँ इसका अभिप्राय आता है, इसका रूप, स्वरूप बनेगा, क्या तृण कहते हैं अन्न के निचले भाग को और बैल पान करता है। निचले भाग को याग को अर्पित किया जाता हैं, तो यहाँ कृषक याग को कहा है, क्या कृषक याग तृण को पान कराता हैं, और बैल उसे पान करता है, बैल के पान करने पर उसको याग में हूत किया जाता हैं। हूत का अभिप्राय है क्या, कृषक जब अन्न को उत्पन्न करने के लिए मानो देखो, भूमि को, उस योग्य बनाता हैं, तो वहाँ बैल अपना कार्य करता है, उस अर्पित करने वाले को कृषक, जब हूत में अर्पित करा देता हैं, तो कृषक अर्पित करके मानो देखो, उसको याग कहते हैं यहाँ, यह इसको ब्रहो वाजपेयी याग का एक वर्णन आता हैसूत्म में, परन्तु यह जो याग करता हैकृषक, परन्तु इससे यज्ञशाला में अग्नि में आहुति देने का प्रश्न नही आता, क्योंकि याग का अभिप्राय है, जो व्यापक रूपों से कर्म किया जाता है, उसका नाम याग हैं।

मूर्ध्वा का अभिप्राय

परन्तु द्वितीय रूप भी आता हैं, कि अग्नि अग्नं ब्रह्मेअस्विही मानो देखो, यदि हम यज्ञ में लेते हैं, आध्यात्मिकवाद में लेते हैं, तो वृख और बैल रूप मन बनता है, क्योंकि वृख को भी, गऊ के बछड़े को वृख कहते हैं। जब वह कृषक के सुयोग्य आता है, तो उसे बैल कहते हैं। परन्तु देखो, उसे हम अर्पित कर देते हैं। इसी प्रकार यह जो मन है, जब हम आध्यात्मिक रूपी, वाजपेयी याग को जानने लगते हैं जैसे मानव अपने स्वरूप को जानता है मानवीय अपने स्वरूप को जान करके,

वह सूक्ष्म धाराओं में गति करने लगता है। सूक्ष्म धाराओं में रमण करता है, तो मानो देखो, उस समय यह मन, मन को वृख अथवा बैल कहा जाता हैं। गऊं का बछड़ा कहा जाता हैं, क्योंकि इसको हम जब तक उसमें संलग्नता से, सम अर्पित नहीं करेंगे परन्तु मन को इसमें संलग्न करना होगा और वह याग कहलाता है। परन्तु रहा यह, कि अब वाजपेयी यागों का वर्णन परन्तु देखो, वह आध्यात्मिक यागों में, उसमें मूर्ध्वा शब्द आता हैं, मूर्ध्वा कहते हैं स्वरों को, क्योंकि जो वेदमन्त्रों का स्वर सहित गान गाता है, वह मूर्ध्वा को अपनी मूर्धत्व को प्राप्त हो जाता हैं। परन्तु जहाँ स्वर रूप बनता हैं, वहाँ मूर्ध्वा का रूप मानो वेद का पारायण पाण्डित्व, को अच्छी प्रकार वेद के मन्त्रों की सन्धि करना उसको भी मूर्ध्वा कहते हैं। परन्तु रहा यह कि याग को हम तीसरा मूर्ध्वा उसे कहते हैं, जब हम याग करते हैं, और वाजपेयी याग करते हैं। तो याग कर्म करने वाला मानो उस याग से ही अपने आन्तरिक स्वरूप को वह अपनेपन में जान लेता है, उसको भी वह मूर्ध्वा कहते हैं, परन्तु वह कैसे बनता हैं सम्भविता ग्रहणं लोकां मानो देखो, मूर्ध्वा बन करके, एक लौकिकता को प्राप्त होता रहता हैं। परन्तु आज मैं इस सम्बन्ध में ओर नहींले जाऊंगा, इसकी भूमिका बना करके, आगे इसके स्वरूप का वर्णन करूंगा।

परन्तु देखो, हम जैसे मूर्ध्वा में जाना चाहते है, मूर्ध्वा उसे कहते हैं जो अपनी आत्म तत्त्व को जानने वाला, आत्म स्वरूपवेत्ता बनता है, उसे भी मूर्ध्वा कहते हैं, परन्तु अब इसके क्षेत्र में हम यह, कि हम नो नमाः अष्टवे नमाः और देखो, सप्तम नमाः मानो देखो, हम सत्रह दिवस में, इस याग को करते रहते हैं।

सत्रह दिवसीय याग

इस सत्रह दिवस का वर्णन याज्ञवल्क्य मुनि ने भी किया है, सत्रह दिवस का अभिप्राय हमें सूक्ष्म ऊर्ध्ववेत्ताओं ने भी दिया हैं, मानो जो अपने विचारों को, ऊर्ध्ववेत्ता बना लेते हैं, ऊर्ध्वा बना लेते हैं, तो वह इन मानो देखो, मूर्ध्ववेत्ता बनते हैं, उनको मूर्ध्ववेत्ता भी कहते हैं, ध्रुववेत्ता भी कहते हैं और उसे अश्विनी भी कहते हैं। परन्तु रहा यह, कि अब हमारा एक स्वरूप और बनेगा, वाजपेयी अग्नांसुता

परन्तु वह स्वरूप क्या बनेगा, मानो यागों के चयन में हमारे यहाँ सत्रह दिवस क्यों माने गएं हैं? कि सत्रह दिवस की एक अवधि है, सत्रह दिवस क्यों कहा है ऐसा? क्या वह सत्रह दिवस तक याग करना चाहिए, उस याग का अभिप्राय यह है, कि उसमें कुछ मन्त्र हैं, मन्त्र है जैसे सम्भव ब्रव्हे निम्ब्रणा स्वस्ति ब्रह्मा चक्रणि स्वस्ति रुद्रो भागा अश्वनं ब्रह्मे कृतां लोकाः सम्भविते क्रतुम् अस्तु सुप्रजा। ऐसा यह वेदमन्त्रों की कुछ ध्वनियां होती हैं और वह जो ध्वनियां हैं, वह पुनरूक्ति रूप में गाई जाती हैं, जैसे पुनरूक्ति रूप से कहते हैं मङ्गलम् ब्रहे सम्भूता ब्रहे चक्रो रुद्रो स्वस्ति सुप्रजा अप्रमाणं भविते स्वस्ते वायु रुद्रा अस्सुति मंगलं वत्तेः मानो देखो, इस प्रकार के जो वेदों की ध्वनि और गान गाने वाला हैं वह सत्रह दिवस तक मानो सत त्वन्भनं गृ अस्ता देवा रोवस्तनं उसकी पुनरूक्ति करता रहता हैं, और वह पुनरूक्ति करता हुआ, पुनरूक्ति इसीलिए करता है क्योंकि पुनरूक्ति में जीवन रहता हैं और पुनरूक्ति ही मानव की आभा कहलाती हैं। और पुनरूक्ति एक शब्द की विवेचना करने का पुनरूक्ति पूर्ण वृत्तियाँ आयेंगी, पूर्णताएं आयेंगी। परन्तु देखो, उसमें इसीलिए उच्चारण करता है। क्योंकि सत्रह दिवस उसे पूर्ण करने हैं।

सत्रह दिवस का अभिप्राय यह है, कि सत्रह तत्त्वों का हमारा सूक्ष्म शरीर होता हैं। और वह तो सूक्ष्म शरीर है उसे हम दृष्टिपात करना चाहते हैं। याग के द्वारा उसे हम दृष्टिपात करना चाहते हैं, तो अब यागों के द्वारा हम उसे सूक्ष्म बनाना चाहते हैं, यागों के द्वारा उस सूक्ष्म शरीर को हम दृष्टिपात करना चाहते हैं। क्योंकि जहाँ चित्त का मण्डल रहता है, चित्त के मण्डल में मानो सत्रह प्रकार की आभाएं होती हैं, सत्रह प्रकार की आभाएं, मानो मन के साथ में, चित्त के मण्डल में होती हैं, और वह जो चित्त का मण्डल है, उसमें जन्म जन्मान्तरों के अङ्कुर, संस्कार विद्यमान होते हैं। जो पढ़ने की मानो शक्तिवर्धक कहलाते हैं।

याग का अधिकार

तो इसी प्रकार ऋषि मुनि जब मानो देखो, इस याग को करते हैं, तो सबसे प्रथम वह अपने को जानने की इच्छा करते हैं, परन्तु अब यह प्रसंग आता हैं, जैसा

तुमने पुत्र! अभी कहा था। क्या अधिकार और अनधिकार प्राप्त होना चाहिए। तो इन यागों को करने का अधिकार उसे है, उसे अनुसन्धान करने का अधिकार हैं, जो अपनी मानसिक प्रवृत्तियों को, संसार से, वह मानो देखो, प्रेय मार्ग को, उस अपनी प्रवृत्तियों को, वह मूर्ध्वा बना लेता हैं। परन्तु जैसे उसे मानो संसार के किसी कारण से, उसके मनों में विवाद बन गया हैं, उस विवाद को वह नष्ट करे, परन्तु ज्ञान के द्वारा उस अज्ञान को समाप्त करने वाला बनें, परन्तु जैसे कर्मफल और क्रियाफल की चर्चा आती हैं, मानो जैसे कर्मफल है, एक मानव कर्म कर रहा है, और वह कर्म तो उसी प्रकार का करेगा, परन्तु उसको त्रास देना, उसमें उसके प्रति मानो उसे घृणात्मक होना, यह उस अज्ञानता को, जब तक समाप्त नही कर देता, तब तक मानो वह याग में, अनुष्ठान करने का उसे अधिकार प्राप्त नही होता।

इन्द्र उपाधि के लिए याग

हमारे यहाँ, मुझे स्मरण हैं, पुत्रों! तुम्हें स्मरण होगा, एक समय चंग्रेत नाम के राजा थे, वह जब एक समय मानो चंग्रेत नाम के राजा थे, हरिश्चन्द के पिता जी, चंग्रेत नाम के राजा का पुत्र था हरिश्चन्द, मानो चंग्रेत नाम के राजा, एक समय विभाण्डक मुनि के द्वार पर आए, तो महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज से कहा क्या महाराज! मैं ऊर्ध्वा में जाना चाहता हूँ, और मैं अग्निष्टोम मानो, मैं वाजपेयी करना चाहता हूँ वाचन्ने मे शुन्धामि, श्रोत्रं मे शुन्धामि, और घ्राण ब्रहे घ्राणम्में शुन्धामि, मैं सबको अपने में शुन्धामि करना चाहता हूँ। परन्तु महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज आश्रम में थे, हमारे समीप आ पंहुचे, परन्तु जब ऋषि मुनि उपस्थित हो गएं, तो उस समय राजा से कहा कि महाराज! आप जो इस याग को करना चाहते हो, क्यों करना चाहते हो? राजा ने कहा कि मेरी इच्छा यह है, क्या मैं इन्द्र की उपाधि को प्राप्त करना चाहता हूँ, हमारे यहाँ इन्द्र वह मानव बनता था, जो वृष्टि याग, पुत्रेष्टि याग, और जो वाजपेयी याग, अग्निष्टोम याग का जिसे अधिकार प्राप्त हो जाएं, और वह याग करने लगे, और याग करके मानो वह इन्द्र की उपाधि को प्राप्त होता है, वह अनुष्ठान कहलाता हैं, वह अनुष्ठान में विद्यमान होता हैं, जो मानो

देखो, अपने को समाप्त कर देता हैं। इसी प्रकार जब उन्होंने देखो, यह कहा, तो राजा शान्त हो गया, और राजा ने यह कहा कि महाराज! मैं तो इस याग को करने ही वाला था। उन्होंने कहानही, जब तक तुम्हें अधिकार प्राप्त नही होगा, तब तक तुम्हारा जीवन ऊर्ध्वा के मार्ग को नही जा सकता। परन्तु देखो, ऊर्ध्वा में रमण करना हैं, ऊर्ध्वा वाला ही मानो इसका अधिकारी होता है।

सूक्ष्म दृष्टि

तो उस समय देखो, राजा मौन हो करके चले गएं, तो राजा ने उस याग के लिए अपने में तप किया और अपने को चक्षुम्मे शुन्धामि प्राणं प्राणो मे शुन्धामि, श्रोत्रं मे शुन्धामि मनों मे शुन्धामि और देखो, उन्होंने त्वचा मे शुन्धामि, इसका पठन पाठन करते हुए, उन्होंने अपने में यह विचार लिया, कि मैं वास्तव में अपने को शुन्धामि बनाना चाहता हूँ। क्योंकि जब तक प्रत्येक इन्द्रियाँ, ज्ञानेन्द्रियां उसकी तप में नही पंहुच जाती, तब तक मानो देखो, उसकी दिव्य दृष्टि नही होती। और जब तक सूक्ष्म दृष्टि नही होती। तो सूक्ष्म विषयों को वह अच्छी प्रकार मानो क्रियात्मक में नही ला सकेगा। श्रवण कर सकता है, आभा में रमण कर सकता हैं, परन्तु उसमें अधूरापन दृष्टिपात आता हैं।

सत्रह तत्व

उसके पश्चात पुत्र! तुमने जहाँ यह कहा है, कि हम देखो, सत्रह दिवस तक याग करना चाहते हैं। तो सत्रहों का अभिप्राय यही है, क्या सत्रह सूक्ष्म, शरीर में तत्व होते हैं, जब स्थूल शरीर को त्यागता हैप्राणी, तो मानो देखो, उसमें दस प्राण होते हैं, पञ्च महाभूत होते हैं, मन और बुद्धि का मण्डल होता हैं, उस मण्डल के अन्तर्गत मानो यह दसों प्राण कार्य करते हैं, उसी मण्डल के अन्तर्गत पञ्च महाभूत, सूक्ष्म पञ्च महाभूत, अपना कार्य कर रहे हैं। परन्तु देखो, मन बुद्धि का यह विशेषकर, यह मण्डल कहलाता है। हमारे यहाँ यह माना जाता है, कि जब एक समय हमारे यहाँ याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने, इस याग को किया, तो उन्होंने यह स्वीकार किया, सबसे प्रथम क्या, जितना भी यह दसों प्राण है, परन्तु इनका जितना भी

विश्लेषण, जितनी भी इसकी प्रतिक्रिया हैं, वह मन और बुद्धि के अन्तर्गत परिक्रमा करती रहती है। क्योंकि इस से सिद्ध हुआ, क्या यह जो मन है, यह प्रकृति का सूक्ष्मतम एक मानो तन्तु कहलाता हैं, और वह जो सूक्ष्मतम तन्तु हैं, इसी के अन्तर्गत मानो सत्रह तत्त्वों का जो मानो षोडश कलाएं है, यह मन के अन्तर्गत प्रकृति के क्षेत्र में गति करती रहती है, इसी प्रकार मानो देखो, इसी मन और बुद्धि के क्षेत्र में प्रकृति का जितना भी अङ्कुर हैं, चाहे वह जन्म जन्मान्तरों का अङ्कुर हैं, चाहे वह बीजों का प्रीवार्षिक भी कहलाता हैं, परन्तु इस सबका क्षेत्र कहलाया गया है। उसमे अङ्कुर विद्यमान रहते हैं। जैसे मुझे स्मरण है, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के जो महपिता थे अथवा गुरु थे, वो अंगिरस कहलाते थे। उनका अंगिरस गोत्रीय जन्म था, और याज्ञवल्क्य मुनि महाराज को उन्होंने ब्रह्मवेत्ता बनाया, और वह उनका नामोकरण सुडेशवत नामक ऋषि थे, सुडेश नाम के ऋषि थे, बेटा! सुडेश नाम के ऋषि को तुमने दृष्टिपात भी किया होगा, वह कितने ब्रह्म के मर्म को जानते थे। परन्तु एक समय याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने उनके चरणों में ओत प्रोत हो करके यह कहाक्या महाराज! तुम जिस प्रतिक्रिया में अनुष्ठान कर रहे हो, यह कैसे हो रहा है?

वाजपेयी याग

तो उन्होंने कहा कि मैं वाजपेयी याग को कर रहा हूँ, मैंने कहीं वेद में यह श्रवण किया हैं, क्या वाचन्नमं ब्रह्मे वाचा यागां ब्रह्म लोकाः मानो देखो, मैं वाजपेयी याग में रमण करना चाहता हूँ। वाजपेयी याग का जब वर्णन आया, तो उस समय ऋषि ने याग किया, तो ऋषि ने जब याग किया, तो वह अनुष्ठान में विद्यमान हो गएं, उन्होंने सत्रह दिवस तक या मानो देखो, उन्होंने दिवस का अभिप्राय यह है, क्या सत्रह प्रकार के अनुसन्धान का नाम दिवस कहलाता हैं, मानो जैसे अनुष्ठान करना है, हमें प्राण के ऊपर अनुष्ठान करना है, अपान प्राण और अपान के ऊपर मानो एक अनुष्ठान करते हैं, अनुष्ठान का अभिप्राय है उसके ऊपर चिन्तन करना। अनुष्ठान का अभिप्राय है उसके ऊपर मनन करना, और उसको मानो एक रूप में अच्छी

प्रकार जान लेना, उसको जान करके, जब वह अग्निष्टोम याग बनेगा, परन्तु देखो, अग्निष्टोम याग को भी त्यागों, वह वाजपेयी याग बनेगा। परन्तु देखो, वाजपेयी याग बनेगा, तो यह वाजपेयी याग मानो एक एक तत्त्व की, एक एक आभा में गति करना, दिवस का अभिप्राय यह नही है, मानो आज सूर्य उदय हो गया, सूर्य अस्त हो गया, सूर्य उदय हुआ इसका नाम यहाँ दिवस नही कहलाता, दिवस का अभिप्राय वाजपेयी याग में यह बनेगा, क्या एक एक तत्त्वों को जानना, यह हमारे यहाँ, क्योंकि बुद्धि को जानना, मन को जानना, उनकी विकृतियों को जानना, और इस ब्रह्माण्ड को एक आभा में, बाह्य जगत, आन्तरिक जगत में इससे खिलवाड़ करना, इसके ऊपर अधिपथ्य होना ही, मानो देखो, हम उसके ऊपर अनुसन्धानित होते हैं, उसके पश्चात हमारे जब इन तत्त्वों को जान करके, इनके सूक्ष्मतम रहस्यों को जान करके, उसके पश्चात हम मानो देखो, मन, बुद्धि के ऊपर अनुष्ठान जब करते हैं, तो वह जो चित्त नाम की भूमि हैं, मानो इनमें जन्म जन्मान्तरों के चित्र विद्यमान हैं, मानो वह जो चित्र विद्युतां ब्रह्मे हम मानो अङ्कुर विद्यमान रहते हैं, उन अङ्कुरों को साक्षात्कार जानना है, उन अङ्कुरों को साक्षात्कार जान करके मानो हम अपने जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों को जानना ही मुनिवरों! देखो, यह वाजपेयी याग कहलाता है। आज मैं विशेषता में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, ये बड़े गम्भीर विषय हैं पुत्रों! बहुत अनुसन्धान किया है, इनके ऊपर तुम्हें यह प्रतीत होगा, क्या हमने एक एक वर्षों तक मानो देखो, अन्न का भी पान नही किया। हम केवल वृक्षों का पाङ्गाङ्ग पान करते रहे हैं, मानो देखो, योगासनों में लगे रहे, आसनों पर विद्यमान हो करके, चिन्तन की गहरी गम्भीर मुद्रा में चले गएं, मुनिवरों! देखो, उस समय यह जाना जाता है।

साकल्य से अनुष्ठान

रहा यह है कि हम साकल्य के द्वारा याग करना चाहते हैं, अब मुनिवरों! देखो, साकल्य के ऊपर आ जाओ, हम साकल्य के ऊपर आते हैं, नाना प्रकार की सामग्री को, घृत को एकत्रित करते हैं घृतोमयी यज्ञाः ऐसा कहता है वेद, यज्ञ में

ही मानो देखो, घृत ही यज्ञ हैं। और घृत के यहाँ कई स्वरूप बनते हैं। घृत कहते हैं चिन्तन को, घृत कहते हैं मानो पदार्थ को, और घृत कहते हैं मानो देखो, साकल्य को, साकल्य भी घृत है। और मुनिवरों! देखो, चिन्तन भी घृत हैं। और पदार्थ भी घृत माना गया हैं। इन तीनों की सन्तुलना जब हमारे मस्तिष्क में आ जाती है, उस समय हम अग्नि का चयन करते हैं, अग्नि को प्रदीप्त करते हैं, और उसके द्वारा हम याग करते हैं, अनुष्ठान करते हैं। परन्तु जब अनुष्ठान करते हैं, तो जब मानव की प्रवृत्ति मन, कर्म, वचन से विचित्र बन जाती है, चिन्तनीय बन जाती हैं, तो उसमें ही सङ्कल्प के द्वारा, जिस अनुष्ठान के द्वारा, हम आहुति देते हैं, और स्वाहा कहते हैं, मानो देखो, उसी प्रकार का स्वरूप बन करके, द्यौ लोक को चला जाता है। द्यौ लोक में उसकी स्थिरता हो जाती है, वह द्यौ लोक को प्राप्त हो करके, मानो देखो, उस काल में जो सङ्कल्प आता है वही मानो देखो, आकार बन करके, द्यौ लोक से मानव के मस्तिष्क का निर्माण हो जाता हैं। उस मानव के मस्तिष्क की आभा बनती है।

याग से बुद्धि की ग्रन्थियों का स्पष्टीकरण

तो इसी प्रकार मानो देखो, मेरे पुत्र ने इस प्रसंग को लिया है, तुमने मुझे भयंकर वन में, तुम मुझे ले जा रहे हो, परन्तु मैं भयंकर वनों में जाना नही चाहता हूँ, विचार केवल हमारा यह है, कि हम अग्नि, वाजपेयी यागों के द्वारा, अग्नि के द्वारा, हम वाजपेयी याग करना चाहते हैं। जो याज्ञिक होता है, कर्मवेत्ता होता है वह सबसे प्रथम अपने आहार व्यवहार को ऊँचा जब तक नही बनाता, तब तक हमारा यह भौतिक याग ही क्रिया में, सफलता को प्राप्त नही होता, परन्तु देखो, बुद्धि की ग्रन्थियाँ, वास्तव में इन यागों से, बुद्धि की ग्रन्थियों में स्पष्टीकरण आता हैं।

मूर्ध्वा मुख

मुझे स्मरण हैं जब मैं किसी काल में अपने पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा पंहुचा, तो गुरुओं ने मुझे वर्णन कराया, तुम अग्नि, तुम वाजपेयी याग करो, तो उस समय मैंने मानो देखो, वाजपेयी याग किया और वाजपेयी याग करके इन्द्रियों पर सयंम

करके और नाना साकल्य एकत्रित करके कामधेनु गऊ मानो प्राप्त हुई और कामधेनु गऊ के दुग्ध के द्वारा मानो हम पय याग करते थे, उसको पय याग भी कहते हैं उसको देखो, हम वाजपेयी याग भी कहते हैं, उस याग के कर्म करने से तो हमारे मस्तिष्कों की, क्योंकि उसमें सूक्ष्म आहार, अपना मौन रहना और शान्ति पूर्वक प्रभु की महिमा का चिन्तन करना, जब वह याग करते थे, तो मस्तिष्क की ग्रन्थियाँ स्पष्टीकरण को प्राप्त हो गई। क्योंकि ग्रन्थियों का स्पष्टीकरण होना, स्पष्टीकरण का आ जाना ही मूर्ध्वा मुख होना है, तो इसे मूर्ध्वा कहते हैं। मूर्ध्वा का अर्थ है क्या देखो, ग्रन्थियों का मुख, मानो देखो, स्पष्टीकरणता को प्राप्त होकरके और ब्रह्माण्ड सेउसका समन्वय हो जा जाता है। और आकुञ्चन प्रवृत्तियां समाप्त हो जाती हैं। परन्तु देखो, यह जो जितने भी प्रकार के अनुष्ठान हैं, अथवा कर्म है, इनसे होता क्या है? एक मानव का हृदय प्रसन्न होता है और मानव का जितना हृदय प्रसन्न होता हैं आकुञ्चन शक्ति समाप्त हो जाती हैं संकुचित्त विचारधारा नही रहती, तो मुनिवरों! देखो, जब संकुचित्त धारा नही रहती और सङ्कीर्णता नही रहती, ब्रह्म और चरी के रूप को मानो हम मूर्ध्वा बना लेते हैं, तो उस समय शरीर में कोई रूग्ण भी नही रहता। उस समय मानो सर्वत्र आयुर्वेद भी सिमट करके देखो, उस मूर्ध्वा मुख के द्वार पर आ जाता है।

तो इसी प्रकार आज मैं तुम्हें यह वाक उच्चारण करने आया कि हमें देखो, पुत्रों! न प्रतीत यह प्रश्न कहाँ से लाते हो? मानो देखो, यह वाक जब लाते हो, तो मुझे इसका स्पष्टीकरण करना भीहमारे लिए बहुत अनिवार्य हैं। मानो देखो, हमारे यहाँ वाजपेयी याग का, वाचा याग करने से वाज बन जाता हैं, और वाज का अभिप्राय यह है कि गायन, और गान गाना हैं, तो गान गाना है प्रभु का, गान गाना है यागों का, याग कहते हैं व्यापक कर्म को, जिसमें मानव अपने लिए कुछ नही चाहता हो, निस्वार्थ जो गान गाता हैं, निस्वार्थ जो गान गाता है वह गान प्रभु के क्षेत्र में, प्रभु के आङ्गन में, गति करता रहता हैं। तो इसी प्रकार, मेरे पुत्र! मैंने कुछ सूक्ष्म सा तुम्हें विश्लेषण कराया। परन्तु इन विचारों की भूमिका बनाई है, अब मैं इन

विचारों की भूमिका का उत्तर तुम्हें कल दूंगा, मानो आज मैं तुम्हें इतना उत्तर दे चुका हूँ, क्या हम जिस याग को पुरातन काल में करते रहे हैं, उनके क्या क्या स्वरूप बनते हैं, क्या क्या रूप रेखाएं बनती है, अब मैं इसके विचार कल प्रगट करूंगा, परन्तु देखो, इस विस्तार के प्रगट करने से तुम्हें स्पष्ट होगा, कि मानव जिस कर्म को करता है, उस कर्म को करने से पूर्व, उसको उसका अधिकारी बनना हैं। उस धारा में रमण करना है, उस धारा में रमण करने से, उसमें हमें नाना रूपों में सफलता प्राप्त होगी, मुनिवरों! देखो, यह मैं आज यह उच्चारण कर रहा हूँ। मेरे पुत्र महानन्द जी कल कुछ प्रश्न करेंगे, और उन प्रश्नों का उत्तर भी हम देंगे, और इनसे भी हम उच्चारण करेंगे, कि जो वायुमण्डल हैं, यह इन वाक्यों के अनुकूल है, या नही, कल मेरे पुत्र मुझे वर्णन कराएगें, क्योंकि आज का वायुमण्डल मैं नही कहता कि यह वायुमण्डल ऐसा क्यों बन रहा हैं। परन्तु वायुमण्डल में यहाँ वाजपेयी याग जैसों का वर्णन करना, यह अवांछनीय कहलाता हैं। परन्तु जैसे हम मानो देखो, अग्निष्टोम यागों का वर्णन उस काल में, ऋषि मुनि साधारण, राजा, महाराजा करते रहे हैं, परन्तु देखो, इन्द्र बनते रहे हैं, इन्द्र पुरी को प्राप्त करते रहे हैं। परन्तु राजा, महाराजा इस प्रकार के तपों को भी करते रहे हैं, कल इसका विश्लेषण, हम विशेष आभा में अपने विचारों को अब शान्त करना चाहते हैं। आज का विचार हमारा यह कह रहा है, कि हम अपने को प्राप्त करने वाले बनें, अपने जीवन को जब तक सुसज्जित नही बनाते, अधिकारता को हम अपने को आभा में नही ले जा पाते। तब तक हम उस आभा को जान नही पाते, यह आज का विचार, अब हमारा समाप्त, कौन ऐसा अनुसन्धान है, कौन ऐसा अनुष्ठान है, जो मुनिवरों! देखो, मानव नही कर रहा है, मानव ने नही किया है, यह चर्चाएं हम कल प्रगट करेंगे आज का वाक समाप्त। अब वेदों का पठन पाठन। ओ३म् गाता मनु आभ्यां दधि ब्रह्मा यशो गातौ वरुणाश्चाम आभ्यां रथाः मां त्रिवरुणाश्चां देवं भगा। ओ३म् नम नरथं आप्यां लोकं गताः ओ३म् सर्वे सु भद्रा मां हिरण रथा। अच्छा भगवन!।

10.820710-यज्ञौ वै श्रेष्ठत्तम् कर्म

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, क्योंकि हमारे पठन पाठन का जो कर्म है वह परम्परागतों से ही, एक महान और विचित्रता में रमण करता रहा है। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र के गर्भ में, मानो उसके मर्म में एक ऐसी आभा निहित रहती हैं जिसके ऊपर, मानव को अनुसन्धान करना बहुत अनिवार्य होता है। क्योंकि वेदां ब्रह्मणे ज्ञानवृत्ति अस्तो क्योंकि वेद को हमारे यहाँ ज्ञान कहते हैं, एक मूल के अङ्कुर को ले करके, इस संसार की रचना का, उसमें भास होता है। क्योंकि प्रत्येक अङ्कुर में, कोई न कोई विशेषता आभा निहित रहती है। हमारे आचार्यजन, परम्परागतों से, इसका अनुसन्धान करते रहे हैं, जैसे हमारे यहाँ एक याग शब्द हैं, परन्तु याग के गर्भ में, यज्ञ के गर्भ में सर्वत्र ब्रह्माण्ड का भास होता है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड की प्रतीति होती है, क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र के मूल में, मानो याग ही दृष्टिपात होता है। याग एक ऐसा विचित्र शब्द है, जिसके गर्भ में संसार की जितनी शुभ कामनाएं हैं, और शुद्ध रहस्य हैं, वह सर्वत्र उसके गर्भ में निहित रहता है। चाहे वह कृषक हो, चाहे वह वणिज हो, चाहे वह शिल्प हो, परन्तु कोई भी संसार का प्राणी क्रियाकलाप करने वाला हो, उसमें जितना भी सुकर्म है, मानो उसका मानो जो सु का जो अङ्कुर है वह याग में उसका निकास होता हैं। क्यों होता है? क्योंकि याज्ञं ब्रह्मे क्योंकि यह जो ब्रह्माण्ड में जो एक तरंगों का उद्बुद्ध हो रहा है तरंगों की धाराएं गति कर रही है, मानो उन धाराओं में, उन तरंगों में, यह सर्वत्र मानवीय जीवन निहित रहता है। और जब मानवीय जीवन निहित रहता है, तो वह जो याग कर्म है, मानो वह तरंगेंवाद का एक मूलक कहलाता है, तरंगेंवाद उसके गर्भ के मूल में विद्यमान रहती हैं। तो इसीलिए आचार्यों ने, बहुत पुरातन काल में यह कहा, तो हम चर्चा कर रहे थे, वाजपेयी यागों की चर्चा कर रहे थे, कहीं अमावेष्टि यागों की चर्चांए होती हैं, कही पूर्णोष्टि यागों की चर्चाएं होती है,

मानो देखो, इन यागों के मूल में, इस ब्रह्माण्ड का एक नृत्त हमें दृष्टिपात होता हैं। जिसके ऊपर हम परम्परागतों से ही, अनुसन्धान करते रहे हैं। मेरी पुत्रियाँ अनुसन्धान करती रही है। एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके, मानो अपने मानव जीवन का और भौतिक याग का दोनों का समन्वय करते रहे हैं। तो बाह्य जगत में, मानो अग्नि और वाजपेयी यागों का वर्णन है आन्तरिक जगत में, यह जो दस प्राणों का विभाजन होना है, और इन प्राणों में जो रहस्यमयी, विज्ञानमयी धाराएं विद्यमान हैं परन्तु उसको हम मूल में लाना चाहते हैं, उसको बाह्य जगत से, हम समन्वय चाहते हैं। मानो हमारे यहाँ, परम्परागतों से यह अनुसन्धान होता रहा है।

प्राणों से गति

आज मैं वाची अमृतं ब्रह्मणे वाजपेयी यागों के, मानो जो इस याग को जानते हैं। हमारे यहाँ यह आया कि मानो सत्रह दिवस की आभाएं आती रही हैं, परन्तु जब दर्शन में पंहुचे, तो दर्शन में यह प्रतीत हुआ कि सत्रह तत्त्व माने जाते हैं। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने और भी आदि ऋषियो ने बेटा! इसके ऊपर नाना प्रकार की टिप्पणियाँ की हैं और चिन्तन किया हैं, जैसे दस प्राण कहलाते हैं। परन्तु यह ब्रह्माण्ड और पिण्ड दोनों की कल्पना करता रहता हैं। मानो यह प्राण ऊर्ध्वा में रहते हैं, और दस से विशेष मानो न्यूनतम नही होते, न उसमें विशेष कृतियां बनती हैं। केवल दस ही प्राण बनते हैं। पञ्च तन्मात्राएं बनती है, वह पञ्च महाभूतों की वासना कहलाती हैं। और मन और बुद्धि ये दोनों प्रकृति की मूल धारा कहलाती हैं। प्रकृति की सूक्ष्म धारा, परन्तु देखो, पञ्च महाभूत भी प्रकृति का रहस्य माना गया है, और प्राण यह आत्मा की छाया मानी गई हैं। परन्तु अब इसमें दो विशेषताएं आएंगी कि जैसे आत्मा की छाया, यह दस प्राणों का स्वरूप बना, त्रिकोण बन गया। ऐसे ही परमपिता परमात्मा की जो छाया है, यह बाह्य जगत में भौतिकवाद, बाह्य जगत में भी प्राण, अपना कार्य कर रहा है। और वह भी परमात्मा की जो छाया है, वह भी प्रणव बन करके, इस संसार चक्र को गति दे रही है। मानो यहाँ उन प्राणों का आत्मा की छाया वाले प्राणों का, दोनों की मानो वह दोनों

का समन्वय करना होगा। बाह्य जगत में यह प्राण क्या कार्य करता है? आन्तरिक जगत में क्या कार्य करता है? यह इतना विज्ञान है संसार में परमाणुवाद है, इसका जितना विभाजनवाद है, यह सब विज्ञान की एक छाया कहलाती हैं। क्योंकि उन्हीं दस प्राणों में यह सर्वत्र लोक लोकान्तर सर्वत्र प्राणी मात्र सर्वत्र परमाणुवाद इसी की आभा में यह गति करते रहते हैं मानो इसी के अन्तर्गत हैं। तो इसीलिए प्राणों को जानना, हमारे यहाँ बहुत अनिवार्य है। वाजपेयी याग वाले क्या करते हैं? इन प्राणों को जानते है। इन प्राणों को जान करके और इन प्राणों का मिलान परमात्मा के प्रणव से समन्वय करते है क्योंकि यह आत्मा की छाया कहलाती है, वह परमात्मा की छाया कहलाती हैं। परन्तु दोनों छायाओं का जब समन्वय होता है, तो उसको हमारे आचार्यों ने, उस समन्वय का नाम मुक्ति स्वीकार किया है। परन्तु मैं आज यह रहस्य बहुत सूक्ष्म है, यह रहस्य मानो रहस्यमयी कहलाता हैं। तो वाजपेयी यागों में इसके ऊपर यह टिप्पणियाँ की हैं, कि सत्रह दिवस कहलाते हैं। कि सत्रह दिवस का अभिप्राय यह है कि सत्रह में जो गति करने वाला सूक्ष्म जगत हैं, उस सूक्ष्म जगत को मानो जानने का नाम, यह सत्रह प्रकार की धारा कहलाती हैं। जिन धाराओं में, यह सूक्ष्म शरीर गति करता है, मानो यह सत्रह दिवस तो आत्मिक जगत में हैं, और अब रहा यह कि जो भौतिक याग, हमने किया साकल्य एकत्रित किया, तो सत्रह ब्राह्मणों का वर्णन आता हैं। परन्तु यहाँ सत्रह ब्राह्मणों का जब वर्णन आया, तो ब्राह्मण शब्द नही बनता। सत्रह ब्राह्मणों का शब्द नही बनता। क्यों नही बनता? क्योंकि आध्यात्मिकवाद में तो सत्रह विकृतियां बन गईं। परन्तु इस भौतिक जगत में, सत्रह ब्राह्मणों का प्रसंग अथवा ब्रह्मवेत्ता, ब्राह्मण जो बुद्धिमान हैं, जो प्रखर बुद्धि वाले हैं, क्योंकि इसमें नौ ब्राह्मणों का वर्णन बनेगा नौ ब्राह्मणो का वर्णन क्यों आता हैं? क्योंकि संसार में जितनी भी गणना है, वह गणना ही जो वह नौ शब्द है, नौ अक्षर बनते हैं, और जब यह नौ अक्षर बनते हैं, परन्तु नौ से आगे जितना भी हम रूपों में परितण करते रहेंगें, तो उसके उतने आकार और स्वरूप बनते रहते हैं। गणना विशेष बनती रहती हैं। परन्तु नौ की आभा में ही

गति करता रहता है। अब रहा वाजपेयी यागों में सत्रह ब्राह्मणों का वर्णन, परन्तु सत्रह होने ही चाहिए, इसमें कोई आपत नही है, परन्तु सत्रह से न्यूनतम हो उसमें भी कोई आपत नही हैं, तो मानो देखो, इसमें पाप और पुण्य की कोई वार्ता नही होती। इसीलिए अब क्योंकि ऋषि ने वर्णन किया है, अब ऋषि ने क्यों वर्णन किया है? क्या वह तो एक आभा में, विकृतियों में कहलाया गया है। परन्तु आज मैं इस सम्बन्ध में विशेषता देने के लिए तुम्हें नही आया हूँ, केवल परिचय देने के लिए आया हूँ, और वह परिचय क्या है? कि एक अनुष्ठान कहलाता है, यज्ञमान यह अनुष्ठान करता है। पाङ्गाङ्ग वृत्तों का पान करता हुआ, कुशा आसन पर विद्यमान हो करके क्योंकि यहाँ कुशा आसन का अभिप्राय क्या है? कुशा कहते हैं, जो पृथ्वी से उत्पन्न होने वाला एक आसनम कहलाता हैं। परन्तु इनमें ऐसी विद्युत धाराएं गति करती हैं, जो शरीर के लिए लाभप्रद होती हैं।

एक वाक मुझे स्मरण आता रहा है जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा हम मानो अध्ययन करने के लिए पंहुचे, तो उन्होंने एक औषध होती है, जिसको हम सर्पनैनी का औषध कहते हैं तो सर्प नैनी का जो औषध हैं मानो उसका आसन विद्यमान करते हैं। उस आसन पर विद्यमान होते हैं। और उस काल में जो स्वाध्याय करते हैं, तो पृथ्वी की उस गन्ध को, वह मानो औषध, वह आसन वह लेता रहता हैं, जिससे हमारी गति मानो जैसे सर्प होता है, सर्प में जितनी सहन शक्ति होती हैं, परन्तु उतना उसमें क्रोधाभास भी होता हैं। परन्तु इस भाव को ले करके आसन नही बनाया जाता है, वह इस भाव को ले करके आसन पर विद्यमान होते हैं, जिससे हम सर्पों की वाणी को, सर्पों की भाषा को, हम जानने वाले बन जाएं। क्योंकि सर्पों की भाषा अब वह जो उनका नृत्त है, उनको भी जानना बुद्धिमान के लिए बहुत अनिवार्य हैं। क्योंकि हमारे यहाँ, जैसे गुड़ शोनि एक औषध होती है, उसको पान करने से मानो हम अश्व की वाणी को, घोड़े के शब्द को, उसको अच्छी प्रकार हम जान लेते हैं। कि यह क्या कह रहा है? क्या इसमें रहस्यमयी उच्चारण कर रहा है तो इन सबका हमें ज्ञान, इस प्रकार औषधियों के द्वारा होता हैं। क्योंकि

हमें उसी प्रकार के भाव हमें उसका शोधन करना होता हैं परन्तु इसके गृहणां हमें इसका अनुष्ठान प्रायः बहुत पुरातन काल में किया करते हैं। परन्तु आज तो इतना समय हमे इतना अनुष्ठान, सब क्रियाएं समाप्त हो गईं।

याग से वायुमण्डल का शुद्धिकरण

परन्तु देखो, इसके गर्भ में, हम तुम्हें यह उच्चारण अवश्य कर सकते हैं, पुत्र क्या यह जो वाजपेयी याग है, यह हमारे यहाँ मानो देखो, नाना प्रकार की औषधियों को एकत्रित करके अग्न्याध्यान करते हुए वायुमण्डल को पवित्र बनाया जाता है। वायुमण्डल को महान बनाते हैं और वायुमण्डल जब महान बनता हैं, क्योंकि उसमें उद्गाता, जो उद्गाता गान गाता है, अध्वर्यु उसमें मानो कुछ साकल्य प्रदान करता है। तो उसमें कुछ विशेष वरण की मानो वह आहुति देता है, जिससे वायुमण्डल उसके अनुकूल बन जाए। वायुमण्डल को बनाना, हमारे लिए बहुत अनिवार्य है। कोई भी गृह हो, गृहपति हो, जैसे हमें किसी राष्ट्र पिता को निमन्त्रण करना है, किसी महापुरूष को निमन्त्रण देना हैं, तो उसके अनुकूल वहाँ का वायुमण्डल बनाना होगा, इसी प्रकार, हम जो भी संसार का क्रियाकलाप करना चाहते हैं, उसी प्रकार का वायुमण्डल हमें बनाना होगा, तो उसको हम वाजपेयी यागों में वर्णन करते रहते हैं, उसको वर्णित किया है। परन्तु देखो, विशेष आहुति का अभिप्राय यही होता है, कुछ श्वेत वर्ण की होती है, कुछ कालिमा के वर्ण की होती हैं, कुछ मानो देखो, हरित वर्ण की होती हैं। तो इस प्रकार वर्ण किसे कहते हैं? वर्ण कहते हैं जिसको वरा जाता हैं, एकत्रित करके उसका हम एक दूसरी औषधियों से समन्वय करते हैं, और समन्वय करके उसमें अपने विचार देते हैं, और उन विचारों को दे करके, हम आहुति देते हैं, वह जिस विचार की हमारा साकल्य होगा, वह उसी देवता को प्राप्त हो जाता है। तो ऐसा हमारे यहाँ वर्णन किया गया है परन्तु रहा यह कि सम्भूति ब्रह्मणाम्ब्रहे कृता मानो देखो, हमें सम्भूति पादों का स्वीकार करना होगा।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! मैं यह और जानना चाहता हूँ क्या यह सम्भूति

याग का क्या अभिप्राय है।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! सम्भूति याग उसे कहते हैं जहाँ अपनी सम भावना उसमें हम भरण कर देते हैं और उसके अनुकूल हम अपने वायुमण्डल को बनाते हैं उसको सम्भूति कहते हैं सम्भो कृति सम्भा वस्ते ऐसा वर्णन हमारे यहाँ आता रहा हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह जो वाजपेयी याग हैं, यह राजा कर सकता है या साधारण प्राणी भी कर सकता हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः इसको पुत्र! कोई भी कर सकता हैं किसी भी प्रकार के वायुमण्डल में गति करने वाला हो, वही कर सकता है।

पूज्य महानन्द जीः परन्तु आप ने जो प्राणों का आश्रय प्रगट किया है क्या आत्मा की छाया का नाम प्राण है, क्या परमात्मा की छाया का नाम भी प्राण ही है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ इसमें दो प्रकार के प्राणों का वर्णन आता हैं, एक बाह्य जगत में, एक विशेष जगत में। मानो विशेष जगत में तो यह प्राण, अपान, उदान समान व्यान, नाग, देवदत, कुरु कृकल कहलाते हैं। परन्तु देखो, बाह्य जगत में भी मानो देखो, परमात्मा की छाया बन करके, प्राणों के उसी प्रकार के स्वरूप बन जाते हैं और स्वरूप बन करके मानो वही प्रणव बन करके और प्रणव बन करके वह आत्मा के साथ में तो छाया प्राण की रहती हैं परन्तु ऐसे ही बाह्य जगत में जो सूत्रों में, जो लोकों में पिरोई हुई है, आकाश गंगा में पिरोया हुआ, जो प्राण स्वरूप हैं, प्राणेश्वर स्वरूप कहते हैं, तो उसको हमारे यहाँ परमपिता परमात्मा की छाया कहा जाता हैं, उसको प्राणेश्वर कहते हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! इस प्राण से इसका कोई समन्वय नही होता।

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ होता है, इस प्राण का, उस प्राण का दोनों का समन्वय होता हैं। परन्तु दोनो, एक दूसरे के स्वभाव को मानो वह अपने में नही परणित कर पाते, इसीलिए हमारे यहाँ, जब इस विशेष प्राण का समन्वय देखो, जब सामान्य प्राण से होता हैं तो उसको आचार्यों ने मुक्ति माना तो उसको मुक्ति कहते हैं।

क्योंकि उसके पश्चात हम उसका वर्णन भी नही कर पाते।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! मुक्ति इसी को कहते हैं प्राणों का समन्वय होने का नाम

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ ऐसा ही कहते हैं। क्योंकि प्राण के साथ में आत्मा रहता है, और जब इन प्राणों का समन्वय होता है, क्योंकि छाया है, छाया से छाया का समन्वय, चेतना का चेतना से समन्वय हो जाता है। और उस आनन्द को ग्रहण करता रहता है परन्तु ऐसा हमारे यहाँ दर्शनकार कहते हैं आचार्य जन भी कहते हैं।

पूज्य महानन्द जीः परन्तु इन प्राणों का और वाजपेयी याग से क्या सम्बन्ध है?

पूज्यपाद गुरुदेवः वाजपेयी यागों से यह सम्बन्ध हैं क्योंकि यह वाजपेयी याग जो याग है यह साकल्य मूर्ध्वा कहलाता हैं यह साकल्य मूर्ध्वा कहलाता है यदि प्राण शक्ति नही होगी तो मानो साकल्य का निर्माण नही हो सकता, और साकल्य का निर्माण जब तक नही होगा, हम उस वायुमण्डल को अपने अनुकूल, प्राणों के अनुकूल नही बना सकते तो इसीलिए उनका सम्बन्ध इतना ही रहता हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या यह वाजपेयी यागों से हम दूसरों को अपने लिए आकर्षित भी कर सकते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्योंकि जितने भी पुत्र! याग होते हैं उन सबमें आकर्षण शक्ति तो प्रायः होती हैं, उनमें अन्तरण पिरोई रहती हैं उसमें एक मानो आकर्षण शक्ति से उसमें एक दूसरे का समन्वय रहता हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या प्रभु! यह भी हम स्वीकार कर सकते हैं क्या यह जो भौतिक और आध्यात्मिकवाद है इसका दोनों का समन्वय भी वाजपेयी यागों से होता हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ, ऐसा भी कहीं कहीं होता है हम करते रहते हैं क्योंकि याग का अभिप्राय मूल में याग हैं, यज्ञ है, और उसकी जो मानो पुष्पांजलि आगे चलती रहती हैं विस्तार में रहती हैं, और विस्तार ही मानो देखो, याग कहलाता हैं। जैसा

हमारे यहाँ किसी भी याग में, हिंसा का प्रश्न नही आता, क्योंकि हिंसा याग में होती ही नही, क्योंकि याग का अभिप्राय है मानव मुक्ति, अति मुक्ति चाहता है। एक मुक्ति होती है, एक अति मुक्ति होती हैं वह दोनों को चाहता है, और जहाँ मुक्ति की वार्ता आती हैं, वहाँ मानो देखो, जहाँ भी मानो देखो, मुक्त की आभा आई, वहाँ हिंसा नही होनी चाहिए।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह जो मानव हिंसा कर रहा हैं क्या हिंसक विचार, इस वायुमण्डल में गति नही करते हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ करते हैं।

पूज्य महानन्द जीः क्या वह तरंगें भी गति कर रही हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः तरंगें भी वायु अस्तों में रहती हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह भी हम स्वीकार कर लें कि इसमें हिंसक तरंगें भी ओत प्रोत रहती है और अहिंसा तरंग भी रहती हैं। तो क्या जब अहिंसा तरंग और हिंसा तरंग का मिलान होता है, तो इनमें बलवती कौनसी होती हैं?

हिंसक और अहिंसा परमाणु

पूज्यपाद गुरुदेवः पुत्र! यह तो वायुमण्डल के ऊपर मानो इसका सम्बन्ध विचारानकृत रहता है जैसे हम यह माने कि वायुमण्डल में दोनों प्रकार के परमाणु विद्यमान हैं, हिंसक भी है, और अहिंसा वाले भी हैं परन्तु अहिंसा वाले जो परमाणु हैं वह विशेष बलवती होते हैं और बलवती क्यों होते हैं? क्योंकि उनमें अहिंसा लगी हुई हैं, वह परमात्मा से आच्छादित रहते हैं। और वह जो हिंसक है, प्रकृति से आच्छादित रहते हैं। तो प्रकृतिवाद का जितना भी वाद है वह अहिंसा परमोधर्म से, वह मृतक बनता रहता है परन्तु उसकी विकृतियां बनती रहती हैं जैसे मानो देखो, अशुद्धियों को, अशुद्धियां मानव के जीवन में हैं और वह अच्छाईयों को ला करके, अशुद्धियां, वह अच्छाईयां निगल लेती हैं। परन्तु कहीं कहीं अशुद्धियां मानो देखो, विशेष गुणों को भी निगल जाती हैं परन्तु वह निगली नही जाती, वह उसका, सु उसके साथ रहता है वह गुण उसके साथ रहता हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या प्रभु! यह हम ऐसा ही स्वीकार करें।

पूज्यपाद गुरुदेवः यह जो इच्छा है कि जिस प्रकार का सिद्धान्त है, उस सिद्धान्त के अनुकूल हमें स्वीकार कर लेना चाहिए।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! आज का जो मानव हैं, आज का जो वर्तमान का जो मानव है, जैसे हमारी आकाशवाणी मानो मृत मण्डल में जा रही हैं, हिंसा में लगा हुआ हैं। जैसे एक मानव आधुनिक काल में, धुम्रपान की जो तरंगें हैं, वह बलवती बन रही है एक वाक्, द्वितीय वाक यह है कि हिंसा को देखो, बलवती दे रहा हैं। परन्तु जैसे हिंसक वायुमण्डल बन रहा हैं, आधुनिक काल में यह भी हिंसा हैं, क्या इस पृथ्वी के गर्भ से मानो जल को सिंचा जा रहा है, और वह जल इतना शक्तिशाली है, जो पृथ्वी को मानो देखो, वह विष को निगलता रहता है, और देखो, अमृत को आभा में परणित करता रहता हैं। तो विष को निगल रहा है, वह मानो देखो, वाहनों के द्वारा, जैसे वायुमण्डल में वाहन गति कर रहे हैं। उनके द्वारा, तो यह सब हिंसा कहलाती है। मेरे विचार में हमारे विचार में जब यह हिंसा कहलाती है तो हिंसा तो बलवती हो रही हैं और अहिंसा आपकी मानो देखो, निगली जा रही हैं। मैं यह स्वीकार कर रहा हूँ। आधुनिक जो जगत हैं, वह मानो देखो, हिंसा में लगा हुआ है, हिंसा में लगा हुआ है राष्ट्र में क्या नाना सम्प्रदाय मानो देखो, जैसे नाना रूढ़ियाँ हैं, उनमें भी हिंसा का वर्णन आता हैं। जैसे यवन प्रमाणं मोहम्मद के मानने वाले हैं, ईसा के मानने वाले हैं, बुद्ध के मानने वाले प्रवर्तक है, और भी बहुतसी सम्प्रदाए इस प्रकार की है जो मानव को हिंसा में प्रेरित कर रही हैं, और हिंसा में ला रही है। तो आधुनिक, जो आपका जो वाजपेयी याग का जो वर्णन हैं यह आधुनिक काल में क्या करेगा, मेरा यह प्रश्न है? परन्तु द्वितीय यह है कि जब राष्ट्रवाद मानो देखो, याग जैसे कर्म को पाखण्ड कह रहा है और गऊ के इत्यादि मांसो को ले करके, वह द्वितीय राष्ट्रों में उसका आदान प्रदान हो रहा हैं, तो क्या भगवन! ऐसे काल में इन यागां ब्रह्मे देवाः अशुद्धं ब्रव्हे अस्ता।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! यह तो ऐसे वार्ता है जैसे धूर्तों के वाक होते हैं। मुझे तो यह वाक धूर्तों के प्रतीत होते हैं। क्योंकि राष्ट्र और यह वाजपेयी यागों का जो सम्बन्ध है, वह यह सम्बन्ध नही हैं। परन्तु यह वाक जैसा मांसों का वाक्, हिंसा के परमाणुओं की चर्चा आती हैं तो हम हिंसा उसे कहते हैं, जिस हिंसा के वायुमण्डल में परमाणुओं को जब विभाजन किया जाता है, उससे यह जो अणुवाद हैं, और अणुवाद में जो एक प्रकार की विकृत आभाएं उत्पन्न होती हैं, जिससे परमाणु, अणु, महाअणु त्रेसेणु मानो देखो, जिससे इसका विकास होता रहता हैं, इसका विकास हुआ और मानव में उसी प्रकार के परमाणुओं को एकत्रित करके एक अणु शक्ति उत्पन्न कर दी। अणु शक्ति के यन्त्र का निर्माण किया। परन्तु रहा यह कि पृथ्वी के गर्भ से, यह हमारे यहाँ समय समय पर, प्रत्येक काल में मानो विज्ञान की धाराएं, भिन्न भिन्न रही हैं। जैसे वाजपेयी यागवेत्ता ने वर्णन किया है, जैसे त्रिकोण होता हैं, और त्रिकोण इसी प्रकार का, त्रिकोण परमाणु होता हैं। जितने भी तुम परमाणु स्वीकार करोगे उतने ही परमाणुओं का त्रिमुख कहलाता हैं। वह त्रिमुख क्योंकि तीन ही परमाणु होते हैं, जैसे पृथ्वी हैं, जल है, और अग्नि हैं इनके ही परमाणु यह तीन मुखी कहलाता हैं। परन्तु तीन मुखी परमाणु का जब विभाजन वैज्ञानिक करता है, तो उसमें जो भी शक्ति उपार्जन होती हैं, वह जैसे अग्नि परमाणु विशेषकर रहता है, जल परमाणु विशेषकर रहता है, और पार्थिव और इसी प्रकार के मानो गुरुत्व और मानो शीतांगकृति वरुणास्त्र जिसे कहते हैं, और देखो, ब्रह्म अग्नये अस्त्र जिसे कहते हैं, तो यह तीन प्रकार की धाराओं का जन्म एक ही तीन मुखी में उत्पन्न हो जाता हैं। परन्तु रहा यह कि पुरातन काल जिस काल में यह वाजपेयी याग अग्निष्टोम याग का वर्णन आता रहा है, अब यह तुम्हारी वाक यहाँ घटित हो जाती हैं, क्या उस काल में वैज्ञानिक ऐसे थे, क्योंकि वह याग कर्म करते थे, वह औषधियों के द्वारा विचारते थे, उन परमाणुओं का ऊर्ध्वा मुख होता और ऊर्ध्वा मुख हो करके उन परमाणुओं में से उनका समन्वय सूर्य से रहता था। याग के जितने भी परमाणु है, मानो देखो, यज्ञमान जितनी शुभ कामना करता है, उतने

ही परमाणुओं का ऊर्ध्वा मुख हो करके सूर्य की किरणों के साथ होता हैं, और उस काल में जो वैज्ञानिक याग के द्वारा जो परमाणु उद्बुद्ध करते रहे हैं। वह सूर्य से ले करके करते रहे हैं, क्योंकि सूर्य से एक यन्त्र बनाया, उन्होंने त्रिवाण केतु यन्त्र बनाया, और यन्त्र का निर्माण किया तो मानो वह सूर्य की किरण वह यन्त्र अपने में ग्रहण करता रहा, सूर्य की किरणों को ले करके, ताप को ले करके, उसकी आभा को ले करके, उन्होंने भी मानो इस प्रकार के अग्नि के भण्डार को उत्पन्न कर लिया है, कि वायुमण्डल में मानो देखो, उस अग्नि के परमाणुओं से उस महान सूर्य से जो विद्युत ली गई थी, उस विद्युत से वह वाहन गति करते रहते थे। चाहे वह पृथ्वी पर गति करने वाला हो, चाहे वह वायुमण्डल में गति करने वाला हो, तुम्हें प्रतीत होगा, कि जिस समय भारद्वाज मुनि ने एक यन्त्र का निर्माण किया था, तो वह यन्त्र उन्होंने वाजपेयी याग किया उन्होंने और वाजपेयी याग करते करते कुछ परमाणु लिए और सूर्य की किरणों से ले करके, मानो देखो, उन्होंने यन्त्र बनाया। जिस यन्त्र का आयु लगभग दो सौ चौरासी वर्ष का आयु था, और उसमें सूर्य की किरणों से जो विद्युत ली, उस विद्युत को ले करके, मानो उसमें भरण कर दी और भरण करने के पश्चात वह मानो देखो, यन्त्र अन्तरिक्ष में गति करता रहा वह चन्द्रमा की परिक्रमा और मङ्गल की परिक्रमा करता रहा। इसी प्रकार एक एक लाख वर्षों के आयु वाले यन्त्र को, ऋषि मुनियों ने जाना। परन्तु सूर्य की किरणों से वह तेजोमयी ले करके परन्तु देखो, उसमें आभ्रत कहलाता हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! सूर्य की किरणों में त्रिमुख नही होता।

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ, सूर्य की किरणों में त्रिमुख होता हैं। उसमें गुरुत्व भी होता है और देखो, उसमें शिवांगड़ी भी होता हैं और उसी के साथ में, तेजोमयी और अग्निवाद भी होता हैं। क्योंकि इन्हीं परमाणुओं से विद्युत धाराएं, धाराओं का जन्म होता है। तो इसीलिए हमारे यहाँ जितना याग कर्म है, वह बहुत अनिवार्य है, रहा यह वाक हम हिंसा के प्रश्न पर आते हैं। हिंसा जैसे राष्ट्र में मानो जैसे तुम आदान प्रदान की चर्चा कर रहे हो, परन्तु देखो, यह कोई विशेषता नही यह राजा के मूल

में नही होता राजा को अपने राष्ट्र के पशुओं को नष्ट करके, और वह आदान प्रदान मानो वह द्वितीय राष्ट्रों से करता है, तो यह राजा की हिंसा कहलाती है। इसमें मैं विशेषता नही दे रहा हूँ, विचारों, बहुत मानो इसके ऊपर अनुसन्धान करो, क्या एक राजा है उस राजा को तो रक्षा करनी हैं, वह राजा इसीलिए चुनौती वाला बना हैं, क्योंकि वह रक्षा ही करता रहे। जैसे एक गृह में माता पिता है, वह सर्वत्र बाल्यों की रक्षा करना है। परन्तु रक्षा में उन्हें योग्यता में ले जाना है, सुन्दर अनुशासन देना है, वह मानो देखो, अग्नेय गृहपथ्य याग कहलाता हैं। यदि माता पिता, अपने पुत्र को अनुशासन दे नही सकते तो वह कोई माता पिता नही कहलाते। उन माता पिता हीनता को प्राप्त होते रहते हैं। आगे चल करके वही बाल्य, यदि अनुशासन नही देंगें, तो माता पिता के हृदय में, एक अग्नि की दाह मानो क्रोध की क्रीड़ा और मानो द्वेष की दाह, ममता की दाह, उत्पन्न हो करके वह मानो देखो, अशुद्ध संस्कारों का जन्म उत्पन्न होता रहता है। जन्म होता रहता है। तो इसीलिए हमारे आचार्यों ने वैदिक साहित्य में यही कहा है, कि माता पिता अपने पुत्रों! को, पुत्रियों को सुयोग्य बनाएं और अनुशासन में उन्हें धारण करके मानो देखो, उसमें एक सुन्दर याग की उत्पति हो जाएं। वह गृहपथ्य याग कहलाता हैं। जो हम गृह, अश्विनी याग कहते हैं, परन्तु देखो, मैं गृहों की चर्चा, यागों का चर्चाएं, मैं पुत्र इसीलिए कर रहा हूँ, क्योंकि इसे इसी प्रकार राष्ट्र में यदि देखो, अपने राष्ट्र में पशु से ले करके, मानव तक की रक्षा नही कर सकता, तो वह कोई राजा नही कहलाता। वह केवल प्रजा के वैभव को संग्रह करने वाला होता हैं। और प्रजा के वैभव को संग्रह करके, अनुसन्धान की दृष्टि उसके राष्ट्र में सूक्ष्म बन गई। जिससे वह दूसरे राष्ट्रों के लिए वह मानो देखो, आदानप्रदान कर रहा हैं। तो यह कोई प्रियता नही हैं, परन्तु देखो, विचार केवल यह है, कि हम अपने में अपनेत्व को प्राप्त होते रहें।

शुद्ध चिन्तन की अनिवार्यता

तो विचार विनिमय क्या पुत्र! यह तो तुमने जान लिया होगा, रहा यह कि हम

मानो देखो, हिंसा कर रहे हैं, भक्षण कर रहे हैं अशुद्ध पदार्थों का, यह वास्तव में करना नही चाहिए। क्योंकि मानव एक ऐसी जातीयता प्रभु ने उत्पन्न की हैं, जो विचारता है, मानो चिन्तन करता है, मनन करता हैं, और अशुद्ध आहार करने से अशुद्ध तरंगों का जन्म होता हैं। शुद्ध आहार करने से, शुद्ध तरंगों का जन्म होता है इतनी उसके हृदय में मन की धाराएं अशुद्धियों से उत्पन्न हो जाती हैं, क्या मन की धारा को प्रकृति को जानना, उसके लिए असम्भव हो जाता है, और जब वह साधारण अन्नाद को पान करता हैं, मानो प्रभु का चिन्तन करके, उसे पान करता है, तो मन उतना ही ऐसे वह व्यापकवाद की चर्चाएं व्यापकवाद में वह चिन्तनीय बन जाता हैं। वह मानव का जीवन कहलाता हैं।

रढियों की अधिकता से रक्तभरी क्रान्ति

तो इसीलिए आचार्य जनों ने यह कहा है कि संसार को ऊँचा बनाना है, अपने मानवीयत्व को ऊँचा बनाना हैं, तो वायुमण्डल में मानो देखो, अशुद्धियों को नष्ट करने के लिए, शुभ कर्म करना हैं, वायुमण्डल को महान बनाना है। जैसे किसी के गृह में जैसे याज्ञिक पुरूष के हृदय में कामवासना का जन्म हो गया है, कामातुर बन गया हैं, तो उसे क्या करना चाहिए? तो वह जो आत्मा की छाया प्राण हैं, उस प्राण के ऊपर वह चिन्तन करने लगे, मानो मन की आभा को त्याग देना चाहिए, तो कुछ ही काल में, वह वासना के रहित हो जाता हैं, कुछ काल में कामना से रहित हो करके, वह यौगिकवाद में मानो देखो, वह परिवर्तित हो जाता है। तो इसीलिए मेरे पुत्र! तुमने जान लिया तुम देखो, यह जो प्रश्न और नाना प्रकार के जहां तक सम्प्रदाय है, जहाँ नाना प्रकार की रूढ़ियाँ हैं, ये सब राष्ट्र की सूक्ष्मता रहती हैं, यह बुद्धिमानो की, क्योंकि राजा को इसीलिए आचार्यों जनों ने कहा है, कि ब्रह्मवेत्ता हो राजा ब्रह्म जिज्ञासु हो, जिससे वह दर्शन शास्त्र को, दर्शनों की भाषा को, अपने राष्ट्र में ला सके, और नाना प्रकार की रूढ़ियों का वह विनाश कर सके। रूढ़ियों का विनाश करना, राजा के लिए बुद्धिमता से बहुत अनिवार्य है। अन्यथा उसका परिणाम यह होता हैं, क्या जब रूढ़ियाँ विशेष बन जाती हैं, तो

वहाँ रक्तमयी क्रान्ति का संदेश बना रहता हैं। नाना प्रकार की रूढ़ियों से ज्ञान का लुप्त हो जाता हैं, और अज्ञान की बलवती हो जाती है। उस अज्ञान से समाज अन्धकार में चला जाता है, और देखो, यहाँ जैसे समाज यहाँ वैदिक साहित्य में यागों का वर्णन हैं, यौगिक वर्णन हैं, मानो देखो, जैसे प्रभु की आभा उससे वंचित्त हो जाता हैं। तो यह राजा का कार्य है, पुत्र! परन्तु माता पिता का राष्ट्र का प्रत्येक मानव को अपने अपने में याग कर्म करना चाहिए। यह सब याग कहलाता है, यह सब आभा कहलाती है, मानो देखो, वायुमण्डल को शोधन करना है, जिस काल में हिंसा के परमाणु वायुमण्डल में भरण कर जाते हैं, उसी काल में हिंसक विज्ञान पनपा करता हैं। वह जब हिंसक विज्ञान पनपने लगता हैं, क्योंकि विज्ञान में भी हिंसक विज्ञान होता है, वह हिंसक विज्ञान कौनसा हैं? क्योंकि हिंसक यन्त्रों का निर्माण करना उससे एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को विजय करना चाहता हैं, तो हिंसक यन्त्रों का निर्माण हो गया परन्तु अहिंसा यन्त्रों का कौनसा निर्माण है, मानो जैसे हमारे यहाँ एक यज्ञशाला है, और यज्ञशाला में हम देखो, उससे हम यन्त्रों का निर्माण करते हैं। जैसे पितर लोक को जाना हैं। हमें पितर यान बनाना हैं, पितर यान कैसे बनता है? मानो जैसे हम मानो देखो, चित्रावली को दृष्टिपात करते हैं, वह चित्रावली जैसे उसका निर्माण हुआ, जैसे हमारे एक एक शब्द से मानो यन्त्रों का निर्माण हो जाता है। एक एक शब्द से विज्ञान का निर्माण विज्ञान की धाराओं का जन्म होता हैं, जैसे हमारे यहाँ एक ने कहा पिता, पिता कहते ही मानो देखो, उन्हीं परमाणुओं वह अन्तरिक्ष में मानो वह उनको अपने में लाने का प्रयास करता हैं। मानो वह परमाणु यन्त्र में आ गएं, और उन्होंने उस प्रकार का यन्त्र का निर्माण किया जिससे हम पिता परपिता द्वितीय पिता चतुर्थ पिता मानो देखो, पितरों को दृष्टिपात करने से हम यन्त्रों का निर्माण कर लेते हैं, परन्तु उन यन्त्रों में हिंसा नही हैं, उनमें केवल चित्र है, अब उन यन्त्रों में हम पितरों के दर्शन करें प्रिय है। अब हिंसा यहाँ से पुनः प्रारम्भ होती हैं। यदि उन्हीं चित्रों में हम अश्लील मानो देखो, पुत्रियों के दृश्यों को पुत्रियों के चित्रों को दृष्टिपात करते है, और पुत्री पुत्रों! के

दृष्टिपात अश्लील आ रहे हैं, नग्न आ रहे हैं, तो उससे वह हिंसा हो गई, वह मानसिक हिंसा कहलाती हैं। उससे हिंसा क्या बनती हैं? कि मानव उन चित्रावलियों को दृष्टिपात करके मानो देखो, उसके हृदय में कामवासना का जन्म हो जाता हैं, और अपने शरीर से वासना उत्पन्न हुई, तो वह एक विशेष हिंसा कहलाती हैं। मानो देखो, कहीं मानो हम गृह आश्रम में पति पत्नी आए हैं, हमें सन्तान को जन्म देना हैं, हमें पितर याग करना हैं, परन्तु पितर याग के स्थान में वासना के क्षेत्र में चले जाते हैं, तो वह भी एक हिंसा है, क्योंकि उस हिंसा में उस हिंसा के करने से आलस्य और प्रमाद की उत्पति हो जाती हैं। आलस्य और प्रमाद जो है, यह कर्तव्यवाद की भावना नही लाने देता। इसीलिए यह विचार आता रहता है कि वह हमें हिंसा नही करनी चाहिए, तो इसीलिए ज्ञान तो बहुत कुछ होता है। बेटा! परन्तु मैं इतना आज्ञा समय तो नही दे रहा है, परन्तु विचार क्या है कि वह हमें वासना के चित्र हमारे समीप नही होने चाहिए तो उसी यन्त्र में हिंसा है, उसी में अहिंसा है, परन्तु हम पितरों का दर्शन कर रहे हैं, लोक लोकान्तरों का दिग्दर्शन कर रहे हैं, यन्त्रों के द्वारा मानो उसमें हम अणु को दृष्टिपात कर रहे हैं। परमाणु को दृष्टिपात कर रहे हैं। गृह में प्रकाश हो रहा है, विद्युत का प्रकाश हो रहा हैं। मानो देखो, उस विद्युत को जो काष्ठ में रहती हैं, मानव में रहती है, अणु को देखो, गति कराती रहती है, जैसे हमारे यहाँ यह आता है, कि याग को एक समय मानो देखो, काला हिरण आया और वह याग को ले गया यहाँ से वह याग को ले गया, तो इसका अभिप्राय यह है कि जो याग में से जो धाराओं का जन्म होता हैं, वह मानो कौन ले गया हिरण्यं ब्रह्मे मानो देखो, विद्युत की धाराओं पर जो कालिमा की जो विद्युत है। उसके ऊपर याग का कर्म मानो देखो, विराजमान हो करके वायुमण्डल में प्रसारित हो गया है, वह विद्युत में जैसे यज्ञाग्नि में विद्युत होती हैं, वास्तव में विद्युत है, मानो देखो, लोक लोकान्तरों में जो किसी भी प्रकार का प्रकाश है, वह भी विद्युत है, सूर्य में प्रकाश है, वह भी विद्युत हैं, परन्तु देखो, जो ऐसी तरंगों में ओत प्रोत होने वाला वह भी विद्युत है, तो इस विद्युत को ले करके मानो देखो,

हम इन्हीं के द्वारा गति करते रहते हैं। यह विद्युत कहलाती है, आभा में कहलाती है, इसको हम ले करके यन्त्रों का निर्माण करते हैं। तो उसी प्रकार की गतियां उसमें प्रादुर्भाव हो जाता हैं। वह हिरण्यं ब्रह्मे कृतां स्वस्ता वह याग को ले करके मानो देखो, अन्तरिक्ष में भरण कर देता हैं, इसीलिए वह विद्युत को यहाँ काला हिरण्यं कहते हैं। परन्तु इसको हिरण्यं कहते हैं, और वह उसको ले करके और वहाँ अन्तरिक्ष में ले करके चला जाता हैं।

तो विचार विनिमय क्या हमारे यहाँ जितना भी कर्म है, वह याग है उसको हिरण ले जाएं परन्तु सूर्य की किरण ले जाएं, उसको आभा में गति कराने का अभिप्राय है विचार विनिमय क्या मैं विशेष और गम्भीर क्षेत्रों में जाना नही चाहता हूँ, विचार केवल हमारा यह है कि हम अपने में इतने महान विचित्र बनते चले जाएं, परन्तु देखो, हिंसा में हिंसा है, अहिंसा वाले जो परमाणु है। वह हिंसा को निगल जाते हैं, वह हिंसा को निगल जाते हैं, परन्तु यह कहीं अपवाद का वाक रह जाता हैं, तो विचार विनिमय क्या राष्ट्र का कर्तव्य भिन्न हैं। इसीलिए हमारे यहाँ विवेकी बुद्धिमानो की आवश्यकता हैं, वह राजा को जा करके संकेत दे सकें, संकेत दे कि है राजन! यह कर्म तेरा अशोभनीय हैं, यह कर्म नही होना चाहिए। शोभनीय कर्म होना जिससे राष्ट्र और प्रजा दोनों सुखद हो जाएं।

शब्द से हिंसा

तो यह विचार कैसे हुए बेटा! मैं तुम्हारे प्रश्नो का उत्तर केवल इतना ही दे रहा हूँ, कि जो माता पिता हैं, राजा है, उनका केवल कर्तव्य यही है। पितर बनने के पश्चात वह रक्षा करता हैं, राजा बनने के पश्चात रक्षा कर रहा हैं, याज्ञिक बनने के पश्चात रक्षा कर रहा हैं, जो रक्षा का अभिप्राय केवल क्या हमें उसकी उपयोगिता को विचारना हैं। क्रियाकलाप उसी प्रकार का बनाना हैं, परन्तु देखो, हिंसा नही होनी चाहिए, यह मैं अवश्य उच्चारण करता हूँ। क्या जो मानव याग कर्म करना चाहता है, उसको मानो देखो, अपने जीवन में हिंसा नही करनी चाहिए। हिंसा की बहुत व्यापक व्याख्या है, यदि हम शब्द भी मानो कटु उच्चारण करते हैं, तो वह भी हमारे

हृदय से द्वेष की भावना में हिंसा विद्यमान रहती हैं। वह हिंसा नही होनी चाहिए, हमारे यहाँ अनुष्ठान नाना प्रकार के यागों की आवश्यकता उस काल में बनती है, जबकि हमें अनुष्ठान करना है, हमें अपने जीवन में परमाणुओं की ऊर्ध्वा गति बनाना है। जिससे हमें आयुर्वेद प्राप्त होगा विज्ञान प्राप्त होगा हम नाना प्रकार की चिकित्सा को अपने में परणित कर सकते हैं। मैंने बहुत पुरातन काल में बेटा! तुम्हें वर्णन करते हुए कहा था क्या हमारे आचार्यों ने मानो औषधियों को एकत्रित करके वृष्टि याग किए हैं, और उन्हीं औषधियों के द्वारा मानो पान करके मानो देखो, वह यौगिकता को प्राप्त होते रहे हैं। इसी प्रकार मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट नही करूंगा यह तो विचारों का वन है, मैं वनों में जाना नही चाहता हूँ, परन्तु तुम्हारा जो विचार है वह हिंसक तरंगें नही होनी चाहिए, हिंसक तरंगें मानो नष्ट होनी चाहिए। जिसका वाजपेयी यागों से सम्बन्ध हैं, क्या हम अपनी वाणी से कर्म वचन से हम हिंसा न करें। हम सुन्दर देखो, आहुति दे करके हम मानो जिस काल में वाजपेयी याग होते रहें है, अग्निष्टोम याग होते रहे हैं, और हमारे देखो, पूर्णेष्टि याग होते रहे हैं, उस काल में विज्ञान की दशा मानो सूर्य की किरणों से हम विज्ञान को उत्पन्न करते थे, आधुनिक जगत जैसा तुम उच्चारण कर रहे हो, मानो पृथ्वी से मानो हम तत्त्वों को ले रहे हैं, मानो देखो, खनिज को ले करके विज्ञान को उत्पन्न कर रहे हैं, खनिज तो होना ही चाहिए। परन्तु रहा यह है कि जल को हम निकास रहे हैं, और उसमें से वाहनों को गति दे रहे हैं, उस जल से परन्तु देखो, उस काल में जब वाजपेयी याग अग्निष्टोम याग होते रहें हैं। मानो उनका मानवीय जीवन से सम्बन्ध और परमाणुवाद से सम्बन्ध से होता हुआ मानो विद्युत से समन्वय होता हुआ उन किरणों को मानो लिया जाता था। वह उनका भरण करके वह उनका वायुमण्डल में गति करते रहे हैं, यह चर्चाएं मुनिवरों! देखो, विशेषकर है, मैं आगे समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज के विचार उच्चारण करने का अभिप्राय क्या महानन्द जी ने कुछ प्रश्न किए हैं, परन्तु सम्प्रदायों का दायित्व राजा के ऊपर होता हैं। परन्तु देखो, हिंसा का प्रसंग भी यह

राजा का है। इससे भी इससे मानो आभा में प्राप्त होने वाला है। राजा को यह विचारना चाहिए और यह राजा उस काल में हिंसक बनता है जबकि बुद्धिमान विवेकी पुरूषों की हिंसा हो जाती हैं विवेकी पुरूष नही रहते और वह विवेकी रह जाता है वह मानो अङ्कुर मात्र रहता है उसकी वार्ता को वह स्वीकार नही कर रहा हैं उसमें स्वार्थ प्रमाद और विज्ञान का दुरूपयोग और विज्ञान की धाराओं का दुरूपयोग होना ही यह राष्ट्र के लिए विनाशदायक होता हैं तो इसीलिए आज का वाक अब मैं समाप्त कर रहा हूँ क्योंक उसी विज्ञान को हम त्रैतवाद न ले करके एक अहिंसामयी मार्ग स्वीकार करते हैं यह चर्चा मैं पुनः चर्चा प्रगट करूंगा आज का वाक अब यह समाप्त होने वाला हैं समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएं तुम्हें कल प्रगट करूंगा ओ३म् गाताहम् मनु गतं आभ्यां सर्वं मधु मां गता वाचन्नमाः रयीष्णां ब्रह्माः आ पाहाम्। ओ३म् ब्रह्म वर्चोसि मंगलं व्रत्यं देवाः।

11.820806-औषधि विज्ञान एवं शब्द शक्ति

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। मानो वे परमपिता परमात्मा प्रतिभाषित कहलाए गएं हैं। मानो इस ब्रह्माण्ड के, एक एक, कण कण में मानो वह चैतन्य देव दृष्टिपात आ रहा है, क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र, उस ब्रह्म की गाथा गा रहा हैं, जैसे मानो यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है, जिस प्रकार माता का पुत्र माता की गाथा गा रहा है, बेटा! माता को सिद्ध कर रहा है, मानो यही माता की गाथा कहलाती है, ममत्वां देवाः वह ममत्व को अपने में धारण कर रही है। बेटा! जैसे ब्रह्माण्ड की गाथा गाने वाली, यह पृथ्वी है। यह गाती ही रहती हैं। मानो ब्रह्म की गाथा गा रही है। ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। मेरे प्यारे! इस पृथ्वी के गर्भ में कोई वस्तु ऐसी नही है, जिसमें कोई न कोई वैज्ञानिक तथ्य न हो। वैज्ञानिक तथ्य हमें दृष्टिपात आते रहते हैं। मानो यह जो ब्रह्माण्ड की गाथा गाने वाली यह पृथ्वी है, यह पृथ्वी गान गाती रहती है, और इसके गर्भस्थल में, जो भी क्रियाकलाप हो रहा है मानो उस क्रियाकलाप को दृष्टिपात करने वाला, मानो अपने में यह स्वीकार कर रहा है। ब्रह्मण्डं ब्रह्मे कृत लोकाः क्या यह ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है, इसमें नाना प्रकार का खाद्य और खनिज है, मानो यह ब्रह्माण्ड में ओत प्रोत हो रही है। इस ब्रह्माण्ड के मूल में मानो एक आभा नियुक्त हो रही है। यह संसार एक प्रकार का, क्रीड़ा कर रहा हैं। परन्तु इस पृथ्वी के गर्भ में ब्रह्माण्ड विद्यमान है, इसीलिए उसका यह पृथ्वी उद्घोष कर रही हैं। अथवा गान गा रही हैं। इसी प्रकार प्रत्येक वेदमन्त्र उस ब्रह्म की गाथा गा रहा है, ब्रह्म का वर्णन कर रहा है। तो यह एक एक वेदमन्त्र के चिन्तन करने से, हमें यह प्रतीत होता है, क्या मानो यह जैसे ब्रह्मण्डं ब्रह्मा कृत लोकाः वेद का मन्त्र ही तो ब्रह्म की

गाथा गा रहा है। और ब्रह्म की गाथा कैसे गा रहा हैं? वह वह कहाँ गाने के रूप में अपने को परणित कर रहा हैं। गान गाया जा रहा हैं, गान को श्रवण करने वाला प्राणी है, उद्घोष हो रहा है, उद्घोष अपने में वह उद्घोष नही रहता।
विचार क्या है पुत्रों! कि प्रत्येक वेदमन्त्र के जब गर्भ में पंहुचोगें तो उसके गर्भ में ब्रह्माण्ड ही दृष्टिपात आयेगा वह गान गा रहा हैं, विशुद्ध रूपों से गान गा रहा है, निमटारा अपने में कर नही पा रहा है। तो मेरे पुत्रों! प्रत्येक वस्तु गान गा रही हैं। गृह अपनी आभा में गति कर रहा है। आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चाएं तुम्हें प्रगट करना नही चाहता हूँ। तो आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा हैं, मानो आज का हमारा वेदमन्त्र हमें कहीं, ऊर्ध्वा मार्ग पर ले जा रहा हैं, गायत्राणी छन्दों का पठन पाठन हो रहा है, हृदय प्रफुल्लित हो रहा है समाज में एक महान क्रान्ति का एक संदेह बन रहा है। वह किसी भी रूप में हो, आध्यात्मिक रूप के आधार में हो, परन्तु उनमें भी नाना प्रकार के भेदन माने गएं हैं। जब मैं उन भेदनों की चर्चाएं करने लगता हूँ, तो ऐसा अनुभव होता हैं क्या यह संसार में अपने आभायित हो रहा है, अपने में अभ्यस्त हो रहा है, जिससे बेटा! संसार का ज्ञान, उसका विवेक, हमारे में परणित हो जाएं। तो मेरे पुत्रों! विचार विनिमय क्या है, क्या हम अपनी आभा में गति करते चले जाएं। वाचन्नमे क्रणो अस्वतां यह वाचन्नमः कहलाता है
वेदमन्त्र का प्रभाव
पूज्य महानन्द जीः भगवन! मैं यह जानना चाहता हूँ जैसे हम वेदज्ञ ध्वनि का गान गाते हैं क्या उसका मानवीय जीवन से क्या सम्बन्ध हैं? ज्ञान से क्या सम्बन्ध है?
पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे पुत्र अश्वं ब्रव्हे वर्णास्सुताम् यह वाक तो मैंने कई काल में प्रगट कराया था, परन्तु इसका उत्तर यह बन पाता है, कि वेदमन्त्र का जब हम उच्चारण करते हैं, तो जितना भी वेदमन्त्र हैं यह देव वाणी में कहलाता हैं, मानो इसको देव वाणी कहते हैं, देव वाणी का अभिप्राय यह है, कि क्या, इसे देवता उद्घोष रूप में उद्घोषित करते रहे हैं। रहा यह, कि हमारा वेदमन्त्र से क्या, जीवन का सम्बन्ध हैं? बेटा! मैं तो यह कहा करता हूँ कि संसार में सम्बन्ध ही चेतना से

है। मानो देखो, सम्बन्ध ही एक उग्र रूप को धारण कर लेता है। तो मेरे पुत्रों! विचार विनिमय क्या हैं, आज मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, प्रत्येक वेदमन्त्र का मानव के जीवन से सम्बन्ध है, जिस मन्त्र के आधार पर, हम अपने जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों को उद्घोष करने लगते हैं। जैसे हमने वेदमन्त्र को उच्चारण किया, वाणी में पवित्रता आ जाती हैं। हृदयों में पवित्रता आ जाती है, आत्मा अपने लोक में प्रवेश कर जाता है। तो बेटा! परिणाम क्या है मानो हमारे जीवन का सम्बन्ध प्रत्येक मन्त्र से उसका समन्वय रहता हैं। मानव जो भी उच्चारण कर रहा हैं, गान गाया जा रहा हैं, परन्तु यह केवल आभा में कहलाने वाला एक विज्ञान है, जिस विज्ञान को ले करके हम अपनी मानवीय दशा को महान बनाते हैं। परन्तु प्रत्येक वेदमन्त्र हमारे जीवन का साथी बना हुआ है, उसमें विकृतियां नही होती, परन्तु अपनी आभा में गति करने वाला हैं, जिसको मन्त्र कहते हैं, मन्त्रार्थ कहते हैं। मन्त्र का सम्बन्ध हैं मन से, मन से जो भी मानव कर्म करता हैं, वह महान और पवित्र बन जाता हैं। तो उसी का नाम एक कर्म ध्वनि बन गई। तो हे मेरे पुत्रां ब्रह्मा स्वस्तां ब्रहे मानो यह जो जितना भी क्रियाकलाप हो रहा है, यह सब प्रभु के आङ्गन में, प्रभु की महानता में, ओत प्रोत रहने वाला हैं। परन्तु विचार क्या कह रह है? क्या जब हम वेदमन्त्रों की ध्वनि से, गान गाते हैं तो प्रत्येक नस नाड़ियाँ मानो उद्घोष करने लगती हैं। जब प्रत्येक नसनाडियां मानो एक चित्रावली बन करके रह जाता है। सम्भवितां देवं गतं प्रमाणां ब्रह्मे लोकाः मेरे प्यारे! वह ब्रह्म औषध कहलाती है, जिसको धारण करने के पश्चात, मानव के जीवन में, एक मानवीयता के अङ्कुर उत्पन्न हो जाते हैं। क्योंकि परमपिता परमात्मा ने सीमा में बद्ध करते हुए, अभ्यस्त हो गया है। परन्तु जब यह प्रसंग आते हैं, कि हमारा जो जीवन हैं, उसका आयुर्वेद से सम्बन्ध होता है, आयु में हमें लगाता है, परन्तु ये वेदमन्त्र भी ये कहता है बलं ब्रहे वर्णभेतु मानो बलों को धारण करने वाला, वह मेरा चैतन्य देव कहलाता हैं। सम्भविता रुद्रो लोकाः यंचमा। मेरे प्यारे! प्रत्येक वेदमन्त्र को जो ध्वनि से गान रूप में गाते हैं, तो उदात्त, अनुदात्त में गाते रहते हैं। मेरे प्यारे! समय

इतना नही है, कि जो मैं उन वाक्यों की पुनरूक्ति कर सकूं, विचार क्या है कि हम अपने में इतने महान मन्त्र को ले करके, क्योंकि मन से इसका समन्वय रहता हैं और मन को ही सीमा में लाना, मानो इसी का नाम मन्त्रणा कहलाया जाता है। तो प्रत्येक वेदमन्त्र मानव के जीवन को महान बना देता है आज कोई भी वेदमन्त्र ले करके जब मानव अपने को ऊँचे स्वरों में ध्वनि रूप में, धन मन्त्र कृणात्वा मानो धनवति बना देता है, वायु में गतियां हो रही है, धाराएं चल रही है, उन तरंगों को धारण करने वाला, महापुरूष कहलाता हैं। परन्तु आज मैं बेटा! दूरी न चला जाऊं, विचारों से, क्या मानव को अपनी आभा में अभ्यस्त रहना चाहिए उन्हीं विचारों से मानव का कल्याण होता है। मेरे प्यारे! देखो, वाहन गति कर रहा है, अन्तरिक्ष में जा रहा है, परन्तु वह मन्त्रणा प्रथम कहलाती हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! जैसे कोई मानव शत्रु हैं और शत्रु को हम विजय करना चाहते हैं, तो ऐसा कोई मन्त्र हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ ऐसा मन्त्र उसका चिन्तन हैं, परन्तु वह चिन्तन महान होना चाहिए, उस चिन्तन में एक विशेषताएं होती है, जिससे वह अपने में अपनेपन को जाना जाता हैं। तो वेदमन्त्र कहता है क्या, शत्रु को विजय करना है, तो अजामेध याग करो। हम अपने आन्तरिक शत्रु समाप्त करना चाहते हैं, तो बाह्य शत्रुओं का अभाव स्वतः हो जाता हैं। जैसे हम उच्चारण कर रहे हैं, ध्वनि रूप में अपने में वह पूर्णता को दृष्टिपात होता हैं। परन्तु वह अपनी आभा में शत्रुता को विजय करना चाहता हैं, विजय हो सकता है परोक्ष, अपरोक्ष रूप में, सत्य के द्वारा सर्वत्र कार्य हो रहा है।

तो मेरे प्यारे! यह कैसा अनुपम ज्ञान हैं, जिसके ऊपर हम परम्परागतों से अनुसन्धान करते आए हैं, अजामेध याग का वर्णन जहाँ आता है वहाँ वह अन्वकृत कहलाता है। जिससे मुनिवरों! देखो, आन्तरिक शत्रु समाप्त हो जाएं, जब आन्तरिक शत्रु समाप्त होंगें तो बाह्य शत्रु भी समाप्त हो जाएंगें। तो प्रथम अपने आन्तरिक शत्रुओं को समाप्त करना है। मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हें दूरी न ले जाऊं, सम्भवा

गच्छं देवं ब्रहे ब्रह्मा वर्णासुते मेरे प्यारे! जब हम एक वाक को उच्चारण करते हैं, तो नाना रश्मियों का जन्म हो जाता है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! जैसे कल आप पूर्व वाक्यों में उच्चारण कर रहे थे, औषधियों का कुछ यागों का कुछ चयन हो रहा था, परन्तु उन यागों के चयन को और जानना चाहता हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः मुनिवरों! देखो, बेटा! तुम यह प्रश्न क्यों कर रहे हो? मेरे विचार में यह प्रश्न नही आ रहे हैं तुम्हारा मन्तव्य क्या हैं?

पूज्य महानन्द जीः भगवन! मन्तव्य तो जानना ही होता हैं हम जानना चाहते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या पुत्र तुमने यह जाना नही है।

पूज्य महानन्द जीः क्या प्रभु! आज हम यह वर्तमान में जानना चाहते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः सम्भविता देवं भवने अस्ते वाचन्नमा ब्रह्मणे लोकाः आभ्यां गति ब्रह्मणा वृत्ति अस्तो मानो देखो, इसी प्रकार यह भव्यता कहलाती हैं। नाना प्रकार का स्वरूप औषध का हमारे हृदय में विद्यमान हैं। जिस हृदय रूपी गुफा में, हमारा जीवन सदैव नृत्त करता रहता है। इसी प्रकार हमें उन आभाओं में रमण करना है जिसमें जाने के पश्चात, हमारा जीवन प्रफुल्लित हो जाएं, प्रत्येक वेदमन्त्र ध्वनि से विशुद्ध रूप से वर्णन किया जाता हैं। तो उस मानव के बहुत से वेदमन्त्र हैं जो बहुत से रूग्णों में कर्म में बद्ध हो जाते हैं, कर्म में जब बद्ध हो जाते हैं, तो ध्वनियां चलने लगती हैं, धाराएं गति करने लगती हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! जैसे आपने इससे पूर्व काल में, एक याग को लिया, और याग का जो क्रियाकलाप चल रहा था, मानो आपने त्रिकोण याग को लिया, उसमें कुछ औषधियों का वर्णन किया तो क्या भगवन! इससे मानव में कुछ चेतना आती हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ, चेतना तो आना ही है, क्योंकि उसमें याग होता हैं, उसमें सुगन्धदायक, पुष्टिवर्धक औषध होती हैं, वह अन्तरिक्ष में स्वाहा और शब्द के साथ में, वह कटिबद्ध हो करके, अन्तरिक्ष में लय हो जाती हैं। तो क्या यह प्रियता नही

हैं?

पूज्य महानन्द जीः हाँ भगवन! प्रियता तो हैं। परन्तु आयुर्वेद कुछ कहता है, आप कुछ उच्चारण कर रहे हैं इसकी संगति कैसे होगी?

पूज्यपाद गुरुदेवः पुत्र संसार में जितना भी महान कर्म है, वह सर्वत्र ही आयुर्वेद हैं। वेद ज्ञान प्रकाश का आयु को ऊँचा बनाने का नाम आयुर्वेदा प्रव्हे उसे आयु का वेद कहते हैं। उसमें दो प्रसंग नही होते केवल एकोकीकरण होता हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! याग करना बहुत अनिवार्य हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ, याग करना मानव का मौलिक कर्तव्य हैं। याग से मानव के जीवन में एक महानता आती है, मानव के जीवन की धाराएं परिवर्तित हो जाती हैं, जो इसीलिए मैं यह कहा करता हूँ कि प्रत्येक मानव को आयुर्वेदा ब्रह्मणे लोकां स्वस्ति रुद्रा मानव को प्रसन्न रहना चाहिए ज्ञान में प्रसन्न रहना चाहिए, क्योंकि ज्ञानयुक्त जो प्रसन्नता है, वही मानव के जीवन का निर्माण करती हैं। और उसी से मानव एक महान बनता है। परन्तु देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में, बहुत से वाक प्रगट किए, अब मेरे प्यारे! पुनः इसके ऊपर विचार विनिमय किया जा सकता हैं। जिन विचारों को ले करके, मानव के जीवन में उद्बुद्धता होती है, महानता का जन्म हो जाता हैं। परन्तु उस मानव को अपने मार्ग को यथार्थ रूपों में अपना लेना चाहिए। तो मेरे पुत्रों! विचार विनिमय क्या है। मैंने बहुत पुरातन काल की वार्त्ताएं मैंने प्रगट कराई हैं और वह वार्ता थी कि हम अपने में औषध वादी बनना चाहते हैं सम्भेत करना चाहते हैं जिससे जीवन एक रहस्यमयी बनता चला जाएं।

तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या है? क्या हम अपने जीवन को एक महान धारावादी बनाना चाहते हैं, आयुर्वेद परम्परागतों से मानव के मस्तिष्कों में नृत्त करता रहा हैं। मेरी पुत्रियों के हृदयों में नृत्त करता रहा हैं। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र, कुछ और ही कह रहा है, सम्भवा शमं ब्रह्मे कृतं बहुसुस्ता बेटा! जब वेद का मन्त्र स्वरों से उच्चारण होता हैं, तो मानव की जितनी वाहक नाम की नाड़ियाँ हैं, ज्ञान युक्त होती, परन्तु उनके तन्तु भस्म हो जाते हैं। और वह द्वेषाग्नि के प्रचण्ड

होते ही उस अग्नि में आदान प्रदान हो जाता हैं। परमाणुओं का आदान प्रदान भी होता रहता है। जैसे परमात्मा के जगत में, एक परमाणु, दूसरे परमाणु से संघर्ष कर रहा है। वह संघर्ष किस रूप में परिवर्तित होते हैं? मेरे प्यारे! यह महान गहन विषय बन जाता हैं। तो विचार विनिमय क्या देखो, प्रत्येक मानव को विचार देना चाहिए, प्रत्येक मानव, उस आभा में रमण करना चाहिए, जिस आभा में रमण करने के पश्चात मानव अपने को महान और विचित्र अपने को अनुभव करता रहता हैं।

तो मेरे पुत्रों! विचार विनिमय क्या है मैंने तुम्हें यह वर्णन कराया है, तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देते हुए, क्या यह प्रत्येक मानव, अपनी अपनी हवियों में प्रदान हैं। अपने को प्रदान कर रहा हैं। जिससे जीवन में एक महानता का दिग्दर्शन हो जाएं, चित्रावलियों में मानो देखो, चित्र विद्यमान हो जाएं, जिससे जीवन एक महान बन करके रहता है, जीवन की धाराएं, एक विचित्र बन करके, अपने में मानो देखो, ओत प्रोत हो जाती हैं। प्रत्येक वेदमन्त्र का गाथा रूप में गान गाया जाता हैं। मुझे एक वेदमन्त्र आज स्मरण आ रहा है एक प्रसंग में वेदमन्त्र यह कहता है कि चित्रं दधश्वनां धनञ्जयं ब्रह्मे लोकां वसुस्वस्ता यंचमा ब्रह्मा लोकाः बेटा! वेदमन्त्र यह कहता है, कि मानव को अपने में अभ्यस्त हो जाना चाहिए, वेदमन्त्र यह कहा रहा हैं क्या, जब हम इस वेदमन्त्र को उच्चारण करके याग कर्म करते हैं, तो हमारे अन्तःकरण में पवित्रता आ जाती है, हमारे अन्तःकरण महान बन जाता है, परन्तु उस महान चिन्तन की आभा में, मानव जो अपने को ले जाता हैं तो विचित्र बन जाता है।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! मैं यह और जानना चाहता हूँ जैसे आपके आयुर्वेद में आपने भी आयुर्वेद का अध्ययन किया मुझे वह काल स्मरण है जब आयुर्वेद का आप अध्ययन करते थे परन्तु मैं यह जानना और चाहता हूँ क्या यह आयुर्वेद अपने में क्या क्या कर सकता है?

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या पुत्र! यह जो आयुर्वेद है यह अपने सर्वत्र आभा में, मानव को परणित करा सकता हैं। यह आयु का वेद कहलाता हैं, आयु उसकी बलवती

जब हो जाती है प्रत्येक मानव संसार में जीवन चाहता है शरीर में किसी न किसी रूप में पदार्थ ले करके मानव के जीवन को, जीवन बनाता हैं जीवन देता हैं। इसी प्रकार हमारा जो आयुर्वेद है, यह आयु है, इसमें आयु विद्यमान है। इसीलिए आयु का वेद कहते हैं, आयु बलवती होती रहती हैं, इससे उच्चारण करने से इनमें जो औषध आती है, उनका पान करने से मानव का जीवन एक महान और पवित्र बन जाता हैं।

परन्तु मुझे स्मरण है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव एक समय एक वेदमन्त्र को ले करके आयु का वेदमन्त्र था उससे अपने अन्तःकरण के संस्कारों की गणना कर रहे थे, ये हमारा जो अन्तःकरण है जिसको चित्त कहते हैं, उस चित्त में क्या क्या तरंगें विद्यमान हैं, बेटा! उसके ऊपर ऋषि अपना चिन्तन कर रहा था और वेदमन्त्र अपने में आभा को प्राप्त हो रहा था तो विचार क्या हैं, विचारं ब्रह्मे प्रणप्रवा लोकं ब्रह्मे स्वस्त प्रव्हे वृत्ता क्योंकि अन्तःकरण को जानना ही मानव को आवागमन की परीधि से दूरी होना है, अपने को अभ्यस्त स्वीकार करना हैं। तो मेरे पुत्रों! विचार विनिमय क्या, कि यह संसार गति कर रहा है आयु के आङ्गन में गति कर रहा है आयु कहते हैं वायु को वायु हृदय में प्रवेश हो जाती हैं हृदय ग्राही बना देती है समाज को तो मेरे पुत्रों! यह ऐसा ओब्राहण ज्ञान हैं जिसके ऊपर अध्ययन की आवश्यकता है चिन्तन और मनन का यह विषय बन जाता हैं। प्रत्येक वेदमन्त्र में मानो देखो, मन प्रथम आता हैं मन से गुथा हुआ ज्ञान है, मन उसको अपने में धारण करने लगता हैं, परन्तु देखो, जब मैं यह विचारता हूँ, कि आयुर्वेद कितना विशाल हैं, मानो देखो, यज्ञमान का रथ बन रहा है, रथ पर विद्यमान हो रहा हैं, और द्यौ लोक में वह रथ स्थिर हो जाता है। तो बेटा! रथ का अभिप्राय यह है, रथ कहते हैं विचारों में जो क्रियाकलाप मानो यज्ञ के द्वारा हो गया है उस क्रियाकलाप को अपने में समन्वय करते रहना जब उसका समन्वय हो जाता है तो दृष्टिपात किया गया मानव का संसार में मूलन नही होता उसकी धाराओ में परिवर्तन हो जाता है, परन्तु विचार क्या कह रहा है हे परमपिता परमात्मन! तू हमारा कल्याण कर,

जीवन की आभा में हमें परणित कराता चल।

तो मेरे पुत्रों! विचार विनिमय यह है पुत्र! क्या जितना भी यह वेदमन्त्र मानव को आभा और तेज देता हैं वेदमन्त्र साकल्य के द्वारा जाता है, तो रूग्ण समाप्त हो जाते हैं। परन्तु यदि वही मन्त्रार्थ स्वतन्त्र रूप से विचरण करता है, तो वही वह लय स्थिर हो जाते हैं। विचार विनिमय यह, कि प्रत्येक वेदमन्त्र का अपना महत्व होता है उच्चारण करने का मानो देखो, विधान क्रियाकलाप होता है, विचित्र, उसी क्रियाकलाप को ले करके मानव अग्रणीय बनता हैं। तो विचार विनिमय क्या हम बेटा! अपने में इतने पूर्णत्व को प्राप्त हो जाएं, कि हमारा जीवन एक महान बन कर रह जाएं। तो मेरे प्यारे! विचारना यह है कि हम आयुर्वेद के उसी रूप से विचारना, जिससे मानव के अन्तःकरण के संस्कार की उद्बुद्धतता हो जाती है। परन्तु रहा यह वाक की मानव को नाना प्रकार के देखो, उन्वाषण रूग्ण होते हैं, जिन्हे उन्वाषण कहते हैं, उन उन्वाषण विचारों पर हमें अनुसन्धान करना है, अनुसन्धान करते जीवन को महानता में परणित करा देना है। यह बेटा! आज मैं तुम्हें यह वाक इसीलिए उच्चारण कर रहा हूँ क्योंकि तुम्हारा प्रसंग ऐसा हैं इस प्रसंग को ले करके मानव अपने जीवन को महान बना करके, सागर से पार ले जाता हैं।

आओ, मेरे प्यारे! मैंने बहुत पुरातन काल में एक वाक कहा था, एक समय याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के द्वारा एक संकेत नामक एक ब्रह्मचारी आए संकेत ब्रह्मचारी ने कहा कि प्रभु! मैं मगध राष्ट्र में गया था, और मगध राष्ट्र में मानो देखो, दो गन्धर्व विद्यमान थे, वह एक ऐसे रथ पर विद्यमान हो गएं जिस रथ पर विद्यमान हो करके, वह रथ मानो द्यौ लोक में प्रवेश करने वाला था। वह कौनसा रथ है, जिस रथ को मानो देखो, रथ कहा जाता हैं मानो देखो, जब उन्होंने यह कहा कि वह रथ कौनसा है? तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बेटा! प्राण अपान, और व्यान जब यह तीनों प्राण वायु एक सूत्र में आ जाते हैं, तो मानो एक रथ बन गया है। यज्ञमान उस रथ पर विद्यमान हो करके, वह अन्तरिक्ष में गति करता हैं, वायु गतं ब्रह्म गतप्पव्हे स्वस्त ब्रीहि स्वस्ता मानो देखो, वही किरणों कहलाता हैं। जिसको

अपना करके मानव के जीवन में एक महानता की ज्वालायें मानव के हृदय में एक उग्रता उत्पन्न हो करके, मानो अपने में स्वतन्त्र स्वीकार करता हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह जो औषध विज्ञान हैं इसके ऊपर आपका कोई मन्तव्य?

पूज्यपाद गुरुदेवः इसके ऊपर तो बेटा! हम कई काल में तुम्हे अपना विचार दे चुके हैं। तुम्हें यह प्रतीत है कि यह वन है, इस वन में तो मैं जाना नही चाहता हूँ। संक्षिप्त में, मैं सदैव परिचय देता रहता हूँ। कि मानव का जीवन का सम्बन्ध मानो आयुर्वेद से रहता है जिसमें मैंने जनाया। मानव अपने में स्वतन्त्रता में और महानता में गति करता रहे, यही उसका आयुर्वेद अन्तःकरण को ऊँचा बना देता हैं, अन्तःकरण में बिन्दुओं की स्थिरता हो जाती है। वही बिन्दु आकाश में अन्तरिक्ष में और मानव के हृदय में प्रवेश हो जाता है हृदय अगम्य बन जाता हैं। वही हृदय से उद्बुद्ध हो करके लोकों की यात्रा करने लगता हैं। मानो देखो, यह प्राण, अपान और व्यान इन तीनों प्राणों को एक समन्वय आने से, मिलान होने से रथ बन जाता हैं और वह रथ कैसे मार्ग पर चलता है वह इतना सूक्ष्म मार्ग है, जो दृष्टिपात नही आ रहा हैं। रथ में विद्यमान हो करके, वही प्राश्चित से जो मानो देखो, जा करके, द्यौ लोक को प्रक्षित हो जाएं वह आदित्य लोकों में प्रवेश कर गएं, मानो इस उत्तर को पा करके, वेद के आचार्यों में प्रसन्नता आ गई, तो विचारना यह है कि हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र उस ब्रह्म की गाथा गा रहा हैं, उस प्रभु का अवमोलन कर रहा हैं, और हमें उसे अपने में धारण करा रहा है, जिससे जीवन पवित्र बन जाएं। मेरे प्यारे! मैं कहा चला गया हूँ, कौनसी स्थली में चला गया मानो देखो, इसको रथ कैसे बनाया जाएं विचारना यह है कि रथ कैसे बनेगा? रथ का वर्णन तो आ गया परन्तु वह रथ क्या है? प्राण, अपान, व्यान ये तीनों प्राणों को एक सूत्र में लाना ही, मुनिवरों! देखो, अति मुक्ति कही जाती हैं। उस पर विद्यमान हो करके, मानव गति कर रहा है। तो मेरे पुत्रों! विचार क्या कह रहा है, क्या हम अपने में महान बनना चाहते हैं। मेरे प्यारे! मैं जब अपने पूज्यपाद गुरुदेव के समीप

पंहुचता था, वह चरणों में विद्यमान हो करके वह मानो अपने हृदय की वार्त्ता, आयुर्वेद की चर्चा करते थे वह यह कहा करते थे कि यह जो आयु का वेद हैं यह प्रकाशक है महान है इसी प्रकाश से आश्रित हो करके समाज अपना क्रियाकलाप कर रहा हैं। मेरे प्यारे! मैं कहाँ चला गया हूँ, विचार यह दे रहा हूँ पुत्र! तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर है। यह क्या प्रत्येक औषध मानव के मुखारविन्द में परणित हो रही हैं, प्रत्येक औषध को एक आभा में रमण करा रहा हैं जब मैं यह विचारता हूँ कि प्रत्येक मानव उस आभा में गति कर रहा है, अपने को शोभनीय स्वीकार कर रहा हैं, मन्त्रार्थ आने गच्छतं देवाः लोकां हिरण्यं रथं ब्रह्मे लोकाः यह जो रथ है, यह द्यौ लोक को जाता है, मानव का, इस रथ पर विद्यमान हो करके, अन्तःकरण को जागरूक किया जाता हैं अग्नि का, अग्नि का ध्यान करता हुआ अग्न्याध्यान करके मानो नाना प्रकार के रूपों में परणित हो जाता हैं। तो मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा में ले जाना नही चाहता हूँ, मैं ऐसे वन में ले जाना नहीं चाहता हूँ जो महान मार्ग प्राप्त न हो, विचार केवल यह देना और चाहता हूँ कि मानव के जीवन में एक महान धाराओं का जन्म होता रहता है, मानो देखो, जब भयंकर वनों में जा करके, मानव अपनी औषध को एकत्रित करता रहता है, अपने आहार को प्राप्त करता रहता हैं, मानव का जीवन, एक महान प्रफुल्लित हो करके, आनन्दित हो जाता है, अपने में वह सफलता को वह दृष्टिपात करता है इसी प्रकार मैं आज बेटा! देखो, मगध राष्ट्रों की चर्चा कर रहा था, वह कहता है मगध अपने में मानो देखो, यह आभा संसार में निहित रहनी चाहिए। अभ्यस्त होना ही मानव को अनिवार्य हैं। परन्तु देखो, जहाँ भी मैं यह विचारता हूँ आयु का वेद आयु आयुष्मान भी कहलाती हैं परन्तु देखो, मैं यह कहा करता हूँ क्या संसार में आयु को ऊर्ध्वा में गति बनाना ही जीवन हैं आयु की आभा में रमण कराना ही मानव का जीवन ऊँचा बनता हैं। परन्तु बहुत से जलों का पान किया जाता हैं बहुत से अग्नि के तपे हुए जल को पान करके मानव के जीवन में कुछ जीना अश्वन हो जाती है परन्तु वह महानता आने लगती हैं, निष्क्रियापन समाप्त हो जाता हैं, परन्तु जो मानव निष्क्रियापन को

समाप्त करना नही चाहता वह मानव अपने में अधूरेपन को प्राप्त होता रहता हैं, उसका वह अधूरापन है उसमें वह अपने को यह स्वीकार करता हैं कि कुछ नही जान पाता परन्तु जब मैं यह विचारता हूँ, कि प्रत्येक मानव अपनी आभा में गति करता हुआ, प्रत्येक वस्तु को जानता है जब मैं एक समय मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण है, जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में ओत प्रोत था, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कुछ औषधियों का पान कराया, जिन औषधियों के पान करने से सर्प की भाषा, सर्प की मानो देखो, वाणी को भली भान्ति मानो देखो, उसको जान लेता हैं। मानो औषधि में श्वेतकेतु औषध कहलाती हैं, मानो जिसमें मृचिका है, त्रिजटा है, त्रिमासी हैं, त्रि सोमकेतु हैं, परन्तु इनको अग्नि में तपा करके पान किया जाता हैं, इनका रस अपने में धारण किया जाता है तो माना देखो, वह सर्पों की मृगराजों की वार्ता में मानो संलग्न हो करके उनकी वार्ता को जानने लगता हैं, और यह जानता कैसे है सुभव्यता, यह विचारता है कि मानो देखो, यह सर्प की वाणी हैं, वह वाणी क्या कह रही है इसके उद्गम में, मानो जो रहस्य है उसको भी जानता है, एक मानो देखो, अश्व के मुखारविन्द से ही ब्रह्म का उपदेश होता रहता है।

तुम्हें यह प्रतीत होगा पुत्रों! एक समय मानो देखो, मानकृति नदी कहलाती थी जिसको रामेश्वरी गंगा कहते थे। परन्तु उसके तट पर एक समय चार पक्षी मानो देखो, ब्रह्म का उपदेश दे रहे थे अपने में ब्रह्म की भाषा चल रही थी उस ब्रह्म की भाषा को ऋषि मुनि श्रवण कर रहे थे, श्रवण करते ही एक समय मार्कण्डेय जी से यह प्रश्न किया गया कि महाराज! यह कौन है जो इस प्रकार की भाषा में, इस प्रकार की आभा प्रगट कर रहे हैं, बटुक नाम के ऋषि के पुत्र हैं, यह पुत्र मृत्यु को प्राप्त हो गएं थे, मृत्यु को क्या प्राप्त हो गएं थे, एक समय मानो देखो, एक कवेचुक नाम के ऋषि थे कवेचुक ऋषि महाराज एक समय अनुसन्धान कर रहे थे अपनी आयु के ऊपर, उन ब्रह्मचारियों ने जा करके, ऋषि का अपमान किया। अपमान करके मानो देखो, उन्हें यह अप्रात में इनको परणित कर दिया, कि वह

चारों ब्रह्मचारी मानो देखो, पक्षी के गरूड़ के रूप में बन जाओ और वह मानो देखो, चारों पुत्र गरूड़ के रूप में मानो देखो, अपनी भाषायां प्रतिष्ठायां देवत्वां मानो देखो, वह अपना सत्संग कर रहे थें। ऋषि मुनि उनके ब्रह्मज्ञान को प्रान करके, क्योंकि ऋषि मुनि वह मानो देखो, प्रत्येक ब्रह्मचारी ग्रहणाम क्या स्वस्ते वह भाषायाम जो भी प्राणी भाषा का उन्मोदन कर रहा है उसको वह श्रवण कर रहा है, उसको अपने में धारण कर रहा हैं परन्तु उसको धारण करता मन्त्र का उच्चारण कर रहा है, मन्त्र का मानो देखो, प्रतिभाषित, मानव के जीवन पर उसकी प्रतिभा आ रही हैं, इसी प्रकार जब उन्होंने ये ऋषि मुनियों ने मानो देखो, यह श्रवण किया तो मुनिवरों! देखो, प्रत्येक मानव को, अपने जीवन में उन औषधियों का भी पान करना चाहिए, जिनका पान करने से मानो देखो, प्रत्येक मानव प्राणी की भाषायाम उसको प्रतिष्ठायाम स्वीकार करके, अपने में धारण करके अपने का मानो ऊर्ध्वा में उदमोदन करता रहे।

तो विचार विनिमय क्या है पुत्रों! क्या मानो देखो, यहाँ प्रत्येक मानव इस प्रकार की औषध है क्या जिसको पान करने से हम पक्षियों का वार्ता भी जानते हैं, गरूड़ों की वार्ता भी जानते हैं। एक समय मुनिवरों! मुझे स्मरण है, चाक्राणी गार्गी के पिता का नाम सोमवृत्ति था। एक समय सोमवृत्ति महाराज भंयकर वन में कुछ औषधियों को एकत्रित करने के लिए जा पंहुचे, परन्तु देखो, कुछ औषधियां उन्हें ऐसी प्राप्त हुई, आयुर्वेद की दृष्टि से जिनको पान करने से मानव अपने को सुखद का अनुभव करता है, परन्तु जब वह पान करते रहे तो वहाँ मार्ग में मानो एक औषध होती है, जिसको मानो सिंहराज पान करता हैं और सिंह राज वह वन की औषध होती है, उसको क्यों पान करता हैं? जब वह रूग्ण हो जाता है। मानो देखो, रूग्ण होने पर, उस औषधि का पान करता है उस औषधि में यह विशेषता है क्या उसके पान करने से, सिंहराज जब पान करता है तो उसके रूग्ण शान्त हो जाते हैं। सिंह को कौनसा रूग्ण होता हैं? यह एक विचारणीय प्रसंग आ गया, परन्तु सिंहराज को बहुत से रूग्ण होते हैं, एक रूग्ण उसे ऐसा होता है, जैसे मानो

देखो, उसने किसी गन्द प्राणी का पान कर लिया हैं, और उस प्राणी को पान करके मानो देखो, उसके पान करने से ही एक त्रिकेत नामक एक रूग्ण होता हैं, जो सिंहराज को होता हैं। और वह हूणकेतु एक औषध होती हैं। हूणकेतु और हूणकेतु के साथ में एक औषध होती है जिसको त्रिकेतु कहते हैं, उन दोनों का वह पान करता है, तो वह रूग्ण से रहित हो जाता हैं। मानो उसको रूग्ण नही हो पाता, इसी प्रकार ऐसी ऐसी औषधियों का वह पान करता हैं तो उस औषधियों को ऋषि मानो सोमकृति पान करना चाहते हैं। तो वह भ्रमण करते हुए उन्हें औषधियां प्राप्त हुई, क्योंकि सिंहराज उन औषधियों को ले रहा था, पान कर रहा था वह निर्भय हो करके, सिंहराज के पास पंहुचे और सिंहराज से कहा हे मृगराज! हे सिंहराज मुझे तू इस औषध को पान करा। मानो उन्होंने इस औषध को नियुक्त कर दिया, वह औषध उनके आश्रम में तन्तु रूप में विराजमान थी उन्होंने एकत्रित किया और उसका औषधि का निरीक्षण किया मानो एक औषध होती है जिसको पान करने से मानव की रसना बहुत विशाल बन जाती है, मानव वाणी से रहित हो जाता है, तो रूग्ण हो गया उसी वृक्ष की उस वृक्ष का नाम है जटा कृति भानकेतु कृति घान वृक्ष होता है उसके पाचांग में कोई गुण हैं, तो उस की जड़ की आभा में कोई गुण है उसके तने में कुछ गुण है, परन्तु देखो, उसके पत्र को पान करो तो मानो की रसना विशाल बन जाती है, वाणी कुछ शब्द उच्चारण नही कर पाती, यदि उसके तने में जाओ, उसकी चमड़ी के पिछले भाग में, जो उसका मांस है, उसको पान करो तो मानव देखो, औषधियों से ज्यों का त्यों जिह्वा, अपने आसन पर चली जाती हैं, रूग्ण समाप्त हो जाता परन्तु उसकी जड़ के विभाग में जाओ, तो देखो, वह रसना है जो मानो आकुञ्चन को प्राप्त हो करके, शब्दों से रहित हो जाती हैं। उसी के मानो देखो, उसके फल को पान करने से पान करने से वही मानो देखो, जिह्वा अपने आंगन में आ जाती हैं। तो परिणाम क्या मेरे पुत्र मैंने बहुतसी औषधियों का पुरातन काल में यह अनुभव किया था। परन्तु एक एक वृक्ष में कितने गुण है, उसकी बकल में, उसके मांस में, मानो उसकी पतियों में,

उसके फलों में मुनिवरों! देखो, उसकी जड़ की छालाकृतियों में भिन्न भिन्न प्रकार के गुण हमें दृष्टिपात आते हैं।

तो मेरे प्यारे! मैंने बहुत पुरातन काल में मानो देखो, इसके ऊपर बहुतसा अनुसन्धान किया। आज मैं अनुसन्धान की चर्चा नहीं कर रहा हूँ विचार तुम्हें यह दे रहा हूँ, कि मानव के जीवन का सम्बन्ध, औषध से, एक औषध होती है जो हिमालय की कन्दराओं में, मानसरोवर के द्वार पर प्राप्त होती हैं, उसको जब वैद्यराज, उस औषध को ऋषि मुनि आयुर्वेद के जानने वाले, जब उस औषध को मानो देखो, पृथ्वी से उसको उखाड़ते थे तो वेदमन्त्र का उच्चारण करते थे, वेदमन्त्र कहता था सम्भविता सम्भवा यचतं देव प्रमाणं विश्वां ब्रहे गृणासति सुजन्म देवाः तो अब प्रसंग आता है कि वेदमन्त्र का उच्चारण क्यों करते हैं? क्योंकि वेदमन्त्र के साथे में वेद की ध्वनि देखो, मन की और वाणी और विचार मानो इससे रहने से वेदमन्त्र क्योंकि वेद ज्ञान है उदयानां वेदमन्त्र से उस औषधि का समन्वय रहता हैं सम्बन्ध है इसीलिए देखो, वेदमन्त्र ध्वनियां चल रही है, और औषधि को वह पृथ्वी में से अपने में धारण कर रहा हैं, धारण करने का परिणाम यह होता है कि उसको ला करके उसको खरल बनाता हैं और मुनिवरों! देखो, उस औषध के पान करने मानव छतीस प्रकार के प्राणियों की भाषा को वह भली भान्ति जानने लगता है मानो रूग्ण उसके शरीरों में नही रह पाता, विचार क्या है बेटा! मैं तुम्हें यह विचार इसीलिए दे रहा हूँ, क्या यह भयंकर वन में तुम मुझे ले गएं हो, इस भंयकर वन में मुझे जाना नही है। परन्तु यह औषधियों का विशाल वन है, पुत्र! मैं इस वन में जाना नही चाहता हूँ, परन्तु देखो, एक मानव अश्ववानम् कहलाता हैं परन्तु इसको धारण करने से, वह मानो देखो, जल की तरंगों में प्राप्त होता हैं समुद्रों के तटो पर प्राप्त होता हैं, जिसको खरल करने से मानव पान करता है, पौष्टिक बन जाता हैं, सुदृढ़ बन जाता है, श्वंजनी औषधियों को पान करने से, वह अपने में मानो देखो, ज्ञान की वृद्धि की धारा होती है। तो इस प्रकार मेरे प्यारे! तुमने मुझे भंयकर वन में पंहुचा दिया है, वनों की भी मैं चर्चा करता रहूँ परन्तु विचार विनिमय क्या, आज का

हमारा विचार क्या कहता है? कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, उसके ज्ञान उसका विज्ञान इतना महान और विशाल कहलाता है पुत्र! क्या इसके ऊपर हम कोई विशेष टिप्पणियाँ नही कर पाते। परन्तु इसको वर्णन ही कर सकते हैं परन्तु टिप्पणियाँ देना हमारा कर्तव्य नही है, परन्तु विचार क्या है कि हम परमपिता परमात्मा की श्वंजनी की, रचना की औषधियों को बेटा! औषध स्वरूप में हम परणित करते हैं मानो देखो, हम जितना वनस्पति विज्ञान हैं, जितना वनस्पति आचार है, वह हमारे जीवन के लिए आत्म तत्त्व कि लिए महान बन करके रहता हैं।

तो विचार क्या मेरे पुत्रों! आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा है क्या इस पृथ्वी के ऊपर यह नाना प्रकार की औषधियों का जन्म होता हैं, तो यह जो पृथ्वी है, यह ब्रह्म की गाथा गा रही हैं, यह ब्रह्म का वर्णन कर रही है, और यह कहती है कि मैं ब्रह्म हूँ, मैं ब्रह्मण्डम ब्रह्मा मैं ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही हूँ, मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्माण्ड अपनी आभा में व्यापक बन रहा है। तो विचारना यह है कि नाना प्रकार की तरंगों में बेटा! जो मानो परमाणु विचरण कर रहा हैं, उन तरंगेंवाद को जानना जान करके अपने में लेना ही बेटा! देखो, सर्वत्र विज्ञान कहलाता है।

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चाएं तुम्हें प्रगट करने नही आया हूँ, तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर क्या प्रत्येक वेदमन्त्र जब हम मन्त्रणा करते हैं, उसके ऊपर अपने जीवन को आचरणित बनाते हैं, तो मानव का जीवन प्रभावति हो जाता है। मानव के जीवन में एक महानता आ जाती हैं, ज्ञान तन्तु स्पष्टीकरण हो जाते हैं, तो बेटा! इसीलिए मैं तुम्हें उच्चारण कर रहा हूँ, क्या हमारे यहाँ आयुर्वेद है, जीवन वेद है, इसीलिए हमारे यहाँ यह यौगिक आभा कहलाती हैं। ऐसी औषध विज्ञान में क्योंकि यह आहार सबसे प्रथम मनुष्य का जो आहार हैं, मानो प्राणी मात्र का जो आहार है, उसका वर्णन आता हैं, और वह विशाल वन है बेटा! विशाल वनों में आभायुक्त होता रहा हैं। तो मेरे प्यारे! आज का विचार कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, नाना प्रकार के औषध विज्ञान को और हमारे जीवन में जो

प्रत्येक शब्द का जो प्रतिभाषित हो रहा हैं। जैसे शब्द अशुद्ध है तो राष्ट्र अग्नि के मुख में चला जाता है, यदि शब्द में शुद्धवाद है, पवित्र वाद हैं, वैदिक वाद है, वही मुनिवरों! देखो, शान्ति प्रदायक कहलाता हैं। तो मानो देखो, शब्द अग्नि काण्ड बन करके रहता हैं, शब्द ही शीतलकाण्ड बन करके रहता हैं, शब्द में बेटा! मैं तुम्हे वाक एक उच्चारण करूंगा, मानो हमारे यहाँ यही शब्द है, जो वैदिक साहित्य में आता हैं। क्या एक दीपावली गान होता है, एक मल्हार गान होता है, मानो देखो, हमारे यहाँ ऋषि मुनि जब गान गाते रहते थे, एक समय बटकेश्वर ऋषि महाराज थे, जब वह गान गाते थे तो गान गातेगाते मानो देखो, दीपावली बन जाती थी। अन्धकार में तो महाराजा नल मानो देखो, उनके शिष्य बने, बटकेश्वर ऋषि महाराज के शिष्य बने, और उन्होनें उस दीपावली राग को जानने का प्रयास किया। वह मानो देखो, उस राग को जानने वाले बने, वह वेद का एक मन्त्र है, और वेदमन्त्र की जो ध्वनि है, उस ध्वनि में ही मानो देखो, दीपावली राग बना। जब राग गाने लगे प्राणों का संयम गान को गाया जाता है, एक प्राण को संयम में लाते हैं, एक प्राण से गान गाते हैं। एक प्राण उसकी उसमें पुट लगाते हैं, जब गान गाते हैं, तो मानो देखो, अन्धकार छाया हुआ है, तो दीपावली बन जाती है। उसको दीपक राग कहते हैं। दीपक गान कहा जाता है। जो नल जानते थे, नल के द्वारा दीपावली जो उन्होंने बटकेश्वर ऋषि महाराज अंगिरस से उन्होंने इस विद्या का पान किया, तो जब वह गान गाते थे आनन्दित हो करके तो देखो, नगरों के दीप बन जाते थें। दीप मानो प्रकाश में आ जाते थे, परिणाम क्या मानो देखो, एक चाक्राणी गार्गी का बेटा! तुमने दृष्टिपात किया होगा मानो चाक्राणी गार्गी एक समय अपने पूज्य गुरुदेव शोनत्वर ऋषि महाराज के द्वार पर मानो उनसे चरणों में ओत प्रोत हा गई, वह वेदमन्त्रों का गान गा रहे थे, जब गान गा रहे थे तो मोहिनी गान गा रहे थे, मानो देखो, उसके पश्चात वह मल्हार गान बन गया, उस मोहिनी राग का मल्हार गान बन गया वह जब गान गाने लगी तो मध्य रात्रि में मानो देखो, मेघों की उपज हुई, और मेघों की उपज से मानो धीमीधीमी वृष्टि हो गई। उसमें स्नानं मानो करने

से मानव का जीवन एक शान्ति प्रदायक बन गया। विचार क्या मुनिवरों! देखो, यह शब्द की प्रतिभा हैं, शब्दों को सिद्ध किया जाता हैं। इन शब्दों के ऊपर अनुसन्धान किया जाता है, शब्द एक ऐसा शब्द है, जिससे मानो देखो, राष्ट्र अग्नि का काण्ड बन जाता हैं। महाभारत का काल बेटा! तुमने दृष्टिपात किया होगा महाभारत के काल में एक ही शब्द ने देखो, अग्नि प्रदीप्त कर दी थी, वह शब्द था जो महाराजा द्रुपद ने महाराज द्रोण को प्रगट किया था वह शब्द वह था एक शब्द वह था जो इन्द्रप्रस्थ में मानो देखो, वह द्रोपदी ने महाराज दुर्योधन को कहा था, वह दोनों शब्दों का मिलान हो करके मानो वह राष्ट्र की अग्नि बन करके रही मानो देखो, संसार एक अग्नि का काण्ड बन गया। राष्ट्र अग्नि का काण्ड बन गया, परिवार समाप्त हो गया, परिणाम यह है कि मुनिवरों! यह शब्द है जो मानव को अग्नि के मुखारविन्द में ले जाता हैं। जब वह ध्वनि प्रचण्डत्व में हम प्रगट करते हैं, विशुद्ध रूपों से जब वेदमन्त्रों का उच्चारण करते हैं। तो उनका एक प्रतिभा बनती है, वही उनके परमाणु बनते हैं, वह मानव के जीवन पर छा जाते हैं, और मुनिवरों! देखो, स्वर ध्वनि पवित्र बन जाती हैं, तो मैं उच्चारण कर रहा हूँ, क्या प्रत्येक वेदमन्त्र जैसे हमारे इस मानव शरीर में शरीर रूपी यज्ञशाला के मुनिवरों! देखो, चौबीस पात्र कहलाते हैं, और चौबीस पात्रों में चौबीस अक्षरों का गायत्राणी छन्द कहलाता हैं, जब गायत्राणी छन्द को शुद्ध रूप में हम उच्चारण करते हैं, तो मानो देखो, उसके उच्चारण करते करते हमारे शरीरों में ऐसे परमाणुओं की जागरूकता हो जाती हैं, कि हमारा जो हमारा बुद्धि जो केन्द्र हैं वह पवित्र बन जाता हैं। बुद्धि का केन्द्र पवित्र बन करके हमारे यहाँ ईश्वर की महिमा को उसके विज्ञान को हम भली भान्ति जानने लगते हैं।

तो बेटा! मैं तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ कि यह जो मन्त्र हैं, शब्द है, यह शक्ति है, इस शक्ति को हमें धारण करना है। परन्तु देखो, अग्नि उच्चारण करने से अग्न्याध्यान करते हैं, इसी वेदमन्त्र को ले करके दीपक राग बनता है। इसी शब्द को ले करके अग्निष्टोम याग बनता है, तो बेटा! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने

नही आया हूँ, मैं तुम्हें यह परिचय देने आया हूँ, क्या प्रत्येक मानव को इस आभा में इस विज्ञान के ऊपर अधिपथ्य होना चाहिए। जिससे देखो, जीवन की धाराएं एक से एक बन करके महान बन करके रहें।

यह है बेटा! आज का वाक अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा, आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह क्या प्रत्येक वेदमन्त्र बेटा! जैसे ब्रह्म की गाथा गा रहा है। ऐसी पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। इसी प्रकार पुत्र माता की गाथा गा रहा हैं, और गाथा का वर्णन बेटा! समय आयेगा मैं करता रहूँगा, आज का वाक समाप्त, समय मिलेगा मैं शेष चर्चांए तुम्हें कल प्रगट करूंगा। अब वेदमन्त्रों का पठन पाठन होगा। ओ३म् दधिमां देवं रथश्वां गता आभ्यां रुद्रा मनु आ पा गताहाम् ओ३म् ब्रह्म मणा देवं मया सर्वं भद्राः अच्छा भगवन! आज्ञा।

12.820807-औषधि विज्ञान एवं चिकित्सा पद्धतियां

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने जिन वेदमन्त्रों पठन पाठन किया हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र में उस मनोहर वेद की महिमा का अथवा उसका विज्ञान निहित है। प्रत्येक वेदमन्त्र में इन लोक लोकान्तरों की आभाएं आती रहती हैं। लोक लोकान्तरों में कौनसा तत्त्व कहाँ पर किस लोक में प्रधानता में रहता है। यह सर्वत्र विद्याएं सर्वत्र अनुभूतियां हमें वैदिकता में प्राप्त होती है। एक एक वेदमन्त्र में हमें दृष्टिपात हो रही है। आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें ऐसे क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ जहाँ ऋषि मुनि बहुत अनुसन्धान और गम्भीर मुद्रा में परणित होते रहे हैं।

एक वेदमन्त्र उनके समीप विद्यमान है, परन्तु उसी वेदमन्त्र से यह संसार की आभा परणित हो रहे हैं जिसमें हमें यह ज्ञान होता है कि जो मानवीयत्व है, वह विचारों में निहित रहता है। बहुत पुरातन काल हुआ जब यहाँ विराजमान हो करके और अपनी ध्वनि में प्रायः विचारने लगते थे और उस ध्वनि को अपने में और ध्वनि के साक्षात रूप का आभास हमें वायुमण्डल में दृष्टिपात आता था क्योंकि मुनि अपने में बहुत गम्भीर चिन्तन किया करते थे। क्योंकि पिण्ड और ब्रह्माण्ड की दोनों की प्रायः वह कल्पना करते रहे हैं। उस कल्पना में एक काल्पनिक नही नाना प्रकार की कल्पना की वार्त्ताओं को साकार रूप देते रहे हैं बेटा! आज मैं तुम्हें बहुतसी विज्ञान की वार्त्ताएं प्रकट कराने के लिए नही कुछ परिचय देना है, कि प्रभु! का ज्ञान कितना अनन्तमयी है।

मेरे पुत्र! मुझे कई काल में तुम औषधियों में ले गएं हो उन विद्याओं में ले गएं हो जिन विद्याओं के ऊपर ऋषि मुनियों ने बहुत अनुसन्धान किया एक नेवलकेतु ऋषि भी हुए और नेवला एक रमण करने वाला सर्पराज से संग्राम करता है। वह जो

सर्प से संग्राम करता है, तो सर्प का जब संग्राम होता है, तो वह जब स्वीकार करता है कि तू संग्राम करता हुआ थकित हो गया है, अथवा इसका विष तुझे व्यापने वाला है, तो वह गुड़केतुक नामक एक औषध होती है। उस औषधि को पान करके, उसकी सुगन्धि ले करके वह पुनः सर्पराज से संग्राम करता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि वह जो गुड़केतुक नाम की औषधि है। वह गुड़वञ्चनी है, तो उसका पान करने से सर्प का विष नही व्यापता। यह सिद्ध हुआ तो उससे हमें इन औषधियों के ऊपर अनुसन्धान करना हैं। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र में जहाँ ब्रह्म की विद्याएं हैं, वही लोको की विद्या भी हैं, जहाँ योग विद्या है, वहाँ बेटा! व्यवहार भानु भी है। उसमें विद्यमान है जो एक एक वेदमन्त्र के विभाजन करने से यह सर्वत्र आभाओं का जन्म होता हुआ दृष्टिपात होता है। औषधि विज्ञान का तो एक वन है। उस वन में जाने के लिए बहत सा मन बनाना पड़ता है। मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में यह निर्णय दिया था कि हम औषधि का पान करते रहते हैं। परन्तु मानव को अपने आहार में परिवर्तन लाना होता है। व्यवहार में परिवर्तन लाना होगा यदि हम परमात्मा की सृष्टि को हम साक्षात्कार दृष्टिपात करना चाहते हैं। तो हमें अपने जीवन को बहुत सूक्ष्म और गम्भीर मुद्रा में ले जाना होगा। यदि गम्भीर मुद्रा नही है। तो हम प्रभु के उस संसार को प्रभु के राष्ट्र को हम दृष्टिपात नही कर सकेंगें।

देखो, जब मैं बुद्धि के ऊपर बल देता रहता हूँ, तो पुरातन काल में ऋषि मुनि जब माताओं के संसर्ग में रहे हैं। तो माता उन औषधियों का लेपन करती थी गर्भ में रहने वाले बाल्य के ऊपर उस औषधि की तरंग प्रवेश होती चली जाती थी। तो विचारना क्या है प्रत्येक औषधि का अपने में बहुत महत्व माना गया है। मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में वर्णन किया था हमारे यहाँ जब भी किसी बाल्य की उत्पति होती तो उस समय एक याग करते थे। उसको सोमेतकेतु याग कहते थे। सोमेतकेतु याग में यह विशेषता है कि उन समिधाओं को ला करके याग करता है जिससे जिस प्रकार का रोग शरीर में हो रूग्ण हो उस रोग की निवृत्ति के लिए किया जाता था जो बाल्य के लिए होता था, मैं इस क्षेत्र में जाना नही चाहता हूँ। यह

जो यह तो यागों के क्षेत्र है। विशाल क्षेत्र है। परन्तु विचार यह मैं देने जा रहा था कि संसार में जिस विद्या का हम जानना चाहते हैं। उस विद्या के ऊपर हमारा चिन्तन और मनन गम्भीर होना चाहिए यदि गम्भीर चिन्तन नही है मनन ऊँचा नही हैं। तो विद्या में अधूरापन आ जाता है।

वैद्यराज सुधन्वा

मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हे यह निर्णय देते हुए कहा था बेटा! आज मैं तुम्हें विशेषता में नही ले जाऊंगा। मुझे स्मरण आता रहता है कि अश्विनी कुमार जो वैद्यराज थे, वे भी औषधि विज्ञान में शामिल थे, विशेषज्ञ कहलाते थे, जब राम और रावण का युद्ध हो रहा था, तो युद्ध होते समय महाराज इन्द्र से रावण के पुत्र मेघनाथ के द्वारा एक शक्ति थी और वह शक्ति क्या थी, एक यन्त्र था शकतानकेतु यन्त्र था, जिस यन्त्र के प्रहार करने से जिस नाम को कह कर के उसका प्रहार कर दिया जाता तो वह मानव मूर्छित हो जाता और उस परमाणुवाद में उस शक्ति में यह विशेषता थी कि जब तक सूर्य उदय न हो तब तक आत्मा का ह्रास नही होता था और जहाँ सूर्य उदय हुआ शक्ति के साथ उसका प्राणान्त हो जाता परन्तु देखो, यन्त्र में यह विशेषता थी सूर्य की आभा में गति करने वाला प्राण शक्ति होता है। आत्म तत्त्व होता है। तो मेरे प्यारे! मुझे ऐसा कुछ स्मरण है कि जब उस शक्ति का पान किया तो महाराजा विभीषण ने यह कहा राम से कि महाराज! यदि लक्ष्मण को विशुद्ध बनाना है तो महाराज सुधन्वा को लाया जाएं, सुधन्वा वैद्यराज बड़े विशेषज्ञ है। तो महाराजा सुधन्वा के लिए हनुमान से प्रार्थना की गई कि हनुमान सुधन्वा को उनके गृह से ले आओ, गृह से ला करके लक्ष्मण को दृष्टिपात कराया। महाराजा सुधन्वा ने वैद्यराज की सुगन्ध दे दी और आभा से कहा यह गिरिकेश्वर नामक एक पर्वत है। उस पर्वत पर एक औषधि होती है। जिसका नाम गुडनवी है, और गुडनवी नामक औषध के साथ में एक दीपवली शानवेशन औषधि कहलाती है। उन दोनों औषधियों को ला करके उनका पिपाद बना करके यदि लक्ष्मण को प्रदान की जाएगी, सूर्य उदय से पहले तो इसके प्राणान्त नहीं होंगे।

तो मेरे पुत्रों! मुझे स्मरण है कि महाराज! हनुमान को यह कार्य सौंपा और एक वाहन दिया गया, वे गिरीकेश्वर नामक पर्वत पर पंहुचे तो वहाँ उस औषधि की उन्होंने जो उसकी रूप रेखा वर्णन की थी वह रात्रि के काल में दीपावली की भान्ति प्रकाशवती थी। परन्तु देखो, वह औषधि गिरि नामक पर्वत पर क्यों और पर्वतों पर नही थी, परन्तु उन्होंने क्या विचारा कि मुझे तो भान नही हो रहा है उन्होंने नाना औषधियों को एकत्रित करके अपने बलिष्ठ बल से बहुत अधिक संख्या में वह नाना औषधियों को लाए, नाना जितनी औषधियां थी। उनको चुनौती प्रदान की और वह अपने वाहन में ले करके लंका में सूर्य उदय होने से पूर्व ही उस औषधि को लाए और सुधन्वा से कहा कि महाराज! मुझे तो ये औषधि प्राप्त हुई है, ये अब आप इसमें से औषधि चुन लीजिए। जिसको लक्ष्मण को प्रदान करनी है। महाराजा सुधन्वा ने वह औषधि चुन करके चुनौती प्रदान करके लक्ष्मण को प्रदान की लक्ष्मण पर यन्त्र का मूर्च्छा का जो प्रभाव था वह समाप्त हो गया। समाप्त होने के पश्चात वे वार्ता युक्त हो करके अपने में वार्ता प्रकट करने लगे। यह औषधि विज्ञान बहुत परम्परागतों से मानवीय मस्तिष्कों में नृत्य करता रहा है। और नृत्य करना भी चाहिए।

महाराज सुधन्वा ने अपनी एक पोथी का निर्माण किया था, जिस पोथी में उन्होंने लगभग कई सहस्रों औषधियाँ उसमें नियुक्त की, उनके रोगों के आधार पर। तो इसीलिए मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ, कि संसार में जितना भी यह औषधि विज्ञान है। यह परम्परागतों से ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में महानृत्य करता रहा है। इसमें प्राण शक्ति है, प्राण वर्धक है, परन्तु इनकी प्राणों की आभा को जानना है। औषधि की आवश्यकता वहीं होती है। जहाँ शरीर में प्राण नही रहता प्राण न रहने से प्राण शक्ति उन औषधियों के द्वारा प्रदान करते हैं। उसे देना प्रारम्भ करते हैं। यहाँ ऐसे ऐसे यन्त्रों का निर्माण भी हुआ है जिन यन्त्रों से प्रहार करने से दस दस दिवस तक मूर्छित होना, परन्तु उन औषधियों का पान भी किया गया जो मूर्च्छा से जो परमाणु मृतक हो गएं थे, उनमें जीवन शक्ति प्रदान हो गई। प्राण शक्ति का उनमें सञ्चार

हो गया तो वह संसार में उसी प्रकार ज्यों के त्यों बने रहे। तो इस प्रकार ये औषधि विज्ञान मेरे पूज्यपाद गुरुदेव भी मुझे प्रगट कराते रहे हैं। कुछ हमने भी ऋषियों की सहायता से इस विज्ञान को जानने का प्रयास किया है। प्रत्येक वेदमन्त्र में औषधि विज्ञान निहित रहा है। मैंने बहुत पुरातन काल में यह कहा था संसार में एक चिकित्सा नही रही हैं। परम्परागतों से बहुतसी चिकित्सा रही है। महर्षि भारद्वाज मुनि जहाँ विज्ञान में पारायण थे। वहाँ उन्होंने प्राण चिकित्सा को बहुत महत्व दिया है।

प्राण चिकित्सा

एक हमारे यहाँ प्राण चिकित्सा भी कहलायी गई है। इस प्रकार प्राण के जो भाग होते हैं। उन प्राणों को उसी प्रकार से हम वायु को शनैः शनैः लेते हैं। वायु को शनैः शनैः त्यागते हैं। वायु को एक स्वर से ले करके उसी स्वर से भी हम उसका अनुपात में ले करके उसका सञ्चार भी करते हैं। यह औषधि विज्ञान से प्राण चिकित्सा एक महान चिकित्सा के रूप में महापुरूषों ने स्वीकार की है। इस चिकित्सा का सम्बन्ध ब्रह्मवर्चों से रहता है। तो पुत्र! मैं विशेष चर्चा में नही ले जा रहा हूँ। यह प्राण चिकित्सा हमारे यहाँ बहुत ऊर्ध्वा में गति करती रही है।

कुरुणी चिकित्सा

आज मैं तुम्हें यह वाक्य उच्चारण करने वाला हूँ कि कई समय हो गएं हैं। विज्ञान की वार्त्ताएं प्रगट करते हुए औषधि विज्ञान में नाना औषधि विज्ञान की वार्ता है। एक हमारे यहाँ कुरुणी नामक चिकित्सा होती है। यह कुरुणी नाम विद्या ऐसी होती है जिसमें जल से उपचार किया जाता है जल से पिपाद बनाएं जाते हैं जल के द्वारा उसे पान किया जाता है उसमें कुछ औषधियों का निदान भी किया जाता है। तो बेटा! यह बहुत प्रकार से चिकित्सा होती रही है मैं आज इस सम्बन्ध में जाना नही चाहता हूँ क्योंकि यह आभामय गतियों में रमण करती है रमण करने वाला यह विज्ञान है पुत्रों! मैं आज तुम्हें ऐसे क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ। जहाँ सुधन्वा ने और अश्विनी कुमारों ने दोनों ने इस विज्ञान के ऊपर अनुसन्धान किया है, मुझे

भी इसका बहुतसा भान है। जैसे हमारे यहाँ महात्मा दधीचि हुए, तो महात्मा दधीचि को भी इसका बहुत ज्ञान था। महात्मा दधीचि के जीवन में यह कहा जाता है कि जब महाराजा इन्द्र ने महात्मा दधीचि के ऊपरले भाग कण्ठ से दूरी कर दिया। उनके मस्तिष्क को ज्यों का त्यों औषधियों से नियुक्त कर दिया तो दधीचि के सम्बन्ध यह कहा जाता है। जब बकासुर का यह युद्ध हुआ बकासुर के द्वारा तो महात्मा दधीचि के शरीर की अस्थियों का एक वज्र बना। उस वज्र से बकासुर पर प्रहार किया गया। उस समय देवताओं की रक्षा हुई तो देवताओं की रक्षा क्या कामधेनु जो गो थी। उस कामधेनु गो के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि इन्द्र ने जब महात्मा दधीचि की अस्थियों को लिया तो कामधेनु ने उसका जो माँस था, चर्म था, उसको गऊ ने आहार कर लिया, अपनी जिह्वा के द्वारा उसे त्रीत करते करते वह केवल अस्थियां रह गयीं उसका वज्र बना। परन्तु देखो, उस वज्र से बकासुर का ह्रास हुआ। परन्तु देखो, वह गो क्या थी विचाना यह है कि वह गो क्या थी वह गोदन्ती एक औषधि कहलाती जाती है। गोदन्ती औषधि होती है, उसको गो घृति भी कहते हैं। परन्तु देखो, मांस और चर्म क्या है? वह क्या है? मांस और चर्म हमारे यहाँ एक वृक्ष होता है। जिसका नाम दधीचि वृक्ष होता है जो हिमालय की कन्दराओं में होता है। परन्तु वह मानसरोवर के द्वारा होता है। वह जो गोदन्ती है। उसमें यह विशेषता है देखो, गोदन्ती, शैलखण्डा, शैलभूनि इन तीनों औषधियों को पान करा इन तीनों औषधियों को पान करा करके उस वृक्ष के ऊपर लेपन करते हैं। तो उसका मांस और उसका चर्म है, वह अपने आप ही वृक्ष से देरी हो जाता है। जब वह दूरी हो जाता है। जब वह दूरी होता है। तो उसका हम पात बनाते हैं। जब उसका पात बनाते हैं। तो देवता जब संघर्ष में आते हैं, देवता कौन हैं? मेरे प्यारे! यहाँ अश्विनी कुमारों ने लेखनीबद्ध करते हुए कहा है कि जो इन्द्र है, वह आत्मा है वह इन्द्र उस गोदन्ती को अपने में ज्ञान के द्वारा ग्रहण करता हुआ उस समय बकासुर को नष्ट करता है, बकासुर कौन है? बकासुर इस मानव शरीर में एक बकासुर नाम का एक रोग होता है। वह बकासुर कौनसा रोग है?

उसे हम मृगी कहते हैं। वह बकासुर होता है, और देवता अस्वस्थ हो जाते हैं। जिसको हम असाध्य रोगों में परणित कहते हैं। उस रोग में जब बकासुर आता है। तो मानव से निद्रा दूरी चली जाती है। निद्रा नहीं आती तो उसको हम बकासुर नामक रोग कहते हैं। तो देवता ह्रास हो जाते हैं। उस समय इन्द्र की विवेचना चलती है। वह वृक्ष के समीप जाते हैं। वृक्ष चर्म लेते है। उसका मांस लेते हैं, और गोदन्ती, हरीति, श्वेत्ताम इन औषधियों को ले करके पात बना करके उसके मस्तिष्क पर लेपन करते हैं। संसार में यह जो गो नाम का पशु है। यह मांस का भक्षण नही करता है। इसीलिए यह युक्ति यहाँ लग नही पाती। तो इसीलिए पुत्र! मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ कि यहाँ आयुर्वेद विज्ञान में औषधि विज्ञान में नाना प्रकार की युक्तियां होती है। नाना प्रकार की युक्तियों से भरित होता है। तो मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ। पुत्र पर्वतों में बहुतसी औषधियों का अनुपात होता है। अनुभास होता है। जिनको तीव्र इच्छा होती है। उनके स्वप्न में औषधियां आ करके अपने अपने गुणों का वर्णन करने लगती हैं। जब तीव्र इच्छा होती है। किसी भी कार्य में मुझे स्मरण है। जब भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप को धारण किया उन्होंने अमृत को देवताओं को देना प्रारम्भ किया तो मोहिनी स्वरूप उनके मस्तिष्कों में प्रत्येक औषधि उनको अपने गुणों की वार्ता प्रगट किया करती थी। अश्विनी कुमारों के जो गुरु थे, सोमकेतु ऋषि महाराज वह जहाँ विज्ञान में पारायण थे। वहाँ वह औषधि विज्ञान में जब वह निद्रा में तल्लीन होते जितनी निद्रा आती, उतनी आती परन्तु स्वप्न में आने प्रारम्भ हो जाते थे। उस स्वप्न में प्रत्येक औषधि अपना गुण वर्णन करने लगती थी। क्योंकि आत्मा इस शरीर में भास रहा है। उसमें उसकी छाया बन रही है। तो जिस भी विषय को विशेषज्ञ बनना चाहता है। उसमें उसे जब तीव्रता आ जाती है। तीव्रता का परिणाम यह होता है कि वह उसको अपने में भासने लगता है। वह उसी में भासने लगती है। वह गुण उसमें आने प्रारम्भ हो जाते हैं। मैंने बहुत पुरातन काल में यह वर्णन करते हुए कहा था।

एक समय बेटा! देखो, हम ऋषि मुनियों की एक सभा महात्मा त्रेणकेतु महाराज

के यहाँ होनी थी उसमें जब सब ऋषियों का एक समूह एकत्रित हुआ तो उसमें यह हुआ कि यह जो संसार है। यह जो मृत्यु से घिरा हुआ है। वह मृत्यु से कैसे पार हो। तो यह विचार विनिमय ऋषि मुनियों की सभा में हुआ जैसे राजा जनक की सभा में यह प्रसंग आते रहे हैं मृत्यु से घिरे हुए समाज को मृत्यु से दूरी करना है। तो ऋषियों ने यह कहा कि एक ही कण्ठ से कि जो संसार को मुक्त बनाना है। तो प्रत्येक मानव की इच्छा बलवती होनी चाहिए। तीव्र इच्छा के बलवती होने पर रूग्णों का ह्रास हो जाता है। रूग्ण नही रहते। मानसिक चिन्तन को सुन्दर होना चाहिए, मानसिक चिन्तन उस काल में ऊँचा होगा, जब प्रत्येक गृह में परमपिता परमात्मा की चर्चाएं होती रहेंगी। उसके उद्गार होते रहेंगें। दर्शनों की भाषा में दार्शनिक विचार शब्द रूप में चित्रों के रूप में गृहों में रमण करते रहेंगें। तो वे गृह उस मृत्यु से मानसिक चिन्तन के रूग्णों से मानव दूरी होता रहता है। ऋषि मुनियों को मानसिक दुखद क्यों नही होता था, उसके मूल में उनका चिन्तन विशुद्ध होता था परन्तु विशुद्ध चिन्तन से मानसिक चिन्तन महान बन जाता है। मानसिक रूग्ण बन करके नही रहता तो विचार विनिमय क्या पुत्रों! आज मैं तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ, कि नाना प्रकार की विचारधारा से क्योंकि याग का हमारे यहाँ प्रधानता क्यों दी गई है परम्परागतों से ऋषि मुनियों ने जितनी महाता यागों को दी है। इतनी किसी और क्रियाकलाप को नही दी। जितना महत्व समाज ने इसको दिया इसके मूल में रहस्य है, और वह रहस्य क्या है? कि इसमें जो सुगन्धि का रहस्य है, सुगन्धि में चित्र का रहस्य है। चित्र के साथ में जो शब्दों का रहस्य है। जिस स्थली पर याग कर्म होता है तो उसमें उस मानव के चित्र विशुद्ध वेदमन्त्रों की धाराएं गति करती रहती है। उससे उस गृह का वायुमण्डल पवित्र होता है। वायुमण्डल के पवित्र होने पर वेदमन्त्र की धारा शुद्ध होनी चाहिए। महान होनी चाहिए। ऋषि मुनियों ने बहुत महत्व दिया बहुतायात में दिया है कि कर्म करना है, तो याग करो, पुत्र उत्पन्न हो पुत्रियाँ उत्पन्न हों जब याग होना चाहिए। पुत्र ही कामना हो तो याग करना चाहिएं प्रथम विचारों का बनाना होता है, यह औषधि

हमारे यहाँ सबसे महत्वदायक मानी गई है और जो साकल्य की जो धाराएं बनती हैं, वह विशुद्ध होती हैं, और उन धाराओं में औषधि होती है, उन औषधियों की धारा याग कर्म करना याज्ञिक के लिए महा पवित्र कहलाता है। उन यागों को इसीलिए कि ये विज्ञान का प्रतीक माना गया है। विज्ञान की धाराओं में इसका महत्व रहा है।

नाना प्राणियों को औषधियों का ज्ञान

संसार में नाना प्रकार की औषधियों को ले करके उस औषधि विज्ञान के सम्बन्ध में अपने विचार दे रहा था मुझे स्मरण आता रहता है, बहुत से पक्षी है, बहुत से प्राणी है। जो अपनी अपनी औषधियों को स्वतः जानते हैं। प्रभु का ऐसा विज्ञान है। इसके ऊपर अनुसन्धान किया जैसे मैंने नेवलकेतु की वार्ता प्रगट की इसी प्रकार वानर नामक प्राणी होता है। जब वह प्राणी सर्प की मृत्यु करता है, तो सर्प की मृत्यु करता हुआ एक औषधि वह भी जानता है। वह विषकर्णी नामक औषधि होती है। वह विषकर्णी नामक को वह लाता है, उसे पान करता है। वह भी विषों को ह्रास करने वाली है। इसी प्रकार यह जो सर्प है यह वायुमण्डल से ऐसे परमाणुओं को सींचता रहता है। जिसमें विष व्यापक रहता है, परन्तु वास्तव में प्रभु की महिमा इतनी विशुद्ध इतनी विचारणीय है, जिसके ऊपर बहुत अनुसन्धान किया जाता है। सूर्य की किरण है, वह विष को भी ले करके चलती है अमृत को ले करके भी चलती है। परन्तु देखो, सुगन्धि को भी चलती है। विष ले करके जो किरणें चली है। उन किरणों के विषों को जितने भी संसार के विषैले प्राणी है, वह प्राणी उन किरणों से उन्हीं परमाणुओं को अपने में धारण कर लेते हैं। अपने में सींच लेते हैं। वह विष कितना लाभप्रद है। आज जितने विषैले प्राणी है। उनमें कितना लाभ है। वह अपने रोगों की औषधि स्वतः जानते हैं। यदि विषधारी को रोग हो गया है, तो वह पृथ्वी के गर्भ में जाते हैं, अपने बिल में जाते हैं, और बिल में जा करके पृथ्वी के आङ्गन में एक ऐसी परमाणु धारणा शक्ति है, उसे पान करता है। तो वह स्वस्थ होता चला जाता है। इसी प्रकार हमारे यहाँ प्राणी जिसे गणेश का वाहन

कहते हैं। गणेश की सवारी कहते हैं। उसे चूव्हेनकेतु यन्त्र भी कहते हैं परन्तु जब यह विचारा जाता है कि वह पृथ्वी में बिल बनाता है, एक प्राणी भी होता है। जैसे यान होता है। चूव्हेनकेतु एक प्राणी भी होता है। जो सर्पों के लिए बिल का निर्माण करता है। उसका गृह बनाता है। परन्तु उसी में जो कुछ भी वह अपने शरीरों से जो बाल बनते हैं। वे सर्प का आहार बन जाता है, यदि वह आहार नही बनेगा उसका आहार उसका औषधि नही बनेगा तो प्राणी श्वांस नही ले सकता।

तो यह अपने में देखो, कितना विशाल विज्ञान है बेटा! इस विज्ञान पर मानव को विचार विनिमय करना चाहिए सर्प जितने प्राणियों को जन्म देता है। उनमें से सौ प्राणियों में से एक प्राणी को त्याग करके वह निन्यानवें प्राणियों को आहार कर जाता है। वह आहार क्यों कर लेता है, अपना भोजन क्यों कर लेता है। संसार में ऐसा प्राणी कोई नही हैं, जो अपने पुत्रों! को आहार बना लें परन्तु सर्प बनाता है। वह क्योंकि वह विषधर है। विष पान करने वाले को ज्ञान का माध्यम नही होता, उसमें ज्ञान की सूक्ष्मता हो जाती है। उसके मस्तिष्क के ज्ञान के तो तन्तु होते वह न रह करके ममता तो होती है। परन्तु ममता के साथ कठोरता होती है। उस कठोरता में रहस्य भरा हुआ है। परमात्मा की आभा में वह क्या रहस्य है, उन्हें पान नही करेगा तो पृथ्वी पर दूसरा प्राणी भी जन्म नही ले सकता। देखो, यह परम्परगतों से प्रभु ने इस सृष्टि का नियम बनाया है। यह आभा में उज्ज्वलता में रमण करने वाला सिद्धान्त हैं।

तो मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हें यह निर्णय करा रहा हूँ कि संसार में अपनी अपनी औषधियों को प्रत्येक प्राणी जानता है। एक नही अनेक प्राणी इस प्रकार के हैं। अपनी अपनी औषधि को जैसे श्वान होता है श्वान अपने में औषधि युक्त इतना होता है, यदि इसे वमन करना हो तो अपने उदर को शुद्ध बनाना हो तो दोबेतकेतु औषधि होती है इस दोबेतकेतु औषधि को पान करता है। तो वमन कर देता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि वह अपने रूग्णों की औषधि को स्वतः जानते हैं। इसी प्रकार मेरे पुत्रों! जितने प्राणी है, इस संसार में प्रत्येक प्राणी अपनी अपनी औषधि

को जानता है। तो उन औषधियों को आहार वह मानव भी करता रहता है। उन्हें जानता है इसी प्रकार वह अपने में महान बना करता है।

सूर्य चिकित्सा

तो विचित्रता बेटा! क्या है कि हे मानव! यह सब प्राणी जानते हैं, मानव भी अपने रूग्णों की औषधि को जानता है। परन्तु वह अपनी रसना के इतना धूर्तपन में आ जाता है कि अपनी औषधि को अपने से दूरी कर देता है, परिणाम क्या है? देखो, शरीर में किसी भी प्रकार का रूग्ण हो सूर्य की किरण इस प्रकार की है। जो मानव के रूग्णों को शान्त कर देती है हमारे यहाँ सूर्य चिकित्सा भी विशेष रही है, जैसे प्राण चिकित्सा है, औषधि चिकित्सा है। इसी प्रकार सूर्य चिकित्सा भी विशाल रही है। सूर्य चिकित्सा में बड़े विशेषज्ञ हुए है। जिन्होंने सूर्य की किरणों से रूग्ण को शान्त करना प्रारम्भ किया, जल पिपादों को बनाया जाता है, जल को पांच रंगों वाला जल तपाया जाता है। सप्त सप्त दिवस सूर्य की किरणों में तपता रहता है। जल तपने के पश्चात उसका मर्दन किया जाता है। कोई पान करता है। तो भिन्न भिन्न प्रकार के रूग्णों में वह अपने कार्यवत आता है।

तो बेटा! मैं बहुत दूरी न चला जाऊं यह एक बहुत भयंकर वन है, जिसमें आज तुम मुझे ले गएं हो बहुत पुरातन काल में इस वन में हम भ्रमण करते रहते थे न प्रतीत मुझे तुम इतने समय के पश्चात भ्रमण क्यों करा रहे हो, इसको मैं जान नही पा रहा हूँ। विचार केवल यह है कि संसार में यह विज्ञान एक विशाल ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों मानवीय धाराओं में गति करता रहा हैं। तो हमारी आज की धारा क्या कह रही है कि हम अपने में वैज्ञानिक बनें अपने में औषधि को जानने वाले बनें मानव के शरीर में मानव की औषधि निहित रहती है। मानव की धाराओं में या बाह्य जगत में भी रहती है। हमें नाना प्रकार की आभा में रमण करना चाहिए।

पूज्य महानन्द जीः महानन्द जी भगवन! कुछ औषधि इस प्रकार की होती हैं जिन औषधियों से जैसे मानव के श्वांस की गति तीव्र हो जाती हैं और तीव्रता को समानता में लाने के लिए कौनसी औषधि आपके यहाँ विशेष मानी जाती हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! हमारे यहाँ बहुतसी औषधि इस प्रकार की सूर्य चिकित्सा में भी हैं, प्राण चिकित्सा में भी हैं, इसमें हम तुनिकेतु, स्वञ्जनी, धृष्टतानी, चनकेतु, चुरिणाम इन सब औषधियों का पिपाद बनाके पान करने से श्वांस की गति सामान्य बन जाती है।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन! आधुनिक रूपों में हम इन्हें क्या कह सकते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः हम आधुनिक नामों की चर्चा नही कर रहे हैं आधुनिकता को हम नही जान पाते हैं।

पूज्य महानन्द जीः तुनिकेतु तो तुलसा बन गयी, और सोमकेतु चरश्वति बन गई, मुनकेतु मुनक्का बन गया, श्वञ्जनी काली चरीचरी अश्वांग बन गई इस प्रकार की शुद्ध औषधियां यह बन करके पिपाद बनाया जाता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हां ऐसा होगा

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन! इन औषधियों का पान करने से मानव के श्वांस की गति विशुद्ध बन जाती है इसको तपाना।

पूज्यपाद गुरुदेवः हां अग्नि में तपाना जल अग्नि की पुटों में यह बनता है इसका रस बनता है।

पूज्य महानन्द जीः तो प्रभु! यह प्राण चिकित्सा आपने वर्णन किया है यह प्राण चिकित्सा आधुनिक जगत में वर्तमान में तो नही है।

पूज्यपाद गुरुदेवः वर्तमान में हो या न हो प्राण चिकित्सा हमारे यहाँ बहुत पुरातन काल में बहुत काल तक रही है। वर्तमान में भी यह चिकित्सा होती है। पुत्र यह तो परम्परागतों से ही, मानवीय मस्तिष्कों में रहा है परन्तु यह प्राण चिकित्सा, सूर्य चिकित्सा है यह बहुत महत्व की चिकित्सा मानी गई है। आज मैं इन वाक्यों में विशेष जाना नही चाहता।

विचार क्या चल रहा था सुधन्वा की वार्ता चल रही थी सुधन्वा और महात्मा भुंजु, महात्मा भुञ्जु के पुत्र जो अश्विनी कुमार थे वह इस औषधि विद्या को बहुत प्रकाश में लाए। सुधन्वा ने भी इस सम्बन्ध में बहुत अनुसन्धान किया और पार्थिव तत्त्व की

जो औषधि थी उनका विशेष रूप से जानने का प्रयास किया। तो इसीलिए यह विज्ञान परम्परागतों से मानवीय मस्तिष्कों में गति करता रहा है। क्योंकि इन औषधियों को जानने से संसार की नाना औषधियों को जान करके वैद्यराजों की उपाधियों को प्राप्त करते रहे हैं। वैद्यराज बनते हैं। नाड़ी छेदन विज्ञान और नाड़ी विज्ञान और चक्षु विज्ञान उन दोनों को दृष्टिपात करने से उन दोनों की प्रतीति होती है। जैसे नेत्रों से नेत्रों का मिलान हुआ तो उनके नेत्रों से यह प्रतीत होता है, नेत्रों में हरित वर्ण, पीत वर्ण, और लोहित वर्ण और रात्रि वर्ण ये तीन प्रकार के वर्णन नेत्रों से प्रतीत होते हैं। यदि हरित वर्ण होता हो तो जानो कि उसे उदर में विशुद्धता नही हैं, और हरित वर्ण में पीत वर्ण प्रतीत होती हो कि उसका धातु पिपाद उपस्थ के द्वारा बह रहा है। वह शुद्ध नही हो रहा है। जिसका रात्रि वर्ण होता है उसकी अस्थियां जो हैं, ऊर्ध्वा में गति कर रही हैं तो इस प्रकार के गुणों का निदान भी परम्परा से हमारे यहाँ माना गया है। इस प्रकार का विज्ञान परम्परा से ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में रहा है।

तो बेटा! इन वन में मैं आज जाना नही चाहता हूँ, यह विशाल वन है। तुमने मुझे वन में पंहुचाया है। वेदमन्त्र आते रहेंगें उनकी व्याख्यां करेंगें। आज का विचार तो हम समाप्त करने ही जा रहे हैं, विचार यह कि हम अपने में महान और पवित्र बनने के लिए तत्पर रहें। परन्तु तुमने यह जाना दधीचि नाम के ऋषि भी है। एक दधीचि नामक वृक्ष भी होता है। दधीचि पर्वतों को भी कहते हैं, परन्तु जो मैंने व्याख्या की आज विचारने से प्रीतत होता है। तो यह आज का वाक समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा। इसके पश्चात यह वार्ता समाप्त हो जाएगी।

13.821217-यज्ञ के ज्ञान विज्ञान का विचित्र वर्णन

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने जिन वेदमन्त्रों पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना देव की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं। जो मानो इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड में ओत प्रोत हैं, जिसका ज्ञान और विज्ञान नितान्तर माना गया हैं। क्योंकि उसके ज्ञान और विज्ञान की कोई सीमा नही है, न उसके ज्ञान और विज्ञान को कोई सीमा बद्ध कर सका हैं। क्योंकि वह सर्वत्र एक एक कण कण में व्याप्त है। आज का हमारा वेदमन्त्र यह कह रहा था, ब्रह्मा अग्नं ब्रह्मणा वर्णो अस्सुता मानो वह जो अग्नि हैं, जिसे हम ब्रह्माग्नि कहते हैं। मानो वह ब्रह्माग्नि बन करके, इस संसार को प्रकाश में लाती हैं। क्योंकि ब्रह्माग्नि का जब समन्वय, इस जड़वत से होता है तो अपने परमाणु गति करने लगते हैं, तो मानो उन्हीं परमाणुओं का यह जगत है, उन्हीं परमाणुओं से बेटा! यह सर्वत्र लोक लोकान्तर हमें दृष्टिपात आ रहे हैं। इन्हीं परमाणुओं की धाराओं को ले करके, यह प्राण स्वरूप बेटा! आभा में गति करने लगता है मानो यही है ब्रह्मग्नि जो यज्ञमान के हृदय में प्रदीप्त हो जाती है, मानो उस हृदय में से सुन्दर सुन्दर तरंगों का निकास होने लगता है तो मेरे प्यारे! देखो, यही अग्नि हैं जो काष्ठों में रह करके यज्ञशाला में बेटा! अपनी आभा को जन्म देती हैं वेद का मन्त्र कहता है ब्रह्मा अग्नं ब्रह्मणं अस्सुतं देवाः हे अग्ने! तू प्रकाश है। तू प्रकाश के देने वाली हैं मानो तू प्रकाश में रमण करा देती हैं प्रत्येक प्राणी मात्र, एक प्रकाशमयी बन रहा है। चाहे वह प्राणी किसी भी मण्डल में गति करने वाला हो, परन्तु वह एक अनुपम प्रकाश दे रही है। उसी प्रकाश को ले करके, मानव प्रकाशित हो रहा हैं, और उस प्रकाश की आभा में गति करता हुआ, प्रकाशित होता हुआ, वह अपने में स्वतः प्रकाशित हो जाता है। तो विचार विनिमय क्या, वह जो ब्रह्माग्नि है, जो यज्ञशाला में प्रदीप्त हो रही हैं, प्रकाश दे रही हैं जिस प्रकाश में मानव प्रकाशित

हो रहा है। उस अग्नि का नाम ब्रह्मा है, उस अग्नि का नाम ही मानो देखो, धारा है। वही अग्नि बेटा! द्यौ में प्रकाशित हो जाती है। वही अग्नि मानो आदित्य में प्रकाश रूप बन करके, वह अग्नि खनिजों का भण्डार बन करके पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश हो जाती हैं।

तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, हमें विचारना चाहिए कि हम अग्नि के ऊपर अनुसन्धान करने वाले बनें, उस अग्नि के ऊपर जो अग्न्याध्यान यज्ञमान अपनी भावनाओं को चेताता हुआ और यज्ञशाला में बेटा! याग कर्म करता है। अग्नि का अग्न्याधान करता हैं, ये शब्द से अग्न्याधान, मानो देखो, अग्नि का धान करके अग्नि प्रकाश दे देती हैं। इसीलिए प्रत्येक मानव को ध्यानावस्थित हो करके प्रभु का दिग्दर्शन करना चाहिए जैसे यज्ञमान मानो अग्न्याधान करता हुआ, अग्नि को प्रकाशित करता हैं और अग्नि को त्रिकोण बना देता है मानो त्रिकोण अग्नि को बना करके और वह त्रिकोण बन करके सप्तजिह्वा वाली अग्नि, मेरे प्यारे! देखो, मानव को प्रकाश देती हैं, तो इसीलिए प्रत्येक प्राणी को अग्न्याधान करना चाहिए। अग्न्याधान है, क्योंकि यह अग्नि का ध्यान करने मात्र से अग्नि का प्रकाश हो जाता हैं। बेटा! देखो, हृदय रूपी अग्नि का, और बाह्य अग्नि का दोनों का समन्वय हो जाता हैं। जब दोनों का समन्वय हो गया, तो बेटा! देखो, अग्नि अपने प्रकाश में आ गई। वह मानो देखो, कैसी सुन्दर अग्नि, जो काष्ठ में रहने वाली थी, जो अग्नि मानव के नेत्र में रहने वाली जो अग्नि, मानो द्यौ लोक में रहने वाली अग्नि, वह अग्नि बेटा! प्रकाश में आ गई। यज्ञमान उसका ध्यान करते हुए, प्रकाश में आ जाता हैं।

तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या कि हमे अग्न्याधान करना चाहिए। इससे पूर्व शब्दों में, हम बेटा! अग्नि की विशेषताओं का क्या, हम त्रिवर्धा की चर्चा कर रहे थे क्या यह जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड हैं यह मानो त्रिकोण दृष्टिपात आता हैं। गुडाकार में दृष्टिपात आता हैं। परन्तु इसी प्रकार मानव शरीर की जो रचना है, अथवा इस ब्रह्माण्ड की जो रचना हैं वह त्रिकोण वर्धक मानी गई हैं। क्योंकि तीनों गुण एक

ऐसे व्याप्य रूपों से मानो गति करते रहते हैं कि तीनों गुणों का उनको ध्यानावस्थित करना हैं क्योंकि उनमें सतोगुण की प्रतिभा और सतोगुण की आभा को जन्म देना हैं उनमें सतोगुण की आभा का जब जन्म हो जाता हैं। तो वही सतोगुणी आभा बन करके मानव के जीवन की एक पवित्र अग्नि बन करके रहती हैं।

तो मेरे प्यारे! मैं इससे पूर्व काल में तुम्हें बहुतसी चर्चाएं कर रहे थे, आज वेद के सम्बन्ध में त्रिकोण याग की चर्चा हो रही थी, हमारे यहाँ आयुर्वेद परम्परागतों से ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में नृत्त करता रहा हैं, और ऋषि मुनि नाना औषधियों का साकल्य मानो बना करके अग्नि में बहुत से जलों में औषधियों का प्रदान करना, उनको तपाया जाता है उनको खरल किया जाता है। परन्तु उनको रसों में परिवर्तित कर दिया जाता है। तो मेरे प्यारे! वह आयु के लिए, रूग्णों के लिए, भी एक औषध बन करके रहती हैं। वही वनस्पति को बेटा! पृथ्वी के गर्भ में विद्यमान थी, वही अग्नि मुनिवरों! देखो, बुद्धिमानो के द्वार पर आ करके, बेटा! आयु की मानो वह एक औषध बन गई। आयु की औषध बन जाती है।

जैसे बेटा! मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में निर्णय किया था राजा रावण के यहाँ एक सुधन्वा नामक एक वैद्यराज हुए हैं, राजा रावण के यहाँ एक सुधन्वा एक प्रकार के विशाल मानो वैद्यराज थे, कि जब वह निन्द्रा में तल्लीन थे, और स्वप्नवत में आ जाते, तो भिन्न भिन्न, नाना रूप में औषधियां आ करके, बेटा! उनके अपने गुणों का वर्णन करती रही और उन गुणों को धारण करने वाले, मानो देखो, सुधन्वा नामक वैद्यराज थे, जो मेरे प्यारे! देखो, नाना प्रकार की भयंकर वनों में से औषधियों को लाना, इनमें विचार करना करना, कि कौनसी औषध में अग्नि प्रधान है कौनसी औषध में जल तत्त्व प्रधान है कौनसी औषध में पृथ्वी है। मानो देखो, यह तीन प्रकार के परमाणु होते हैं तीन प्रकार के परमाणु औषधियों से ले करके, और तत्त्वों तक मुनिवरों! चले जाते और तत्त्वों में जा करके, वही परमाणु तीन के परमाणु बन करके वह विज्ञान की तरंगें बन करके रहती हैं, आयुर्वेद से भी आयु की औषध बन करके रहती हैं। मेरे प्यारे! वही तीन रूपों में गति करने

वाला, योगियों के लिए बेटा! देखो, वह त्रि गुण बन करके, और तीनों को एक सूत्र में ला करके मानो उसको योग सिद्धता प्राप्त हो जाती हैं। तो परिणाम क्या मानो देखो, एक ही औषध है, एक ही स्वरूप है, एक ही परमाणुवाद हैं। वही परमाणु जब जल में मिश्रित हो करके, अङ्कुर रूपों में आ करके, बेटा! देखो, वृक्षों का मानो रूप धारण कर लेता हैं, नाना औषधियों के रूपों को धारण कर लेता हैं। वही मेरे पुत्रों! देखो, पृथ्वी के गर्भ में, वही मानो देखो, रस जा रहा है चन्द्रमा से, वही मेरे प्यारे! देखो, आदित्य से प्रकाश जा रहा हैं। वह पृथ्वी के गर्भ में बेटा! देखो, मानो धातुओं के रूप में वह खनिजों के रूप में प्रवेश करता है और वह प्रवेश करता हुआ मानो देखो, उससे मानव औषधियों का मानो रसों का मिलान करके पृथ्वी के गर्भ के रजों को ले करके उनका मिलान करते हैं। उनमें मानो देखो, अग्नि तत्त्व और वायु और अग्नि की विशेषता को उनमें मानो देखो, अपने में धारण करते रहते हैं। घ्यानावस्थित हो जाते हैं तो महाराज सुधन्वा नामक जो वैद्यराज थे, बेटा! उनका जीवन कितना महान और विचित्र रहा हैं।

जीवनी धारा औषध

परन्तु देखो, वह पर्वत था, त्रिवास नाम का एक पर्वत था, उस पर्वत पर जा करके बेटा! सुधन्वा औषधियों का निदान करते थे, परन्तु उस पर विद्यमान होते थें एक औषध हिमालय के गर्भ में, हिमालय की गोद में होती हैं, जो मानो देखो, जब प्रकाश नही होता, चन्द्रमा और सूर्यों का प्रकाश नही होता, तो वह औषधि अपने में प्रकाशित रहती है, अपने में प्रकाशित उस औषध का नाम मुनिवरों! देखो, जीवनी धारा कहते हैं, उस जीवनी धारा को जो मानो जान लेता है उस जीवनी धारा में ये गुण होते हैं मानो देखो, किसी भी प्रकार का रूग्ण हो, यदि उसे अग्नि में तपा करके, जलों का पिपाद बना करके, बेटा! देखो, उसको पान कराया जाता है तो मुनिवरों! देखो, वह औषधि विज्ञान के आधार पर, मानो देखो, वह अपने में मानो देखो, रूग्ण को प्रकाशित कर देती हैं, और उसको चेतना में प्राण की धारा प्रदान कर देती हैं। क्योंकि वास्तव में हमारे यहां सुधन्वा नामक वैद्यराज का एक

सिद्धान्त रहा हैं क्या रूग्ण जो होते हैं, हमारे शरीरों में तीन प्रकार के दोषारोपण होते हैं। तीन प्रकार के कुपित होते हैं, मानो देखो, जैसे हम तेज पित त्रोण कहते हैं, मानो जिसे वायु रोहण कहते हैं और तृतीय मानो देखो, जल स्थान जिसको क्वावासिनी कहते हैं, मानो यह तीन प्रकार से नसों का निदान किया जाता हैं। जब मानो देखो, नस नाड़ियों का, तीन प्रकार से निदान किया जाता हैं, तो उसी निदान को ले करके, औषधियों को एकत्रित करता है वैद्यराज, यदि मानो देखो, पित्त की प्रधानता है तो शीतलता में परणित रहें, मानो देखो, इसी प्रकार सुधन्वा नामक वैद्यराज जो थे वह मानो देखो, त्रिकोण याग भी करते थे जैसे मैंने पुरातन काल में कहा था त्रिकोण याग जब करते थे तो उस त्रिकोण याग में मानो देखो, यदि किसी को जल की प्रधानता हैं तो मानो देखो, त्रि एक वृक्ष होता हैं, एक शमी वृक्ष होता हैं एक स्वान्धनी वृक्ष होता हैं मानो इनकी समिधा ले करके और वह अग्न्याध्यान करते थे और रूग्ण के द्वारा मानो देखो, उन औषधियों में एक अपामार्ग कहानी किन्तनी और देखो, शैलखण्डा, शिव लिंगी, त्रि केतु, स्वाम्भानु, त्रिकाणत और देखो, इसमें सोन्धी और त्रि कोण वाली वाचकेतु मेरे पुत्रों! देखो, ये सब औषधियों को एकत्रित करके, और उसमें मानो देखो, याग करते थे। जब वह याग करते थे, तो रूग्ण मानो देखो, यक्ष्मा जैसा रूग्ण भी, उससे शान्त होता रहता था। क्योंकि वह याग करते, और उन्हीं औषधियों का पिपाद बना करके, उसमें कुछ औषधियां और मिश्रण होती है। जैसे शानः बिन्धनी, स्वस्त्याम्, सत्यानाशकेतु मानो देखो, उन औषधियों को ले करके, इनका पिपाद बना करके जल में, इनको तपा करके इनका रस बनाया जाता है। रस बना करके मानो देखो, उसका मधु के द्वारा, उसका पान कराया जाता हैं। और त्रिकोण में, वह याग कर्म करता है, जब वह याग कराते रहते थे, तो रूग्ण उनका शान्त हो जाता था। रूग्ण होते ही नही थे, क्योंकि श्वांस के द्वारा, वह याग की तरंगें जाना, और श्वांस के द्वारा देखो, उन औषधियों का भक्षण करना, तो मानो देखो, वह रूग्णों से दूरी होता रहा हैं। मुझे ऐसा वह काल स्मरण आता रहता हैं मानो सुधन्वा नामक, जो वैद्य थे उनको

औषधियां बहुतसी स्मरण थी, उन औषधियों का भेस्यानं ब्रह्मणे।

पूज्य महानन्द जीः प्रभु! उनका जो नामोकरण हैं, आधुनिक काल में उनका नामोकरण का परिर्वतन हो रहा हैं। परन्तु उनके नामों का जैसे परिवर्तन है, तो उनके नामों का विशुद्ध आधुनिक समय में उनके नामों का वर्णन नही कर सकते।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! उनके नामों का करण, तो नाम तो एक ही रूप में रहते हैं, रहा यह कि आधुनिक जगत में मानो उनके नामों का परिवर्तन भाषान्तर के रूपों में हो रहा हो, क्योंकि बहुत समय समय पर अपनी भाषाओं का परिवर्तन होता रहा हैं। परन्तु रहा यह कि इन औषधियों का नामोकरण, मुझे तो इतना स्मरण नही हैं। परन्तु रहा यह सम्भो क्योंकि औषधियों का विशाल भण्डार है कुछ औषधियां ऐसी हैं जो जानकारी में आ सकती हैं कुछ औषध ऐसी होती है, मानो जिन औषधियों का हम नामोकरण भी हम नही जान पाते, जैसे हमारे यहाँ देखो, मजीठ हैं, मजीठ वृक्ष एक सौ छतीस प्रकार का होता हैं परन्तु देखो, उनमें बहुत से गुणान्तर भी होते रहे है तो यह जो औषधियों का यह तो विशाल वन है पुत्रों! मैं तो उतना उच्चारण कर रहा हूँ, जितना मानव के कार्यवश में आ रहा हैं। जिससे मानव के रूग्णों को सान्त्वना को प्राप्त हो जाएं, मैं इतनी विशेषता तुम्हें देने नही आया हूँ।

विचार यह है कि मानो देखो, सुधन्वा की चर्चा कर रहा हूँ, सुधन्वा जब मानो औषधियों से वार्ता प्रगट करते थे, उनके द्वारा मानो देखो, वेद की पोथी विद्यमान रहती वेद का मन्त्र स्मरण रहता, जैसे अपामार्ग है पुत्रों! अपामार्ग भी बारह प्रकार का होता हैं। मानो देखो, वह जो बारह प्रकार का अपामार्ग है, उसमें उसी प्रकार के गुण भी होते हैं, तो एक एक औषध की नाना उसमें जातीयता होती हैं, उन जातयीता के आधार पर, उनके गुणों का वर्णन होता रहता है। परन्तु रहा यह कि हमारे यहाँ बहुतसी औषध इस प्रकार, क्योंकि मुझे कुछ ऐसा स्मरण है, कि राजा रावण के यहाँ जो यह कुम्भकरण जी की मैंने चर्चाएं की थी, महाराज कुम्भकरण जी आयुर्वेद के बहुत से मर्म को जानते थे, क्योंकि आयुर्वेद और विज्ञान मानो

देखो, इन दोनों की सन्तुलना होती हैं, समय समय पर होती रही हैं, क्योंकि जैसे हमारे यहाँ सुधन्वा का वर्णन आता हैं, जैसे हमारे यहाँ, यह जो दसो इन्द्रियाँ हैं, दसों इन्द्रियों में जितनी तरंगें होती है, जितने प्रकार की देखो, औषधियों का निदान भी होता है। परन्तु देखो, यहां हमारे ऋषि मुनियों में विशेषता यही रहती है कि ब्रह्माण्ड को और पिण्ड को एक सूत्र में लाने का प्रयास किया। दोनों की कल्पना भी, इसी प्रकार की गई हैं। जैसे ब्रह्माण्ड है, उसी प्रकार इस पिण्ड में भी प्रतिक्रियाएं होती रहती है। मानो पिण्ड में भी, उसी प्रकार क्रियाकलाप होता रहता हैं। ऐसे पिण्ड और ब्रह्माण्ड की कल्पना, आचार्यों में बहुत परम्परागतों से बेटा! विचित्रत्व मानी गई हैं। परन्तु आज मैं इस सम्बन्ध में विशेषता नही, कल मेरे प्यारे महानन्द जी! अपने इस सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करेंगें क्योंकि मैं इस सम्बन्ध में इतना विशेषकर इतना नही जानता।

विभिन्न धाराओं में याग का चलन

विचार केवल यह है कि यह जो पीपल का वृक्ष है, पीपल भी बारह प्रकार का होता हैं, मानो बारह प्रकार के पीपल के वृक्ष में, उसी प्रकार की उसकी रसायन होती हैं, परन्तु इसी प्रकार जैसे वट वृक्ष हैं, जैसे यह तो आधुनिक नामों को तुमने मुझे वर्णन कराया था उसी आधार पर मानो यह विचार धारा प्रारम्भ हो रही हैं। विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, जैसे हमारे यहाँ त्रि कोण त्रिवर्धा माना जाता हैं। त्रिवर्धा में क्योंकि मानव की विचारधारा भी मानो देखो, तीन प्रकार की विचारधारा होती हैं, रहा यह है कि याग की चर्चाएं, कि याग त्रिवर्धा में त्रिकोण क्यों होना चाहिए? त्रिकोण याग केवल इसीलिए ही नही कि औषध विज्ञान के लिए, यह त्रि कोण तो यह जो ब्रह्माण्ड की रचना है, जैसे मुनिवरों! प्रभु ने मानो देखो, पृथ्वी के आङ्गन में जल की रचना की, यह भी त्रिकोण कहलाता हैं। इसी प्रकार यह जो ब्रह्माण्ड जो गति करता है, तो यह त्रि कोण को ले करके गति करता है जैसे रज तम सत है यह भी त्रिकोण में रहता है यह भी देखो, उत्पति का एक मूल रहस्यतम मानो देखो, उसका उद्घाटन होता रहता हैं तो विचार विनिमय क्या यह जो त्रिकोण,

हमारे यहाँ क्योंकि ब्रह्माण्ड की रचना भी त्रिकोण में मानी गई है, त्रिकोण में मानी जाने से मानो देखो, उसमें सम्भों स्वाति कृतं ब्रह्मा मानो देखो, ब्रह्मा ने ऐसी कुछ क्रियाएं की हैं, जिससे बेटा! यह ब्रह्माण्ड ऐसा ही दृष्टिपात आता हैं। इसी प्रकार हमारे यहाँ जैसे त्रिकोण है, त्रिकोण जो याग है, वह वैद्यराजों को चला गया, चतुष कोण जो याग है, मानो वह राष्ट्र को चला गया, वाजपेयी याग जो है, वह समाज को चला गया, परन्तु विष्णु याग जो वह मानो देखो, ऋषि मुनियों को चला गया मेरे पुत्रों! इसी प्रकार हमारे यहाँ देखो, भिन्न भिन्न प्रकार की धाराओं में यागों का चलन होता रहा हैं। परन्तु जब अश्वमेध याग किया जाता है, तो अश्वमेध याग भी, त्रि कोण कहलाता है, उसमें त्रिकोण की भावना मानो अश्वमेध याग की होती हैं क्योंकि तीन प्रकार का जो ताप होता है, तीन प्रकार के तापों को शान्त करने के लिए त्रिकोण याग का मानो देखो, विधान माना गया हैं, हमारे यहाँ, मुझे स्मरण आता रहता है, महाराजा दक्ष के यहाँ, एक याग हुआ था किसी काल में, बहुत पुरातन काल में हुआ था, मानो देखो, महाराजा दक्ष के यहाँ जब याग हुआ तो, वह त्रि कोण याग हुआ था। महाराज दक्ष के हृदय में, यह कामना जागी, कि मेरा राष्ट्र सुन्दर बनें। परन्तु जब वहाँ पूजन की विवेचना आई, पूजन की चर्चाएं आई, तो मानो देखो, पूजन में उन्होंने जब पूजा की तो मानो देखो, उसमें प्रभु की पूजा करने के पश्चात मानो देखो, रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण इनके सामान्य मानो एक रूप बनाई, रूप बना करके, इन तीनों देवत्व के रूपों में उनमें त्रिकोण याग का, अपने में एक विधित किया और त्रिकोण याग की रचना की। रचना करने के पश्चात उसमें याग हुआ, और जब याग हुआ तो ब्रह्मा ने मानो देखो, उस याग में, मेरे पुत्रों! देखो, उद्गान गाया और गा करके वह स्वयं उदगात बने। ब्रह्मा बन करके उदगेत केतु गाने लगे, तो मानो देखो, जब वह याग हुआ तो राष्ट्र में शान्ति की स्थापना हुई।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! हमने कुछ ऐसा श्रवण किया है कि जो महाराज शिव की जो पत्नी सती थी उसने अपने प्राणों को त्याग दिया था। ऐसा कहा जाता

है।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! ऐसा आता होगा, मुझे तो इसका कोई भान नही हैं। कि उसने अपने शरीर को त्याग दिया हो ऐसा मानो कहीं आता नही।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! हमने ऐसा श्रवण किया हैं क्या महाराजा दक्ष के यहाँ मानो बिना आज्ञा के पति से बिना के उसके वह याग में पंहुची और जब शिव जी का पूजन नही दृष्टिपात किया तो उन्होंने अपने शरीर को अग्नि में त्याग दिया। यह कहाँ तक यथार्थतम हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! ऐसा इतना वह काल इतना पामरों का काल तो नही था मानो यह तो पामरों के काल की चर्चाएं हैं। कि वास्तव में जब शिव नाम हमारे यहाँ बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं, क्योंकि शिव नाम परमात्मा का भी है, शिव नाम राजा का भी हैं और वह जो सती जो संसार में राजा की कन्या, राजा के यहाँ पंहुची, परन्तु राजा के पूजन होने का तो प्रसंग ही नही बनता, जब राजा के यहाँ, राजा के पूजन का प्रश्न नही बनता, वहाँ विजेता का तो प्रसंग बनता है क्या वह राजा अश्वमेध याग नही चाहता, उसे प्रसन्नता से, ज्ञान के द्वारा, उसे विजेता बनाओ, या उसे मानो देखो, उसे हम अच्छी प्रकार से अस्वान करें, और उसका आह्वान करके उसे विजेता बनाएं उसे विजय करके, उसके पश्चात वह याग करने का अधिकार राष्ट्र को होता है, और राष्ट्र भी इसीलिए याग करता है, क्योंकि अश्व जो राजा के यहाँ प्रजा है, पशु धन है, उसमें हर प्रकार की शान्ति हो जाएं, इस प्रकार वह याग करता हैं, रहा यह है कि वहाँ राजा के पूजन का प्रसंग नही आता मानो तो अप्रणं ब्रहे।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! इस वाक को हम मिथ्या स्वीकार कर लें।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या पुत्र! मैं यह नही कहता हूँ कि तुम मिथ्या उच्चारण करो, परन्तु प्रायः हमारी दृष्टि में ऐसा वर्णन नही आया, क्या उसने याग में अपने शरीर को हूत कर दिया हो, याग में हूत करने प्रसंग यहाँ कदापि नही बनता, क्योंकि वह हिंसा होती है और किसी याग में जाने के पश्चात, किसी के याग को अपमान

में आ करके उसको विध्वंस कर देना, यह कोई बुद्धिमानता नही होती। परन्तु देखो, इसलिए मेरे विचार हमारे विचार में तो मुनिवरों! देखो, ऐसा कहीं देखो, विधान आता नही। परन्तु देखो, ऐसी कोई गाथा भी नही आती।

परन्तु यह है यहाँ तो तो गाथा मुझे आई हैं, क्या वह बिना क्या मानो देखो, शिव ने कहा कि तुम महाराजा दक्ष के यहाँ न जाओ। तो उन्होंने आज्ञा का उल्लंघन किया और यह कहा कि मैं तो अवश्य जाऊंगी क्योंकि वह मेरे पिता हैं, उन्होंने कहा बिना निमन्त्रण के किसी पिता के गृह में भी प्रवेश करना चाहिए। मानो यह याग है उन्होंने जब ऐसा कहा तो उन्होंने वह स्वीकार नही किया, वहाँ से सति अपने पिता के यहाँ पंहुची और पिता के यहाँ जा करके, मानो वह याग को दृष्टिपात किया, वहाँ देवताओं के पूजन का प्रसंग ही नही बन पाता, क्योंकि देवता राजा नही होते देवता वह होते हैं, जो देते हैं, जैसे बुद्धिमान होते हैं, वह देवता है, पितर जन है, वह देवता हैं, मानो देखो, ब्रह्मवर्चोसि है, वह देवता हैं, देवता में सूर्य चन्द्रमा इत्यादि हैं। ये देवता कहलाते हैं परन्तु जब यह देवता है तो यहाँ उस पूजन का प्रसंग नही बन पाता। मानो जैसे शिव नाम परमात्मा का तो वो भी देवता है ब्रह्म नाम परमात्मा का है, वह भी देवता है। विष्णु नाम परमात्मा का है, वह भी देवता है। परन्तु देवता की प्रसंग की परिभाषा में यह है जो मानो देखो, हमारे में गुणों का वर्णन करते हैं वह सब देवता कहलाते हैं। परन्तु रहा यह कि यह सब पामरों का वचन है, कोई देवी जा करके बिना आज्ञा के पंहुची और वह जा करके उसकी आज्ञा को समाप्त कर दे यह कहीं बेटा! ऐसा कर्मकाण्ड की पद्धति में, या साहित्य में प्राप्त नही होता। इतना ही प्रायः प्राप्त होता है क्या मानो देखो, वह हिमाचल के यहाँ देवी जैसे पंहुची उनकी पुत्री थी, उनका वहाँ मानो आदर भी हुआ मानो देखो, वह किसी कारण वश, उन्होंने उनका कोई कुशलता न जानने के कारण, मानो देखो, उसका अपना अपमान उन्होंने स्वीकार किया, उस अपमान को ले करके वह अपने आश्रम में चली आई, ऐसा तो कहीं आता है साहित्य में, परन्तु ऐसा नही आता क्या, उन्होंने अपने शरीर को त्याग दिया हो, और जैसा तुम

उच्चारण कर रहे थे, महाराजा शिव उसे लिए हुए मानो देखो, सर्वत्र पृथ्वी पर भ्रमण किया हो जो ऐसा नही आता। क्योंकि ऐसा आने से यह पामरों का कर्तव्य है, यह मानो महापुरूषों का कार्य नही होता। इसी प्रकार मानो देखो, ब्रह्मणाता जब हम ऐसा बेटा! स्मरण आता रहा है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह वाक हम मिथ्या स्वीकार कर लें।

पूज्यपाद गुरुदेवः जब बेटा! मैं इस वाक को तो नही कह रहा हूँ कि तुम मिथ्या उच्चारण करो परन्तु तुम यह स्वीकार करो, कि जो है मैं उसे उच्चारण कर रहा हूँ। परन्तु गाथाएं आती रहती है, परन्तु ऐसा नही मानो यह आलांकारिक चर्चाएं तो हो सकती है, और अलंकार में यह हो सकता है, याग कहते हैं, इस मानो देखो, शुभ कर्मों का नाम याग माना गया हैं, जितना भी यह संसार रूपी कर्म और क्रियाकलाप हो रहा है, यह सर्वत्र एक याग रूप में माना है और याग का जो स्वामीत्व करने वाला है, वह शिव है। शिव नाम यहाँ परमात्मा का हैं। परन्तु क्योंकि शिव नाम सङ्कल्प का हैं, जब एक मानव सङ्कल्प करता है, शिवं संकल्पां ब्रह्मे वर्णा मानो देखो, जब शिव सङ्कल्प करता है, सुन्दर सङ्कल्प करता है, उस सङ्कल्प को ले करके वह मानो देखो, सर्वत्र भू मण्डल में मानो देखो, पतिभा बन करके प्रभु की एक आभा बन करके सुप्रेरणा बन करके मुनिवरों! देखो, सबके हृदयों को पवित्र बना सकती हैं। ऐसा तो मानो देखो, अलंकार की विवेचना में आता रहता है। परन्तु कहीं साहित्य देखो, इतिहास और देखो, साहित्यिक आभाओं में ऐसा कही गाथाओं में वर्णन नही आता।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! ये आधुनिक काल का समाज इस प्रकार की वार्ता स्वीकार करता है क्या शिव उसे लिए हुए भ्रमण किया, और जहाँ जहाँ मानो देखो, उस अग्नि में प्रवेश हुई जहाँ जहाँ उसके अङ्ग जाते रहे, उसी अंगों की पूजा का विधान आधुनिक जगत में बना हुआ हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! बना हुआ होगा, परन्तु प्रायः देखो, ऐसा नही, क्योंकि देवी नाम हमारे यहाँ देवी नाम प्रकृति को कहते हैं, देवी नाम प्रकृति को, जैसे प्राणियों

की जैसी प्रकृति होती हैं, जैसा वायुमण्डल होता है, मानो जैसे आचार्यों की पद्धति बन जाती है उसी प्रकार, वहाँ उस प्रकार का पूजन होना प्रारम्भ हो जाता है। उसी प्रकार के पूजनों में यदि रूढ़ि नही आती, तो वह पूजन बन करके रहता हैं, और यदि उनमें रूढ़ियाँ आ जाती है, तो वह रूढ़ियाँ राष्ट्र के लिए वह हानिप्रद बन जाती हैं। समाज के लिए हानिप्रद बन जाती है। तो इसीलिए हमारे विचारों में तो प्रायः ऐसा बेटा! आता हैं मानो देखो, दो प्रकार से गाथाओं का वर्णन किया जाता हैं वैदिक साहित्य में आलांकारिक रूपों से और देखो, बाह्य जगत में साहित्यिक रूपों से, साहित्यिक और देखो, आलांकारिक रूपों में, जो दोनों में अन्तर्द्वन्द्व आ जाता हैं, जैसे हमारे यहाँ, देखो, बाह्य जगत में विष्णु नाम राजा को कहा हैं, वह विष्णु याग करता हैं, विष्णु एक याग भी होता हैं। विष्णु कहते है। पालन करने वाले को, माता में विशेषकर मानो देखो, विष्णु की प्रवृत्ति होती हैं। माता जब पालन करती है, बालक का तो विष्णु बन करके करती हैं, क्योंकि वह जो विष्णु है, उसका स्वभाव है, नम्रता और नम्रता से बालक का सतोगुण से पालन किया जाता हैं। यदि माता के हृदय में सतोगुण नही हैं, मानो तो वह बालक का पालन नही कर सकती, जब बालक का पालन नही कर सकती, तो मानो देखो, वह माता नही कहलाती। तो इसीलिए देखो, माता को विष्णु कहते हैं, राजा का नाम भी विष्णु हैं, तो इसीलिए यहाँ विष्णु याग का भी मानो देखो, विधान आया हैं, विष्णु याग कौन करता है? जो शान्ति और पालन के लिए होता हैं। जैसे माता अपने बालक का पालन कर रही है, और पालन करते मानो वह सतोगुण में जाना चाहती है तो सतोगुण ही सतोगुण मानो देखो, बालक को देखो, रजोगुण, सतोगुण, तमोगुण तीनों गुणों में आ करके उसका पालन करती है। यदि तीनों गुण माता में प्रायः प्राप्त होते हैं, सतोगुण भी होता है, रजोगुण भी होता हैं, और तमोगुण भी होता है। क्योंकि रजोगुण, तमोगुण में उत्पति हैं सतोगुण में पालन है और रजोगुण से शासन हैं। मानो देखो, बालक को अनुशासन में लाने के लिए रजोगुण की आवश्यकता रहती है, और पालन करने के लिए सतोगुण की आवश्यकता हैं।

परन्तु सतोगुण में भी पालन करने के लिए, रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण मानो देखो, सभी कार्यों में आते हैं इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, माता मे तीनों गुण दृष्टिपात आते हैं जैसे राजा के राष्ट्र में भी तीनों गुण दृष्टिपात होते हैं परन्तु देखो, राजा में सतोगुण पालन, रजोगुण शासन और मानो देखो, तमोगुण में आ करके मानो देखो, वह अपने असुतों में रमण करता हैं ये तीनों गुण राजा में भी क्योंकि तीनों गुण नही होंगें, हम पालन और एक दूसरे की वार्ता को हम प्रगट नही कर सकते। इसी प्रकार हमें विचारना है कि हम मानो देखो, विष्णु याग करना चाहते हैं, उस विष्णु याग का अभिप्राय यह है कि हम वायुमण्डल में, हम एक हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में विष्णु सूक्त आता है। तो विष्णु सूक्त के द्वारा देखो, वह ब्राह्मण याग करता है, राजा याग कराता है, यज्ञमान बन करके, माता यही चाहती है, तो माता भी विष्णु याग करती हैं। मानो देखो, उस याग से, यह होता है विष्णु सूक्त का पठन पाठन होता हैं, और क्योंकि वह पालन करने के सूक्त है, मन्त्र हैं, उनका उच्चारण हो करके वह विष्णु याग कहलाता है। इसी प्रकार हमारे यहाँ देखो, विष्णु याग का भी वर्णन है, देखो, रजोगुण को प्रजा को अनुशासन में लाने के लिए, मानो देखो, रुद्र याग होते हैं। इसी प्रकार ये नाना प्रकार के यागों का चलन हमारे यहाँ यह परम्परागतों से माना हैं, जैसे हमारे यहाँ विज्ञान को जानने के लिए वाजपेयी याग की आवश्यकता है, वैज्ञानिक जन, विद्यमान हो करके वाजपेयी याग करते हैं, वाजपेयी याग में मानो देखो, कृषक देखो, पृथ्वी का जो विज्ञान है, पृथ्वी का जो क्रियाकलाप हो रहा है, जैसे मानो देखो, उसमें कहीं भूमि उष्ण है, कहीं भूमि मानो शीतल है कहीं भूमि किसी प्रकार की है, तो इस प्रकार की मानो देखो, विद्याएं मानो देखो, वैज्ञानिकों को और कृषकों के समीप होनी चाहिएं। कि जहाँ जिस प्रकार की वह पृथ्वी है, मानो देखो, प्रथा उसी, प्रकार के अन्न की उत्पति करना, और उसके गर्भ में जानना है, कि कौनसा तत्त्व प्रधान हैं, मानो देखो, पृथ्वी में जहाँ शीतलता होती हैं वहाँ कौनसी धातु, कितनी दूरी पर, मानो देखो, हो सकती हैं, उसी के तरंगे आ करके अन्नाद में विद्यमान होती है, जैसे मानो तन्दुल

होता हैं, तो उस तन्दुल जहाँ जलाशय वाली भूमि में प्रवेश किया जाता है, तो उसमें से पार्थिकता विशेषकर उत्पन्न होती है, उसमें शीतलता हैं, उसमें पार्थिकता हैं, मानो देखो, उसमें वायु शेषणी अन्नाद कहलाता हैं, इससे यह सिद्ध हुआ है, कि जल का जितना पिपाद हैं उससे मानो देखो, दस योजन या पांच योजन के निचले भाग में वह मानो वह खनिज तुम्हें प्राप्त हो सकता हैं।

तो इस प्रकार का वैज्ञानिक होना चाहिए, तो वह हमारे यहाँ उसको हमारे यहाँ रुद्र याग के देखो, वाजपेयी यागों में प्राप्त होती है वाजपेयी यागों में यह विचारना की, यह जो तरंगें जा रही है यह कहाँ जा रही है? मानो देखो, यह तरंगें कौन से लोक में क्या क्या कार्य करती है, वह वैज्ञानिक जन उसके समीप होने चाहिए। तो वाजपेयी याग विज्ञान का याग है जिसके ऊपर देखो, वैज्ञानिक अनुसन्धान करते रहते हैं हमारे यहाँ कोई नवीन वाक नही है, ये परम्परागतों का वाक है, वाजपेयी में तो साकल्य विशेष होते हैं वाजपेयी याग में मानो कुछ औषधियां विशेष होती है, जिनके द्वारा वो वायुमण्डल को बनाते हैं, उसी प्रकार से मस्तिष्कों में देखो, परमाणु जा करके उसका निदान करते है। उसके ऊपर अनुसन्धान करते हैं, तो इसी प्रकार, हमारे यहाँ पुत्रों! इस प्रकार के यागों का अभिप्राय परम्परागतों से माना गया है मैं रूढ़ियों में नही ले जा रहा हूँ, यागों की व्यापकवाद की चर्चा प्रगट करने जा रहा हूँ, परन्तु किसी भी याग में, हमारे वैदिक साहित्य में बेटा! हिंसा नही होती। हिंसा से रहित याग कहलाए जाते हैं। मानो देखो, उस वाजपेयी याग में, बैल का किस प्रकार हम पालन करें? किस प्रकार उसको मानो कार्य वाहक दें? मानो इस प्रकार का वर्णन वाजपेयी याग में हैं, गऊओं का कैसे पालन हो? गऊ किस प्रकार की हों? गऊओं को किस प्रकार का विशाल स्वरूप दिया जा सकता है, जो राष्ट्र का कार्य होता है, तो इस प्रकार के मानो देखो, पशु विशेषज्ञ वैज्ञानिक हो इस प्रकार के यागों का चलन, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, माना गया हैं। परन्तु रहा यह है, कि हमारे यहाँ अश्वमेध याग का वर्णन अश्वमेध याग परम्परगतों से राजाओं की प्रतिक्रियाओं में होते रहे हैं। क्योंकि अश्व

नाम राजा हैं, और मेध नाम प्रजा का है, दोनों को एक सूत्र में लाने के लिए, और राष्ट्र को ऊँचा बनाने के लिए वह याग प्रायः होते रहते हैं। परन्तु देखो, वेद का ऐसा विज्ञान है, कि कोई वस्तु ऐसी नही है, जो वेद में उसको क्रिया में जाने का प्रयास न किया हो। प्रत्येक प्रतिक्रिया होती रही है, वह ज्ञान में, विज्ञान मैं आभा में गृणियों में बेटा! देखो, मानव के मस्तिष्कों में ज्ञान विज्ञान परम्परगतों से ही नृत्त करता रहा है। परन्तु देखो, मानव जो इसके ऊपर अनुसन्धान करता हैं अनुसन्धानात्मक दृष्टि से उसको अपने में क्रियात्मक लाने का प्रयास करता है, तो वह क्रिया में आ करके, राष्ट्र के बहुत प्रबल सम्पदा बन करके रहती हैं। परन्तु देखो, इसके ऊपर, बहुत परम्परागतों से अनुसन्धान होता रहा हैं। मेरी दशा बेटा! पुनः मानो देखो, दूसरे रूपों में परणित हो गई हैं विचार विनिमय क्या है? मानो देखो, मैं उच्चारण कर रहा था, सुधन्वा नामक वैद्य की चर्चाएं, वैद्य राजों की चर्चा तो मेरे प्यारे! अनुसन्धानवेत्ता बनना, यह मानव की एक मौलिक हृदय अगम्मयी मानो एक धारा हैं, यह उस हृदय की मानो देखो, तरंगें उद्बुद्ध हो करके आती हैं। विचार विनिमय क्या है? मुनिवरों! देखो, हमें उन वाक्यों पर बारम्बार विचार करना चाहिए, कि हमारें यहाँ यागों में क्या क्या है, इसकी चर्चांए मेरे प्यारे महानन्द जी!, अपनी भूमिका में प्रगट करेंगें। आज वाक केवल इतना तुम्हें केवल इतना परिचय कराने चला हूँ, कि हमें परिचय करना चाहिए, यागों में और देखो, साहित्यिक चर्चाओं में, हमें अपने साहित्य को ऊँचा बनाना, महान बनाना यह प्रायः हमारा एक कर्तव्य कहलाया जाता है। मेरे प्यारे महानन्द जी! किसी काल में इनके हृदय में नाना प्रकार की तरंगें उत्पन्न होती रही है, उन तरंगों का मानो एक विशाल रूप बन करके, हमारे समीप आता है, तो हम भी यह उच्चारण करते हैं कि यह समाज यह संसार कैसा बन रहा हैं? संसार की प्रतिक्रिया कैसी बन रही हैं? यह मेरे पुत्र! कल विशेषता में कल अपने विचारों का प्रगट करेंगें। मैं सुधन्वा के बहुत से क्रियाकलापों की चर्चा बहुत से रूप में प्रगट करूंगा।

आज का वाक केवल क्या कि मैंने एक सुन्दर भूमिका बनाई हैं, परिचय देने के

लिए, यह परिचय मेरे पुत्र महानन्द जी प्रगट करेंगें, आधुनिक काल पूर्व काल दोनौं का समन्वय कर सकेंगें क्योंकि वैद्यराजों की प्रतिभाषिता, परम्परागतों से बड़ी विचित्र रही है, और औषधि विज्ञान एक मानव के मस्तिष्क में बड़ा विशाल बन करके रहा है। इस औषध विज्ञान को हम मानो देखो, पूर्ण रूपेण कोई भी अब तक नही जान सका हैं परन्तु जितना जाना है उसके ऊपर प्रकाश अवश्य प्रगट करेंगें, बेटा! आज का विचार यह क्या कह रहा है, आज की धाराएं यह क्या कह रही है, कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, उस ब्रह्म को ब्रह्मग्नि में परणित करते हुए, यह ब्रह्माग्नि है जो यागों में परणित हो करके, मानव के हृदयों से, जिनका समन्वय रहता हैं, मानव के हृदय से बेटा! एक एक धारा बड़ी विचित्र बन करके रहती है। बेटा! विचार विनिमय क्या, कि परम्परागतों से ही, बेटा! देखो, जो भी कुछ जाना है, जिस मानव ने, वह अपने हृदय से भिन्न हो करके कुछ नही जाना है इस पर हम समय समय पर चर्चा करते रहते हैं, चाहे वह यौगिक विषय हो, चाहे वैज्ञानिक हो, चाहे परमाणुवाद हो किसी भी प्रकार विषय हो, परन्तु वह अपने हृदय अगम्य ज्योति में होता हैं, और उस ज्योति को चेताने की आवश्यकता हैं, जब प्राण और मन की धुक धुकी लगती हैं, तो हृदय ज्योति जागरूक हो जाती हैं उसमें यह जो तरंगें उत्पन्न होती हैं, उन तरंगों को मानो अपने में देखो, उसको कार्य रूप दे करके, उस बाह्य जगत बन जाता है। कुछ आन्तरिक जगत बन जाता हैं। मानो देखो, कुछ अगम्य नेति में परणित हो जाता है। ये है बेटा! आज का वाक्, तो समय मिलेगा, तो देखो, मेरे प्यारे महानन्द जी! अपने व्यापक रूप से वह कुछ ना कुछ प्रगट करेंगें। आज का वाक हमारा समाप्त हो रहा है। चर्चाएं आज भी बेटा! देखो, उन विचारों की भूमिका बनाई है विचार भूमिका बनाने में बहुत समय लगता हैं आज का विचार समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा, इसके पश्चात यह वार्ता समाप्त हो जाएगी। ओ३म् तनु मां हृदाः यशश्चां गतं आभ्यां ऋषि मन्था माणं दधि ब्रह्मा वायु गताहं मनो ब्रह्ममनश्चां दधि ग्राहाणां त्वा माणं आ पाहाम् ओ३म् ब्रह्मणा देवं मया सर्व भद्रा मनो।

14.821219-औषधि के याग से रोगों का शमन

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का, पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव की महिमा का, परमपिता परमात्मा की महिमा का, गुणगान गाया जाता है। क्योंकि इस ब्रह्माण्ड में मानो वह चेतना अपना कार्य कर रही हैं, जिस चेतना में यह ब्रह्माण्ड मानो चेतनित हो रहा हैं। क्योंकि जड़वत और चेतनता में दोनो में रत्त रहने वाला वह ब्रह्म है। मानो वह महिमावादी है, जिसकी प्रतिभा, इस ब्रह्माण्ड के कण कण में ओत प्रोत है। मानो जिसके ऊपर, मानव परम्परागतों से अनुसन्धान करता रहा है, क्योंकि अनुसन्धान की प्रवृत्ति मानव में होनी चाहिए क्योंकि अनुसन्धान एक सूक्ष्मतम से, व्यापकता में ले जाने का नाम है, कोई भी मानव अनुसन्धान करता हैं, वह या तो मुनिवरों! उसके जड़वत को अपनाता हैं, या मानो देखो, पूर्णासतं उसको अपनाता हैं। मानो उसको अपनाता हुआ, पूर्ण कृतियों को अपना करके, वह मुनिवरों! देखो, जड़वत में आता है, और यदि जड़वत को अपनाता है, तो मुनिवरों! देखो, वह सूक्ष्म रहस्य को, मेरे पुत्रों! वह जड़त्व में ले जा करके, वह सूक्ष्मतम बनाता हैं। कोई भी प्राणी इस संसार में हो, कोई भी अनुसन्धान करने वाला हो, परन्तु उसकी अनुसन्धानमयी प्रवृत्ति रहनी ही चाहिए उसकी अनुसन्धान जो प्रवृत्ति है वही मानो उसको जड़वत से चेतना में ले जाती है। क्योंकि चेतना में रत्त रहना ही, अपनी चेतना को जानना, मानो सर्वोपरि वास्तविकता है विज्ञान की एक महान धारा और व्यापकता में रत्त रहना। तो मेरे प्यारे! मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में, हमने तुम्हें निर्णय कराते हुए कहा था कि मानव को अनुसन्धान करना है, सबसे प्रथम अपनी प्रवृत्तियों के ऊपर अनुसन्धान करना है। उसके पश्चात वह बाह्य जगत में वह प्रवेश करता है, तो बाह्य प्रवृत्तियों के ऊपर अनुसन्धान करता हुआ, वह मानो देखो, उसे आभा में ले जाता है, जिसके ऊपर मानव परम्परागतों

से ही मानो अनुसन्धान की प्रवृत्तियों में, मानव रत्त रह जाता हैं।

तो विचार विनिमय यह कि हमारा वेद का मन्त्र, हमें नाना प्रकार की प्रेरणा दे रहा है, उस प्रेरणा का जो स्रोत है, वह मानव का हृदय हैं उस मानव के हृदय में मानो देखो, ब्रह्माण्ड की प्रत्येक वस्तु समाहित रहती हैं, जिस ब्रह्माण्ड की तरंगों में, तरंगित होता हुआ, अपने हृदय में रत्त रहता हुआ अपने में भावित हो जाता है। तो विचार विनिमय यह है कि हम परमपिता परमात्मा की प्रतिभा, अथवा उसकी महानता को अपनाने का प्रयास करें, और उसकी महानता के ऊपर अनुसन्धान अपने हृदय, अगम्यी ज्योति को ले जाते हुए, अपने में मानो अनुसन्धानित होना है। और अपनी मानो जड़वत से, चेतना को अपने जीवन को मानो चेतना में रत्त रहना हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, यह हमारा वेद का मानो नाना प्रकार की प्रेरणा का स्रोत वेद का मन्त्र बना हुआ हैं। जैसे मुनिवरों! देखो, मेरे पुत्र ने, इससे पूर्व काल में मानो बहुत से वाक इन्होंने प्रगट किए हैं जैसा इन्होंने यागों के सम्बन्ध में, अपनी विवेचना प्रगट की हैं, मानो याग के सम्बन्ध में नाना प्रकार के यागों का चलन, नाना प्रकार के रुग्णों का सम्बन्ध मेरे पुत्रों! देखो, इसकी आभा में रहता है। परन्तु देखो, जहाँ प्राण शक्ति को, हम संचालित करते हैं उसे मानो देखो, प्राण की देखो, एक धारा में रमण कराते हैं, तो नाना प्रकार की औषधियों का, एक विषय बन जाता है। मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में, निर्णय देते हुए कहा था, कि हमारे यहां सम्भवितां ब्रह्मणां लोकां वस्तो वाचन्नमा देवत्यां लोकाः हिरण्यमयी रथाः मेरे पुत्रों! देखो, हमारा वेद का मन्त्र यह कहता है, कि हमारे यहाँ, प्राण के सञ्चार के लिए, नाना प्रकार के रूपों में, यह मानव गति करता रहा है, मानो जैसे हमारे यहाँ, मानो देखो, एक साधना का स्रोत हैं, एक स्रोत नाना प्रकार के रूग्णों का है, जब हम मानो देखो, प्राण स्रोत हम देखो, एक साधना के श्रोत्रों में ले जाते हैं, तो साधना के श्रोत्रों में प्राण की एक कृतिका को एक सूत्र में पिरोने का प्रयास करते हैं। सूत्रों में, जब प्राण मानो सूत्र में जब सूत्रित हो जाता है, तो उसी सूत्र को उसी सूत्र में रत्त रहने

से मेरे प्यारे! देखो, उस आभा में रमण करने वाला है मानो उसी सूत्र को हमें विचारना है, जिसके ऊपर मानो अपने में साधना में परणित हो जाता है। जब यज्ञमान मुनिवरों! देखो, यज्ञशाला में विद्यमान होता है, तो याग से पूर्व अपने को साधक बनाता है। मुझे बहुत पुरातन काल की वार्त्ताएं, स्मरण आने लगती हैं, यज्ञमान अपने को साधक बनाता है, साधक बना करके उन औषधियों का पान करता हैं। जिन औषधियों में स्थूलता, मानो सूक्ष्म होती हैं, और सूक्ष्म तरंगें, उसमें विशेष होती हैं। जैसा मैंने बहुत पुरातन काल में, यागों के सम्बन्ध में, मानो क्रियात्मक अपने जीवन को ले जाते हुए कहा था, क्या यज्ञमान जब मानो यज्ञशाला में पूर्वामुख हो करके विद्यमान होता है, तो मानो देखो, अपने में प्रथम भूमिका बनाता हैं, अपने चरित्र की भूमिका को बनाता है, अपने आहार की भूमिका को बनाता हैं, मानो वह पदार्थों का वह पान नही करना, जिन पदार्थों में वासना की तरंगें ओत प्रोत हैं, जिन तरंगों में मस्तिष्क का सन्तुलन मानो देखो, मस्तिष्क को अभ्रत करने वाला हो, एक वह पदार्थ नही होना चाहिए, जिससे मानव को मानो देखो, मानव को शून्य गति में ले जाने वाला हो, इस प्रकार के यज्ञमान को प्रथम यह नियमावली बनानी होती हैं।

मैंने बहुत पुरातन काल में, बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता हैं, जिस काल में मानो देखो, महाराजा त्रि वर्धा बहु ब्रह्म लोकाः मानो देखो, महाराज रावण के वैद्यराज सुधन्वा जब याग कर्म करते थे तो उन यागों में, उस साकल्य को प्रदान करना जिस साकल्यों से बुद्धि के, ज्ञान के तन्तु का स्पष्टीकरण हो जाएं। मानो ज्ञान के तन्तु, एक स्पष्ट रूपों में आ जाएं, क्योंकि यह जो मानव का मस्तिष्क है, मानव के मस्तिष्क के अग्र भाग में मानो ईंगला, पिंगला, सुषुम्ना नाम की नाड़ी कहलाती हैं, उन नाड़ियों में से बहुतसी सूक्ष्म नाडियां मानो ज्ञानवाहक बन करके नाड़ी देखो, ब्रह्मरन्ध्र के वेश को गति करती हैं जब ब्रह्मरन्ध्र के वेश को वह नाड़ियाँ गति करती है तो उनका सम्बन्ध मानो देखो, ब्रह्मरन्ध्र से होता हुआ, पिपाद स्थान से होता हुआ, मानो देखो, परमात्मा का जो ब्रह्माण्ड है परोक्ष रूप में, उसके मानो

देखो, नाड़ी मानो उससे समन्वय होता हैं। उन नाड़ियों का समन्वय होते हुए, जैसे हमारे यहाँ पुरातन काल में, प्रसंग आता रहता हैं, क्या वह जो हम आहुति देते हैं, जैसे वेद का मन्त्र आया है, बृहस्पति को देवता बना करके उसका साकल्य और उसकी अग्नि में आहुति देते हैं, अग्नि उस आहुति की तरंगों को मानो देखो, बृहस्पति लोक में पंहुचा देती हैं, उसी तरंगों को, वह ध्रुव मण्डल में पंहुचा देती है, उसी तरंगों को, वह आदित्य लोक में पंहुचा देती हैं। उन्ही तरंगों को चन्द्रमा के देश में पंहुचा देती है। परिणाम यह होता हैं, क्या वह जब वह वाहक नाड़ियो का ऊर्ध्वा मुख बन करके, मानो देखो, ज्ञान के क्षेत्र में, जब वह प्रवेश करता है, तो मानो वह जो नस नाड़ियों का समूह होता है, वह उसी लोक का होता है, और उसी लोक में वह पुनः उसको प्राप्त होती रहती हैं। मानो देखो, इसीलिए, वह विज्ञान हमारे यहाँ, यह विज्ञान एक परम्परागतों में एक मान्य रहा है, जब वेद की हम तरंगों में प्रवेश करते रहे हैं।

वह काल मुझे स्मरण आता रहा है जब पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में, विद्यमान हो करके नाना प्रकार की औषधियों का पान करते हुए, मानो देखो, जब पुत्रों भवा सम्भवो जब महानन्द जी का वह समय आया था, जब वह साधना के क्षेत्र में पंहुचे तो सर्पकेतनी नामक एक औषध होती हैं, सर्प केतनी नामक जो औषध होती हैं, उसका आसन बना करके और मानो देखो, उस आसन पर विद्यमान हो करके, वह साधना के क्षेत्र में, मानो वह साधना के क्षेत्र में जब प्रवेश होता हैं, तो मन की जो चञ्चलता है, वह एकाग्र हो जाती है। एकाग्र हो करके मानो देखो, उस औषधि को सर्पराज मानो उस औषध को स्पर्श नही करता, स्पर्श न करने से उसमें प्राण शक्ति, विशेषकर होती हैं। मानो देखो, पृथ्वी को वह विशेष कराता है। अपने में ग्रहण करती है। वह साधक के लिए मानो देखो, महान उपयोगी बनती हैं।

तो इसी प्रकार मानो देखो, इस प्रकार का विज्ञान वैदिक साहित्य में हमें प्रायः प्राप्त होता है, रहा यह कि हम मानो रूग्णों में ओत प्रोत हो गएं हैं मानो देखो, अपने अद्‌मा प्राण सुते मेरे पुत्र महानन्द जी ने बहुत से वृक्षों का वर्णन कराया हैं, परन्तु

वह भी पुरातन काल में देखो, इनके ऊपर प्रायः अनुसन्धान होता रहा हैं। हमारे यहाँ, शिक्षा प्रणाली में मानो देखो, राजाओं का यह नियम होता था, प्रत्येक ब्रह्मचारी, प्रत्येक कन्या विद्यार्थी, छात्र छात्रिकाओं को वेद विद्यालय में प्रवेश करने के पश्चात मानो देखो, सर्वत्र प्रकार का ज्ञान विज्ञान का वर्णन उन्हें कराया जाता। मुझे स्मरण आता रहता है जब महाराज अश्वपति के यहाँ, वेद का विज्ञान मानो वेद की विद्या का अध्ययन अथवा कार्य करने का कुछ सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। तो मानो उस समय छात्र छात्रिकाओं को यह विद्या देना, यह आचार्य कर्तव्य है। क्या सबसे प्रथम वह शारीरिक विज्ञान के ऊपर अपने विवेचना करता है, यह शरीर क्या है, मानो देखो, यह शरीर के ऊपर मानो देखो, चौबीस खम्बो वाले, शरीर का वर्णन करता है सबसे प्रथम वह कहता है। क्या इस मानव शरीर में चौबीस खम्बे कहलाते हैं। मानो दस प्राण है, दस इन्द्रियाँ है, मन और बुद्धि चित्त अहङ्कार कहलाते हैं। परन्तु मन, बुद्धि, चित्त अहङ्कार, यह सर्वत्र अगम्य ज्योति कहलाती हैं इसी प्रकार इसके विज्ञान का वर्णन करना भी प्रायः क्या क्या कार्य करता हैं, प्राण का जब योगी मिलान करता है, अपने में समाहित करता है, तो योगेश्वर बन करके ब्रह्माण्ड को अपने में मानो देखो, सूक्ष्म ब्रह्माण्ड में रत्त हो जाता है। इसी प्रकार जब वह ब्रह्माण्ड में रत्त हो जाता हैं तो एक व्यान प्राण संस्कारों का केन्द्र हैं। यह ज्ञान कराना शरीरिक विज्ञान के ऊपर विवेचना देना इसके पश्चात मानो देखो, आयुर्वेद के ऊपर वह परणित करते थे। हे ब्रह्मचारियों! आओ, मैं तुम्हें आयुर्वेद के क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, मैं मानो देखो, एक रज से ले करके वह मानो भूमि में बहुतसी प्रकार रज प्रकार की होती है, जिनको जल में मन्थन करने से बहुत से रूग्णों में मानो देखो, वह कार्य में आती है, जैसा मैंने बहुत पुरातन काल में मानो वर्णन करते हुए कहा था कि नाभि से निचला जो भाग होता हैं, वह मानो देखो, पृथ्वी के जल से मन्थन किए हुए, मानो देखो, जिस स्थान पर मानो देखो, सदैव जल रहता हो, जल स्थली रहती हो मानो देखो, उस रज को ले करके मानो उसका पिण्ड बना करके नाभि प्रवेश में, उसको स्थिर करने से मानो देखो,

उसमें जो उष्म सा अग्नि का प्रकोप आ गया हैं, या जल अग्नि में प्रवेश कर गया हैं, मानो देखो, उसके स्थिर करने से मानो देखो, उसमें शीतलता का क्षेत्र बन जाता हैं। शीतल क्षेत्र बन करके उसमे जो उष्णता आ गई है, वह मानो देखो, वह समाप्त हो जाती हैं। इसी प्रकार, हमारे यहाँ ऐसा माना गया हैं, मानो देखो, बहुत से, ऐसे ऐसे अप्रात ऐसी ऐसी पृथ्वी की रज हैं, जिसमें मानो देखो, जल सदैव रहने वाला हैं, जल का मानो देखो, प्रारम्भ का भाग ले करके, मध्य का भाग ले करके, और उससे मानो देखो, तृतीय पदा में, ऊर्ध्वा में भाग लेने से, तीन समय की, रज लेने से उसको मानो देखो, जिस मानव को, बहुतसा अस्वात हो गया हैं, मानो देखो, उसमें अग्नि का प्रकोप हो गया हैं, उस अग्नि के प्रकोप होने पर, मानो देखो, उसका लेपन करने से, उसमें कुछ इस प्रकार की और धातुओं का मिश्रण होता है, तो उसका लेपन करने से, उस मानव के शरीर में मानो देखो, अग्नि प्रवेश में, अग्नि की धाराओं में मानो वह प्रवेश प्रति कटिवस्त्र में प्राप्त हो जाता हैं, जब कटिवस्त्रा में, वह प्राप्त हो जाता है तो मानो उसकी धारा विचित्र बन जाती हैं, मानो देखो, उसके बहुत से रूग्ण समाप्त हो जाते हैं। इसी प्रकार देखो, अग्नि के श्वंधनं, जिसमें अग्नि प्रवेश विशेष रहा हो, वहाँ का रज ले करके, उसे अग्नि में मन्थन करके मानो देखो, शीतकाल का समय हो, उसका मन्थन करने के पश्चात जल को उसमें मिश्रित करके जो मानो देखो, उसके ब्रह्मरन्ध्र के ऊर्ध्वा भाग में, प्रवेश करता है, तो मानो उसके मस्तिष्क की जो नस नाड़ियाँ हैं, वह ज्ञान वाहक नाड़ियां में, मानो देखो, विशेषकर सहायक होता हैं। परन्तु मैं इस सम्बन्ध में पुत्रों! विशेष चर्चा करने नही जा रहा हूँ।

पूज्य महानन्द जीः क्या गुरुदेव जैसा पृथ्वी के रजों का वर्णन पीत वर्ण में भी आता हैं और गौर वर्ण में भी आता है और वह काला मानो देखो, कालिमा के वर्ण में भी आता है तो इसका आप क्या वर्णन करेंगें।

पूज्यपाद गुरुदेवः मानो देखो, जैसे पीत वर्ण रज का है उस रज का अग्नि में एक पिण्ड बनाया जाता हैं, जल में, और उसको अग्नि में तपाने के पश्चात, मानो उसको

इतना खरल कर देना चाहिए, तो वह जितने भी यह दन्त रूग्ण है, इनका मानो देखो, इनका निदान इनसे हो जाता हैं। परिणाम यह इतना सूक्ष्म मानो देखो, उसका खरल होना चाहिए, क्या वह बहुत ही सूक्ष्मता में आ जाएं। इसी प्रकार जैसे यह मानो यह गौर वर्ण की हैं, गौर वर्ण को ले करके, जब उसमें मानो देखो, बहुत से परमाणु इस प्रकार के हैं जो पीत वर्ण के होते हैं, वह उसके द्वार पर नही आते, इसी प्रकार हमारे यहाँ बहुत से, इस प्रकार के रूग्ण वाले, मानो परमाणु उत्पन्न हो जाते हैं, वह उसको शान्त कर देती हैं। इसी प्रकार देखो, जैसे हमारे यहाँ कालिमा वर्ण की मानो जो रज होती हैं, उसको भी उसका पिण्ड बना करके, उसको भिन्न भिन्न देखो, अंगों में प्रवेश किया जाता है। नेत्रों के ऊपरले भाग में, जैसे कण्ठ के निचरले भाग में, जैसे नाभि के निचले भाग में, मानो देखो, मानव के पश्चिम भाग में भी उसका आवेदन होता है। तो उसको प्रवेश करने से मानो देखो, कुछ घड़ी रहने से, उसमें बहुत से रूग्णों का जैसे अग्नि क्योंकि तीन प्रकार के जो दोषारोपण होते हैं उनमें मानो देखो, वह सहायक बना करते है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह जो रज हैं, क्योंकि जिस रज में, मानो श्वंधनं नाना प्रकार की औषधियों का निदान, हिमालय की कन्दराओं में होता रहा है, वहाँ का रज ले करके भी कुछ कार्यवत हो सकते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ, पुत्र! ऐसा हमारे यहाँ माना गया हैं हमारे यहाँ यह माना है कि शन्ध्य, कृतिकां और श्वेत्ता ये मानो देखो, तीन वर्ण की औषध होती हैं, ये तीन वर्णो की जो औषध है मानो देखो, इन्हीं के द्वारा, मानो वह लेपन करने से, मस्तिष्क में तो मस्तिष्क की नस नाडियां सूक्ष्म शीतलता को प्राप्त होती रहती हैं। जो परन्तु मैं तुम्हें वही ले जाना चाहता हूँ, मानो देखो, यह जो सबसे प्रथम, मैं उच्चारण कर रहा था, इस प्रकार के मानो शिक्षा विद्यालयों में, मानो शिक्षा का विधान होना चाहिए, जिससे देखो, ब्रह्मचारी या ब्रह्मचारिणी मानो कोई भी हो छात्र छात्रिका उसे आयुर्वेद का ज्ञान होने लगे, उसके पश्चात वनस्पति विज्ञान में ले जाएं, वनस्पति विज्ञान में, जितनी भी औषधियां है मानो देखो, उन वृक्षों का वर्णन

करना वृत्तों का ज्ञान होना, वृत्तों के ज्ञान होने पर, मानो देखो, उसकी प्रत्येक अङ्ग का ज्ञान होना, यह आयुर्वेदाचार्यों की पृथा एक भूमिका मानी गई हैं, जैसा हमारे यहाँ विद्यालयों में, इस प्रकार की शिक्षा का विधान किया गया है। माता को विशेषकर, मानो छात्रिकाओं को विशेषकर, आयुर्वेद की प्रतिभा मानो आयुर्वेद का ज्ञान होना चाहिए, जिससे वह बालक का अपने गर्भाशय में सुन्दर रूपों से देखो, उसका निर्माण कर सके, क्योंकि निर्माण करने वाला, रचना करने वाला, प्रभु हैं, भावना और पुट देने वाली माता होती है। ऐसा हमारे आयुर्वेद आचार्यों ने माना है आयुर्वेदाचार्य कहते हैं कि प्रभु! तो अंगों का निर्माण करता है, परन्तु अंगों में जो पुट देता है, वह माता देती हैं। जैसे औषधियां भिन्न भिन्न प्रकार की स्थिर है, जैसे हमें स्वर्ण की स्वर्ण को हमें अग्नि में तपा करके, स्वर्ण को हमें शुद्ध रूप बनाना हैं। परन्तु जैसे पारे का शुद्ध रूप बनाना है, मानो जैसे गन्धिका को, उसमें मिश्रण कराना हैं। तो उनकी जो पुट देने वाला है वह वैद्यराज होता है। तो इसी प्रकार माता जो होती है, वह वैद्यराज की भान्ति होती है। वह मानो माता उस बालक के संस्कारों में पुट प्रदान करती रहती हैं, पुट देती रहती है। जो माता प्रायः भक्ष्य अभक्ष्य पदार्थों का विचार नही करती मानो देखो, वह अपने जीवन में वह एक पामर प्रवृत्ति को जन्म दे रही हैं, जो माता मानो देखो, अपने शरीर को दूसरे के रक्तों से पान करना चाहती है, उदर की रसना के स्वादिष्ट पदार्थों में प्रवेश करना चाहती हैं, मानो वह बाल्यों को आगे सन्तति आने वाली को मानो विष प्रदान कर रही हैं। इसी प्रकार हमारे यहाँ ऐसा विचारको ने माना हैं। परम्परागतों से यह विचारधारा मानवीय मस्तिष्कों में, आयुर्वेदाचार्यों के मस्तिष्कों में रही है। मानो आयुर्वेदाचार्यों ने देखो, उन्हें पुट दी हैं, जिन पुटों को मस्तिष्क की आभा में गति कराया जाता हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या भगवन! माता पुट कैसे देती हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! यह पुट इस प्रकार देती है जैसे प्रथम माह का प्रारम्भ हुआ, प्रथम माह का, द्वितीय माह का जैसे प्रारम्भ हुआ, तो उस समय कुछ

ओषधियों का पान, विचारों को सन्तुलित बनाया जाता हैं। परन्तु देखो, तृतीय माह में, उसकी मानो देखो, रसों का परिपक्व बनना, उससे देखो, शीतली प्राणायाम करना, रेचिका प्राणायाम करना, दोनों को करने से क्योंकि परमाणुओं में पुष्टिवाद आ जाता है। तो पुष्टिका आने के पश्चात, मानो देखो, उसके जब चतुर्थ माह होता हैं, तो अंगों का व्यवसाय जाता है, निर्माण हो जाता है। निर्माण होने से उसकी निर्माणधारा के जन्म होने पर मानो देखो, माता को तीखेंतीव्ण पदार्थों का पान नही करना चाहिए, शीतल पदार्थ होने चाहिए, पुष्टिकारक हो, बुद्धिवर्धक हों, देखो, राग द्वेष से रहित होने वाले शब्द हों, जिससे मानो देखो, उस भूमिका में आदि का बन करके मानो देखो, उसमें पौष्टिक उत्पति हो सकती हैं। इसी प्रकार प्रत्येक माह का, माह की पुट होती है, नवें माह में मानो देखो, प्रभु का स्मरण करना, प्रभु के विज्ञान को विचारना, प्रभु के ज्ञान, विज्ञान की धाराओं पर जाना, कैसे उड़ान उड़नी है? कैसे योगेश्वर बनना हैं? कैसे मानो देखो, योगेश्वर की उड़ान उड़ना हैं। इस प्रकार माता को, अपने विचारों को बनाना हैं, बनाने के पश्चात, वह माता पुट देती रहती हैं, देने के पश्चात मानो देखो, वह बालक रूग्ण में प्राप्त नही होता। बहुत से रूग्ण इस प्रकार के होते हैं, जो माता के गर्भस्थल में उन परमाणुओं का जन्म हो जाता हैं। परन्तु देखो, तीखे पदार्थ पान करने से माता के शरीरों में मानो देखो, उसकी भूमिका बन जाती है। उसके पश्चात जब वह बालक बाह्य जगत में आता है, कुछ मानो देखो, मध्य आयु में वह आया वह रूग्ण जागरूक हो जाते हैं, वह मानो अपने परमाणुओं को सहकारी बना लेते हैं। कुछ मानो देखो, वृद्ध काल में, कुछ मध्य रूपी रेखा में परणित हो करके मानो अङ्ग भंग हो जाते हैं। परिणाम क्या हैं मानो देखो, इस प्रकार की यह विद्या हमें वैदिक साहित्य में आयुर्वेद में हमें प्राप्त होती हैं परन्तु देखो, माता को वनस्पतियों का विज्ञान होना चाहिए। मुझे स्मरण है, मानो देखो, हमारे यहाँ बहुतसी माता, इस प्रकार की हुई हैं जिन्होंने देखो, इस वनस्पति विज्ञान को व्यापक रूपों से जाना हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह जो आधुनिक जो जगत हैं यह जो आयुर्वेद

का विज्ञान हैं, यह हिंसा पर आधारित है, कुछ वनस्पतियों पर आधारित हैं तो क्या इसमें हिंसा नही होनी चाहिए?

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या पुत्र कहीं कहीं हिंसा का भी मानो देखो, वर्णन आता है, कहीं कहीं आता है, ऐसा व्यापक रूप से नही हैं। परन्तु वह कहीं आता है, परन्तु जब विचारकों ने उसके ऊपर अनुसन्धान किया हैं, तो वह भी अधूरेपन में परणित हो गया, वह पूर्ण रूपेण नही होता जैसे हमारे यहाँ एक ऋषि हुए हैं, जिनका नाम रोहिणी केतु नामक ऋषि थे, वह उद्दालक गोत्रीय कहलाते थे। उन्होंने एक समय, वनस्पति विज्ञान के ऊपर और वह हिंसा प्रवृत्ति में परणित हो गएं तो हिंसा प्रवृत्ति में उनकी एक धारा यह बनी क्या जैसे एक मानो पखेरू है, क्या प्राणी है, वह वन में रहता है, नाना प्रकार की वनस्पतियों को मानो वह पान करता हैं, यदि उसके रक्त में उस वनस्पति का रस आ गया हैं, तो उसके रस को पान कर लेना चाहिए। परन्तु उसका प्राणान्त हो जाएं, इसके रस को ले लिया जाएं, उस रस से मानो उसमें बलवती आ जाएगी, प्रायः मानो देखो, यह उनका यह सिद्धान्त रहा, उन्होंने बहुत से प्राणियों को पुरातन काल में देखो, उन्होंने निर्जीव किए, और उनके रसों को ले करके मानो देखो, प्राणों की रक्षा करने में, वह सिद्ध हो गएं परन्तु देखो, ऐसा प्रायः प्राप्त होता है। परन्तु आयुर्वेद यह कहता है वनस्पति विज्ञान यह कहता है, जैसे मानो सर्पकेतु औषध है, यदि उसके रस को ले लिया जाएं, तो सर्प को नष्ट करने से प्राणों को लेने से भी रस को लिया जाता हैं, उसकी अस्थियों को खरल करके मानो देखो, चूर्ण बना दिया जाता हैं, तो मानो देखो, जो उसमें विशेष गुण होते हैं, सर्पकेतु नामक औषध में होते हैं। मानो देखो, उसके रस को विशेषकर पचास गुणा, लाभप्रद मानो देखो, उससे लगभग उससे औषधियों का गुण होता हैं। मानो उसको पान करने से, मानव के देखो, नाना रूग्ण समाप्त हो जाते हैं। जो सर्प के रस को लेने से, बहुत से रूग्णों की उत्पति हो जाती हैं। परन्तु देखो, बहुत से रूग्ण शान्त होते हैं। सर्पकेतु औषध मानो पचीस प्रकार की होती हैं। पचीस प्रकार की औषधियों का रस लेने से मानो देखो, जो श्वातम जो विष होता

हैं, वह उन औषधियों से समाप्त हो जाता हैं। परिमणाम उसका यह होता है क्या वह औषध मानो देखो, वन में प्राप्त होती हैं, उस औषधि का जहो रंग रूप होता हैं वह कालिमा पर होता हैं देखो, जिस प्रकार सर्प भूमि पर गति करता हैं इसी प्रकार मानो उसका जाल बन जाता हैं, उसकी यह ग्रीत कहलाई जाती है, परन्तु देखो, इसके ऊपर मैं विशेष नही विवेचना देने नही आया हूँ मानो देखो, एक एक औषध के बहुत से, गुणों का वर्णन आता रहता हैं। परिणाम क्या है? कहीं यह श्रवण किया होगा, क्या हमारे यहाँ यह भी एक धारा अनुसन्धान की रही हैं क्या हिंसा के विश्वास करने वालों ने, हिंसा के ऊपर रूग्णों को देखो, समाप्त किया हैं। परन्तु जो रूग्ण हिंसा से समाप्त हो सकते हैं, परन्तु वही रूग्ण मानो देखो, औषधियों से जा सकते हैं जैसे हमारे यहाँ ब्रमनकृति होती हैं, उसको खरल करने से, उसको हम पान करने से बहुत से रूग्ण समाप्त होते हैं। परन्तु देखो, जो हिंसा से कार्यों में नही आ पाते, परन्तु देखो, मैं इस विषय को गम्भीर न ले जाता हुआ, विचार विनिमय यह कि विद्यालयों में, इस प्रकार की शिक्षा प्रत्येक मानव ब्रह्मचारियों के मस्तिष्कों में मानो वर्णित करा देनी चाहिए, जिससे उनका जीवन महानता में परणित होता हुआ, अनुसन्धानित होता हुआ अनुसन्धान करने वाले हों। इसी प्रकार, जब इस प्रकार का विज्ञान किसी काल में पुत्र! हमारे यहाँ रहा हैं परन्तु देखो, वह काल कितना महान हैं।

पूज्य महानन्द जीः पूज्यपाद! इसमें तो कोई सन्देश नही है यह काल भगवान राम के काल में भी रहा हैं, यह काल लंकापुरी में रावण के काल में भी रहा हैं, यह ऐसा विज्ञान का काल मानो देखो, सतोयुग के कालों में भी रहा हैं मध्यकालीन द्वापर के प्रारम्भ में भी इस प्रकार की बहुतसी औषधियां रही हैं, जिससे देखो, यह संसार स्वर्ग के तुल्य बना हैं। देखो, रूढ़ियों का, रूढ़ियों का न होना यह मानो देखो, ज्ञान और विज्ञान की सबसे महान सफलता कहलाई जाती हैं। हमारे यहाँ वैदिक विज्ञान में यह माना गया है। अब तो भगवन! जैसा आपने औषधियों का वर्णन किया है, इस प्रकार के विज्ञान की अनुसन्धान की, आधुनिक जगत में हो

तो रहा हैं परन्तु मानो जो हम अध्ययन करते हैं, उसके निचले भाग में आधुनिक जगत का विज्ञान चला जाता हैं। परन्तु देखो, जहाँ जो औषध विज्ञान का अनुकरण है, यह नाना प्रकार की विज्ञान में धारा परणित हो रही हैं, क्या इसको भगवन! मैंने आप को कल नही उच्चारण किया परन्तु मैंने आधुनिक जगत में इस प्रकार की बहुतसी औषधियों का निरूपण हो रहा हैं। औषधियों का जागरूक भी हो रहा हैं। जो हिंसा के ऊपर आधारित हैं। परन्तु वनस्पति विज्ञान को वह यह कहते हैं कि यह वृद्ध हो गया हैं, परन्तु आपके कथनानुसार जब हम उन विचारों पर जाना चाहते हैं। वह वृद्ध नही हो गया है, विचारक वृद्ध हो गएं हैं, परन्तु विचार वृद्ध नही हुआ हैं। इसीलिए देखो, यह जो विज्ञान औषध है, यह औषध वृद्ध नही हुआ हैं, परन्तु देखो, उस पर विचार विनिमय करने वाले वृद्ध हो गएं हैं और वृद्ध होने से उसकी वृद्धावस्था का परिणाम यह है कि यह संसार रसातल को चला जा रहा हैं, वह जो देखो, अकस्मात आधुनिक जगत का जो युवक समाज है, मेरी जो पुत्र पुत्रियाँ है, मानो देखो, उनके देखो, एक जीवन में एक कुटाराघात था मानो देखो, उनके जीवन का आयुर्वेद का वैज्ञानिक कर रहा हैं उनके आहार और व्यवहारों में, इस प्रकार की मानो देखो, इस प्रकार का आहार बना दिया हैं। जिससे देखो, आधुनिक काल का युवक रसातल को चला जा रहा हैं। मानो देखो, उस आहार से न तो विचार बनते हैं, न इस आहार से मानो प्रीति बनती हैं, न उस आहार से मानो राष्ट्रीयता का विचार रहा है, उसमें एक स्वार्थवाद की परता परणित हो रही हैं। जो मानो संसार में दूसरों के रक्तों को पान करने वाला है, उनमें प्रायः स्वार्थता की प्रतिभा उत्पन्न हो जाती हैं और वह जो स्वार्थवाद आ जाता हैं, वह समाज के लिए, गृह के लिए, राष्ट्र के लिए मानो देखो, घातक बन करके रहता हैं। उससे यह संदेह बना रहता हैं, क्या राष्ट्र में कहीं रक्त भरी क्रान्ति न आ जाएं, जिससे मानो देखो, स्वार्थ जब बलवती हो जाता हैं, द्रव्य के ऊपर ही समाज का जीवन निर्धारित हो जाता हैं।

तो मानो प्रायः ऐसा प्रतीत होता हैं, भगवन! क्या यह समाज रक्त के मार्ग को मानो

देखो, अग्नि के मार्ग को अपना रहा है, मानो देखो, मुझे आज के वैज्ञानिकों पर आश्चर्य तो आता है, चाहे वह आयुर्वेद का वैज्ञानिक हो, चाहे वह परमाणुवाद का वैज्ञानिक हो, चाहे वह मानो देखो, अनुसन्धानवेत्ता हो, चाहे वह देखो, राष्ट्र व्यवसाय बन रहा हैं, जिस काल में भी भगवन! आपको तो अनुभव हैं, बहुत समय को मैंने भी आपकी कृपा से दृष्टिपात किया है। परन्तु देखो, जिस भी काल में राष्ट्र व्यवसायी बन गया हैं, राष्ट्र में द्रव्य की लोलुपता आ गई हैं, उसी काल में क्योंकि देखो, जब राष्ट्र लोलुपता में, द्रव्य की लोलुपतता में आ जाता है, व्यवसायी बन जाता हैं उस काल में देखो, व्यवसायी जो प्राणी होता हैं, उसे अपने द्रव्य से होता है समाज कही चला जाओ, मानो देखो, उसे द्रव्य चाहिए, समाज के चरित्र के ऊपर उसका विचार विनिमय नही होता जिसके लिए राष्ट्र का निर्माण हुआ हैं जैसे मानो देखो, आधुनिक जगत के समाज में, राष्ट्र में सुरापान की प्रवृत्ति को मानो देखो, असुर प्रवृत्ति को समाप्त करना चाहिए, वहाँ असुर प्रवृत्ति का जन्म दिया जा रहा है। असुर प्रवृत्तियों को जन्म देने से ऐसा प्रतीत होता है, क्या असुर प्रवृत्ति बलवती हो जाएगी। क्योंकि एक आत्म चेतना मानव शरीर में अपना कार्य कर रही हैं आत्म चेतना की जो क्षुधा लगी हुई है, मानो उससे प्राणी दूरी नही जा पाता, परन्तु देखो, सुरापान करने वाला मानो देखो, राष्ट्र के लिए यह राजा ही इसका देखो, दोषी कहलाया जाता हैं। मेरे तत्त्वाधान में तो ऐसा प्रतीत होता हैं, जैसा राष्ट्र कलह बन रहा हैं राष्ट्र ही दोषी है क्योंकि राष्ट्र में व्यवसाय होने से वह ऐसे तत्त्वों का जन्म देता है समाज को मानो देखो, जिससे समाज में रक्तोमयी देखो, उसका जीवन बन जाएं रक्तोमयी देखो, क्रान्ति देखो, आ जाएं और पद की लोलुपता के लिए, वह समाज में मानो देखो, असुरी प्रवृत्ति का, एक द्यौतक बना हुआ हैं, परन्तु जब मैं इन विचारों के ऊपर भगवन! विचार करता हूँ, तत्वयुक्त हो करके व्यवसाय के ऊपर विचार विनिमय करता हूँ तो आश्चर्यचकित मुझे ये समाज प्रतीत होता हैं इसमें मानो मेरी पुत्रियाँ हैं, मेरा युवक समाज है परन्तु देखो, इसके ऊपर हमारा विचित्र बनने वाले हैं, भावी आने वाला समाज भी इसके ऊपर निर्धारित होता है,

और देखो, राष्ट्र देखो, इसके ऊपर कुठाराघात कर रहा हैं। वह कुठाराघात क्यों कर रहा हैं? क्योंकि उसके सुरापान की आहार की, प्रवृत्तियों में, समाज को ले जा रहा हैं।

मुझे स्मरण आता रहता है जिस काल में महाराजा दुर्वासा की पतिका थी महाराजा दुर्वासा विज्ञान के मानो द्यौतक कहलाए जाते थे वह जहाँ से मानो देखो, हमारी आकाशवाणी जा रही हैं पृथ्वी मण्डल पर मानो देखो, वह महाराज दुर्योधन के पूज्य गुरु होते थे उनके द्वारा मानो क्रोध की मात्रा तो थी, परन्तु देखो, उनका विज्ञान बड़ा सार्थक कहलाया जाता था। आज उन व्यक्तियों ने, उसी भूमि पर मानो देखो, सम्प्रदायी प्रवृत्तियों का देखो, वह मानो द्यौतक बन रहा हैं इसका कारण क्या है कि राष्ट्र में स्वार्थवाद हैं, स्वार्थवाद के कारण देखो, धर्म की, एक रूढ़ि एक ईकाई बन करके, मानव मानव का भक्षण हो रहा हैं। यह क्या है? इसके गर्भ में मुझे क्या प्रतीत होता हैं। मैं इसके ऊपर भी जाना नही चाहता हूँ, परन्तु जहाँ महापुरूषों की पतिका रहती थी भगवान कृष्ण का जीवन एक व्यापकवाद में रमण करता रहा हैं, मानो एक जिस समाज ने जिस मानो देखो, राजाओं ने यहाँ देखो, द्वितीय राष्ट्रों से आ करके प्राणियों आश्रय दे दिया, आश्रय दे करके उसको मानो अपना स्वामी या अपना सेवक स्वीकार करके आश्रय दे करके उनके जीवन को बलवती बनाया। आधुनिक जगत मानो इस मानो देखो, सूक्ष्म रूढ़ियों के आंगन में जब जा करके मानो कहाँ चला गया हैं मानव मानव का भक्षण करने के लिए तत्पर हो रहा हैं एक दूसरी रूढ़ि, रूढ़ि को नष्ट करना चाहती हैं परन्तु वह नष्ट नही हो रही हैं मानो देखो, यह रूढ़ि कहती है हे मानव! तू मानो देखो, एक दूसरे के रक्त को पान मत कर परन्तु वह रूढ़ियाँ रक्त के पान करने के लिए तत्पर होने जा रही हैं तत्पर हो रही हैं, इसका दोषी कौन हैं? इसका दोषी राजा हैं। जो समाज को, अपने कर्तव्यवाद में लाने में, देखो, असफल ही मुझे दृष्टिपात होता हैं। मैं एक राष्ट्र की चर्चा नही कर रहा हूँ, संसार के देखो, पृथ्वी मण्डल के राष्ट्रों की चर्चा कर रहा हूँ, क्योंकि उनमें सबमें एक व्यवसाय स्वार्थ की प्रवृत्तियां उत्पन्न

हो रही है इसी प्रकार देखो, जब इस प्रकार की धारा, गृह में, राष्ट्र में प्रवृत्त हो जाती हैं, तो उस काल में देखो, रक्त भरी क्रान्ति का यह द्योतक बन करके यह अपने में अशुद्धियों का परिणित करता हुआ, अपने में देखो, शान्त मुद्रा में विद्यमान हो जाता हैं।

तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आप औषध विज्ञान की चर्चा कर रहे हैं, मुझे आश्चर्य आता रहता हैं मैं आपसे प्रश्न करता रहता हूँ, आपकी मानो देखो, वार्ता को लाने के लिए मैं समाज को यह दृष्टिपात में लगा रहता हूँ, कि पूज्यपाद गुरुदेव के मुखारविन्द से ज्ञान की तरंगों का जन्म हो जाएं, जो तरंगें मानो देखो, उद्बुद्ध हो करके तरंगें मानो शान्त होती हैं, उन तरंगों को उद्बुद्ध करने के लिए मैं सदैव प्रार्थनाबद्ध करता रहता हूँ। हे मेरे पूज्यपाद! मुझे तो यह समाज ऐसा प्रतीत होता है, जैसा मानो इस चिकित्सा के गर्भ में, चिकित्सा को जानने वाले प्राणियों ने मानव के मांस को भक्षण करने की प्रवृत्तियों को जन्म दिया हैं, और जन्म देने से युवक समाज भ्रष्टता के आंगन में जा रहा हैं, मानव अपनी आभा में नही रहा है, अन्तरात्मा की हृदय की वार्ता को मानो वह शान्त करता रहता हैं, उपलब्ध होती है, वह उसे मानो शान्त करने के लिए तत्पर, शान्त करने में लगा हुआ हैं। जैसे हृदय से तो, प्रेरणा उत्पन्न होंगी, परन्तु देखो, उन प्रेरणाओं को दमन करने वाला, स्वार्थी, जैसे राजा अपने मे यह जानता है कि मानो देखो, मैं सुरापान की प्रवृत्ति, जो मैंने समाज मैं दी हैं, यह मेरे राष्ट्र के लिए विनाशकारक हैं, यह मेरा तो कर्तव्य नही हैं, परन्तु व्यवसाय होने से, स्वार्थ परता होने से, उन भावनाओं को वह दमन करता रहता हैं। दमनता की हुई निर्णायक आभाओं को अपनाता हुआ, वह समाज को रसातल के क्षेत्र में ले जाता हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः पुत्र हमारा यह विषय तो नही था जिस विषय के ऊपर तुमने अपना एक व्यक्तव्य दिया हैं। विचार विनिमय यह चल रहा था कि हमारे यहाँ प्राण सत्ता को लाने के लिए हमें सदैव प्रयास करना है, प्राण सत्ता हमें कैसे प्राप्त होती है? औषधियों के द्वारा, आहार और व्यवहार के द्वारा, परन्तु देखो, उन औषध

विज्ञान को लाने के लिए, हम औषध विज्ञान को भी नही अपनाते तो हमारे यहाँ चिकित्सा रही हैं, जिसको हम प्राण चिकित्सा कहते हैं। प्राण चिकित्सा का अभिप्राय यह रहा है क्या प्राण को हमें लाना हैं, जिस स्थली पर प्राण अपना कार्य नही कर रहा हैं, उसे लाना है, उसे कैसे लाना है, कैसे मुद्रा के द्वारा, कैसी मुद्रा के द्वारा, रेचक के द्वारा, कुम्भक के द्वारा हमें देखो, वह प्राणायाम के द्वारा मानो देखो, उस प्राण को स्वतः अपने में पुनः लाने का पुनः प्रयास करना हैं, जिस प्रयास करने से, हमारा शरीर मानो देखो, पुनरूक्तियों से स्पष्टता के आङ्गन में प्रवेश होता हैं परन्तु देखो, श्वांस प्राण की गतियों को हम वास्तव में अपान में समावेश करते हैं, हम अपान की धारा को, समान में समावेश कर देते हैं समान की धारा को, व्यान में समावेश करते हैं। व्यान की धारा को, हम उदान मे समावेश करते हैं, इन पांचों प्राणों को एक दूसरे में समावेश करते हुए हम प्राणों को यह भी नही कर पा सकते तो औषध विज्ञान को प्रायः जानना है। परन्तु औषध विज्ञान को हमारे यहाँ, मानो याग के द्वारा यदि उसका नृत्त याग के द्वारा करते हैं, जैसे मैंने वर्णन किया था विष्णु याग है, रुद्र याग है, जैसे रुद्र याग की प्रतिभा आई है, रुद्र याग का मानो देखो, वर्णन आया है कि उसमें अपामार्ग और शैलखण्डा शैल कृतिभा श्वंधनी यह कुछ औषधियां ऐसी होती हैं, जिनका पान करने मानो देखो, जिनका साकल्य बनाया जाता हैं, जिनका पान करने से, मानो देखो, अग्नि में आहुति प्रदान की जाती हैं। उसका कोण भी उसी प्रकार का हो, जिस प्रकार की मानो वह रूग्ण हैं। जैसे रूग्ण है, रूग्ण हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं, कुछ रूग्ण त्रिकोण होते हैं, कुछ रूग्ण हमारे यहाँ चतुष कोण होते हैं, कुछ रूग्ण हमारे यहाँ पश्च कोण होते हैं, कुछ रूग्ण हमारे यहाँ चौबीस कोण होते हैं, कुछ रूग्ण सत्रह कोण होते हैं, क्योंकि इसमें भी कोणों का वर्णन हैं। हमारे यहाँ यह मानो देखो, ऋषि मुनियों ने समाधि के द्वारा, परणित हो करके उन रूग्णों को मानो देखो, उनको निदान करने का प्रयास किया। जिसकी चर्चाएं, वैदिक साहित्य में प्रायः आती रहती है। क्या पुत्र देखो, जैसे हमारे यहाँ देखो, जैसे ताप का होना,

मानो देखो, एक विशाल ताप का होना उसको चतुष कोणों वाला है, उसको पञ्चम कोण से कोई समन्वय नही हैं। परन्तु देखो, वह इसी प्रकार एक मानो विषम ज्वरिका होती हैं उसका सम्बन्ध त्रिकोण से कहलाया गया हैं, वह त्रिकोण में याग करने वाला याज्ञिक रूग्ण करने वाला याग करेगा, साकल्य उसी प्रकार हो तो मानो देखो, पान भी करे उसको मानो देखो, याग के द्वारा देखो, त्रिकोण में याग करें तो वह शान्त हो जाता हैं। इसी प्रकार जैसे सुन्ध नामक रूग्ण होता हैं मानो उसमें सोम रूद्रिका शैलखण्डा, शैलकृतिका मानो मांचकानी, कंचकेतु, चिरायनाभृ मानो देखो, उन औषधियों का पिपाद बना करके, अग्नि में तपा करके उसका रस बनाया जाएं, और मानो देखो, दुग्ध के द्वारा, आहार करने से, इसी प्रकार मानो देखो, उन औषधियों के द्वारा, हम याग भी करें, अग्निहोत्र करें, जिससे मानो देखो, उसके परमाणु वह श्वांस के द्वारा आन्तरिक जगत मे जाएं, और देखो, उसका रस का पान करने से, जो अमास्य में मानो देखो, जो उसके उदर में जाने से मानो देखो, उसके रूग्णों को वह शान्त करने वाला हैं। इस प्रकार का यह मानो देखो, चिकित्सा का, जो एक हमारे यहाँ एक विधान है, ये बहुत परम्परा का है। त्रेता के काल में, सुधन्वा के काल का भी हैं। महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में भी और देखो, अयोध्या राष्ट्र में भी इसी प्रकार का एक चिकित्सा का मानो विधान एक चिकित्सा की प्रणाली रही हैं। इस चिकित्सा की प्रणाली में, मानो देखो, बहुतसी आभाएं हैं, इसमें बहुत अनुसन्धान की आवश्यकता रहती है, कि त्रिकोण कैसा होता हैं? चतुष कोण रूग्ण देखो, कैसा होता है? इसके ऊपर बहुत अनुसन्धान की आवश्यकता होती है। क्या पुत्र! देखो, इसका अनुसन्धान एक एक प्राणी ने बेटा! वर्षों व्यतीत किया एक एक देखो, एक एक रूग्ण को जानने के लिए, कोणों का अभिप्राय होता है, कोण किसे कहते हैं? मानो जो रूग्ण देखो, त्रि पादम ब्रीहि अस्तो देखो, कोणों का अभिप्राय यह, जो परमाणुवाद बनता हैं, वह त्रिकोण जैसा बनता है। जैसे त्रिकोण है, मानो इस प्रकार का बनता है उसको उन परमाणुओं को शान्त करने के लिए, हमें उसी प्रकार की औषध को जानना होगा। उसी प्रकार के औषध का

पिपाद बना करके, पान करने का प्रयास करना है परन्तु देखो, इस प्रकार का विज्ञान, यह परम्परागतों से रहा हैं, परन्तु देखो, यह चर्चाएं तो बेटा! हम इससे पूर्व काल में भी प्रगट करेंगें, आज का विचार विनिमय क्या है? कि हम अपने में इतने सुगठित होने चाहिए, अपने मे हमारा विज्ञान एक आभा में रमण करना चाहिए जिससे हमारा जीवन मानो देखो, हमारा मस्तिष्क, उस कार्य के लिए हम रत्त हो जाएं, परन्तु देखो, ऐसा हमारे यहाँ, परम्परागतों से माना हैं, परन्तु देखो, प्रत्येक मानव को, अपनी धारा इस प्रकार की बनानी है, आहार की बनानी चाहिए जिससे देखो, उसके जीवन में देखो, एक पवित्रता की तरंगें आती हुई बुद्धि में सात्विकता हृदय में नम्रता और देखो, शरीर में मानो देखो, इस प्रकार की तरंगों का उद्बुद्ध होना चाहिए। जिन तरंगों से हम दूसरों को महान बना सकें, स्वतः महान बन करके, इस सागर से पार हो जाएं, यह आज का वाक अब हमारा समाप्त। अब शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें। ओ३म् देवं गा ता यम सर्वा गतं आभ्यां गयाः ओ३म् सर्वाणि रथाः मां धेनु रथं आप्यां लोकं सर्वा रुद्रा प्राणां असु रन्धि मा ना यम सर्वाम् ओ३म् ब्रह्मणा देवं मया सर्वं भद्रा।

15.821220-प्रभु की अनन्तता

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना देव परमपिता परमात्मा की महिमा का, गुणगान गाया जाता है। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र उसकी गाथा गा रहा है और वह गाता ही रहता है उसकी कोई सीमा नही हैं उस सीमा से बाह्य जहाँ मानव को उसकी सीमा दृष्टिपात आती है, वहाँ वो उसका अनन्त आयतन माना गया हैं। मानो वह सीमा नही हैं वह उसका आयतन है। और आयतन होने से उसका गान गाया जाता है।

तो इसी प्रकार हमारे मानवीय जीवन में उस अनन्तता की आभा दृष्टिपात आती है। क्योंकि मानव जिस भी विषय को लेता है और जब उस विषय को क्रियात्मकता में लाता हैं तो उसका एक अन्तिम छोर ऐसा आता है जहाँ मुनिवरों! उसकी प्रत्येक जो इन्द्रियाँ हैं मानव की, वे शान्त हो जाती हैं मानो देखो, उसमें नेति का प्रतिपादन आता हैं। संसार के किसी भी विषय को लिया जाएं, जैसे हमारा कई समय से, आयुर्वेद के सम्बन्ध में कुछ विचार चल रहा है परन्तु उसे हम पूर्ण रूपेण नही कह सकते, क्योंकि इतना वनस्पति विज्ञान है क्या उस विज्ञान के जब अन्तिम छोर पर जाते हैं, अन्तिम पर भी नही, जब हम मध्य में ही पंहुचते हैं तो हमारी इन्द्रियाँ मानो बिखर जाती है इन्द्रियों के चिन्तन करने का जो विषय है वह मौन हो जाता हैं। हमारे यहाँ जितने भी ऋषि मुनि हुए हैं, वैज्ञानिक हुए हैं, वे किसी भी विज्ञान को ले करके चले हों, परन्तु वह अन्त में मौन हो गये। मौन क्यों हो गये? मौन इसीलिए हो जाते हैं क्योंकि वह जो परमपिता परमात्मा के जो विज्ञान का विषय है वह इतना अनन्तवत माना गया हैं, क्या मानव की वाणी, मानव की इन्द्रियाँ उस समय कार्य करने में, शून्यवत को प्राप्त हो जाती है।

हमारे यहाँ वैज्ञानिकों का जब प्रसंग आता है तो हृदय से तरगें उत्पन्न होती है, उन

तरंगों का बाह्य जगत से समन्वय होता है और बाह्य जगत के विषयों को जो कार्यवाहक दिया जाता है, तो उस कार्य देने में ही तरंगों के ऊपर, अनुसन्धान प्राणी ने किया है, परन्त दूसरी तरंगें अनुसन्धान के लिए उपस्थित हो जाती हैं। जैसे एक मानव यह विषय ले करके चला है, कि मुझे एक बिन्दु को विचारना हैं मानो वह बिन्दु कौनसा है, जिस बिन्दु से मानव के शरीर की रचना होती हैं अथवा यह ले लीजिए कि जितने भी संसार के जंगम प्राणी मात्र हैं, परन्तु उनके एक ही बिन्दु से उनकी एक ही रचना होती हैं परन्तु यदि उस बिन्दु के गर्भ में, उस बिन्दु के परमाणुवाद के ऊपर अनुसन्धान करने लगते हैं, तो कितना विशाल एक वृक्ष उत्पन्न हो जाता हैं और उस वृक्ष के ऊपर भी ओर अनुसन्धान करते हैं तो बेटा! मानव की वाणी मौन हो जाती है एक मानव सुदृष्टिपान कर रहा है तो उसमें धर्म की प्रतिभा, धर्म के ऊपर मुनिवरों! देखो, उसका गम्भीर अध्ययन हो गया हैं। तो नेत्रों में अनुपम शक्ति आ जाती हैं, नेत्रों में एक अनुपम तेज आ गया हैं जिस तेज के ऊपर चिन्तन करता हुआ प्राणी, अन्त में मौन हो जाता है।

जैसा मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय वायु गोत्र में एक ऋषि हुए हैं, वायु गोत्र के ऋषि श्वन्धानुकेतु श्ध्वेत्तर ऋषि उन्हें कहते थे, श्ध्वन्तेर ऋषि एक समय मानो कुछ ऋषियों के मध्य में विराजमान थे और ऋषियों के मध्य में विराजमान हो करके यह विराजने लगे कि जब मानव का यह शरीरान्त होता है, अथवा शरीर में से चेतना जाती हैं तो चेतना के साथ में उदान नाम का प्राण जाता हैं और उदान नाम के प्राण के साथ में जो चित्त का मण्डल है। चित्त का मण्डल किसे कहते हैं? जहाँ मानव के जीवन के जन्म जन्मान्तरों की एक संस्कार धानी विद्यमान रहती है, उसमें संस्कार विद्यमान रहते हैं। संस्कारों की ओर परिभाषा ले लीजिए, जैसे वृद्ध काल में, एक वृद्ध, उसे अपना मित्र प्राप्त हो जाएं, बाल्यकाल का, तो बाल्यकाल के संस्कार, बाल्यकाल का जीवन, वृद्धकाल के जीवन से उनका समन्वय हो जाता है। तो मुनिवरों! देखो, वह मित्रता की वार्ता बाल्यकाल की करते हुए मग्न हो रहे हैं, तो उसे हमारे यहाँ चित्त का मण्डल कहते हैं। जहाँ वह बाल्य

से वृद्धकाल तक, उनके संस्कार, जिस अन्तःकरण में विद्यमान होते है, उस अन्तःकरण का नाम चित्त कहा जाता है।

तो उन्होंने यह विचारा, कि मेरे जीवन में जो नाना प्रकार के संस्कार विद्यमान हैं परन्तु उन संस्कारों को मुझे जानना है, उन संस्कारों के ऊपर वह अपनी एक भूमिका बनाने लगे, विचारने लगे तो मानो उन्होंने प्राण की उपासना की और प्राण की उपासना करते हुए कहा हे प्राण स्वरूप! आ तू मेरे संस्कारों को समाप्त कर, जिससे मैं मोक्ष में चला जाऊं। हे प्राण! मैं सुख में जाना चाहता हूँ, मैं स्वर्ग बनाना चाहता हूँ गृह का, मैं अपने गृह का स्वर्ग बनाना चाहता हूँ, तू आ, मेरे में प्रवेश हो, और ज्ञान की प्रतिभा मैंरे में आ जाएं। तो देखो, ऋषि जब प्रार्थना करने लगा, तो उसे मानो एक अङ्कुर प्राप्त होने लगे, कि स्वर्ग किसे कहते और मोक्ष किसे कहते हैं। तो दो अङ्कुर उसके समीप उपस्थित हो गये। परन्तु जब दोनों अङ्कुर उपस्थित हो गये, कि मोक्ष और स्वर्ग किसे कहते हैं?

तो वेद के ऋषि यह विचारने लगा, एक वेदमन्त्र को ले करके स्वर्गश्चं स्वर्गं ब्रह्मा स्वर्गा ब्रह्मे व्रतो देवस्ताः देवत्वां परन्तु वेद के ऋषि ने यह विचारा, कि स्वर्ग नाम तो उसे कहते हैं जहाँ एक दूसरा प्राणी, प्रसन्न रहने वाला हो, प्रसन्न चित्त रहने वाला हो, उसका नाम स्वर्ग है। मानो देखो, जैसे माता पिता हैं, बाल्य हैं। एक दूसरी माता, माता और पिता मानो देखो, पति और पत्नी दोनो एक दूसरें में सन्तुष्ट हैं और गृह में रहने वाले, गृह में मानो उनके क्रियाकलापों से सन्तुष्ट हैं मानो देखो, किसी प्रकार की ऐषणा नही है, द्वेषता नही हैं, वह एक दूसरे में प्रसन्न है तो मानो देखो, उस प्रसन्नता का नाम स्वर्ग माना गया है। यह तो ऋषि ने स्वर्ग की परिभाषा की। अब मोक्ष की परिभाषा रह गई। मोक्ष तब तब प्राप्त नही होगा, जब तक चित्त में संस्कार विद्यमान रहते हैं। और संस्कार क्या हैं? उन तरंगों का नाम संस्कार हैं जिनमें नाना प्रकार के, संसार रूपी चित्र मानो देखो, चित्रित होते रहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, जैसे मानव स्वप्न में जाता है, तो स्वप्न में वह राष्ट्रों की एक चित्रिका दृष्टिपात कर रहा है। तो चित्रिका कहाँ से आई है? ऋषि एकान्त

स्थली में विचार रहा है कि यह चित्रिका कहाँ से प्राप्त हुई।

तो विचारा गया कि यह जो चित्र आए हैं, इस स्वप्न अवस्था में, यह अन्तःकरण में, जो संस्कार थे, उन संस्कारों का साकार रूप बन गया हैं। यह मन ऐसा विचित्र है, कि यह आत्मा के प्रकाश में, यह संसार की रचना, नवीन कर लेता हैं यह संसार की रचना कर लेता हैं, उस रचना के ही आश्रित हो करके, देखो, रचना के आश्रित अपने को बनाता हुआ, मानो संसार को दिग्दर्शन करने लगता हैं। परन्तु जब यह सुषुप्ति में अथवा स्वप्न को त्याग करके सुषुप्ति में, जाता हैं जागृत से सुषुप्ति में जाता है, तो पाप को त्याग कर चला जाता है और जब सुषुप्ति से संसार में आता है तो पुण्य को मानो पुण्यवान बन करके आता हैं। मेरे प्यारे! विचार क्या, मानो देखो, मानव कर्म करता हुआ, थकित हो जाता है उसमें शुभ, अशुभ दोनों ही कर्म होते हैं, परन्तु जब यह निन्द्रा की गोद में चला जाता है तो उस समय प्रातः से सांयकाल तक जो भी क्रियाकलाप किया इसने पाप और पुण्य का, उसको त्याग दिया और सुषुप्ति में चला गया। मन अपनी गाढ़ निन्द्रा में चला गया। यह मानो देखो, प्राण मन के साथ में गतिशील हो गया हैं और देखो, जब वह आनन्द से विश्राम में, निन्द्रित हो गया, जब वह जागरूक हुआ, तो उसे यह अनुभव हो गया कि मैं तो आनन्द में से आ रहा हूँ, मुझे ऐसा आनन्द आया है। मुझे संसार का भान नही रहा। तो विचार क्या हुआ, क्या मानो देखो, इसके ऊपर ऋषि चिन्तन करने लगा कि वह जो आनन्द हैं, उसी को प्राप्त करना है, जो पाप को त्याग करके आनन्द में प्रवेश कर जाता है मानो देखो, उसी आनन्द को लाना हैं वह आनन्द कुटुम्ब के स्वर्ग में प्राप्त नही हुआ हैं। वह कहाँ प्राप्त होगा? जब दो का मिलान होगा, जब दो वस्तु विच्छेदता को प्राप्त हो जाती हैं, जब हम दर्शन के गर्भ में, दर्शनों के गर्भ में प्रवेश करते हैं, दर्शनों की आभा में स्वतः अपने शरीर का, मानव का, अपने का ही स्वतः दर्शन करते हैं। तो ऋषि यह कहता है क्या मानो वायु गोत्रीय अंगिरस कहता है, इसके ऊपर अनुसन्धान करता हुआ, इस निश्चय पर पंहुचा हूँ कि मोक्ष किसे कहते हैं? स्वर्ग तो विशेष सुख का नाम स्वर्ग है परन्तु

मोक्ष क्या वस्तु हुई? तो मोक्ष के ऊपर उन्होंने विचार दिया कि यह जो प्राण हैं, जो पांच विभागों में मानव के शरीर में विभक्त हो रहा है यह कहीं दस रूपों में विभक्त दृष्टिपात हो रहा हैं, जैसे यह प्राण है मानो नाभि से ले करके मुखारविन्द तक मानो यह प्राण कहलाता हैं। उससे निचले भाग का नाम अपान कहलाया गया है। परन्तु इसी प्रकार प्राण और अपान की प्रतिभा एक अनुक्रमणिक बन करके, मानो एक विशेषता में परणित हो गई। परणित हो जाने के पश्चात मानो देखो, जो चित्त का मण्डल बना हुआ है, मन का क्षेत्र बना हुआ हैं मानो वह प्रकृति का मण्डल बना हुआ है। तो उस मन और प्राण दोनों को एक सूत्र में ला करके और आत्मा की छाया बन करके, आत्मा छाया के बिना नही, और छाया आत्मा के बिना नही। परन्तु देखो, उसी रूप में जब यह परमात्मा चेतनता में, अपने को स्वीकार करके परन्तु देखो, एकता, एक स्वरूप बन गया उसका नाम ऋषि ने, मोक्ष की परिभाषा की हैं। मोक्ष का आनन्द कहा है।

तो मानो देखो, आज मैं तुम्हें बेटा! मोक्ष की चर्चा तो देने नही आया, विचार क्या मानो देखो, आज का हमारा विचार, यह चल रहा हैं कि हम मुनिवरों! देखो, किसी भी विषय को लेते हैं तो मौन हो जाते हैं, कोई भी विषय संसार का हो, मानो देखो, चाहे वह एक कृतिका का विषय हो, चाहे, अनुकम्पका का विषय हो, चाहे आयुर्वेद का विषय हो, चाहे मोक्ष और आनन्द का विषय हो, किसी भी क्रिया में जब दर्शनों में हम तुम्हें ले जाएंगें, तो वह विषय एक अनन्तता में अन्तिम जो छोर है उसका, वह मानो देखो, नेति प्रतिपादित हो जाता हैं, वह नेति में उसकी प्रतिभाषिता चली जाती है। तो परिणाम क्या, मानो देखो, हमें यह विचारना हैं, हमें उस आभा में परणित होना है, कि हम अपने को सुखद और आनन्द के उस मार्ग पर ले जाने के लिए आए हैं, हम उस आत्म तत्त्व को जानने के लिए आए हैं जो आत्म तत्त्व हमारे शरीर में प्रवेश हो रहा हैं। ज्ञान का एक पुंज बना हुआ हैं परन्तु देखो, क्रियाशील बना रहा है, प्रत्येक प्राणी उससे क्रियाशील हो रहा हैं, उसके क्रियात्मक जीवन को हमें पान करके, इस सागर से पार होने का प्रयास करना

है।

परन्तु आज तो मैं इन गम्भीर क्षेत्रों में तुम्हें नही ले जा रहा हूँ। विचार विनिमय क्या, मुनिवरों! देखो, मैं तुम्हें एक दशा में नही, द्वितीय दशा में ले जाना चाहता हूँ। जैसे आयुर्वेद का एक विषय है आयु का वेद है, आयु का प्रकाश है, हमें आयु के प्रकाश में जाना है। इसका अभिप्राय है कि आयु का हमें प्रकाश देना हैं, आयु कहते हैं सुखद को, आयु कहते हैं जिसमें आनन्द हो, परन्तु देखो, वह आनन्द ही आनन्द में जो प्रकाश आता है उसका नाम वेद कहलाता है। तो आयु और वेद जैसे एक नाना प्रकार की औषधियां है, नाना प्रकार का एक वन है औषध का, एक विशाल वन हैं, स्थावर सृष्टि का, मानो चार प्रकार की सृष्टि मेरे पिता ने, सृष्टि के प्रारम्भ में उत्पन्न की थी, उन चारों सृष्टियों में मानो देखो, एक स्थावर सृष्टि हैं जिसमें मानो नाना सर्वत्र वनस्पति विज्ञान, उसी के सन्दर्भ में आते है परन्तु वह जो वनस्पति विज्ञान है वह अण्डज के रूप में भी कहीं कहीं परणित होता हैं, कहीं मानो देखो, वह जंगम रूपों में भी उसी की भान्ति दृष्टिपात आती हैं। परन्तु देखो, यह स्थावर सृष्टि, जंगम, अण्डज और उदभिज ये चारों सृष्टि एक दूसरे की सहायक बनी हुई हैं। परन्तु देखो, बहुतसी सृष्टि ऐसी है जो उदभिज सृष्टि हैं, वह मानो देखो, स्थावर के गर्भ से जन्म लेती हैं मानो देखो, जल का, सोम की वृष्टि हुई और सोम से मानो देखो, तेज के, अग्नि के, दोनो के समन्वय होने से ही एक मानो उदभिज सृष्टि का जन्म हो जाता हैं। उदभिज सृष्टि का जन्म हो गया। मानो देखो, वह कहीं कहीं वृक्षों के गर्भ में भी दृष्टिपात आती हैं, कहीं कहीं वह जंगम सृष्टि के गर्भ में भी प्राप्त होती है। परन्तु कहीं कहीं वह अण्डज सृष्टि के आङ्गन में भी दृष्टिपात होती है। मानो देखो, इसी प्रकार एक दूसरे की सहायक, यह सृष्टि का चक्र चला हुआ हैं। एक दूसरे की सहायक बनी हुई हैं। परन्तु जब मैं यह विचारता हूँ कि हमारे यहाँ इस प्रकार के वैद्यराज हुए हैं, जिन्होंने अन्त में यह कहा कि हम सृष्टि की उस मानो क्रमणा से, हम कदापि दूरी नही हो सकते जहाँ जीव का भक्षण करने वाला हैं, जीव, जीव का भोग करने वाला हैं। मानो देखो,

भोगवाद एक ऐसा विचित्र, एक क्षेत्र हैं इसमें मानो देखो, प्राणी, प्राणी का भक्षण कर रहा हैं और प्राणी, प्राणी का भक्षण करके अपने को जीवन शक्ति को ऊँचा बनाना चाहता हैं, ऊँचा बना रहा हैं, दृष्टिपात मानो दृष्टि आ रहा हैं वह अपने को जीवन को ऊँचा बना रहा हैं। परन्तु जैसे द्रव्यपति है, वह मानो देखो, द्रव्यहीन बना करके अपने को द्रव्यपति बना रहा हैं। जैसे मानो समुद्र में मछली हैं, वह सूक्ष्म मछलियों को आहार करके, प्रबल मछली बन रही हैं, विशाल मछलियां बन रही है, परन्तु देखो, जलचर उड़ने वाले, जिसमें अण्डज सृष्टि हैं, वह दूसरी अण्डजों को पान करके मानो अपने प्राणों की ऊर्ध्वा गति बनाना चाहता है। वह बलिष्ठ होना चाहता हैं, सिंहराज वनों में रहता हैं, परन्तु वह दूसरे प्राणियों का भक्षण करके अपने को ऊर्ध्वा, अपने को सिंह कहलाने का अधिकारी बन जाता हैं।

तो परिणाम क्या है, मानो देखो, यह जो सृष्टि हैं यह एक दूसरे की सहायक है और एक दूसरे को भक्षण करने वाली हैं, तो बड़ा विचित्र एक मानो ब्रह्माण्ड है, इस ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में मानो देखो, कुछ अण्डज सृष्टि में, इस प्रकार की देखो, किसी प्रकार की औषधि बनी हुई है, वह मानो आयुर्वेद आयु को देने वाला प्रकाश है, कहीं मानो देखो, जंगम सृष्टि में इस प्रकार की सृष्टि है जो जंगम प्राणियों को ही जीवन दे रही है, मानो देखो, जैसे गो नाम का पशु है, वह नाना प्रकार का चरू पान करता हैं, और चरू के पान करने से मानव को दुग्ध दे रहा हैं। तो मानव उससे पौष्टिक बन रहा हैं मानो इसी प्रकार प्राणी प्राणी का ऐसा भक्षण देखो, ऐसा अपने में पालन करने में स्वतः ही एक मानो देखो, परमात्मा की अनुपम महिमा का अनुपम विचित्रता से यह ब्रह्माण्ड गति कर रहा है, क्या मुनिवरों! देखो, इसको जानने के लिए मानव को त्याग और तपस्या और मानो देखो, अध्ययन और परमात्मा की प्रतिभा की आवश्यकता रहती है।

जब मैं यह विचारता हूँ कि प्रभु का विज्ञान कितना वनों में हैं, इतना विचित्रता में है क्या इसके ऊपर अध्ययन करने के लिए मानव को कितना मानो देखो, सुखाण

होना, है जैसे यह सूर्य है, यह प्रकाश दे रहा हैं, परन्तु यह द्यौ से प्रकाश लेता हैं और दूसरों को प्रकाश दे रहा हैं। यह प्रकाश दे रहा है परन्तु देखो, वनस्पति पनप रही हैं, और देखो, वही प्रकाश जंगम सृष्टि में आ रहा हैं वही प्रकाश माता के गर्भ में जा रहा है माता का गर्भाशय बलवती हो रहा है, उसी प्रकाश को ले करके मानो देखो, सूर्य तपस्या करते हैं, ऐसे ऋषि हुए हैं, जो सूर्य नमस्कार करते हैं, सूर्य तप में चले जाते हैं उन किरणों में आभासित हो जाते हैं। मानो देखो, उसी सूर्य को वैज्ञानिक जन अपने मानो देखो, विज्ञानशाला का निर्माण करता हुआ, विज्ञान में रत्त रहता हैं और विज्ञान में मानो देखो, रत्त रह करके, वह देखो, सूर्य विद्या को अपने में धारण करता है सूर्य किरणों को ले करके वह एक मानो देखो, यन्त्रों में मानो उसकी किरणों को लेता हैं। और किरणों को ले करके मानो देखो, उससे यन्त्रों का निर्माण करता हैं। जैसा मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराते हुए कहा था, महाराजा हनुमान सूर्य विद्या को अच्छी प्रकार जानते थे, एक हनुमान ही नही थे मानो देखो, महाराजा गणेश जी भी इस सूर्य विद्या को पान करने वाले थे, यह सूर्य विद्या को गणेश जी ही नही मानो देखो, शिव भी इसको पान करते थे। महाराज शिव अपने आसन पर हिमालय पर रहते थे, परन्तु देखो, वह सूर्य की किरणों के साथ मानो देखो, वह किसी किसी काल में, वह सूर्य की किरण के साथ मानो देखो, ऊर्ध्वा में गति भी करते थे, इतना मानो उनका विज्ञान, उनका आध्यात्मिकवाद इतना विचित्र कहलाया गया।

परन्तु महाराज गणेश जी को मानो देखो, जब वह सूर्य आभा में विज्ञान की परिक्रमा करते थे, विज्ञान की जब परिक्रमा करते तो मानो देखो, सूर्य से नाना प्रकार की वह विद्युत को ले करके मानो देखो, एक समय मुझे स्मरण है क्या, उनका एक चुहेतक नामक एक यन्त्र था, उस यन्त्र में विराजमान हो करके, महाराज गणेश जी उस यन्त्र में विद्यमान हो करके एक समय मानो देखो, वह सूर्य की परिक्रमा करने लगे। क्योंकि देखो, उसमें सूर्य की किरणे थी मानो देखो, जो किरणें पृथ्वी में से मानो नाना प्रकार के सुपदार्थों को, शीतलता को ले करके अग्नि उष्णाता

को ले करके अपने में समहित हो रहा है मानो देखो, द्यौ से विद्युत ले करके मानो दिवस के रूप में वह सूर्य ही तो है जो प्रकाश दे रहा है। मानो देखो, वह दिवस के रूप में आता है इसी प्रकार मानो देखो, उनका विज्ञान इतना विशाल रहा, उनके यहाँ सूर्य की किरणों से विद्युत को एकत्रित करना उससे यन्त्रों का निर्माण करना, स्वतः वैज्ञानिक बनना और देखो, नाना लोक लोकान्तरों की परिक्रमा करने वाले यन्त्रों का निर्माण करना।

तो बेटा! मैं उच्चारण यह कर रहा हूँ, तुम्हारे समीप, इस प्रकार का वह सूर्य मानो देखो, जंगम, स्थावर, उदभिज और देखो, इन अण्डज सृष्टियों को सबको प्रकाश देता हैं, सबको मानो देखो, ऊर्ध्वा में गति करा रहा है, तेज दे रहा है। माता के गर्भस्थल में, एक शिशु हैं हम जैसे शिशु जब माता के गर्भ में होते हैं, तो मानो देखो, वह जो सोम हैं, जिस सोम से संसार की उत्पति हैं, जिस सोम बिन्दु से मानो देखो, सूर्य इत्यादि नक्षत्रों की उत्पति हैं, वही सोम मानो देखो, बालक के माता के गर्भ में देखो, ध्रुवा में रहता है, ऊर्ध्वा में भी रहता हैं, दक्षिणाय और देखो, उत्तरायण में भी रहता हैं, वहां जल ही जल है वह शीतल नही होता है परन्तु देखो, सूर्य की वे किरणें एक त्रुकातक नाम की किरण होती हैं, जिस किरण का सम्बन्ध माता की नाभि से होता हुआ, उस बालक से, उस जल से होता है जिस जल से वह बालक, वह शिशु पनप रहा है। मानो देखो, बिन्दु, बिन्दु से रचना हैं। बेटा! यह कैसा विज्ञान, कैसा विचित्रवाद है, मानो देखो, एक बिन्दु हैं और बिन्दु के आङ्गन में देखो, जल है और जल में वह बिन्दु मानो देखो, आकार रूप को धारण कर रहा है। वाह रे देव, वाह रे प्रभु, तू कितना विज्ञानमयी है। मानो देखो, पूर्वा में भी जल, उसका ओढ़न भी जल है, बिछौना भी जल है, मानो देखो, दोनों पांशे भी जल बने हुए हैं। जल ही जल है। उस बिन्दु में बेटा! कौन? एक बिन्दु हैं मानो देखो, जो वीरत्व के रूप में, वह बिन्दु था वही बिन्दु है उस बिन्दु का मानो देखो, एक स्थूल बन रहा है और उसका ओढ़न क्या है? बेटा! ओढ़न भी जल है और देखो, पांशे भी जल है, आसन भी जल बना हुआ हैं परन्तु देखो,

जल ही जल वह पनप रहा हैं वह उसी बिन्दु में पनप रहा है, कौन तपा रहा है कौन सहायक बन रहा है? बेटा! सूर्य की जो किरण आ रही है धीमीधीमी परन्तु देखो, उस जल को वह उष्ण बना रही है जिससे देखो, वह जल उसका ओढ़न बन सके।

मेरे प्यारे! देखो, बाह्य जगत में, माता को शरद काल आ गया है, मानो देखो, शरद आ गई हैं परन्तु सूर्य की किरण वही अपना कार्य कर रही है। मेरे प्यारे! देखो, उष्णता आ गई हैं भयंकर मानो देखो, अग्नि प्रवाहित हो गई हैं परन्तु वह सूर्य उतना ही प्रकाश दे रहा हैं, वह उतना ही उस जल को तपा रहा है जिससे जल में वह इतना उष्ण न हो जाएं कि बालक रसातल को चला जाएं। हे पुत्रों! यह कैसा विचित्र जगत हैं, मैं इसकी अनन्तता की चर्चा करता हूँ यह कैसी अनन्तता है। मानो देखो, वही जल का बिन्दु, वह जल में पनप रहा है। बेटा! कैसा, माता के गर्भ से मानो देखो, जरायुज में पनप रहा हैं, जरायुज बन रहा है। मेरे पुत्रों! देखो, नौ माह, तब उसका ओढ़न क्या हैं? उसका बिछौना क्या है? उसके पांशे क्या है? मेरे पुत्रों! देखो, वही जल बिन्दु हैं और जल बिन्दु में मानो देखो, सोम है, वह सोम की उपासना कर रहा हैं। सोम मानो देखो, कहीं समुद्रों से आता हैं, कहीं चन्द्रमा से आता है कहीं मानो देखो, सूर्य की किरणों से आता हैं, कहीं द्यौ से आता है कहीं मानो देखो, पृथ्वी से आता है। मेरे प्यारे! देखो, वह सोम भिन्न भिन्न रूपों में आ करके, मेरे प्यारे! देखो, वह पनपा रहा हैं। मेरे प्यारे! मैं प्रभु की इस महिमा में जाना नही चाहता हूँ, यह कैसा विचित्रवाद है, यह कैसा दर्शन हैं, मानो देखो, यदि हम अपनेपन का दर्शन करने लगें, तो विचित्रता दृष्टिपात आयेगी। इस नेति का बेटा! मैं वर्णन कर रहा था, क्या, इसके ऊपर चिन्तन करने वाला, बेटा! देखो, अन्त में मौन हो जाता है। विचार विनिमय क्या, मेरे पुत्रों! देखो, उस समय, उस माता जल के, सोम को देने के लिए नाना प्रकार की औषधियों का पान करती हैं और माता उसी बिन्दु से, प्रेरणा से, यह विचार रही हैं मेरे गर्भ में बालक पवित्र हो जाएं, मानो देखो, योगेश्वर बन जाएं, माता की

भावना देखिये, हृदय के कैसे उद्गार उत्पन्न हो रहे हैं। माता यह चाहती है कि मेरा बालक महान बने, मेरे मानो देखो, जो शिशु उत्पन्न हों, तो वह शिशु हो, वह मुनि की प्रवृत्ति वाला हो, परन्तु औषधियों का पान करती है, निन्द्रा में जागरूक रहती है। अनेक प्रकार के मानो देखो, उपाय करती रहती है, अनेक प्रकार की धाराओं में रमण करती हुई, माता अपने में चिन्तनीय बन रही है।

तो विचार विनिमय क्या, मेरे पुत्रों! मैं इस विज्ञान की धाराओं में ले जाने नही आया हूँ, विचार विनिमय केवल यह देने आया, क्या वह आदित्य है, बेटा! वह प्रकाश दे रहा हैं, वह शिशु को पनपा रहा है। मेरे प्यारे! देखो, जल में अपनी शक्ति दे करके, जल को मानो देखो, मृत्यु शक्ति दे करके, वरण शक्ति दे करके जल की धाराओं का जन्म हो रहा हैं। मेरे पुत्रों! देखो, वह जो आदित्य सूर्य है, वह प्रकाश दे रहा हैं, परन्तु वह प्रकाश मेरे पुत्रों! देखो, यन्त्रों में प्रवेश हो करके, कोई वैज्ञानिक बेटा! देखो, सूर्य की परिक्रमा करा रहा हैं, कोई मानो उस विद्या को निगल करके, उसका अध्ययन करके मानो स्वतः अपने को प्रकाश में ले जाता हुआ, योगेश्वर की कल्पना कर रहा है। मेरे पुत्रों! देखो, वह सूर्य प्रकाश, आदित्य से लेता है यहाँ अपनी छटिका को बिखेर देता हैं, उससे मानव कहता है देखो, सूर्य उदय हो गया है, सूर्य के उदय होने वाले को हम अपने में ग्रहण करने वाले बनें। बेटा! देखो, वैज्ञानिक जब ग्रहण करता हैं, तो विद्युत को एकत्रित कर लेता है, उससे यन्त्रों का निर्माण करता है।

मानो शक्ति का निर्माण करता हैं, राष्ट्र की आभा का जन्म देता है, परन्तु वह सूर्य की किरण भूगर्भ वाला वैज्ञानिक बेटा! भूगर्भ में चला जाता हैं, और भूगर्भ में जा करके, कहीं जल को जान रहा है। यह जल वाहनों में, कार्यों में आता है। यही जल है मानो देखो, जो सोम बन करके, हमारे वाहन की उड़ान उड़ने वाला होगा, मानो वही सोम है जो मानो देखो, सूर्य की किरणों में बिन्दु बन करके मानो एक रत्न धातु बन गया है, रत्नों के रूप में आ गया है। वही बिन्दु परन्तु देखो, वह तेजोमयी बिन्दु बन गया। मेरे पुत्रों! देखो, विचार रहा हूँ क्या, मानो देखो, एक ही

धारा में अनेकता में दृष्टिपात करने वाला मानव मौन हो जाता हैं। विचारता है कि मानो देखो, धर्म किसे कहते हैं? आगे मानव कहता है यह धर्म क्या है? मानव धर्म कहता है कि मानव के नेत्रों में हैं तो वहाँ सूर्य का प्रकाश आ रहा हैं एक मानव देखो, विद्युत का प्रकाश है, एक मानव को दृष्टिपान करने वाले चक्षु हैं परन्तु वहाँ से प्राण शक्ति जा रही हैं, वही प्राण जा रहा है, वही प्राण उसके रूप के, चित्र को ले करके नेत्रों में प्रवेश कर रहा हैं अरे, वाह तू देव कैसा रचयिता हैं मानो देखो, नेत्रों में कैसी महानता तूने प्रदान कर दी हैं, मानो वही प्राण शक्ति, नेत्रों से चली और रूप को ले करके हृदय में उसकी अवस्थिति बन गई है, वह रूप हृदय में समाहित कर दिया। देव! तेरी महिमा मानो देखो, मैं वर्णन कैसे कर सकूंगा, मानो देखो, मैं कितना अल्पज्ञता में परणित हो गया हूँ मानो देखो, तेरी विचित्रता को, मानो देखो, वही तेरी प्राण शक्ति हैं जो मानो देखो, नेत्रों में प्रवेश कर रही है और नेत्र उस रूप को ले करके, तेरे हृदय में प्रवेश कर रहा है, वही रूप, वाणी के रूप में, शब्द के रूप में मानो शब्द बन करके और शब्द के साथ मे रूप बन करके मानो वह श्रोत्रों से समन्वय होता हुआ उसकी भी स्थिति मानव के हृदय में प्रवेश कर रही है।

मेरे प्यारे! मानो देखो, रसना के रसों को लिया जा रहा हैं रस लिया जा रहा है, यह रस कहाँ का हैं? रस के साथ में भी रस है और रस के साथ में भी रूप हैं, यह मैंने क्या पान किया है मैंने देखो, अमुक फल को पान किया हैं, परन्तु फल का आकार भी रसना के साथ है बेटा! रस के साथ है, उस स्वादन के साथ हैं और उसकी स्थिति कहाँ है? मानव के हृदय में हैं। तो बेटा! वह कैसा धर्म बन गया हैं, क्या उसे मैं धर्म कह सकता हूँ या तेरी प्रतिभा, तेरी आनन्दमयी विज्ञान की धारा कह सकता हूँ। विचार विनिमय क्या, मेरे पुत्रों! मानो देखो, उस सबकी स्थिति मानव के हृदय में प्रवेश हो गई हैं, पांचों धर्म समाहित रहता है, पांचों में धर्म है, धर्म के साथ में रूप है, धर्म के साथ में उसका क्रियाकलाप है, धर्म के साथ में बेटा! ब्रह्माण्ड का सर्वत्र चित्र देखो, दृष्टिपात हो रहा है।

तो मेरे प्यारे! मैं कहा चला गया हूँ, मैं बहुत दूरी चला गया हूँ, विचार देता हुआ, मैं बिखरे पुष्पों को एकत्रित करने के लिए आ गया हूँ, बेटा! मैं उस महान देव की महिमा में मानो उसमें विभोर हो गया हूँ, क्या, तेरी विचित्रता कितनी महान है, मानो यह जो पामर प्रकार के प्राणी है, यह तेरी महिमा को नही विचार पाते मानो देखो, यह तेरा चिन्तन नही कर पाते, मानो देखो, ये अपने में अपने ऊर्ध्वा को स्वीकार करते हैं, अरे, प्राणी! तू परमात्मा की सृष्टि और परमात्मा के विज्ञान के आगे, तेरा विज्ञान, तेरी शक्ति मानो बहुत ही सूक्ष्मतम मानी गई है। आज जब तू तेरी प्रतिभा मानो देखो, प्रभु के विज्ञान से, जब तेरा समन्वय होगा, तेरे मस्तिष्क विज्ञान का समन्वय होगा तो आगे चल करके तुझे यह भान होगा, क्या, प्रभु तो बड़ा ही अनन्त हैं, मानो देखो, सूर्य की विद्या को अपनाने वाला बेटा! कौन? महाराजा गणेश जैसे मानो जो सूर्य की विद्या को अपना करके मानो सूर्य की किरणों के सरगम में उनमें सरगम को ले करके, लक्ष्मी का पूजन करते थे, लक्ष्मी का पूजन क्या है, लक्ष्मी कौन है? जो सरगम है। मानो देखो, सर्वत्र लक्ष्मी तो मानव की वाणी में प्रवेश कर जाती है, जब मानव की वाणी में विचित्रता आती है, जब वाणी में ज्ञान आ जाता हैं, तो ज्ञान का नाम ही लक्ष्मी माना गया हैं। इसीलिए ज्ञानी पुरूषों के वेद के प्रकाश में रत्त रहने वाले, पुरूषों के, चरणों में बेटा! देखो, लक्ष्मी का वास रहता है, लक्ष्मी उनके चरणों में सदैव ओत प्रोत रहती है, क्योंकि वह सत्य कहता हैं, वह लक्ष्मी के ऊर्ध्वा की चर्चा कर रहा हैं, वह लक्ष्मी के पति की चर्चा कर रहा हैं लक्ष्मी का पति कौन हैं? गणेश है। गणेश कौन है? परमात्मा हैं। जो मानव के प्रारम्भ में ही मानो देखो, श्री गणेश कहा जाता हैं। गणेश शिव जी के पुत्र का नाम भी हैं। वह मानो सरगम गाते थे, विज्ञान की धारा में, विज्ञान में धर्म है विज्ञान में मानो देखो, लक्ष्मी है वह उसका पूजन कर रहा हैं। पूजन क्या हैं? लक्ष्मी नाम प्रकृति का हैं उसकी तरंगों को गणना में ला रहा है उससे अणु परमाणुओं का निर्माण कर रहा हैं। मानो सूर्य में जाने वाले यन्त्रों का निर्माण कर रहा है तो मानो देखो, वह लक्ष्मी का पूजन कर रहा हैं, द्रव्य

उसके साथ साथ जा रहा है। मानो देखो, उसी में वह रत्त है।

तो मुनिवरों! देखो, विचार विनिमय क्या हम मुनिवरों! देखो, सूर्य की उन महान किरणों को जानने के लिए आए हैं जहाँ नेति नेति का प्रतिपादन हो जाता है। मानो देखो, वही सूर्य की नाना प्रकार की किरणें है, जो मानो देखो, इस संसार को दिवस के रूप में परणित कर देती हैं, उन किरणों का न रहना ही, रात्रि का काल आ जाता हैं, उसे रात्रि काल कहते हैं उसे प्रातःकाल कहते हैं। मानो कालों की भी एक संज्ञा बन गई हैं वह बेटा! देखो, सूर्य की किरणें बन गई हैं। किरणों का न रहना रात्रि है, किरणों का आ जाना दिवस है, और वह दिवस वह रात्रि क्या है? बेटा! उसी से मानो फिर माह बन गया, उसी से वर्ष बन गया, उसी से सम्वतसर बन गया, उसी से मुनिवरों! देखो, ईकाई से ले करके मानो देखो, एकाम, दोकाम, मानो देखो, इसी से गणना उत्पन्न हो गई। तो देवा सम्भवा देवत्वं लोकाः वेद का मन्त्र क्या कहता है बेटा! क्या, उसी में ईकाई है, उसी में गणना है, उसी को मानव कहता है मेरी आयु इतने समय की हो गई है। बेटा! वह कौन बना रहा हैं, आयु का निर्माण कौन कर रहा है, कहाँ से हो गया है सूर्य का प्रकाश आया किरण आ गई तो दिवस बन गया, किरण लुप्त हो गई, तो रात्रि बन गई रात्रि मानो देखो, पृथ्वी गति करती रहती हैं, और पृथ्वी के आङ्गन में सूर्य आ गया तो मानो देखो, अन्धकार हो गया और सूर्य पृथ्वी की आभा में आ गया तो वहाँ प्रकाश हो गया तो मानो देखो, उसी प्रकाश से यह संसार में मुनिवरों! देखो, ईकाई, दुहाई, मानो देखो, यह रात्रि और देखो, गणना बन गई, एक से ले करके मानो देखो, सौ तक की गणना बनी, एक से ले करके मानो देखो, नौ गणना बन गई, नौ से आगे कोई गणना ही नही होती मानो देखो, ईकाईयां होती रहती हैं, गणना बढ़ती रहती हैं। विचित्र बनती रहती है। परन्तु देखो, यह कैसा विज्ञान है इस विज्ञान को कौन बिखेर गया बेटा! कौन ऐसा वैज्ञानिक आया था, जो मानो देखो, नौ से आगे कोई गणना ही नही रही, मानो देखो, नौ से गणना ले करके बिन्दु बनते रहते हैं, ईकाईयां बनती रहती है, गणना देखो, लाखों, करोड़ो और पदमों

तक चली जाती हैं गणना, अन्त में बेटा! गणना में जा करके भी नेति उच्चारण कर रहा हैं कहता है कि गणना ही नही रही आगे। तो मानो देखो, उसके पश्चात उन्होंने मानो देखो, ऋषियों ने समाधि में दृष्टिपात किया और गणना कहाँ तक चलेगी, उन्होंने मानो देखो, ब्रह्मा का एक वर्ष बना दिया, ब्रह्मा का कोई दिवस बना दिया, मानो देखो, चतुर्थ कालों का, देखो, इस सृष्टि में इक्कतर समय आना, इक्कतर समय समाप्त होना उसका एक (एक मन्वन्तर बना दिया और चौदह मन्वन्तरों की) ब्रह्मा की रात्रि बना दी उसको प्रलय काल बना दिया और मुनिवरों! देखो, जब यह संसार रचना में रहता है उसको प्रकाश में बना दिया। उसे प्रकाश में बना करके, उसका एक अहोरात्र बन गया। एक अहोरात्र बना, ऐसे अहोरात्रों का मानो देखो, ब्रह्मा का एक माह बन गया, ऐसे ऐसे मानो देखो, ब्रह्म के सौ वर्ष बन करके देखो, बारह माह का एक वर्ष बना और मानो देखो, ऐसे सौ वर्ष बने, तो उतने समय तक, आचार्यों ने समाधि में कहा, इतना समय, जब जीवात्मा चित्त के संस्कारों को समाप्त कर देता हैं मानो वह कैवल्य रह जाता है, तो उस समय देखो, छाया के बिना आत्मा नही, आत्मा के बिना छाया नही। मानो देखो, वह प्रभु में समहित हो गये, उस काल तक आत्मा मोक्ष के लिए गणित कर दिया, तो बेटा! तुमने जान लिया मानो कितना विशाल यह विज्ञान हैं कितना विशाल एक महानता वाला जगत है। बेटा! तो इसको चिन्तन करने से यह प्रतीत हुआ बेटा! यह तो विशाल एक वन हैं और वन में मानो देखो, अपने को समेट लेना है और समेट करके एक चिन्तन में अपने को विषय बना लेना है चिन्तन का विषय बना करके और अपने संसार में कार्यवाहक करना हैं।

तो इसी प्रकार मानो देखो, यह जगत, यह आभा में रमण करने लगा, तो बेटा! देखो, यह कौन, परमपिता परमात्मा ने सूर्य को निर्धारित किया, इससे मानो देखो, गणना की उत्पति हुई, इसी प्रकार जहाँ भी, जिस भी लोक में जो लोक प्रकाश देता है वहाँ का वही सूर्य है। मानो देखो, वह सूर्य, उसी प्रकार की गणना है उसी प्रकार का सम्वतसर हैं। तो विचार विनिमय क्या, मेरे पुत्रों! क्या मानो देखो, यह

प्रभु का कितना अनुपम, एक आभामयी जगत कहलाया गया हैं, परन्तु मैं उच्चारण कर रहा था तुम्हें, क्या जिस काल में जाओगे वहाँ अनन्तअनन्त दृष्टिपात होएगा, और यह तुम्हें भान हो जाएगा, क्या यह संसार मानो अनन्तता में है। एकता में नही, एकता में अनेकता हैं और अनेकता में एकता का भान होता हैं और एकता के आगे मानो देखो, शून्य है, वहाँ नेति नेति का प्रतिपादन हैं। मानो देखो, नेति नेति कह करके, मानव मौन रहता है मानो देखो, इसी प्रकार जैसे ब्रह्मवर्चोसि है इसके ऊपर जब चिन्तन करने वाला, चिन्तन करता रहता है तो बेटा! उसमें विचित्रविचित्र तरंगें उत्पन्न हो करके मानो देखो, अपने में विचित्र बनता रहता है।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज का विचार हमारा यह क्या कह रहा हैं तुम्हें यह प्रतीत हो गया होगा मानो हमारा विचार और हृदय से ही वैज्ञानिक बना है हृदय से योगी बना हैं मानो देखो, जितना धर्म है, वह भी मानव के हृदय में भासता रहता हैं। तो मानव की इन्द्रियों में हैं और इन्द्रियों में मानो एक विषय नही, अनन्त विषय हैं, अनन्त धाराएं इसी गणाना करने में मानव नेति नेति मानो देखो, हम इन नेत्रों की ज्योतियों से, इस संसार का दिग्दर्शन कर रहे हैं बेटा! देखो, चित्रों पर, पटलों की मानो देखो, जैसे मानो देखो, प्रतिमा बन रही है चित्रावलियाँ बन रही है ऐसे ही मन चित्रावली बना रहा है और विभाजन कर रहा है और संसार का विभाजन कर रहा हैं। परन्तु देखो, प्राण संसार की क्रिया में लगा हुआ है, वह क्रिया दे रहा हैं, गति दे रहा है। परन्तु देखो, यह उन गतियों का विभाजन कर रहा हैं, वह कितने प्रकार की गति हैं, पुत्रों! क्या उन गतियों के ऊपर कोई मानव अब तक बेटा! सफलता को प्राप्त नही हुआ हैं। परन्तु देखो, अन्त में वह योगी बन गया, समाधिष्ट हो गया है। अन्त में बेटा! मौन हो गया। विचार विनिमय क्या, मेरे पुत्रों! आज का विचार, हमारा यह क्या कह रहा हैं कि हम प्रभु के विज्ञान में इतने रत्त हो जाएं, हमें प्रभु का विज्ञान, इतना अनन्तता में दृष्टिपात आता है, क्या जिसके ऊपर विचार विनिमय करने से, हमारा जीवन एक महान बन जाता है। हम उन वाक्यों पर चिन्तन कुछ समय तक करें। समय पर करने के पश्चात उनमें देखो कौनसी मानो

देखो, तरंगें अमृत बन करके, आ करके अमृतमयी बना देती हैं, अमृतमयी बना करके मानव को एक महानता की आभा में परणित करा देती हैं, धर्म और मानवीयता यह सब मानव के हृदय में समाहित रहते हैं, हृदय से इन्दियां में तरंगें आती हैं, उन तरंगों के विशुद्ध रूप का नाम धर्म हैं, वही कार्यवाहक बाह्य जगत में आता हैं वही मानो देखो, कार्य रूप दे करके क्रियात्मक बना करके, शारीरिक क्रियाकलाप में ले जा करके, उसका बाह्य जगत का निर्माण होता है। यह है बेटा! आज का वाक्, अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! आपने औषधि विज्ञान को आज त्याग दिया।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! औषधि विज्ञान त्यागा नही, परन्तु यह भी उसी का एक अङ्ग हैं उसका अङ्ग नही, मैं यह उच्चारण कर सकता हूँ कि उसकी एक ऊपरी धारा हैं, जिससे औषध विज्ञान उसके नीचे रहता हैं, मैंने तुम्हें एक औषध विज्ञान ही नही, हृदय की अनुक्रमणिका, हृदय की एक धारा, एक वर्णन किया है। मानो देखो, यह ब्रह्म के ऊर्ध्वा स्वरूप का वर्णन किया है। जो प्रभु ने रचाया हैं परन्तु उस रचना के मूल में क्या क्या है, क्या क्या मानो देखो, एक प्राणी प्राणी का सहायक बना हैं वनस्पति भी इसी प्रकार एक एक वनस्पति भी सहायक हैं, जिसके ऊपर कुछ चर्चाएं करेंगे, आज का विचार अब यह समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा इसके पश्चात यह वार्ता समाप्त हो जाएगी। ओ३म् देवाः रथाः ग्राहणां त्वा माः नम रधियं ऋताः यशश्चां गृहिविपा मानन्दनरश्च मा देवं रताः। अच्छा भगवन! आनन्द मङ्गलम्।

16.831216-औषधि विज्ञान २

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है वे परमपिता परमात्मा महिमावादी है इस संसार का निर्माण करने वाले, इनका पालन करने वाले हैं। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में परमपिता परमात्मा को विष्णु कहा जाता है, वह विष्णु ध्रुवा है, पालन करने वाला, नम्र रहता है, उसकी गति ध्रुवा में होती है इसीलिए विष्णु हमारा पालन करता है, वे परमपिता परमात्मा जो सतोमयी है, क्योंकि सत का पालन करने वाला ही विष्णु कहलाता है और उसकी गति ध्रुवा है। तो इसीलिए प्रत्येक मानव अपने अपने में विचित्र माना गया है, जिस प्रकार लोक लोकान्तर अपने कक्ष में सुन्दर माना गए है और अपनी परीधि में वह परणित रहता है, इसी प्रकार प्रत्येक, जितना भी वनस्पति विज्ञान है वह अपने में ध्रुवा कहलाता है अपने में महान है क्योंकि एक दूसरे को स्थिर करने वाला है एक दूसरे का सहायक बना हुआ है जो एक दूसरे का सहायक बना हुआ है वही तो प्रभु की विचित्रता मानी जाती है।

हम सब वनस्पति विज्ञान में प्रवेश करते हैं तो वनस्पति विज्ञान में एक दूसरे वनस्पतियों का सहायक बना हुआ है जैसे एक प्राणी दूसरे प्राणी का सहायक बना हुआ है जैसे ब्रह्माण्ड में एक लोक दूसरे लोक का सहायक बना हुआ। प्रत्येक आभा में ये संसार एक दूसरे से सूत्र में पिरोया हुआ है ये वनस्पति विज्ञान इस नाते अपने में अद्वितीय माना गया है।

बहुत परम्परागतों की वार्त्ताएं स्मरण आती रहती हैं जहाँ मानव बहुत अनुसन्धान करता रहा है, प्रायः मानव उसको रूढ़ि कह करके उन्हें त्याग देता है वास्तव में

वह रूढ़ि नहीं कहलाती उनकी जानकारी में केवल भिन्नता होती है और उनकी जानकारी में भिन्नता होने से वह केवल उन्हें रूढ़ि प्रतीत होने लगती है। हमारे यहाँ, यह भी दृष्टिपात किया गया है, कि बिना रूढ़ि के यह संसार और राष्ट्र की गतियां नही होती। परन्तु जहाँ अति का प्रसंग आता है वहाँ रूढ़िवाद नही रहता वहाँ एक प्रपञ्च बन जाता है वह जो प्रपञ्च है वही समाज और मानवीयता के लिए हानिप्रद होता है अपने में अन्धकार कहलाता है वह प्रकाश नही कहलाता। इसीलिए आज का हमारा वेदमन्त्र कुछ कह रहा है वेदमन्त्र मानव को देव बन करके हमारे अन्तर्हृदय को देवत्व बनाने के लिए तत्पर हो रहा है। हमारा जो वेदमन्त्र है वह देवता बनाने की प्रेरणा दे रहा है। और हमें प्रेरित कर रहा है कि तुम देवता बनो। मैंने इससे पूर्व काल में तुम्हें कुछ वनस्पति विज्ञान के सम्बन्ध में अपना कुछ मन्तव्य प्रगट किया, कि यह वनस्पति विज्ञान अपने में अद्वितीय रहा है महान रहा है परन्तु जहाँ ये वाक्य आता है कि हमारे यहाँ याज्ञिक पुरूष ने भी यागों के अनुसन्धान वेत्ताओं ने भी उन साकल्यों को, उन समिधाओं को एकत्रित करने का प्रयास किया है, जो चित्रावली बना करके मानव के चित्र को अन्तरिक्ष में अवकाश में अवकाशित करते रहे हैं मुझे कुछ ऐसा स्मरण है, भारद्वाज मुनि का जीवन भी स्मरण है राजा रावण के यहाँ सुधन्वा नामक वैद्यराज थे उनक स्वप्नवत औषधि आ करके अपने गुणों का वर्णन करती थी एक समय वह आयुर्वेद का अध्ययन करते करते मृचिका औषधि के ऊपर अनुसन्धान कर रहे थे एक औषध का नाम है लक्ष्मणा हिमालय के पर्वतों में प्रायः इस औषधि का प्रायः नृत्य होता रहा है वह जब इन पर अनुसन्धान करते करते निद्रा की गोद में चले गये, निद्रा से जैसे ही उपराम हुए तो वह लक्ष्मणा अपने गुणों का वर्णन करने लगी, स्वप्नवत में वैद्यरारज को कह रही है कि हम त्रिपति वाली औषधियां हैं, त्रिवर्धा वाली औषधियां हैं, हमारे में ये गुण है कि मानव शून्यता को प्राप्त हो गया है, उसको जीवन शक्ति प्रदान करने वाली है। तो वह लक्ष्मणा के अनुसन्धान में लगे रहे, उसे उन्होंने जान लिया। एक समय अश्विनी कुमार वैद्यराज सुधन्वा के द्वार पर पंहुचे, अपने विद्यालय

में से अपने अनुसन्धान में से वह सुधन्वा के द्वार पर पंहुचे। सुधन्वा ने कहा, कहो अश्विनी कुमार! तुम्हारा आगमन कैसे हुआ? उन्होंने कहा प्रभु! हम इसीलिए आए हैं कि हमारे यहाँ लक्ष्मणा औषधि की आवश्यकता है। उसके ऊपर अन्वेषण कर रहे हैं सुधन्वा ने कहा उसके ऊपर मैं भी अन्वेषण कर रहा हूँ तो मुनिवरों! देखो, वो तीनों विद्यमान हो करके उसके ऊपर अनुसन्धान करने लगे। तो इसमें वो जीवन शक्ति थी कि वह मानव को मूर्च्छित हो गया है गतिहीन हो गया है जब उस औषध को, नेत्रों द्वारा, घ्राण द्वारा उसमें जब उसको प्रदीप्त किया जाता है तो वह शून्यता से चेतना में परिवर्तित हो जाता है।

संजीवनी बूटि

देखो, कल्पों की चर्चा नही, केवल लक्ष्मणा में यह गुण होता है। तुम्हें यह प्रतीत होगा कि त्रेता के काल में रावण और राम का संग्राम हुआ था, तो मेघनाथ के अस्त्रों के प्रहार से लक्ष्मण शून्यगति को प्राप्त तो गएं थे, शून्यगति को प्राप्त हो जाने के पश्चात राम को बड़ा दुःख हुआ। परन्तु सुधन्वा वैद्य को लाया गया और सुधन्वा वैद्यराज ने उसके लक्षणों का का वर्णन करके हनुमान जी से कहा कि तुम, जाकर लक्ष्मणा औषध को लाओ। औषध को लेने के लिए जब गमन किया तो लक्ष्मणा में ये गुण था कि रात्रि काल में जब चन्द्रमा की कान्ति, जब औषध पर प्रहार करती तो उसमें चन्द्रमा जैसी कान्तियां उत्पन्न होती थी। हनुमान जी इसमें आश्चर्य में हो गएं कि मैं क्या करूं? बहुतसी औषधियों का भाग अपने विज्ञान अस्त्रों पर स्थिर करके, वह लंका में प्रवेश हुए थे, सूर्य उदय होने से पूर्व। वह औषध रात्रि के काल में प्रदान की जाती है, उसका पान कराया जाता है, सूर्य उदय होने पर उसकी प्रतिभा इतनी नही रहती। शून्यता को, चेतनता में परिवर्तित करने वाली, शक्ति नही रहती, क्योंकि वह सूर्य की किरणों के गर्भ में, वह शक्ति निहित रहती है, रात्रि के काल मे वही कान्ति, सूर्य की चन्द्रमा में प्रवेश कर जाती है और चन्द्रमा की कान्ति उस औषध पर प्रहार करती है, और प्रकाशवान बन करके रूग्णों को शान्त करने वाली बन जाती है। तो इस वाक्य को इसीलिए प्रगट कर रहा हूँ,

देखो, गुणों का वर्णन करने वाली औषधियां का, हम बहुत पुरातनकालों से प्रायः अनुसन्धान करते रहे है।

तो महाराज सुधन्वा इस प्रकार के आयुर्वेद के विज्ञान में रत्त रहते थे, इसी के ऊपर अश्विनी कुमारों ने, अपना अनुसन्धान किया, वह भी वैद्यराज थे। उन्होंने, जैसा हमने पूर्व काल में कहा था कि महर्षि च्यवन के यहाँ जा करके, उनके शरीर का कायाकल्प किया कई प्रकार की औषधियां इस प्रकार की हैं जिनसे कल्प का कल्पित होता है बहुत से वृक्ष इस प्रकार के पृथ्वी पर वनस्पति विज्ञान के आश्रित रहते हैं उनका जो आयु है लगभग पचास हजार वर्षों का, हजारों वर्षों का एक एक वृक्ष का आयु होता है। इस प्रकार के वृक्ष का पाङ्गाङ्ग पान करने से मानव की आयु में दीर्घता आ जाती है, उनके पाङ्गाङ्ग के द्वारा ही जिनका रसों के द्वारा वह वृक्ष इतनी आयु को प्राप्त होता है। मैंने यह श्रवण किया है कि बरगद का जो वृक्ष होता है, ये जो वट वृक्ष इसकी आयु बड़ी दीर्घ होती है, इनका आयु कईकई हजार वर्षों का होता है। उसके यदि पाङ्गाङ्ग से दुग्ध पान किया जाएं तो मानव के शरीर का परिवर्तन हो सकता है। उसमें और भी नाना प्रकार की औषधियों का मिलन और चलन होता है।

औषध विज्ञान से पशु भाषा का बोध

तो आज मैं तुम्हें इसीलिए विचार ये देने के लिए आया हूँ कि मानव को उस औषध विज्ञान को जानने के लिए तत्पर रहना चाहिए, क्योंकि जैसे कांचाग्नि नामक एक औषध होती है, एक गुड़स्वन्धि औषध होती है जिसका दोनों का चूर्ण पान करने से छहमाह के पान करने से, मानव अश्व की भाषा को भली भान्ति जान लेता है, एक औषधि सर्पगन्धा है, सर्प कौचनि है, सप्रवृत्तिका है इन तीनों औषध बनाने से इनको चूर्ण से पान करना गो घृत का मिश्रण करके, इनका पान करने से सर्प की भाषा को मानव भलीभान्ति जान लेता है, और सर्प के गुणों का गुणवादन भी उस मानव में आना प्रारम्भ हो जाता है।

तुम्हें केवल यह परिचय देने आया हूँ कि यहाँ बहुतसी नाना प्रकार की औषधियां

है, जिनको पान करने से मानव महान बन जाता है, पवित्र बन जाता है, सर्पगन्धा औषधि के आसन से यदि योगेश्वर ये चाहता है, कि मैं ध्यानावस्थित हो जाऊं, तो ध्यानावस्थित हो करके, वह परमात्मा से अपना मिलान करने लगता है हमारे यहाँ ऐसे ऐसे कुशा के आसनों पर विद्यमान हो करके नदियों के तटों पर विद्यमान हो करके, ऋषियों ने बहुतसा अनुसन्धान प्रभु को निहारते हुए प्रभु से वार्ता प्रगट करते रहते थे। हमारे यहाँ नाना रूपों में, कुशा मानी जाती है। कुशा के आसन पर सर्प नही आ पाता, और कोई प्राणी उस अव्रत नही कर पाता तो आसन पवित्र माना गया है कुशा भी हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में बारह प्रकार की होती है। बारह प्रकार की कुशाओं को ले करके यदि उसको जल में तपाया जाता है। तपाने से उनका रस बनाया जाता है रस बना करके उसको जल की कृतिका बना करके जब खरल रह जाता है उसको मधु वर्णिता में पान करने से वह सर्प जैसे विषैले प्राणियों को विजय करने वाला बन जाता है।

बहुतसा प्रायः इन औषधियों पर अनुसन्धान रहा है, ये बारह प्रकार की कुशा होती है, जिनको पान करने से बाहर माह में मानव की गतियां कुछ से कुछ बन जाती हैं, आज मैं तुम्हें आयुर्वेद विज्ञान में ले जाने के लिए आया हूँ, शरीर कल्प भी होता है, शरीरों का कल्प कुशाओं के द्वारा भी होता है, एक वृणि अम्बालिका औषधि होती है, जिसको वैदिक साहित्य में पुत्रदा भी कहते हैं। एक अशोक वाचिकेतु नामक वृक्ष होता है, उसमें जिस माता के पुत्र न होता हो इन वृक्षों की छाया में, इनके पंचांगों में छ माह तक ब्रह्मवर्चोसि का पालन करके गायत्री माँ की गोद में जाने से, इनके चूर्ण को पंचांगों को पान किया जाएं, तो जो अंगों सुरुतियां बन गई हैं तो वह पुत्रदा और वृत्तिका और अशोकिका, सान्धूनि इन चारों के पंचांगों का मिश्रण करके, पान करने से छ माह में वह माता पुत्र को उत्पन्न करने योग्य बन करके, वह पुत्रवती बन सकती है।

कृतिका में तुम्हें प्रतीत होगा, कि एक समय सोमभुक ऋषि महाराज थे, जो महर्षि श्वेतकेतु गोत्र में उत्पन्न हुए थे, उनको अंगिरस भी कहा जाता है, और अगस्त्य

मुनि के पिता कहलाते थे, अगस्त्य मुनि की माता का नाम शकुन्तकेतु था, शकुन्तकेतु के हृदय में यह आशङ्का हो गई, कि तू पुत्रवती नही होगी। जब संस्कार को बहुत समय व्यतीत हो गया, तो एक समय दोनो ऋषि और ऋषि पत्नी भ्रमण करते हुए, महर्षि दधीचकेतु के द्वार पर पंहुचे। दधीचकेतु ने ऋषि पत्नी का आदर किया, कन्दमूल इत्यादि से उनका स्वागत किया तब उन्होंने दधीचकेतु ऋषि से कहा कि महाराज! हम सन्तान हीनं प्रतिक्रतामि उन्होंने कहा नही, तुम सन्तान हीन नही रहोगे, तुम तो तपस्वी हो ब्रह्मवर्चोसि कहलाते हो, ब्रह्म को विजय करने वाले हो, ब्रह्म में तुम्हारी निष्ठा रहती है, ऐसा कैसे हो सकता है? उनकी पत्नी बोली प्रभु! इस समय ऐसा ही प्रतीत होता है।

तो महाराज दधीचकेतु ने माता शकुन्तकेतु को इन औषधियों का पान कराया, उन्होंने छहमाह तुम उसका पान किया, एक वर्ष तक पान और किया। तो उसके पश्चात उनके हृदय में वह परमाणु जागरूक हो गएं जिनमें पुत्र, पुत्रियों, सन्तानों को उत्पन्न करने की शक्ति होती है। उन्होंने इन औषधियों का पान करके गुड़केतकेतु नाम औषध होती है, उसका भी पान कराया और प्रातः काल शीतली प्राणायाम करके, शीतली प्राणायाम से सूर्य प्राणायाम से उसका समन्वय करते थे। एक चन्द्र प्राणायाम होता है, जो सङ्कल्प मात्र से किया जाता है, इसके करने से उन औषधियों के पंचांगों को पान करने से, मुझे ऐसा स्मरण है कि वह पुत्रवती बनी और महात्मा अगस्त्य मुनि महाराज का जन्म हुआ था। अगस्त्य मुनि महाराज जो इतने विवेकी थे इतने महान थे, कि वह आत्म तत्त्व को जानने वाले इस संसार रूपी समुद्र को विवेकी रूप से तिलांजलि देने वाले, इस प्रकार का उनका विवेक जागरूक हुआ। तो इस प्रकार माता पिता के, इस प्रकार औषध विज्ञान के सम्बन्ध में मैंने तुम्हें बहुत से विचार पुरातन काल में भी दिए। तो विचार क्या, कि हमें इस प्रकार के औषधिविज्ञान को जानना चाहिए।

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब महात्मा दधीचि के यहाँ अश्विनी कुमारों ने ब्रह्म विद्या का पान किया था, और अश्व के मुखारविन्द से उन्होंने उस विद्या का

पान किया और महात्मा दधीचि का कल्प किया। मुझे ऐसा स्मरण है कि उन्होंने बारह वर्षों तक उनको औषधियों का पान करके स्वयं गुड़वाचि औषधियों का पान करते, महात्मा दधीचि को भी वह औषधियों पान कराते थे। उस समय इन्द्र की यह घोषणा हो गई थी, कि मेरे राष्ट्र में जो अश्विनी कुमारों को ब्रह्म विद्या देगा, उसके मस्तिष्क को दूरी कर दिया जाएगा। ये घोषणा हो गई थी, पृथ्वी मण्डल पर, उन्होंने इसी घोषणा का उपचार किया, उन्होंने एक विज्ञानशाला बनायी और उसमें कुछ यन्त्रों का निर्माण किया, जो यन्त्र औषध विज्ञान में सहायक बनते हैं, और उन्हीं यन्त्रों में उन्होंने कण्ठ के ऊपरले भाग को दूरी करके, औषधियों में नियुक्त कर दिया, उन औषधियों का पिपाद बनाया।

देखो, शैलखण्डा नामक एक औषध है, एक मृचिका नामक औषध है, एक त्रेतकेतु है, एक खुण्डकर्णी है, एक सरितिका है, एक राज लक्ष्मी है, एक सरूति है, इनको जल में पिपाद बना कर अग्नि में तपाया, तपा करके इनका पिपाद बनाया, पिपाद बना करके महात्मा दधीचि के कण्ठ के ऊपरी भाग को, इस औषध के पिपाद में नियुक्त कर दिया था। नियुक्त करके उस विज्ञानमयी शाला में, जिसको हम आयुर्वेदशाला में प्रयोग करते रहे हैं, वह उसमें नियुक्त करके, वह औषधियों का पिपाद और अश्व का घृत ले करके उन्हें अपनी शाला में, इसको वृत रूप दे करके, कण्ठ को ऊपर स्थिर करने के पश्चात, वहाँ से वह जो भी उद्गार देते थे वह ब्रह्म का उद्गार चलता था, क्योंकि संस्कारों का जो उद्गान है वह मानव के हृदय से होता है।

उद्गान जब होने लगा, तो वह उद्गान भावुक रूपों में भावात्मक महात्मा दधीचि, गुड़ नामक आव्रेत औषधियों के द्वारा उस उपदेश को वह पान करने लगे, उस उपदेश को पान करते रहे। तो इन्द्र को प्रतीत हुआ कि ब्रह्म विद्या का उपदेश चल रहा है। उन्होंने अपने अस्त्रों से अपने गणों के द्वारा उनके कण्ठ को दूरी करा दियां महात्मा अश्विनी कुमारों ने वही जो उनका कण्ठ का ऊपरला भाग जो यन्त्रों में विद्यमान था उसको ला करके कण्ठ ज्यों का त्यों स्थिर करने के पश्चात कुछ

औषधियों का लेपन किया उनकी विज्ञानशाला में यन्त्र थे, उन यन्त्रों से उनको सृजित किया और सृजित करने से महात्मा दधीचि ज्यों के त्यों दधीचि बन गये, वह दधीचिवत बन गये। तो इसी प्रकार अश्विनी कुमारों का विज्ञान एक विशेष रहा है।

जहाँ अश्विनी कुमार ब्रह्मविद्या में पारायण थे, वहाँ आयुर्वेद में भी पारायण थे, और आयुर्वेद की कृतिका में पूर्ण कहलाते थे। तो उन्होंने महात्मा दधीचि को भयंकर वनों में जा करके, उस औषध को एकत्रित किया, पूर्णिमा के दिवस, जिसका एक भी पत्र पूर्णिमा के दिवस पत्रों का जन्म होता है उस औषध को ला करके उन्होंने सोमरस बनाया। सोमरस भी अग्नि में तपाया जाता है और सोमरसों में लगभग बीस वृक्षों का पाङ्गाङ्ग ले करके अग्नि में तपाने से उसको पान करने से मानव की जो बुद्धि है, सूक्ष्म तन्तु हैं उनमें से बुद्धि का विकास और उन्हीं में से ज्ञान और विज्ञान की वाताओं का उद्बुद्ध होना स्वाभाविक हो जाता है, वह सोमरस इस प्रकार का है आयुर्वेद, आयु के वेद के पूर्ण रूपेण जानने लगता है, कौन से अङ्ग को कैसे निर्माण होता है? कौन से अङ्ग का कैसे निर्माणित किया जाता है ये सब पचांगों में विशेषता होती है। तो सोमरस का पान ऋषि करते हैं आयुर्वेदाचार्य करते हैं।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! ये जो सोमरस है, हमारे आधुनिक जगत में यह जो क्रो है इसको सोम कहते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः नही पुत्र! उसको सोम नही कहते, यह जो मानव को अमानव बना देता है मानव को अमानव बनाने वाला सोमरस नही कहा जाता।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! कहीं ऐसा भी माना गया है कि महाराज शिव नाना औषधियों का पान करते थे और उससे वह समाधिष्ट होते थे, आधुनिक जगत में कुछ ऐसा कहते हैं कि वह भंगकृतियों में और धतूरे के रूप में रहते थे।

पूज्यपाद गुरुदेवः पुत्र! ऐसा नही, जितनी भी यह औषधियां हैं, सोमरस में इनका कोई कार्य नही बन पाता, न ही उनका कोई क्रियाकलाप होता है ये तो अमानवता

की वार्ता है, औषधि विज्ञान में जितनी भी वनस्पति है, ये सभी औषधि मानी गई है, इसमें जितना भी चेतनहीन हो, चाहे चेतना को देने वाला हो, वह सभी औषधि हैं, परन्तु उनकी एक मात्रा होती है और अपनी अपनी मात्रा में वह अमृत है, और अमात्रा में वह विष बन करके मानव को अमानव बना देता है। परन्तु जितना भी ये वृक्षों से ले करके बड़े अवृत वृक्ष ले करके और वनस्पति, सूक्ष्म से सूक्ष्म से सब एक औषधि कहलाती है। इनमें बहुतसी औषधि विषधर हैं, बहुतसी औषधि इनमें विष नाशक है, जैसे ये पीपल का वृक्ष है, इसमें विष को नष्ट करने की शक्ति होती है, वट वृक्ष में बल वर्धक बनाने की प्रवृत्ति होती है। पुत्रदा, व्रेणका बुद्धिवर्धक तत्त्व होते हैं, तो इस प्रकार औषधियों को अपनी अपनी मात्रा में पान करने से, वह मानव को साधक बना देती है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! ये कैसे माना जाएं, कि मानव का जैसे निर्माण प्रभु ने माता के गर्भ में किया है कि इसका कायाकल्प कैसे हो सकता है? मानव अपनी आयु को इन औषधियों से कैसे ऊँचा बना सकता है?

पूज्यपाद गुरुदेवः पुत्र! ये तो प्रायः परम्परागतों से ही माना गया है। कि माता के गर्भ स्थल में, जैसे प्रभु ने निर्माण किया है, तो वह निर्माण भी किसी तथ्य को ले कर किया है, और वह भी प्रकृति का एक तथ्य माना गया है, और वह तथ्य किसी न किसी औषधि में भी प्राप्त होता है , किसी वृक्ष में भी उसकी प्रतिभा हमें प्राप्त होती है। तो जिसमें प्रतिभा प्राप्त होती है, उनके सूक्ष्म तन्तुओं को ले करके, उनका पिपाद बना करके, पान करने से औषिधयों में जो शीघ्र शक्ति का नष्ट करने वाली शक्ति अप्रात है उसे बल वर्धक बनाने के लिए उसे दीर्घता प्राप्त होती है।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! ये यथार्थ है?

पूज्यपाद गुरुदेवः ये तो दर्शन शास्त्र कहता है, वेद का मन्त्र भी इस प्रकार कहता है और भी नाना इस प्रकार के शब्द वैदिक साहित्य में प्राप्त होते हैं।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! मानव को ये सम्भव है कि पशु पक्षियों की वार्ता जान लेता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ, प्रायः ऐसा है, क्योंकि वह जो प्रकृतिवाद पर जो मानव संयम कर लेता है, वह मानव जो भी प्रकृति के तत्त्वों से प्रकृत हो रहा है, उसकी भाषा उसके लिए सम्भव है। देखो, अहिंसा में जाने वाला प्राणी, अपनी प्रवृत्तियों को ऊँचा बनाकर निर्भयता लाता है, जब वह निसंकोच बन जाता है, तो वह प्राणी उसकी स्वतः रक्षा करते हैं, रक्षा कौन करता है? विषधर प्राणी भी अमृत की रक्षा करते हैं। ये सिद्धान्त हैं, प्रकृति का। जैसे देखो, अमृत बिखरा हुआ है उस अमृत की कौन रक्षा कर रहा है, सर्प रक्षा कर रहा है, जैसे वायुमण्डल है इस वायुमण्डल में परमाणु बिखरे हुए हैं, उसमें विषधर भी है, अमृत भी है, अमृत को मानव पान कर रहा है, विष वाला विष को पान कर रहा है, अमृत के परमाणुओं में विष का मिश्रण होता है, उसको विषैले प्राणी अपने मे संचय कर रहे हैं। अमृत की रक्षा हो रही है, विष को पान किया जा रहा है, विषधर प्राणी ही अमृत की रक्षा करते हैं।

तो यह उस मेरे प्रभु का विज्ञान इतना विशाल है, कि इसके ऊपर मानव अनुसन्धान करता ही रहता हैं, हमारे ऋषि बारहबारह वर्षों तक इन वाक्यों को अनुसन्धान करते रहे हैं, अमृत विषैले प्राणी को परमाणुवाद को उसी के परणित कर देता है। जहाँ वह परमाणु अपने में स्थिर होने वाला है। इस प्रकार का जो प्रभु का विज्ञान है विज्ञानमयी अनन्तमयी जगत है। इसके ऊपर बहुत अनुसन्धान विचित्रता में होता रहा है, वैदिक साहित्य में इस विद्या का बहुत ही अपने में एक अनूठा रूप रहा है, जो ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में नृत्य करता रहा है।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! ये भी सम्भव है कि संसार में जो प्राणी है अपनी आयु को जैसे आपने पूर्व काल में कहा था कि च्यवन ऋषि का दो हजार एक सौ पचास वर्ष का आयु हुआ, उन्होंने औषधियों के पान से ही अपनी आयु को दीर्घ किया या कोई इसका विशेष कारण था?

पूज्यपाद गुरुदेवः पुत्र! इसमें कोई विशेष कारण नही, केवल औषधियों का पान करने से, नाना वैद्यराजों ने ऋषि की रक्षा की रक्षा करने के पश्चात उन्हें इस योग्य

बनाया गया कि वह अपना पुत्र याग कर सकें। बहुतसा औषध इस प्रकार का होता है कि उसके पान करते करते ही मानव का आयु विशाल बन जाता है कामना की प्रवृत्ति ही उत्पन्न नही होती, क्योंकि सबसे प्रथम मानव की शक्ति का व्यय होता है, एक ही मार्ग, इस शरीर में एक कामदेव से, जहाँ ऊर्ज्वा का क्षय होता है, ऊर्ज्वा का विनाश होता है जब उस ऊर्ज्वा की रक्षा में कटिबद्ध हुआ, वहाँ आयु में दीर्घता आनी प्रारम्भ हो जाती है। तुम्हें यह प्रतीत होगा, कि यहाँ बहुत से ऋषि हुए हैं, जिनका आयु बहुत दीर्घ रहा है, क्योंकि उन्होंने अपनी ऊर्ज्वा शक्ति को, वह ब्रह्मचर्य का, जो मार्ग है उस मार्ग से ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्वागति बनाना ही आयु की दीर्घता है। औषधि विज्ञान इसमें इसीलिए सहायक बनता है कि उसमें इतने परमाणु होते हैं, जिससे वह प्राणी अपने प्राण की रक्षा कर सके, और प्राण का संचालन हो सके। जहाँ तक बलिष्ठ होने की वार्ता है, वह बलिष्ठ भी होता है और अपनी अपनी सुयोग्यता को भी प्राप्त होता है परन्तु वह अपनी शक्ति को नष्ट न करे तो उसका आयु दीर्घ बन सकता है वह ब्रह्मवर्चोसि बन जाएं और ब्रह्मवर्चोसि बन करके ब्रह्म को प्राप्त कर सकता है ब्रह्म की सृष्टि को अपने नीचे दबा लेता है।

जैसे हमारे यहाँ हिरणाप आदि का वर्णन आता है महात्मा दधीचि का वर्णन आता है इसी प्रकार प्रकृति को नीचे दबाने वाले बहुत से ऋषि हुए हैं दबा वही सकता है जो ब्रह्मवर्चोसि अपने जीवन को बना लेता है औषधि में यह परमाणु है क्योंकि औषधि में ब्रह्म है ब्रह्म का जो लक्षण है वह केवल चेतना है और चेतना के आश्रित होता हुआ वह गमन करत है चेतना का सम्बन्ध प्रभु से रहता है कोई भी वैज्ञानिक हो वह दुग्ध को ले करके श्रद्धामयी घृत का निकास आ जाता है, घृत को अपने में लिया जाता है, और वह श्रद्धामयी जो घृत है वह याग कहलाता है तो जैसे घृत मन्थन किया जाता है, ऐसे ही जो औषधि विज्ञान वाले हैं और विज्ञान में वह प्राण की प्रतिक्रियाओं को जानते हैं। तो प्राण की प्रतिक्रिया से प्रकृति के स्वरूप में जो ब्रह्म का विज्ञान निहित रहता है प्रभु का जो विज्ञान औषधियों में नियुक्त रहता है उसको श्रद्धामयी घृत की भान्ति मन्थन करके वह उसको अपने में धारण करते हैं

ब्रह्म का चिन्तन करते हैं ऊर्ज्वा को संचय करते हैं संचय करके ब्रह्म की सृष्टि को निहारते हैं आयु को दीर्घ बना लेते हैं तो इस प्रकार आयु दीर्घ होता है।

आयु की दीर्घता

आयु तीन प्रकार से नष्ट होती है ये जो संसार का चिन्तन है मायावाद का चिन्तन है, इससे जब मानव की घृणा हो जाती है, प्राणी को प्राणी से द्वेष की प्रतिभा बन जाती है अपने स्वार्थ के लिए अपनी कृतिका के लिए तो वह अपनी आयु को सूक्ष्म बना रहा है। जितना अपनी प्रवृत्तियों को समेट करके, जैसे हमारे यहाँ भगवान कृष्ण ने भी कहा है कि शब्द ध्वनि से जो भी मानव अपने आयु को दीर्घ बनाना चाहता है। अथवा प्रकृति को नीचे दबाना चाहता है तो उसे दूसरों से घृणा और मायावाद के प्रपञ्च को आवश्यकता के अनुसार भोगने वाला, वह जानता है कि इसमें कोई रहस्य नही हैं वह प्रभु की सृष्टि को प्रभु के विज्ञान को निहारता हुआ, अपने में लय होकर घृणा से रहित हो जाता है। प्रभु के तत्त्वों से मिलान हो जाता है। तो उसकी आयु दीर्घ बन जाती है।

मुझे स्मरण आता रहता है हमारे यहाँ महर्षि विभाण्डक के पिता सुनुकान्त थे, सुनुकान्त ऋषि महाराज का आयु लगभग तीन हजार पांच सौ वर्ष का उनका आयु वना उनका आयु कैसे बना, मानो देखो, वह बाल्यकाल में ब्रह्मचर्य की ब्रह्म उपाधि बना करके वेद का अध्ययन करते हुए, प्रकाश में रत्त रहते थे, अन्धकार में नही जाते थे, तो उनका आयु दीर्घ बन गया। यहाँ आयु का कोई प्रमाण नही आयु किसकी होती है, ये बेटा! चिन्तन का विषय है, क्या शरीर की आयु मानी जाएं, अथवा श्वासों की आयु मानी जाएं, या भोगों की आयु मानी जाएं, ये एक बड़ा विचित्र नृत्य है इस संसार का हमारे विचार में तो भोगवाद से भी आयु का प्रसंग नही बनता, क्योंकि भोगवादी अपने में जब भोगों को जब समेट लेते हैं, तो आयु का प्रसंग समाप्त हो गया। यदि उसमें से यह माना जाएं कि श्वांस से आयु की दीर्घता मानते है तो जब हम प्राणायाम करते हैं, समाधिष्ट हो जाते हैं, तो वहाँ भी आयु का प्रसंग समाप्त हो गया। परन्तु यदि यह माना जाएं कि भोगवाद में, वृत्तियों

में रमण करना ही, आयु माना गया है आयु किस की होती है? क्या शरीर की आयु है, या हम आयु आत्मा की स्वीकार करें? आत्मा की कोई आयु नही होती, आत्मा एक चेतना है, वह सदैव रहने वाली है, मानो देखो, उसके सन्निधान से शरीर की प्रतिभा का निर्माण होता है, वह जिन औषधियों से निर्माण हुआ है, उन्हीं औषधियों के पिपाद को बना करके, पान किया जाएं, तो मानव निश्चित हो करके, प्रभु के ब्रह्माण्ड को प्रभु के विज्ञान को, वनस्पति विज्ञान को ले करके, आयुर्वेद में परणित हो जाएं, तो आयु विचित्र बन जाती है। आयु महान बन जाती है।

आज मैं तुम्हें आध्यात्मिक और भौतिकवाद में नहीं ले जाना चाहता। विचार केवल इतना है कि हमारा जो जीवन है, उसका समन्वय प्रभु से रहता है क्योंकि प्रत्येक परमाणु में कोई न कोई चेतना है, चाहे वह वृक्षों में रहने वाला हो, वनस्पतियों में रहने वाला हो, चाहे वह परमाणु के रूप में हो, उनमें जीवन शक्ति है, उस जीवन शक्ति को संचय करने वाला, आयुर्वेदाचार्य बनता है, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता बनता है, वह इन परमाणुओं को जिनसे शरीर का निर्माण हुआ है, इनकी मानो आयु को दीर्घ भी बना सकता है, इसको न्यून भी कर सकता है और विशालता में भी परणित हो जाता है। तो ये विचार हमारे यहाँ सार्वभौम माना गया है, इन विचारों को ले करके हम अपने जीवन को ऊँचा बनाते रहें।

आज मैं तुम्हें बहुत से आचार्यों की चर्चा कर रहा था, अश्विनी कुमारों की चर्चा कर रहा था, कहीं सुधन्वा की चर्चा कर रहा था, इन चर्चाओं के देने का अभिप्राय यह, कि इन्होंने अपनी आयु को दीर्घ बनाया। राजा रावण से सुधन्वा का जीवन, सौ वर्ष ऊर्ध्वा का था सुधन्वा वैद्यराज के दो पुत्र थे, धनेतकेतु और सोमकेतु ये भी आयुर्वेद के मर्म को जानते थे। महाराजा सुधन्वा का आयु राजा रावण से आयु सौ वर्ष पूर्व आयु था महाराज रावण का जब निधन हुआ तो छहसौ वर्ष का उनका आयु था, तो इस प्रकार उनके आयु की दीर्घता मानी गयी। विचार विनिमय आज हम अपनी आयु को ऊँचा बनाते रहें संयमी बन कर अपनी आयु को महान बना सकते हैं।

तो ये आज का विचार बेटा! मैं देना नही चाहता हूँ विचार तो बहुत ही विचित्र है आज में तुम्हें बहुत गम्भीर गहरे अगाध समुद्रों में ले गया परन्तु उनकी चर्चाएं शेष कल प्रगट करेंगें आज का वाक उच्चारण करने का अभिप्राय ये कि हमारा आयु कैसे ऊँचा बने हम अपने में कैसे महान बन सकते हैं मानो देखो, ये सूक्ष्म विचार दिए हैं बिखरे हुए पुष्पों को एकत्रित किया है समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें। आज का वाक समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा।

17.840715-वनस्पति से दीर्घ आयु

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, हमारे यहाँ परम्परागतो से ही प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं वह विज्ञानमयी स्रोतमयी कहलाते है मानो जितना भी यह जगत एक आभा में हमें दृष्टिपात आ रहा है वह स्थावर सृष्टि का, एक मूलक बना हुआ हैं। क्योंकि प्रत्येक मानव के हृदय में मानो स्थावर सृष्टि के सम्बन्ध में, विचार विनिमय करता रहा हैं मानो उनकी दशा उनका मार्ग वह परिवर्तन होना एक स्वाभाविक माना गया है। क्योंकि प्रत्येक मानव, अपने में, उस आकांक्षा में परिणित होना चाहता है, और यह चाहता है कि मेरी कोई न कोई दशा, अथवा एक मार्ग, इतना विचित्र होना चाहिए, जिससे मेरे जीवन और मेरी प्रतिष्ठा हो जाएं, क्योंकि प्रतिष्ठित होना चाहता है प्रत्येक मानव के हृदय में प्रतिष्ठा की एक जिज्ञासा बनी रहती है। बहुत पुरातन काल हुआ, जब बेटा! प्रतिष्ठा की कामना, ऋषि मुनियों के हृदयों में भी होती है। क्योंकि वितैष्णा और पुत्रैष्णा को मानव त्याग सकता हैं। अथवा उसे त्याग देता है, परन्तु लोकैष्णा वह ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में भी निहित रहती है, और जब तब निहित रहती है, जब तक उसे पूर्ण रूपेण विवेक नही हो जाता। इसीलिए हमारा वेदमन्त्र यह कहता रहता है कि यह तीनों ऐषणा ही मानव के दुःखद का एक मूल कारण बनी रहती हैं। जैसे रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण है ऋषि मुनि कहते हैं कि सतोगुण को भी त्यागना होता है। जब वह मानो पूर्ण रूपेण विवेक में परिणित होता हैं।

तो मानो आज का हमारा वाक यह क्या कहता है कि परमपिता परमात्मा को न यह रजोगुण स्पर्श करता है, न तमोगुण और न सतोगुण। इसीलिए वह तो उसका आयतन माना गया है, अथवा उसका गृह माना गया हैं। इसीलिए जो मानव परमपिता परमात्मा से मिलन अथवा उसमें रत्त रहना चाहता है, तो वह रजोगुण,

तमोगुण, सतोगुण से उपराम होना होगा। जब तब इससे उपराम नही होता तो ऋषि मुनि तक की उपाधि, वह मुनि नही बन पाता। तो इसीलिए आज मैंने बहुत पुरातन काल की वार्त्ताएं ली, जो ऋषि मुनि, अपने में प्रायः अध्ययन करते रहते थे, अपने में अध्ययशील बने रहते थे, परन्तु आज का हमारा वाक्, हमारे कुछ मन्त्रार्थ, उस आयु की कामना में ले जाना चाहते हैं, प्रत्येक मानव के हृदय में, एक आकांक्षा, एक विवेक वृत्तिका बनी रहती है, और उस की आकांक्षा बनी रहती है, कि मैं आयु में पूर्ण रूपेण होना चाहता हूँ। प्रत्येक मानव के हृदय में यह आशङ्का लगी रहती है, कि अकाल मृत्यु भी नही होनी चाहिए, बिना समय के मृत्यु नही होनी चाहिए। परन्तु एक मानव कहता है कि बिना समय मृत्यु होती ही नही, एक कहता एक कहता है बिना समय के मृत्यु होती है। तृतीय प्राणी कहता हैं क्या मैं पूर्ण रूपेण आयु को चाहता हूँ, तो आयु में रत्त रहने के लिए बेटा! मैं मैंने बहुत अध्ययन युक्त औषधियों का तुम्हें वर्णन किया परन्तु आज जब मैं इसके ऊपर, विचार हम करने लगते हैं, तो एक एक औषध ऐसी समीप आती है, जिसके पान करने से, मानव के चित्त की प्रवृत्तियों में परिवर्तन हो जाता है। मानो देखो, विवेचना और मानव सतोगुण की प्रतिभा में रत्त रहने लगता है।

पूज्य महानन्द जीः पूज्यपाद! मैं यह जानना चाहता हूँ क्या आपने बहुत पुरातन काल की औषधियों का वर्णन किया, आधुनिक काल जैसे हमारी यह आकाशवाणी मानो जा रही है प्रायः इन औषधियों के सम्बन्ध में नाना प्रकार की भ्रान्तियां हैं। जैसे आपने जाल के वृक्ष का वर्णन किया था एक समय में, और एक समय आपने सोमकृतिका का वर्णन किया परन्तु आधुनिक काल में इनके नामों का कही वर्णन नही प्राप्त होता है तो उसके सम्बन्ध में कुछ प्रकाश दीजिए।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या यह पुत्र जालां ब्रीहि व्रतो देवाः जाल का वृक्ष तो होता है, परन्तु आधुनिक नामोकरण वर्तमान के काल में उसको स्वीकार करते है। क्या करते हैं इसको हम अच्छी प्रकार नही जानते, रहा यह कि सोमकृतिका एक मानो एक हिमालय की कन्दराओं में, एक विलंग होती है, और उस बेल का नामोकरण ही

सोमलता भी कहते हैं उसे उसको सोम कृतिका भी कहते है। मानो वह सोमलता का, सोम लता में उसमें एक विशेषता होती है उस विलंग में, क्या वह एक वृत्त होता है, जिसे हम कोटली वृत्त कहते हैं। कोटली वृत्त के ऊपर देखो, उसकी मानो ऊर्ध्वा गति बनती हैं उसको हम तो सोमकृतिका कहते हैं उसे हम सोम बिलंग भी कहते हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! जैसे यह लवण है।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या लवण का सोम से कोई सम्बन्ध नही होता।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! जाल वृत्त है इसके सम्बन्ध में आपका?

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या पुत्र! यह तो जाल का वृत्त होता है इसको तो तुम जानते ही हो, मानो तुम्हें यह प्रतीत होगा, जब साधना में परणित रहते थे, तो जाल के वृत्त के नीचे विद्यमान हो करके, उसकी छाया में मानो तपस्या और गायत्राणी छन्दों का प्रायः पठन पाठन भी करते रहे हैं।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! एक वृत्त होता है, कदम्ब का, क्या यह जाल का वृत्त तो नही होता।

पूज्यपाद गुरुदेवः नही पुत्र! वह वृत्त भिन्न होता है यह वृत्त भिन्न होता हैं परन्तु यह आमं ब्रीहि यह सोम वृत्तिका मानो कही नदियों के तटो पर भी प्राप्त होता हैं और यह कही हिमालय की कन्दराओं में भी और देखो, आम पृथ्वी पर भी इसका रूपेण होता रहता है यह कोई ऐसा आश्चर्य का वृत्त नही है कि जाल का वृत्त नही प्राप्त होता।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन! जैसे आधुनिक काल में मानो निघण्टु इत्यादि में औषधि प्राप्त नही होती

पूज्यपाद गुरुदेवः तो बेटा! यह तो औषधि विज्ञान, तो एक अनन्त है, इसकी कोई सीमा थोड़ी है। आज हम इसको सीमाबद्ध करने लगे, तो सीमा में, मानो निघण्टु वालों ने जितना जाना है उतना जाना होगा, परन्तु देखो, औषधियों का तो एक अनन्त भण्डार हैं, यह तो स्थावर सृष्टि हैं, इसकी कोई अनन्तता, इसको सीमा मे

नही ला सकते।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह जो पीपल का वृक्ष है, इसका तो वर्णन आता हैं

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ, इसका वर्णन क्यों नही आता।

पूज्य महानन्द जीः मानो जैसे वट वृक्ष की आभा है इसका भी प्रायः आता रहता हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ, इनमें सबमें गुणों का वर्णन, वैदिक साहित्य में प्रायः आता रहता है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! जैसे आपने भगवन! त्रिवेतकेतु , मृचिका, शैलखण्डा इत्यादियों का प्रायः वर्णन किया है जैसे आप इससे पूर्व काल में भी, त्रि वर्धा का वर्णन कर रहे थे, तो त्रि वर्धा में मानो एक आधुनिक काल में देखो, तीन वस्तुओं के मिलान का नाम त्रि वर्धा आपने वर्णन किया हैं। तो आज हमें इससे यह प्रतीत होता है आधुनिक काल में जैसे शैलखण्डा, मृचिका, सोमलता ये आपने वर्णन किया, ये तीनों औषधि आधुनिक जगत में नही प्राप्त होती। परन्तु उनका यह प्राप्त भी होती है, तो इसको कोई जानता नही।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो बेटा! इसमें हमारा कोई दोष है? मानो यदि कोई नही जानता उन औषधियों को और वह पृथ्वी पर छाई हुई हैं, तो इसमें कोई मानो किसी प्रकार का दोषारोपण हम पर तो नही होना चाहिए, क्योंकि यह तो विज्ञान की और आयुर्वेद की वार्त्ताएं हैं, अब जैसे हम कल ही शब्दों में उच्चारण कर रहे थे, वह जो मानो हिमालय में देखो, सरोवर के द्वार पर एक औषध का जन्म होता है, तो उस औषध के सम्बन्ध में देखो, पांचों प्रकार के उसमें गुण होते है। पांचों प्रकार की उसमें आभा कहलाती हैं, जैसे उसके पतों का और गुण है छाल का ओर गुण हैं गुदवानी का ओर गुण है। परन्तु जड़ की वृत्तिका का ओर गुण है उसके फलों का ओर गुण है तो यह तो गुणों का मानो सबको समावेश गुणों को करके उसको पान करने से आयु में वृद्धि होती है। उसको योगी जन, साधक जन उसको पान करते

रहे पुरातन काल में तुमने अध्ययन किया होगा। क्या मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक समय मानो बारह वर्ष तक, इस वृत्त का औषध, चूर्ण केतु बना करके देखो, वह जलं आपां मानो आपो के साथ में पान करते थे, तो आयु दीर्घ आयु बन गया, तो यह कुछ अनुभव के वाक हैं। मानो इसमें कोई ऐसी वार्ता नही है, जिसके ऊपर मानो विशेष टिप्पणी की जाए।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो क्या भगवन! ये वृत्त आधुनिक काल में सुलभ हो सकते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्यों नही हो सकते, जब पृथ्वी पर हैं, तो क्यों नही हो सकते। जानने वाले के लिए जो कोई जानेगा नही, परन्तु उसके लिए संसार में है क्या। और जो जानना चाहता है, उसके लिए सर्वत्रता है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह मृचिका औषधि का भी, आपने बहुत समय में वर्णन किया हैं जैसे आपने यह ब्रह्म बूटी, ब्रह्मवादिनी का वर्णन किया है तो क्या ब्रह्म वादिनी औषध कौनसी होती है? बेटा! यह जो ब्रह्मवादिनी होती है, यह तो गंगा के तटों पर होती रही, नदियों के तटों पर होती रही हैं, हिमालय में भी होती रही है, इसका मानो देखो, ब्रह्मा बूटी का वर्णन, ब्रह्म कृतिका भी कहते हैं, ब्रह्मा वेदनी भी कहते हैं, जिसको पान करने से ब्रह्म ज्ञान अथवा मस्तिष्क की ग्रन्थियों में इस स्पष्टीकरण होता हैं। मन की एकाग्रता होती हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह वायु नाशक होती है या वायु वर्धक होती है।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या पुत्र! यह तो सब वायुनाशक होती हैं। क्योंकि वायु का इसमें समावेश नही होता। मानो जिसको हम सूर्य की अग्नि में तपाने के पश्चात, इसका जब खरल बनाते हैं, इसको पान करने से, सोम वाचिका औषध मिश्रण करने से, इसकी मानो यह सोम बन जाती हैं, यह आभा में युक्त बन जाती हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! आधुनिक काल में यह कहते हैं आधुनिक काल का जगत कि यह जो सोमलता हैं वह जो ऋषिजन सोम पान करते थे आधुनिक काल में उस सोमरस को शराब के रूप में परणित करते हैं आधुनिक काल का

जगत।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य क्या, यह सोम भव देवां क्या यह शराब कौनसी वस्तु होती है?

पूज्य महानन्द जीः सम्भोनि वंचतं देवो ब्रह्मा जैसे मधु है, मधु का मानो पिपाद बना करके, उसे अग्नि में तपा करके मानो जो कुरावस्त होता है उसका नामोकरण कहते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या पुत्र! जितने भी यह आसव होते हैं यह तो सभी इस प्रकार होते हैं, वह भी एक आसव होता है। तो वह भी एक औषध में ही, औषध में लिया जाता है, यह सर्वत्र जितना खरल बना करके वृत बना करके मानो पिपाद बना करके यह सब एक प्रकार का यह औषध होता है, इस औषध के रूप में पान किया जाता है। रहा यह, कि सोम कैसे बनता है? सोम रस को कैसे पान करते हैं, मानो सोम रस को एक समय मानो हम बहुत पुरातन काल हुआ, त्रेता के काल की वार्ता है, भ्रमण करते बेटा! महर्षि उद्देनकेतु ऋषि के द्वार पर पंहुचे थे। तो उद्देनकेतु ऋषि के यहाँ सोम रस का पान किया जा रहा था परन्तु उद्देन ऋषि से कहा कि महाराज! उन्होंने हमें सोम रस का पान कराया। तो सोम मैंने कहा भई! सोम तुम कैसे इसको निर्धारित करते हो। तब उन्होंने यह वर्णन कराया, इसमें औषधियों का वर्णन किया उनमें एक तो शैलखण्डा औषध ली है शैलखण्डा ब्रह्मवदिनी, ब्रह्म कृतिका, सोम वर्णा, सोम लता, और कृतिका एक मजीठ एक वृक्ष होता है मानो इसके पांचों अङ्ग ले करके और पीपल के पांचों अङ्ग लिए पांचों अङ्ग ले करके सोमलता के पांचों अङ्ग ले करके मानो देखो, इसको अग्नि में तपाया, अग्नि में तपा करके मानो इसको दस दिवस तक सूर्य की मानो देखो, शुक्ल पक्ष में सूर्य की किरण, रात्रि शुक्ल पक्ष में, चन्द्रमा की कान्ति का इसमें प्रादुर्भाव होता था। परन्तु देखो, इसमें जब उसकी छाया, पुट लग जाती तो दसवें दिवस मानो देखो, इसको ले करके हम पुनः अग्नि में तपाते थे, उतना ही जल इसमें प्रोक्षण करके, पुनः जल प्रवेश करके मानो देखो, इसके ऊपर एक वस्त्र को वृणित करके मानो

देखो, इसके वस्त्र में जो उसकी भरिता आती मानो उसमें जो सोम प्रतिपा की एक पिपाद बन जाता, परन्तु देखो, उसको पुनः जल को अप्रहे मानो जल में छेदन करके, छेदन करने के पश्चात, वह उसमें औषधि पिपाद रह जाता, उसको मानो देखो, खरल करते थे, उसका चूर्ण रूपेण बना करके, उस रस के साथ उस चूर्ण पान करने का नाम सोम रस कहलाता है।

अब तुम यह प्रश्न करो कि इसका लाभ क्या हुआ? परन्तु देखो, इसका लाभ यह होता है, क्या इसको जो पान करता है, जितने रूग्ण होते हैं, शरीर में चाहे वह यक्ष्मा के रूग्ण हों, चाहे वह मानो रक्त शोधन के रूग्ण हो, परन्तु देखो, मूत्र का रूग्ण हो, किसी भी प्रकार का रूग्ण हो, ये सर्वत्र रूग्णों की एक औषधि कहलाती है, इसको पान करने से, चालीस दिवस पान कर लो, इस सोमरस को, तो मानो मानव की प्रवृत्ति सोम बन जाती हैं। काम उतेजना की शान्ति हो जाती है। ब्रह्मज्ञान में उसकी संलग्नता हो जाती है, प्रभु का स्मरण होने लगता है, परन्तु देखो, मन और प्राण की साधना में, वह साधक बन जाता हैं, इतने गुण मानो देखो, उसमें विद्यमान होते हैं।

महात्मा दधीचि का प्रारम्भिक जीवन

तो विचार विनिमय क्या, पुत्र! हम साधना में परणित रहते थे, तो प्रायः इन औषधियों का सोम लताओं का पान करते थे, इन्ही सोम लताओं के पान करने से मानो देखो, अश्विनी कुमार, महात्मा दधीचि ये ब्रह्मवेत्ता हुए थे, ब्रह्मवेत्ता मानो देखो, यह जो महात्मा दधीचि थे जब यह बाल्यकाल में अध्ययन करने के लिए, माता पिता ने जब यह रेवक ऋषि महाराज के यहाँ इनका प्रवेश कराया, तो रेवक ऋषि महाराज उनको अध्ययन कराते परन्तु मस्तिष्क में नही आता था। जब मस्तिष्क में नही आता था, तो एक वर्ष के पश्चात माता पिता इनके समीप आए उन्होंने कहा क्या ऋषिवर क्या बाल्य ने कुछ शिक्षा में प्रगति की, उन्होंने कहा इन्होंने कोई प्रगति नही की। इनका जो मस्तिष्क है, उसकी जो ज्ञानवाहक नाड़ियाँ हैं, यह शून्यता को प्राप्त हो गई है। उन्होंने कहा प्रभु! क्या करें? उन्होंने कहा जैसी इच्छा

हो तो मानो देखो, उस समय बाल्यकाल का नाम दधीचि का, सोमपान था तो सोमपान कहते थे इनको, परन्तु देखो, माता इन्हें गृह में ले आई और देखो, माता ले करके वह महात्मा भुञ्जु के द्वार पर पंहुची, महात्मा भुञ्जु की जो धर्म देवी जिनके गर्भ से अश्विनी कुमारों का जन्म हुआ था मानो देखो, उस माता के वह माता आयुर्वेद का अध्ययन करती थी, उन्होंने कहा मातेश्वरी! आओ, उन्होंने कहा कि देवी! यह मेरा पुत्र देखो, इसका मस्तिष्क शून्य हो गया है, उन्होंने कहा शून्य हो गया तो मैं क्या कर सकती हूँ? उन्होने कहा कि हमने श्रवण किया है कि तुम आयुर्वेद में अध्ययन कर रही हो। आयुर्वेद में तुम्हारी विशेष गति हो गई है, इस बालक को ओजस्वी बना दीजिए। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। तो मेरे पुत्रों! ऐसा मुझे स्मरण हैं क्या उस माँ ने उसका नामोकरण, सोमलता उनका नाम भी सोमलता कहते थे। परन्तु सोमलता ने बालक को अपने आङ्गन में स्थित किया और सोमरस को उन्होंने निर्धारित मानो देखो, मार्ग से, औषधियों को लाना उनको खरल बनाना पाङ्गाङ्ग को लाना, खरल बनाना, मानो सब एकत्रित करके, रहे उनका मानो जल मैं एक पिपाद बनाया, और उस पिपाद को बना करके खरल करने के पश्चात मानो उस औषध को बालक को पान कराया जब सोम को पान कराया, तो चालीस वर्ष के पश्चात मानो उसे ब्रह्म की कोई उपलब्धि हुई ब्रह्म की उपलब्धि क्या हुई? कि जिन प्रवृत्तियों में उसका मन निहित रहता था उससे मन का परिवर्तन हो गया। मन की विचारधारा में परिवर्तन जब हुआ तो प्राण की दशा में भी परिवर्तन हुआ। तो परिवर्तन होने से मानो देखो, जब इन औषधियों का पान किया, तो बाल्य एक महान बन करके मानो चालीस दिवस में, चालीस चालीस दिवस के उन्होंने तीन अनुष्ठान किए तीनों अनुष्ठानों में वह उन्हें ब्रह्म की अनुभूति होने लगी। जब ब्रह्म की अनुभूति होने लगी, वासना संसार की वासना समाप्त होने लगी। तो मानो देखो, वही ब्रह्मवेत्ताओं के समाज में पूज्यपाद गुरुदेव के द्वार पर जा करके, वह अध्ययन करने लगे।

तो बेटा! तुम्हें प्रतीत होगा महात्मा दधीचि ब्रह्मवाद में कितने ब्रह्मवादी थे मानो

देखो, ब्रह्मज्ञान मानो देखो, उनकी एक एक नाड़ी का अङ्ग बन गया था, एक एक अंगं ब्रह्मे वाचो वह ब्रह्म का उनका शरीर ही अङ्ग बन गया विचार क्या देखो, वह यहाँ तक देखो, कुछ औषधियों का पान करके जितने मार्ग में भ्रमण करने वाले मानव जलचर है, अथवा हिंसक है, उस सब प्राणियों की भाषा को वे स्वतः यह जानते थे ये प्राणी यह कह रहा है यह प्राणी यह कह रहा है समुद्रों में मछली यह उच्चारण कर रही है मानो देखो, मार्ग में भ्रमण करने वाला मृगराज हिंसक प्राणी यह कह रहा हैं। तो यह भयंकर वनों में तपस्वी बन करके, मानो देखो, गुड़वानं एक औषध होती है, उसको गुड़मानक औषध कहते हैं, वह हिमालय में प्राप्त होती हैं। मानो जहाँ एक विशाल पर्वत हो, उस पर्वत के मध्य में, वह औषध उगती हैं मानो उसका यह एक नृत्त है, क्या उसका जो पत्र है, वह जल जैसे मेघों से वृष्टि हुई, उस औषध में जल आया, पत्र का जल मानो उस वज्र पर पड़ा तो वज्र पर जाने से ही मानो देखो, वह वहाँ वज्र के पृथ्वी के कण बनाना प्रारम्भ कर देता है, जब वज्र के मानो पृथ्वी के कण बने, वहीं वह पौधा उग आता है। जब उगने लगता है उस पौधे के उगने से, मानो देखो, उस पौधो हम जब धारण करते हैं तो उसको गुडवान एक औषध कहते हैं तो उस औषध को हम निघण्टु में इत्यादि में हम जानने लगते हैं तो यह अनुभव का विषय बन जाता है। इस औषध के पान करने से यदि हम सौ दिवस तक इस औषध का पान कर लेते हैं तो इसको अग्नि में तपाना अग्नि में तपा करके सूर्य की आभा में इसको कृत करना इसको खरल करना और तप करने के पश्चात मानो इसको पान करना जब यह पान करते हैं तो ऐसा हमारे यहाँ आयुर्वेद में आता है, क्या यह सौ दिवस तक मानो देखो, इसको पान करने से, ऐसा कहते हैं कि शरीर में कि किसी भी प्रकार का रूग्ण नही रहता, और जिस मानव की ग्रन्थियाँ, अज्ञान से मानो नष्ट हो गई हैं, कामना से शिथिल हो गई हैं मानो देखो, उनमें जागरूकता आ जाती हैं, और जागरूक आ करके, वह ब्रह्मवादी बनने लगता हैं, उसका यदि योगाभ्यास में वह परणित हो जाता है, योगाभ्यास करते करते वह तीनतीन हजार वर्षों की आयु का वह नृत्त

करने लगता हैं।
तो विचार क्या है मुनिवरों! देखो, मैं औषध विज्ञान में, मानो इतना विश्लेषण नही दे सकता। विचार यह है कि जैसे मैनें जाल के वृक्ष का वर्णन किया बेटा! जैसे तुमने अभी कहा है कि कदम्ब का वृक्ष होता हैं कदम का वृक्ष भिन्न होता हैं उसको पुरातन काल से ही कदम्ब कहते हैं उसको पुरातन काल से ही जाल कहते हैं। मानो देखो, इसी प्रकार गुड़वानम् औषध जो है यह परम्परागतों से इसी प्रकार है, मृचिका इसी प्रकार है तो शैलखण्डा इसी प्रकार है मानो देखो, ये तीन प्रकार की जो ब्रह्मवादिनी है ब्रह्म बूटी है, ब्रह्म कृतिका है, यह तीन प्रकार की होती है कुछ हिमालय में प्राप्त होती है, कुछ गंगा के तटों पर प्राप्त होती हैं, जल का इनको आश्रय हो जाता हैं, कुछ पर्वतों के आश्रय रहती है, कुछ जल के आश्रय रहती है, मानो देखो, इनको शीतल जल के आश्रय रह करके, यह अपने गुणों का वर्णन करती रहती है।
तो विचार विनिमय क्या मैं इस सम्बन्ध में विशेष विवेचना में जाना नही चाहता हूँ। विचार केवल यह है कि यह जो औषध है, इस औषध विज्ञान के ऊपर, परन्तु हो सकता है आधुनिक काल में इनका नामोकरण में परिवर्तन हो सकता है। जैसे हमारे यहाँ च्यवन ऋषि के जीवन में प्रायः आता रहता है जब च्यवन ऋषि के युवा बनाने के लिए, आयु दीर्घ बनाने के लिए, उन्होंने च्यवन कृतिका एक औषध का निर्माण किया था। क्योंकि वह च्यवन ऋषि को ही प्राप्त हुआ तो वह एक मानो देखो, तीन वृक्ष होते हैं। तीन वृक्ष एक कदम्ब का वृक्ष होता हैं, एक जाल का वृक्ष होता हैं, एक पीपल का वृक्ष होता हैं। इन तीनों के पाङ्गाङ्ग को बनाया जाता है। इनके बनाने का क्रम इस प्रकार है क्या इन तीनों औषधियों, तीनों वृक्षों के पांचों अंगों को ले करके इन्हें अग्नि में तपाते हैं। अग्नि में तपाते रहते हैं, तपा करके इन्हें फिर मानो देखो, पृथ्वी में बहुत नीचा गधेला करके, उसमें मानो देखो, पात्र को दमन कर देते हैं वह मानो देखो, एक माह तक उसमें दमन रहता है। उसको निकास लिया जाता है, निकास करके पुनः मानो देखो, उस रस को हम, उसका

रस जो बना है, अग्नि में तपाया हुआ था उस रस को हम एकान्त स्थलियों में, पात्रों में भिन्न भिन्न पात्रों में परणित कर देते हैं। मानो वह तीन पात्र है, जिसे हम कंच कुणी के पात्रों में मानो देखो, उसके जितने भाग बन सकते हैं, उतने भाग बनाएं जाएं परन्तु जैसे पञ्च रंगा होता है, सूर्य की पांच किरण होती हैं मानो देखो, एक हरित है, एक मानो लोह है, एक पीत वर्ण की है, एक श्वेत वर्ण की है, एक लालिमा वर्ण की है। इन सब वर्णों को ले करके मानो भिन्न भिन्न पात्रों में इनको स्थिर कर देते हैं। जल को और उसको सूर्य की किरणों में तपाते हैं, तो तपाने से मानो देखो, उसको तपाते रहते हैं दस दिवस मानो एक इक्कतीस दिवस तक उनको तपाते हैं मानो जो प्रथम जो श्वेत वर्ण की है, उसे मानव को पान करना प्रारम्भ कराते हैं। वह गो का घृत हो, गो का दुग्ध हो, दुग्ध को मानो जैसे हम गऊ के घृत दुग्ध को मानो सांयकाल को इसी पात्र में उसको कृतिका कर देते हैं। तो प्रातः काल उसमें से मानो देखो, घृत को उसमें से निकालते हैं, तो वह जो औषध है मानो देखो, वह भी उसमें से उसी प्रकार परणित कर दी जाती है। मानो देखो, वह उसको जब खरल करते हैं, तो उसमें हमारे आयुर्वेद में तक्र कहते हैं, उस तक्र को लगभग एक वर्ष तक मानव को पान कराया जाएं, और अन्न न दिया जाएं, केवल इसी को पान कराया जाएं तो वह जो तक्र है, उसके एक वर्ष के पान करने से मानो उसके सौ वर्ष का आयु बलवती हो जाता हैं।

तो परिणाम क्या है मानो एक एक वर्ष इस प्रकार मानो तपस्या करने से ब्रह्मवर्चोसि उसका मन प्रसन्न रहे, एक वर्ष तक, जब तक उसे पान करे, मानो वह ब्रह्मवर्चोसि बन करके ब्रह्मवादी बन करके, ब्रह्म का चिन्तन करें गायत्री की गोद में चल जाएं। तो उसकी आयु में दीर्घता आ जाती हैं। तो परिणाम क्या है यह औषध विज्ञान हमारे यहाँ एक विशेष माना जाता है। उसके तक्र बनाने से मानो उसका पान करने से मानव की आयु में दीर्घता आती है। रहा यह, कि आज हम अपने को कायाकल्प में ले जाना चाहते हैं, कायाकल्प की चर्चा तो, मैं विशेष कल ही कर पाऊंगा परन्तु ये सब कायाकल्प के ही मानो देखो, एक वृत कहलाता है एक नृत्त है जिस नृत्त

को हम कायाकल्प के सम्बन्ध में, काया कल्प का अभिप्राय क्या है? कायाकल्प किसे कहते हैं? काया कहते है। मानव के शरीर का नाम काया है, इसका कल्प कर देना, कल्प कहते हैं मानो इसको पुनः जैसे वस्त्र को हम जल में मानो देखो, उसका धोवन कर देते हैं, उसमें कोई भी, किसी प्रकार की देखो, अशुद्धियां नही रहती, वस्त्र में, इसी प्रकार कल्प का अभिप्राय यह है कि हम इस शरीर को वस्त्र बना करके वस्त्र की भान्ति इसे स्वच्छ बना लेते हैं। कैसे स्वच्छ बनेगा? यह स्वच्छ उस काल में बनता है सबसे प्रथम मानो जितना भी अशुद्ध विजातीय पदार्थ है, उन विजातीय पदार्थों को दूरी कर दिया जाएं वह उसको कैसे किया जाएं? उसको वमन के द्वारा किया जाता है, वमन के द्वारा किया जाता है। वमन के द्वारा करते हुए सोम मृचिका यह मानो बहुत क्रियाकलापों में आता रहा है। और इसमें त्रिवर्ण त्रि पुट है जिसको हम त्रिवाण कहते हैं त्रि वंचनी कहते हैं श्वधनी कहते हैं मानो देखो, यह आधुनिक काल, में महानन्द जी तुम इनको क्या कहते होगे।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! इसको त्रि कुटा और त्रि जटा और त्रि वर्ध कहते हैं।

मिथ्यावाद समाप्त करने की औषधि

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या मानो देखो, यह त्रि वर्त तो यह पुनः हो ही गया, परन्तु देखो, इसको त्रि कुटा भी आप उच्चारण करते रहते हो तो मानो यह जो त्रि कुटा है इसको पान करना चाहिए और यह गऊ के घृत के द्वारा, मानो इसका खरल बाईस दिवस तक इसका खरल बनाना चाहिए। गो घृत के द्वारा, खरल बनाते रहो, बनाते रहो, इसकी लुगदी बन जाती हैं, जब लुगदी बन जाती है तो मानो देखो, इसको जैसे रोहिणी केतु मण्डल की छाया आती है, इसमें मानो इसको स्थिर कर देना चाहिए, एक पात्र में, जिससे इसमें किसी प्रकार का और परमाणु न आ जाएं, कोई जीवाणु न आ जाएं, परन्तु देखो, इसको वस्त्र में, इसको ढ़ाप देना चाहिए। इसी प्रकार देखो, उसकी लुग्दी के द्वारा जब मानो देखो, यह कृष्ण पक्ष अथवा शुक्ल पक्ष आता है, तो शुक्ल पक्ष में पन्द्रह दिवस तक, चन्द्रमा की कान्ति में, इसे

स्थिर करना, और पुनः सूर्य की मानो देखो, श्वेति सूर्य हो, तो जिसे हम शुक्ल पक्ष कहते हैं, शुक्ल पक्ष में प्रतिका होती हैं मानो इसमें तपा करके और इसे छाया में व्रेण करके मानो पुनः इसका खरल कर देना चाहिए। चूर्ण बना लेना चाहिए और इसमें मानो और त्रिफला ले करके चूर्ण करो इसमें त्रिकुटे की पुट लगा देनी चाहिए, इसमें बेल के विलंग जो वृक्ष होता हैं, उसको पांच अंगों को ले करके, उसकी पुट लगा करके मानो देखो, यह आम का जो फलों का वृक्ष होता है, इसमें एक खोखली की जाती है, इसको लगभग छहमाह तक, इसकी लुगदी बना करके, गो घृत और दुग्ध के साथ में, इसको उसमें परणित कर दिया जाएं मानो देखो, लगभग छहमाह तक उसमें रहे, उसको निकास करके, आम के वृक्ष से तो मंगलं ब्रहे मानो इसको पुनः खरल करना चाहिए, पुनः खरल करके, बाईस दिवस तक, यह आम के, नीम के जो नीमां होता है परन्तु इसकी खोखली में वृत करके, मानो इसको एक वायु से शून्य कर देना चाहिए, बाईस दिवस तक उसमें रह करके मानो इसका खरल करना चाहिए, उस औषध को पान करने से, ऐसा मुनिवरों! मुझे स्मरण हैं, क्या मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने जब पचासी वर्ष तक मिथ्या नही उच्चारण किया था, तो इस औषध का पान किया था।

तो मेरे पूज्यपाद ने और अन्न का पान नही किया, इसको पान केवल जल के साथ में, इसका पान करते रहे, इसके पान करने से हुआ क्या? क्या मिथ्यावाद समाप्त हो गया हृदय से चला गया हृदय में जो मानो सूक्ष्म वाहक नाड़ियाँ जो संसार के वैभव में समाप्त हो गई थी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव को अभिमान भी आ गया था उस अभिमान से ज्ञानवाहक नाड़ी जो हैं, वह मानो देखो, वह नष्ट हो जाती हैं अभिमान जहाँ आया मद का जहाँ प्रलोभन आया देखो, द्रव्य का जहाँ अभिमान आया तो मानव की ज्ञानवाहक नाड़ियाँ नष्ट होने लगती हैं।

तो मानो देखो, इस औषध के पान करने से पूज्यपाद गुरुदेव को यह जीवन शक्ति आई, स्मरण शक्ति जागरूक हो गई, मिथ्यावाद से रहित हो गएं और रहित हो करके ब्रह्मवादी बन करके, उनका आयु मानो पांच सौ पैंसठ वर्ष का आयु बना

और आयु बन करके उसी में नृत्त करते रहे, तपस्या में रत्त रहे, तो परिणाम मैं इसीलिए उच्चारण कर रहा हूँ, पुत्रों! क्या यह जो औषध विज्ञान है, यह बड़ा विशेष विज्ञान है, जिसके ऊपर मैं मानो काया कल्प की चर्चा तो पुनः ही प्रगट करूंगा, काया कल्प में तो इतना ही उच्चारण किए देता हूँ कि काया कल्प में मानो देखो, पञ्चीकरण जो है यह भी उतना ही करना चाहिए जितनी इसकी आवश्यकता होती है। पूर्ण रूपेण पञ्चीकरण करने से भी मानव की ज्ञानवाहक नाड़ियाँ नष्ट हो जाती हैं। मानो देखो, इनमें शोधन करने वाले ऋषि होने चाहिए, जिनको अनुभव हो, अनुभव की प्रतिभा मानो एक महानता में परणित रहनी चाहिए। आज मैं इस सम्बन्ध में, तुम्हें विशेष विवेचना में मैं तुम्हें ले जाने नही चाहता हूँ, पुत्रो! विचार केवल यह प्रगट करना चाहता हूँ क्या मानो देखो, गो घृत, गो दुग्ध, इनकी बड़ी विशेषता और बड़ा वर्णन आता रहता है। क्योंकि हमारे यहाँ जितने भी दुग्ध देने वाले पशु होते हैं, इनमें भिन्न भिन्न प्रकार की धातु नृत्त करती रहती हैं, मानो देखो, जैसे गो घृत में स्वर्ण होता है, मानो जैसे अजा के दुग्ध में औषध विज्ञान मानो कुछ देखो, नृति हेणाक एक औषध होती है, एक धातु होती है, जिसका उसमें विशेष होता हैं, देखो, निताम्ब वृत्त होता हैं, मानो देखो, उसका सम्बन्ध एक पशु से होता हैं जिस पशु का नाम उंटनी कहलाता हैं। परन्तु उसके दुग्ध में मानो देखो, लोहे की विशेषता विशेष होती हैं। परन्तु देखो, जैसे एक कालिमा एक पशु होता है जिसको भीषणी कहते हैं, परन्तु उसके दुग्ध रणेनकेतु, श्वेत्तानि, इन दोनों मानो धातुओं का मिश्रण होता है और यह जो माह वृतिका मानो देखो, एक वृत्त होता हैं, जो पर्वतों में प्राप्त होता है, उसके दुग्ध में पारा की विशेषता होती है। परन्तु एक पशु होता है, जिसको हमारे यहाँ घुड़ंग कहते हैं देखो, अश्वानि कहते हैं, वह जो अश्व का जो वह दुग्ध हैं उसके दुग्ध में मानो देखो, तम्ब्रपत का एक विशेष धातु का मिश्रण होता है मानो देखो, इन दुग्धों का भिन्न भिन्न प्रकार का, एक प्रकार का नृत्त है बेटा! यह जो विशाल वन है, मैं कहाँ चला गया हूँ, यह तो विशाल वन में चला गया हूँ, औषधियों का बड़ा विशाल वन है, पुत्रों! परन्तु मैं

केवल इतना उच्चारण करने के लिए तत्पर हूँ, क्या इनके दुग्धों में भिन्न भिन्न प्रकार के गुण है, कौन कौन से रूग्ण में, कौन कौन से दुग्ध का पान किया जाएं, कौनसी औषधियों का पान किया जाएं यह तो बेटा! मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें वर्णन कर दिया था। परन्तु आज मैं इतना समय तुम्हें इतनी दूरी नही ले जाना चाहता हूँ। विचार विनिमय क्या है? क्या मानो देखो, यह जो जितना भी हमारे यहाँ क्रियाकलाप हैं, अथवा कायाकल्प का क्रियाकलाप है, ये भी बड़ा विचित्र माना गया है।

एक समय देखो, राजा रावण का जीवन तुम्हें स्मरण होगा, राजा रावण एक समय भ्रमण करते हुए वह महात्मा श्वेति ऋषि के द्वार पर पंहुचे थे, तो श्वेति ऋषि महाराज को सौ वर्ष हो गएं थे औषधियों के विज्ञान में रत्त हुए, उसी के ऊपर अनुसन्धान कर रहे थे, भयंकर वनों में, मानो नृत्त करते थे ब्रह्मचारी उनके द्वार पर आते तो एक समय राजा रावण वहाँ पंहुचे। राजा रावण ने कहा प्रभु! मैं यह चाहता हूँ कि मेरे मस्तिष्क की जो ग्रन्थियाँ हैं, उनका स्पष्टीकरण हो जाएं, तो उस समय स्वाति ऋषि महाराज ने मानो देखो, जाल के वृत्त का पाङ्गाङ्ग, और सोती वृत्त होता हैं उसका पाङ्गाङ्ग एक मानो बेल के वृत्त का पाङ्गाङ्ग एक मानो देखो, कृतिकान औषध होता हैं उसका एक मानो पाङ्गाङ्ग उन्होनें वृत्तों के पाङ्गाङ्ग का निर्णयात्मक किया। परन्तु उन्होंने उसको निर्माणित किया, और राजा रावण का बारह वर्ष तक ब्रह्मवर्चोसि वृत्त करके पान कराया, उनका जीवन मानो एक विशेष बन गया। वह नाभि केन्द्र में, अपने में मानो योगाभ्यास करते रहे, वह मानो देखो, योग की प्रतिभा में भी कुछ चले परन्तु उसमें भी एक नृतिका आने लगी। तो मानो देखो, ऐसी औषधियों का पान कराने वाले, बहुत से ऋषि मुनि हुए हैं। जो स्वतः पान करते थे, अपने पान कराते रहते थे, क्योंकि यह तो एक विषय है, एक विचार है, परन्तु एक मानव की कोई दशा है, तो जब उसमें मानव परणित हो जाता है, संलग्न हो जाता है, जो उसमें लगा रहता है, और एक समय आता है, कि उसमें वह सफलता को प्राप्त होता हैं।

तो मैं आज विशेष विवेचना न देता हुआ, केवल तुम्हें यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ, क्या पुत्रों! देखो, त्रिवर्धा औषधियों का गुण, हमारे वैदिक साहित्य में, विशेषकर आता रहता है। मानो तक्र का वर्णन विशेषकर आता रहा है, यहाँ देखो, सोमलता के सम्बन्ध में, हमारे ऋषि मुनि सर्वत्रता में सोमरस का पान करते है सर्पकेतनी एक औषध होती है, उसका आसन बनाते थे, जिसके आसन पर मानो देखो, सर्प नही आता, उस औषध में यही गुण होता हैं, परन्तु एक बिछेत्क नामक एक औषध होती है, देखो, उसका आसन बनाने से बिच्छु उसके समीप नही आ पाता। एक मानो श्रृंग वाचक एक वृक्ष होता है उसकी छाल का आसन बनाने से, मानो देखो, आसन पर विद्यमान हैं, अङ्ग संग देखो, उसके समीप सिंहराज विद्यमान है, वह सिंहराज उस महापुरूष को छू नही पाता। परन्तु देखो, इस प्रकार वृक्षों की हमारे यहाँ यह जो स्थावर सृष्टि है, इसका बड़ा विशेष वर्णन आता रहता है। बेटा! मुझे समय मिलता रहेगा, मैं अण्डज सृष्टि के सम्बन्ध में भी मानो इसके ऊपर बारह वर्ष तक अध्ययन किया था। बारह वर्ष तक यह देखो, अण्डज सृष्टि के ऊपर अध्ययन किया एक सौ बीस तक इस मानो देखो, आयुर्वेद के ऊपर अध्ययन किया वृक्ष विज्ञान के ऊपर मानो इसकी लुग्दियां बना बना करके इसको मानो पान कराते रहते थे, और नाना ऋषि मुनि इसको पान करते रहे मानो देखो, जंगम सृष्टि और उदभिज सृष्टि हैं यह चारों प्रकार की सृष्टि का वर्णन, वैदिक साहित्य में बेटा! प्रायः आता रहता है यह विशाल वन है, इसमें बहुत तपस्या की आवश्यकता होती है, मौन रहने की आवश्यकता होती है, तो इसीलिए आज का विचार मैं तुम्हें यह देने जा रहा हूँ पुत्रों! क्या हमारे यहाँ, यह विशाल वन में, मैं चला गया हूँ, तो इस वन में से किसी काल में बेटा! अवकाश भी हमें प्राप्त होगा। परन्तु देखो, मैं आज इतना ही विचार तुम्हें देने के लिए आया हूँ, परन्तु जाल का वृक्ष भिन्न होता है, कदम्ब का वृक्ष भिन्न होता है, कदम्ब के कुछ और भी गुण, कदम के कुछ और भी इसके नामोकरण हैं जिसको श्याम श्वेत नामक एक वृक्ष भी कहते हैं कदम्बेश्वर भी कहते हैं मानो देखो, इसकी छाया में विद्या अध्ययन करने से मानो

यदि तुम विज्ञान की विद्या का पान करना चाहते हो, और इसकी छाल, इसके मानो पत्र, इसके पांचों अंगों के द्वारा तुम याग करना चाहते हो, और इसी की समिधा के द्वारा अग्न्याधान करना चाहते हो, मजीठ वृक्ष की समिधा हो चन्दन की समिधा हो, और श्वेतकेतु एक वृक्ष होता है, उसकी समिधा हो, मानो इसका एक वर्ष तक देखो, मन को एकाग्र करके याग करने से पञ्च कोण में याग करने से, मानव को देखो, अपने पूर्वज देखो, जो अन्तरिक्ष में जिनके शब्द विद्यमान हैं, चित्रों के सहित है, वह स्वप्न में आने तुम्हें प्राप्त हो जाते हैं। इस प्रकार का बेटा! विज्ञान हमारे औषध विज्ञान में निहित रहता हैं। अश्विनी कुमारों ने इस प्रकार का अध्ययन किया। देखो, महात्मा दधीचि ने भी, इस प्रकार का अध्ययन किया है, इसी प्रकार का अध्ययन, महर्षि वैशम्पायन और कतुक ऋषि महाराज ने भी और महर्षि भारद्वाज इत्यादि देखो, इन वृक्षों के ऊपर अन्वेषण करते रहे, तो आज का विचार हमारा समाप्त होने जा रहा है, आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय ये कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, परमात्मा के रचाए हुए विज्ञान के ऊपर कुछ अपने सूक्ष्म (पुस्तक से) विचार अपने में लाना चाहते हैं तो हमारा यह वाक कहता है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए औषध विज्ञान के ऊपर हम अनुसन्धान करें विचार करें वैद्यराज बनें किरणों को जानने वाले बनें, अग्नि की प्रधानता में अपनी प्रतिभा रहे और परमात्मा का सदैव चिन्तन बनो रहें क्योंकि परमात्मा के आश्रय से यह विज्ञान हमारे समीप आता है तो यह आज का विचार समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा।

18.840716-वनस्पति से दीर्घ आयु

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव मानो जो इन्द्रोमयी कहलाता है। वैदिक साहित्य उसे इन्द्रश्चम वर्चोसि की उपाधि प्रदान कर रहा हैं। हम सब प्राणी उस महान देव के याग में आङ्गन में रमण करते रहते हैं। प्रत्येक प्राणी उस परमपिता परमात्मा का यशो गुणगान प्रायः गाता ही रहता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा एक कण कण में व्याप्त रहते हैं। तो इसीलिए मानो हमारा हृदय अगम्य ज्योति कहलाता है, वह इन्द्र हैं, मानो वह इन्द्रियों का स्वामीत्व करने वाला है, जितना यह संसार प्रायः हमें दृष्टिपात आता रहता है, यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड का नेतृत्व करने वाला हैं, तो हम उस परमपिता परमात्मा की गोद में मानो अपने आनन्द को मानो अपने में धारण करना चाहते हैं। जिस प्रकार माता का पुत्र मानो व्याकुल हो जाता है, क्षुधा में माता अपनी लोरियों का पान करा देती है, अथवा वह क्षुधा से मुक्त हो जाता है, वह जो क्षुधा से पीड़ित हो रहा था, उससे वह उपराम हो जाता है। जो आनन्दमयी खिलवाड़ करने लगता है, उसे उसी प्रकार हम उस परमपिता परमात्मा की गोद में अथवा उसके आनन्दमयी आभा में हम सदैव रत्त रहना चाहते हैं। हे प्रभु! अनन्तमयी ज्योति के स्रोत तुझे वह वेद इन्द्र कहता है। मानो तू इन्द्र हैं, तू धीमीधीमी वृष्टि करने वाला है। नाना प्रकार के व्यंजनों को जन्म देने वाला है। मानो देखो, जड़वत संसार, तेरी आभा में जब, रत्त रहने लगता है तो उसमें एक महान, पवित्रता महानता की उज्ज्वलता उसमें ओत प्रोत हो जाती है। तो हे प्रभु! हम तेरी शरण और तेरे आनन्दमयी उस लोरियों का पान करना चाहते हैं, जिससे हम सर्वत्र रसों का पान करने वाला हों, जैसे वैद्यराज, नाना प्रकार की औषधियों को पान करता हुआ औषधियों को जानता हुआ अपने में रसों धर्मा बन जाता है, वह रसों को

उपलब्ध करने लगता है। तेरे नाना प्रकार के व्यंजनों को जान करके, इस संसार सागर की ऊर्ध्वा में एक कल्पना करने लगता है। मानव का बौद्धिक जो जीवन है, वह पवित्र बन जाता हैं। उसमें और तेज की प्रतिभा का जन्म हो जाता है। तो हे परमदेव! तू आनन्दमयी, तू सच्चिदानन्द आनन्दमयी कहलाता है। तू सतचित्त आनन्द हैं, हम आनन्द के लिए, सदैव पिपासी रहते हैं, हे प्रभु! तू हमारे में महानता की प्रतिभा, ओत प्रोत करा, जिससे प्रभु! हम इस संसार सागर से पार हो जाएं। कोई संसार में मान की तो कोई अपमान की प्रतिभा में रत्त हो रहा है। तो हे भगवन! हम आपको बारम्बार तेरी महिमा को दृष्टिपात करते हुए, तेरे अनन्तमयी ब्रह्माण्ड की कल्पना करते हुए, हमारा मस्तिष्क नतमस्तक हो रहा है, हम सदैव आपकी महिमा का ही गुणगान गाते रहें।

तो आओ, मेरे पुत्रों! आज का वेदमन्त्र, हमें उस मार्ग का प्रदर्शन करा रहा है उस उस मार्ग के पथिक बनना चाहते हैं, जिस पथ पर ऋषि मुनि, आज तक अपने याग में परणित होते रहें है। योगाभ्यास करते हुए, अपने प्राणत्व मनस्तव को जान करके, ऊर्ध्वा को गति करते रहे हैं। तो हे देव! हम उस महानता की, पिपासा मे, सदैव संलग्न रहते हैं, रहना चाहते है जिससे प्रभु! आपका स्मरण हमारे एक एक अङ्ग अङ्ग में समाहित हो जाए। जैसे प्रातः काल सूर्य उदय हो करके, नाना प्रकार की किरणों से इस संसार को आच्छादित कर देता हैं पृथ्वी को आच्छादित कर देता है, इसी प्रकार हे प्रभु! आपके नामोकरण से हमारा जीवन इतना परिपूर्ण हो जाएं कि प्रभु! देखो, आपके नाम के स्मरण की तरंगें हमारे अङ्ग से उत्पन्न होने लगे हमारा जीवन ऐसा महान ऐसा कृतज्ञ होना चाहिए ऐसा निष्पाप होना चाहिए ऐसा निष्कपट होना चाहिए हे प्रभु! जो आपकी देन वह जो आपकी सुगन्धि है। अङ्ग अङ्ग से उसका प्रसार हो जाए। हम सुगन्धि युक्त बन जाए।

तो हे मेरे प्रभु! तेरा वेद तेरा ज्ञान अनुपम हैं, तू अनन्तमयी कहलाता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, आज का हमारा वेद क्या कहता है मैं बेटा! इससे पूर्व काल में भी, वनस्पति विज्ञान के सम्बन्ध में, मानो मानवीय अपनी विचारधारा को ले जा रहा

था, जिस विचारधारा की परम्परा मानो वैद्यराजों के मस्तिष्कों में प्रायः रही है, वैद्यराज किसे कहते हैं? मानो जो औषधियों के मर्म को जानता है, अथवा जो औषध विज्ञान में जो रत्त रहता है, उसको मानो वेदोक्तं ब्रह्मवाहा वेद यह सब वेदान्त धन्वस्ते यह शब्द है, जो आयु के वेद को जानता है उसे वैद्यराज कहते हैं, उसे वैद्यराज कहते हैं उसे वैद्यराज कह करके हैं क्योंकि वह वेद के अंगों को जानता हैं, वेद आयु के मर्म को जानने के लिए तत्पर रहता है, प्रत्येक मानव को यह प्रबल इच्छा बनी रहती है क्या मैं मानो वेद के मर्म को जान करके, मैं वैद्यराज बन जाऊं ये प्रबल इच्छा होती है। क्या मैं वैद्यराज बनना चाहता हूँ वेद कहते हैं मानो वेद प्रकाश को कहते हैं, और वह वेदास्ति मानो देखो, जो उसकी सन्धि में परणित करता हुआ, मानो देखो, जो वनस्पति विज्ञान को अङ्ग को, प्रत्यंग को, जानता है, उसे वैद्यराज कहते हैं।

मानो देखो, मुझे स्मरण आता रहता है मेरे पुत्रों! देखो, त्रेता का काल तो प्रायः सभी जानते हैं त्रेता के काल की वार्ता भी सर्वत्र जानते रहते हैं परन्तु देखो, जब हमारे यहाँ राम और रावण का संग्राम हो रहा था तो रावण के पुत्र मेघनाथ जी मानो बड़े पराक्रमी और बलिष्ठ थे मानो देखो, उनके यहाँ एक शस्त्र था शक्ति अस्त्र उसे कहते थे मानो वह महाराजा इन्द्र को जब उन्होंने विजय किया था तो उससे प्राप्त हुआ था जब वह त्रेता के काल में जब राम और रावण का संग्राम हुआ तो वह जब संग्राम के लिए रण भूमि में अपने को ले गएं रथों में विद्यमान हो करके लक्ष्मण और मेघनाथ दोनों का संग्राम हुआ जब दोनों का संग्राम हुआ तो लक्ष्मण ने बहुतसी सेनाएं जब नष्ट कर दी तो मेघनाथ ने एक शस्त्र का प्रहार किया था वो शस्त्र ऐसा था वह शस्त्र ऐसा था क्या जैसे मेघ जैसे छाया मान हो गएं मेघों में से अग्नि की वृष्टि होने लगी और निचले स्थान में जलाश्य बन गया जब जलाश्य बन गया तो उसमें सेना लक्ष्मण की समाप्त होने लगी। तो राम के द्वारा एक वरुणास्त्र था, जो महर्षि भारद्वाज उसे उन्हें प्राप्त हुआ था, तो उन्होंने मानो देखो, वरुणास्त्र का जैसे प्रहार किया, अग्नि को उस यन्त्र ने अपने में निगल लिया, अपने में धारण

कर लिया। तो धारण करने के पश्चात संग्राम पुनः होता रहा। तो मेघनाथ जी ने एक यन्त्र का और प्रहार किया जिससे संसार रात्रिमय हो गया। जब रात्रिमय हो गया, तो लक्ष्मण के द्वारा एक यन्त्र था मानो जो शबरी से प्राप्त हुआ था, भारद्वाज मुनि ने उसको को निर्माणित किया था, उस यन्त्र को उन्होंने वायुमण्डल में त्यागा तो मानो देखो, एकदम ब्रीहि व्राता प्रकशाम् ब्रहे सूर्य का प्रकाश हो गया अन्धकार समाप्त हो गया। मानो जब संग्राम होने लगा, पुनः तो मेघनाथ जी ने शक्ति का प्रहार किया, लक्ष्मण मूर्छित हो गएं। प्राण शक्ति शून्यत्व को प्राप्त हो गई। मानो जब शून्य गति को प्राप्त हो गएं तो वह जब विचारधारा देखो, जब लक्ष्मण को राम के कक्ष में ले गएं, तो उस समय महाराजा विभीषण से यह कहा गया कि तुम इस नगर के वासी हो, तुम लंका के स्वामीत्व में भी रहे हो, मानो देखो, यहाँ कौन वैद्यराज है? जो इसको सुसज्जित कर सकता है? हमारी सेना में कोई वैद्य ऐसा नही है कोई वेदाम् ऋतप्प्रीहि जो उसके मर्म को जानने वाला हो। परन्तु वैद्यराज बहुत थे उनके यहाँ, परन्तु ऐसा वैद्यराज नही था, तो उस समय विभीषण ने यह कहा, सम्भो भावा ब्रहे विश्वजंम ब्रीहि संवसुतां भुजु पुत्राणि गच्छतं वेश्म्भे सुधन्वचवचतां भवे मानो देखो, यह कहा गया है कि अश्विनी कुमार भी है यह कहा गया कि अश्विनी कुमार इसको विशुद्ध रूप में नही ला सकते, उन्होनें कहा तो रावण के वैद्यराज है, जिनको सुधन्वा कहते हैं, तुम सुधन्वा को लाओ, और उसको वहाँ देखो, दो ही प्राणी ला सकते हैं या तो महाराज जामवन्त ला सकते हैं या महाराजा हनुमान ला सकते हैं। तो मानो देखो, दोनों ने यह प्रतिज्ञा की कि हम ला सकते है।

मानो देखो, हनुमान जी ने वहाँ से अपने वाहन में वेग से गति की, और वेग से गति करके जहाँ वह विश्राम को प्राप्त हो रहे थे, मानो उसके आसन को ले करके, वाहन में राम की सेना में आ गएं। जब राम की सेना में आ गएं जब सेना जब उसको जागरूक किया गया तो सुधन्वा ने कहा, यह क्या हो गया? मैं कहाँ निन्दित हुआ था कहाँ मैं जागरूक हो रहा हूँ, महाराजा हनुमान और जामवन्त दोनों ने

कहा प्रभु! हम इसीलिए आए हैं क्योंकि वैद्य जो होता है, वह परमात्मा के तुल्य होता है। जिस समय औषधि का वह मानो देखो, रूग्ण का निदान करता है। तो वह मानो देखो, ईश्वरीय उसकी प्रतिभा होती हैं, निष्कपट होता है मानो देखो, निर्दोष होता है वह उसमें राग द्वेष भी नही होता, मित्र और शत्रुता भी नही होती वह एक रस रह करके मानो उसके रूग्ण हो चूस लेता है अपने में धारण कर लेता है। मेरे प्यारे! देखो, वैद्यराज को जहाँ निन्द्रा से जागरूक हुए, जैसेमहात्माओं के उपदेशों की बौछार हो रही हो ऐसे महाराजा सुधन्वा को प्रतीत हुआ, जब सुधन्वा को यह प्रतीत हुआ, कि मेरे ऊपर तो देवताओं की वृष्टि हो रही है, तो मानो मुझे क्या करना है, यह मेरा कर्तव्य तो नही है, परन्तु देखो, यह मेरी प्रतिभा अन्तरात्मा की पुकार है, मानो बाह्य जगत नही कहता है क्योंकि मेरा, मेरे राजा का, राम शत्रु है परन्तु देखो, जब अपनी अन्तरात्मा को विचारता हूँ, अन्तरात्मा एक ही रस रहने वाली है। तो मुझे इसके रूग्ण को शान्त करना चाहिए। तो महात्मा ने मानो देखो, वह वैद्यराज ने उस समय, हनुमान से कहा जाओ, नील पर्वत पर चल जाओ, और वहाँ मानो देखो, एक सुलक्षणा वृत्ति नाम की बूटी है सुलक्षणा नामक एक औषध है और उसी के साथ में एक संग्रीत नामक एक औषध कहलाती हैं, दोनों औषधियों को लाया जाएं, हनुमान ने कहा प्रभु! उसकी जानकारी मुझे कैसे प्राप्त होगी क्योंकि मैं तो इस विद्या को नही जानता उन्होंने कहा वह औषध ऐसी हैं यह हिमालय की कृतिका में तुम्हें जाने के लिए मैं प्रदीप्त कर रहा हूँ। मानो देखो, जिससे अन्धरात्रि में जब मानो देखो, देखो, तारों के ऊपर भी मेघ छाया मान हो, उस समय मानो देखो, उनसे पत्र उनके पुष्पों पर ऐसे छाया तुम्हें प्राप्त होगी, जैसे कोई यहाँ प्रकाश दे रहा है। तुम औषध को लाओ। तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा बहुत प्रिय! तो मुनिवरों! देखो, महाराजा हनुमान आज्ञा पा करके राम की वहाँ से गमन किया, और जाते समय महाराजा देखो, सुधन्वा ने यह कहा, क्या यदि सूर्य उदय हो गया है औषध को सूर्य की किरण लग गई है, वह किरण कौतुक नाम की किरण होती है, उसको हम वैष्णव नाम की किरण भी

कहते हैं, वह सूर्य उसको अपने गुणों को धारण कर लेता हैं, और रात्रि के काल में, उस गुणों को, उस औषध को प्रदान कर देता हैं। यह औषध विज्ञान बेटा! बड़ा भयंकर विज्ञान है, बड़ा विचित्र विज्ञान है, इसके ऊपर बहुत अनुसन्धान किया जाता है, एक औषध इस प्रकार की होती है, हिमालय में जब सुधन्वा ने यह कहा कि वैष्णव किरण उसे अपने में धारण कर लेती है, और जब सूर्य अस्त होता है तो उसके गुणों का अपनी धरोहर के रूप में परणित कर देती है, तो मेरे प्यारे! ऐसा मुझे स्मरण है क्या मानो देखो, हनुमान ने वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते हुए वह मानो कौचुक पर्वत पर जा पंहुचे और कौचुक पर्वत पर जब पंहुचे तो वहाँ सुलक्षणा नामक एक औषध विद्यमान थी, मानो जो उन्होंने गुणों का वर्णन किया, वह उसमें विद्यमान थे, मानो एक ऋति तत्त्व नाम एक औषध विद्यमान थी, तो मानो हनुमान जी क्योंकि बलवान थे, वह शक्ति के स्वरूप को जानते थे, उन्हें उन औषधियों का मानो जो पर्वत जितने गुणों का था वह उस स्थली को ही ले करके गति करने लगे, तो मानो भ्रमण करते हुए वह नाना बाधा भी उन्हें नाना प्रकार की मानो आपतियां भी आई, परन्तु वह गति से भ्रमण करते हुए देखो, सूर्य उदय नही होने दिया, वह सूर्य उदय नही होने दिया और सुधन्वा के समीप आ गएं। सुधन्वा ने कहा धन्य है जिस राष्ट्र में सेना में ऐसे सेना नायक हो क्या उसको संसार का कौनसा प्राणी है, जो विजय कर सकता है। क्या जो इसमें इतनी संलग्नता हो एक प्राणी के प्रति कितनी सहानुभूति उसके हृदय में है, तो मानो देखो, उस समय देखो, परमात्मा का प्रभु का चिन्तन करते हुए सुलक्षणा नामक औषध श्वेति नामक औषध, सम्भु नामक औषध, मानो इन तीन औषधियों का त्रिकोण बना करके वह जलों के साथ में उसको प्रदान करने से वह जो शक्ति जैसे मानो देखो, सूर्य वैष्णव नाम की किरण, मुनिवरों! देखो, उसको अपने गुणों में धारण करने लगती थी, और रात्रि काल में उस धरोहर को उसको परणित कर देती थी, तो मानो देखो, वह धरोहर के तुल्य मानो देखो, जैसे धरोहर का प्रहार हो रहा हो, ऐसे लक्ष्मण मानो जागरूक हो गएं और जागरूक हो गएं उतना ही

बल उतनी ही शक्ति मानो उसमें प्राप्त हो गई। परिणाम यह हुआ कि प्रातःकाल सूर्य उदय होते ही, मानो देखो, उस औषधि का गुण समाप्त हो गया।

तो मैं उच्चारण यह कर रहा था पुत्रों! कि वैद्यराज अपने में कितना मार्मिक होता है, उसकी कितनी विचारधारा विशुद्ध होती है, मानो देखो, वह सूर्य प्राण लक्ष्मण जीवित लक्ष्मण अपने स्वरूप में आ गएं और वह देखो, अपने आसन पर गमन किया। मानो गमन किया, तो सुधन्वा अपने वैद्यराज ब्रहे अपने आसन पर चले गएं तो उच्चारण करने का अभिप्राय बेटा! मेरा क्या है? मैं तुम्हें यह उच्चारण कर रहा था, कि मानव का यह कायाकल्प हो गया। मानो देखो, प्राण शून्य को गति में लाना, औषध विज्ञान एक विशाल है। क्या मानो जिसके ऊपर अन्वेषण करने से, ऐसा प्रतीत होता है, क्या हम अपने में प्रतिभाषित बनते हैं, मानो देखो, इसी प्रहार वृत्तियों से देखो, राम की आयु दीर्घ बनी, और रावण की आयु उससे भी दीर्घ थी। रावण की आयु दीर्घ रहती थी। क्योंकि वह संयमी थे, वह विचित्र थे, उनका भोज भी बड़ा विचित्र था। मानो देखो, रावण केवल क्रियाकलाप करते रहते थे, औषध विज्ञान के ऊपर सुधन्वा के चरणों में विद्यमान हो करके, वह उन औषधियों का पान करते थे, मानो देखो, मुझे स्मरण ऐसा है, क्या राजा रावण की आयु थी जो आयु थी जिस समय वे समाप्त हुए थे और जन्म से समाप्त होने तक उनका जो आयु था वह बाईस सौ वर्ष का लगभग प्राप्त होता है मानो देखो, उनका आयु बाईस सौ वर्ष का आयु रावण का रहा जिन्होंने लगभग मुनिवरों! देखो, इक्कीस सौ सोमवृत्ति देखो, इक्कीस सौ पचास उन्होंने लंका का राज किया। उन्होंने पूर्णत्व संलग्न हो करके, लंका का राज किया। क्योंकि पचास वर्ष की आयु थी जब उन्होंने लंका को कुबेर से विजय की और कुबेर से विजय करके मानो लंका उन्होंने इतनी आयु में प्राप्त की जितनी आयु उन्होंने राज किया तो परिणाम क्या बेटा! देखो, इसमे साहित्य में तो जाना नही चाहता हूँ। परन्तु देखो, मुझे तो साहित्य भी स्मरण आ रहा है, परन्तु मेरे प्यारे महानन्द जी! मुझे बारम्बार बाध्य करते रहते हैं, एक वाक्य इन्हें रटंत लगी रहती है, चलो, उसी वाक पर प्रायः हम अपने विचारों को

उदधृत करना चाहते हैं, मानो देखो, हम उसी वाक्यों पर आना चाहते हैं।

मैंने बेटा! तुम्हें वर्णन किया था कि राजा रावण की चर्चाएं चल रही थी, राजा रावण ने मानो लगभग ऐसा उन्होंने कई समय कायाकल्प किया मानो देखो, काया को अपने में शोधन कर दिया, अपने में जैसे जल में वस्त्र को शुद्ध कर देते हैं, इसी प्रकार वस्त्रों को, इसी प्रकार शरीर को, शुद्ध करने का नाम मानो देखो, वह धुरित करने का नाम ही मानो देखो, कायाकल्प कहलाता हैं। कायाकल्प के सम्बन्ध में मैने तुम्हें कल इस सम्बन्ध में तुम्हें बहुतसी चर्चाएं की, परन्तु प्रथम यह चर्चाएं की क्या मानो देखो, कायाकल्प में, पञ्चीकरण का तो वर्णन आता है। परन्तु पञ्चीकरण भी ब्रह्मचर्य से युक्त होना चाहिए, यदि ब्रह्मचर्य से पञ्च जो क्रियाकलाप हैं, यदि वह ब्रह्मचर्य युक्त नही है, तो पञ्चीकरण में मानो देखो, यहाँ एक अपने कायाकल्प के करने में मानो देखो, नाना प्रकार का, आपातकाल आ सकता है। उन आपात कालों से हमें ऊर्ध्वा रहने के लिए उपराम रहने के लिए ब्रह्मवर्चोसि का मन्थन करना है, ब्रह्मवर्चोसि हम किसे कहते हैं? हमने पूर्व काल में कई काल में वर्णन किया कि हम मानो देखो, वीरत्व की रक्षा जहाँ करते हैं, परन्तु रक्षा हम जब ही कर सकते हैं जब हमारी ऊर्ध्वा गति बन जाएं, तो उससे पूर्व हम काया कल्प से पूर्व लगभग छहमाह तक मैं तीन औषधियों का तुम्हें वर्णन कराता हूँ। जो मानो पुरातन काल में तीनों प्रकार की औषधियों का मानो वर्णन होता रहा है, मानो तीन औषधि कौनसी हैं? एक शैलखण्डा है, एक शैल भूनि है, एक मृचिका है। इन तीनों औषधियों को मानो देखो, इन तीन औषधियों को अग्नि में तपाया जाता है। अग्नि में तपा करके और इनको मानो अग्नि में तपा करके, जल से शोध ब्रीहि मानो उसके पश्चात इनका खरल किया जाता हैं, खरल करके इनकी मानो देखो, लुगदी का स्रोत बनता है, जब इनकी लुगदी का स्रोत बनता है, तो मानो देखो, अम्बिका एक वृक्ष होता है, अम्बिका वृक्ष में मानो उसकी खोखर करते हुए, उसको उसमें धारण कर देना चाहिए, उसका मुख सस्त होना चाहिए, और उसमें अग्नि मानो उसके जड़ स्रोत में अग्नि का प्रहार किया जाएं, जब अग्नि का स्रोत

जब तक उस तक जाएगा, तो मानो देखो, उसको जब वह अग्नि में तप जाएं, उसके पश्चात उसको निकास लिया जाएं, उसका पुनः खरल किया जाएं, खरल करके मानो देखो, गो दुग्ध के द्वारा, उसे पान छहमाह तक पान करो, उसके पश्चात ब्रह्मवर्चोसि का पालन, ब्रह्म का चिन्तन होना चाहिए ब्रह्म का चिन्तन, गायत्री की गोद में, परमात्मा का देखो, ध्यानावस्थित होना चाहिए, मानो देखो, उस समय नाना प्रकार के राग, द्वेष, क्रोध, कामना यह सर्वत्र मानो सान्त्वना को प्राप्त हो जाएं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या प्रभु! यह जो गो घृत आप प्रदान कर रहे हैं क्या उसमें तो इतना वीरत्व होता है, कि कैसे हम पालन कर सकते हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या पुत्र! उसमें गोरत्व प्रीहि वृत्तो उसमें वीरत्व का अवरोह नही होता, परन्तु उसका पालन करने में, हम सुगम बनते हैं, क्योंकि हम अन्नाद भूतानि अन्न को सूक्ष्म बनायें गो घृत और देखो, औषधियों का पान विशेष करें, देखो, उसमें एक मानो जिसको अपामार्ग कहते हैं उसको देखो, उसके स्वतः बीजों वृत्तियों को ले करके उनको अग्नि में तपा करके, उनका रस बना करके, हमें मानो देखो, एक एक माह में तीनतीन समय पान करना चाहिए, जिससे मुनिवरों! देखो, क्षुधा इस संसार की क्षुधा उसे हमारा बौद्धिक तत्त्व समाप्त न हो जाएं। तो ऐसा मानो आयुर्वेद कहता है। बेटा! मैं नही कह रहा हूँ, यह आयुर्वेद कह रहा है, मानो देखो, आयुर्वेद जैसा कहता है मैं उसी के आधार पर, तुम्हें इसकी युक्तियां प्रगट करा रहा हूँ। उसके पश्चात छहमाह के पश्चात वह जो पञ्च कर्म है मानो जिसे हम रेचक कहते हैं, मानो रेचक है, वमन है, सुहाति अस्तो यह जो पञ्चीकरण है, इसें हमे करना चाहिए, और करते हुए परन्तु देखो, तक्र को अवश्य पान करता रहे, जब तक्र को पान करते रहोगे उसमें मानो देखो, हम एक संटेत औषध होती है संटेत औषध को ले करके, उसका रस बना करके एक मानो अम्बिका वृक्ष होता है उसके पत्र, पत्रों को ले करके, उसका रस लिया जाएं, और उसका रस ले करके मानो देखो, उसमें देखो, त्रिकुटा, त्रि जटामासी, उनको ले करके त्रिफला मानो देखो,

इसका एक अङ्ग बना करके, उसे हमें पान करना चाहिए। मानो देखो, एक वर्ष तक, उसका पान करने से तक्र का पान करने से, मानो देखो, हमारा कायाकल्प की प्रतिभा, हमारे समीप आनी प्रारम्भ हो जाती हैं, उससे हमारा आयु दीर्घ बन जाता हैं। काया कल्प का अभिप्राय यह है, कोई सा भी अङ्ग अङ्ग से भंग हो गया है, उस अङ्ग की उपलब्धि हो जाती है, मानो उस अङ्ग में से ऋतिका घणों की उपलब्धि हो करके गति अस्तो में प्राप्त हो जाता है। जैसा मैनें पुरातन इससे पूर्व काल में कदम्ब के वृक्ष की विशेष मानो देखो, वर्णन की थी, कदम्ब के वृक्ष की मानो देखो, उसका पाङ्गाङ्ग पान करना चाहिए, और देखो, यह जो हमने तुम्हें त्रिकान्तक एक देखो, औषध होती है, वह वृक्ष जीवित है मानो देखो, इनके पाङ्गाङ्ग, इनके रसों स्रोत्रों को ले करके उनके यशोधर्मा में पान करना चाहिए। पान करते हुए शुक्ल पक्ष में इन औषधियों को का निर्माण करना चाहिए, और कृष्ण पक्ष में इन औषधियों का पान करना चाहिए मानो देखो, निर्माण शुक्ल में हो और पान इनका मानो कृष्ण में हो तो यह औषधियां अपने में गुणकारी प्रतीत होती हैं तो मानो देखो, यह भी विशेषता होती है।

तो विचार विनिमय क्या मैं विशेष तुम्हें देने नही आया हूँ, हमारे ऋषि मुनि परम्परागतों से ही, बेटा! देखो, इस क्रियाकलाप को करते रहे हैं इस क्रियाकलाप में भिन्न भिन्न प्रकार की औषधियों का वर्णन आता है कल मेरे प्यारे महानन्द जी! ने मुझे यह वर्णन कराया कि जाल का वृक्ष कदम का एक ही वृक्ष होता हैं, परन्तु प्रायः ऐसा नही होता, जो हम नामो उच्चारण कर रहे हैं, उनमें बहुतसी औषध इस प्रकार की हैं, जिनका हो सकता है, आधुनिक जगत जहाँ हम उच्चारण कर रहे हो वहाँ न हो, जैसा महानन्द जी कहते हैं, परन्तु कुछ औषध ऐसी है, जो वर्तमान में मानो प्रायः विशुद्ध रूप में परणित होती है। कुछ भाषान्तर भेदों से भी उनका भेदन हो सकता है। परन्तु मैं इस सम्बन्ध में अनभिज्ञ हूँ विचार केवल यह है क्या उन औषधियों के पान कर्म करने से मानो देखो, हमे प्रतिभा होती है हमें देखो, वमन करना है तो वहाँ देखो, एक वृक्ष होता है, जिसका वटिका वृक्ष कहते हैं उनको

बालि वृक्ष भी कहते हैं, उनके बीजों को बीजवन को ले करके उनके पत्रों को ले करके, उनका पिपाद मानो मानो खरल करके विशुद्ध करके जब हम पान करते हैं, तो मानो वमन हमारे यहाँ स्वतः मानो देखो, एक आभा कृत बन जाता है। देखो, वह वमन उधृत बन जाता है।

तो विचार विनिमय देखो, यह औषध है इसी प्रकार जैसे अम्बिका वृक्ष होता है अम्बिका वृक्ष उसके प्रत्येक देखो, फल उसका पत्र उसके मानो देखो, छाल भी उसका गुदकेत मानो उसकी जड़ा कृति इन सबको ले करके जब पाङ्गाङ्ग बनाते हैं, तो जिस समय हमें कायाकल्प करना है, मानो देखो, करते समय उसके पाङ्गाङ्ग को पान करना है, और पान करते हुए मानो देखो, जैसे हमारे ये केश है यह श्वेत्ता वर्ण के हो जाएं तो यह मानो देखो, कालिमा रात्रि के समान हो जाते है। और मानव के दन्त समाप्त हो गएं हैं तो मानो देखो, दन्तों की प्रतिक्रिया पुनः जागरूक हो जाती है। मानो जो अस्थियों में मानो देखो, हीनता आ गई है, वह पूर्णता को प्राप्त हो जाती है।

तो परिणाम क्या है मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ क्या मानव में एक रूग्ण होता है सम्भो क्या इन्द्रो शनं जनं ब्रीहि देखो, मधु पांचानी कृतियों का उद्घोष होने लगता है, उसके लिए हम गुलमानक औषध और शैलपुत्रिका और सत्यनाशी इन तीनों औषधियों का चूर्ण बना करके हम मानो पान करते हैं तो वह रूग्ण हमसे दूरी हो जाता है। तो परिणाम क्या है? मैं तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ, कि सोम ब्रीहि वाचो सम्भविता देवं मृ ब्रीति अस्तो तो हरद ब्रीहि उच्चा ऐसा हमारे आयुर्वेदाचार्य वर्णन करते हैं, क्या औषधियों को जाना जाएं, औषधियों को जानने से मानो देखो, हमें एक प्रतिभा का जन्म होता है। मैं एक समय बेटा! बहुत पुरातन काल हुआ, एक समय महात्मा दधीचि के यहाँ पंहुचे, परन्तु बहुत से महापुरूषों का वहाँ गमन हुआ, उन्होने एक समय पितर याग किया था। मानो पितर याग के साथ, एक अतिथि याग भी किया था। तो अतिथि याग मानो हम कृतियों से गए, राज स्थलियों से उन्होंने हमने गमन किया, तो जब वहाँ पंहुचे तो महर्षि विभाण्डक महर्षि स्रोतकेतु

ऋषि और केम कृतिका मानो देखो, सब वन को चले गएं। जब वन को चले गएं तो मानो देखो, वहाँ कुछ औषधियां वनस्पति विद्यमान थी। वह पान करने में मधु लगी, परन्तु आन्तरिक जगत में जा करके वह इतनी विषैली बन गई, क्या मानो देखो, रक्त का प्रहार हो गया, जब रक्त का स्रोत प्रारम्भ हो गया, तो मानो देखो, हम महात्मा दधीचि के समीप आए दधीचि से बोले कि यह महाराज क्या हो गया? दधीचि ने कहा कि तुमने गुड़ोव्रासि नामक औषध का पान कर लिया है, यह तो बड़ी भयंकर है। मानो तुम जाओ, इसके साथ में एक इसके साथ में औषध उत्पन्न होती है, जिसका नाम मुन्दरिक नामक एक औषध जिसको हम मुद्रिका कहते हैं मुद्रिका जैसे मानो उसके पत्र होते हैं, तो तुम उसके पत्रों को पान करो, मानो देखो, जल के सहित पान करो, मानो देखो, हमने उसको पान किया तो रक्त जैसे जा रहा था, जहाँ का तहां वह शान्त हो गया तो परिणाम मानो देखो, एक एक औषध इस हिमालय और पर्वतों में और इस पृथ्वी में मानो वसुन्धरा के गर्भ में पुत्रों! कौन कौनसी वस्तु विद्यमान हैं, इसका कोई प्रमाण नही दे सकते हैं, यह अनन्त विज्ञान में हम चले जाते हैं। परन्तु देखो, उत्तर हमसे बन नही पाता। क्योंकि इतना विशाल यह वन है, इस वन में जाने के पश्चात मानो देखो, हमारा क्रियाकलाप मौन हो जाता है। मानो देखो, इसी प्रकार इस औषधियों के पान करने से, मानो उनके गुणों का मानो देखो, वह इतनी तीक्ष्ण है हम तीक्ष्ण से तीक्ष्ण औषध को ले करके नम्र से नम्र बना सकते हैं, नम्र को तीक्ष्ण बना सकते हैं, मानो क्योंकि एक दूसरे के निदान में, प्रत्येक औषध आती है, यदि निदान नही करोगे इतने का उसका इतना गुण नही होता, जितना उसके निदान से मानो देखो, मिलन से होता है। जैसे मानव के शरीर में प्राण और मन दोनो ही है मानो देखो, जड़ तत्त्व है, एक चेतन तत्त्व है। दोनों के मिलान से शरीर गति करता है, इसी प्रकार दोनों का निदान होता है, दोनों की सम्भूति होती है। सम्भ्रुरत होता है। इसी प्रकार मानो देखो, औषधियों में, एक दूसरे के समन्वय से, एक दूसरे के मिलन से, उनके गुणों की बलवती हो जाती है। और वह मानो देखो, रूग्ण के लिए, शान्त करने के लिए

मानो एक गुणातीत बन जाती हैं तो परिणाम मानो देखो, इसी प्रकार हमें विचार विनिमय करना चाहिए। क्या हम अपने में कायाकल्प के सम्बन्ध में उच्चारण कर रहे थे, हम कायाकल्प किसे कहते हैं? कायाकल्प कहते हैं, काया को, पुनः से हम विशुद्ध देना, विशुद्ध रूप आभा में परणित करना है। मानो देखो, इस असतो में अप्रतियां आता रहता है।

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन! मैं यह जानना चाहता हूँ आपको इतना औषध विज्ञान का एक विशाल वर्णन कर रहे हैं परन्तु जैसा हमारे यहाँ पातंजलि जी ने कहा है आयु और जाति और भोग यह पूर्वले जन्म के संस्कारों से प्राप्त होते हैं तो क्या औषधियों से आयु इतनी दीर्घ बना ली जाती है या वैसे ही उच्चारण कर रहे हैं। मेरे विचार में यह नही आ रहा है, क्योंकि जब आयु जाति और भोग यह पुनः पूर्वले जन्म के संस्कार से पातंजलि जी कहते हैं आप इसके विपरीत तो नही जा रहे हैं

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! इसमें कोई विपरीतता नही है क्योंकि मानव के आयु और जाति और भोग यह वाक विशुद्ध है, और यथार्थ है। परन्तु आयु और जाति का इस कायाकल्प से कोई सम्बन्ध नही मिलता हैं क्यों नही बनता इसका सम्बन्ध इसीलिए नही है, क्योंकि जैसे हमे आयु प्राप्त हुई है आयु हमें श्वासों के ऊपर प्राप्त हुई है। अब हमारा जो श्वांस है वह हमारा समाप्त हो गया है अब देखो, उसके पश्चात हमारे शरीर का अन्त होना है। परन्तु यदि श्वांस की गतियां रह रही हैं, तो यह जो प्राण शक्ति है और प्राण वर्धक जो औषध है उनका पान करने से हमारे श्वांस धीमे बन करके हमें पुनः मानो श्वासों की प्रतिभा प्राप्त हो जाती है इसी प्रकार यह सिद्धान्त तो नही शान्त हुआ, परन्तु रहा यह कि आयु जाति मानो आयु का निदान तो इसीलिए हो गया रहा जाति कि हम मनुष्य बनेंगें पशु बनेंगें क्या है? भिन्न भिन्न जातियां है, परन्तु रहा भोग की वार्ता क्या मानव का शरीर भोगों से प्राप्त होता है, या श्वासों से प्राप्त होता है, यह प्रश्न बन जाता है, परन्तु उसका उत्तर यह है कि भोग और श्वासों का दोनो का समन्वय हो जाता है। जब दोनों का

समन्वय होता है, तो आयु और भोग श्वांस प्रहे श्वांस की गति प्राण और देखो, वह भोगवाद मानव के समीप रहता है, तो भोगवाद की सूक्ष्मता होती रहती है, जैसे एक मानव को बालक को हमने आहार करने की कोई वस्तु प्रदान की वह उसको धीमेधीमे पान करता है, तो उसको बहुत दीर्घ समय लगता है, परन्तु उसे एक ही समय चट कर दिया जाता है, अपने में भक्षण कर लेता है। तो मानो उसे कई गुणे समय में वह वस्तु को समाप्त करता है इसी प्रकार भोगवाद का यह विवाद है, भोगवाद की यह विशेषता है, क्या हम भोगवाद को हम धीमेधीमे मानो हम शुभ कर्म करते हुए भोगते हैं। शुभ कर्मों में संलग्नता होती है, तो वही भोग मानो हमारे मोक्ष के लिए मोक्ष का निकटत्व का समन्वय बन जाता है। मानो देखो, वही प्राण शक्ति जो प्राणों से हम भोगों से आयु और मानव के जीवन की स्थिरता स्वीकार करते हैं। उसका मानो देखो, उसका दोनों का समन्वय धीमेधीमे हो जाता है, यदि हम नाना प्रकार के जो अभक्ष्य पदार्थों का पान करते रहते हैं, जैसे एक मानव ने तीक्ष्ण पदार्थों का पान किया जैसे मानो एक मानव ने रक्त का पान किया है। उसको अपनी रसना का स्वादन बनाया है, दूसरों के गर्भों को पान करने के लिए अपनी वासना की पूर्ति करने के लिए वह केवल जब इतना क्रियाकलाप करता है, तो वह अपने भोगों को वह मानो भोगों में एक प्रकार का विष आभा को उत्पन्न कर रहा है, जैसे विष की एक बेल उत्पन्न हो जाती है। मानो देखो, दूसरे भोगवाद का जन्म हो जाता है, क्योंकि उसकी वासना की तरंगें विशेष बन जाती हैं। जैसे एक परमात्मा ने एक औषध को नियुक्त किया है, रूग्णों में क्रियाकलाप में आती है, उस तीक्ष्ण औषध को मानो देखो, मानो देखो, अपने शरीर के पोषण के लिए परणित करने लगता है। तो उससे आयु उसकी सूक्ष्म बन जाती है, इसी प्रकार देखो, मांस भक्षण करने वाले की आयु में सूक्ष्मता आ जाती है। यदि उसमें ऐसे तीक्ष्ण पदार्थों का मिश्रण करता है, तो और आयु सूक्ष्म बन जाती है। परन्तु मैंने जैसे अभी अभी तुम्हें नाना प्रकार की औषधियों के निदान का वर्णन किया है, इनको पान करते रहोगे तो वह शुभ कर्म भी है। विचारधारा भी विचित्र है, ब्रह्म का

चिन्तन भी होता है, और ब्रह्म के चिन्तन के साथ में वासना की हमें शान्ति होती है। वह जो ऊर्ज्वा शक्ति है एक ही मार्ग से हो करके जाती है, वह जल के सदृश्य रहती है, और जल के सदृश्य रह करके मानो देखो, वह जितनी भी शीतलता हमारी मानो ऊर्ज्वा शक्ति जहाँ से शान्त होती है, और निकल जाती है, जितनी वह शीतलता में रहेगी, विचारों में परणित रहेगी, मन उतना शान्त बुद्धि उतनी विचित्र मानो तार्किक बनी रहेगी। ब्रह्म के चिन्तन में लगी रहेगी, उतना ही मानव का शुभ कर्म और देखो, वह श्वांस भी धीमा हो जाएगा, और वह जो तुम्हारा भोगवाद है वह भी शनैशनै तुम्हें वह भोगवाद धीरे धीरे सूक्ष्म बनता रहता है। जैसे एक बहुत बड़ा स्थूल है, उस स्थूल को हम अग्नि में तपाते रहते तपाते रहते हैं, तपाते रहते हैं, एक समय वह आता है कि उसका अस्तित्व समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार जैसे मानो देखो, हम स्थूल हमारा कर्म है देखो, अशुभ कर्म है, यदि हम देखो, उसको हम शुभ कर्मों की बौछार देते रहेंगे ज्ञान रूपी अग्नि की तरंगों में उसे तपाते रहेंगें तो बेटा! वह सूक्ष्म होताहोता तो मानो एक समय वह आयेगा क्या हमारी दीर्घ आयु बन जाएगी प्राण शक्ति हमें पुनः प्राप्त हो जाएगी सङ्कल्प शक्ति के द्वारा और मानो देखो, वह भोगवाद सूक्ष्म बन करके उसको हम भोग भी सकते हैं और वह हमें प्रतीत भी नही होगा। तो इस प्रकार देखो, बेटा! औषध विज्ञान मानो देखो, जिसके ऊपर मैं इसलिए विशेष टिप्पणी नही देना चाहता हूँ केवल विचार यह तुम्हारे आङ्गन में आ गया होगा, क्या यह जो तुम्हारा वैदिक सिद्धान्त हैं, जो हमारे क्रियाकलाप मानो देखो, अन्तरात्मा की वृत्तिका और वह ऐसा उच्चारण करती रहती है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह तो कुछ हमारे विचार में आया है क्या प्रायः ऐसा होता रहता है, परन्तु देखो, इस कायाकल्प के सम्बन्ध में, मानो देखो, इतना आयु कैसे बन सकता है आधुनिक काल में तो नही बनता।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या पुत्र! इसका मैंने कोई मानो इस प्रकार असुतो तो नही ली है क्या आधुनिक काल में नही बनता तो विद्या लुप्त हो गई है, विद्या तो सदैव बनी

रहती है। विद्या तो लुप्त नहीं होती परन्तु जो विद्या के ऊपर जो अध्ययन किया जाता है, वह लेखनीबद्ध किया जाता है। मानो उसको प्रयोग में लाने का प्रयास करो। यह तो तुम जानते हो कि मानव की आत्मा के तीन शरीर कहलाते हैं, यह तो अकाटय है इसको कोई शान्त नही कर सकता, परन्तु इसी प्रकार जब तीन शरीर कहलाते हैं, तो तीनों गुणों का प्रतिस्रोत भी होता रहता है परन्तु रहा यह कि एक दूसरे शरीरों में प्रवेश होना भी अनिवार्य है पञ्च महाभौतिक यह पिण्ड कहलाता है, अस्थियां मानो देखो, अस्थ्यिं के कण वायुमण्डल में परणित रहते हैं, जब यहाँ तक हम स्वीकार करते हैं, विज्ञान यह सिद्ध कर देता है, क्या मानव का शब्द, मानव का शरीर, मानव की अस्थियां, मानव वायु मण्डल में एक सूक्ष्म महारूपों में तत्त्वों के रूप में गति करती रहती हैं। तो क्या पुत्र! यह जो मैंने क्रियाकलाप मानो यह जो पञ्चीकरण का वर्णन किया है, अथवा यह जो कायाकल्प का वर्णन किया है, क्या यह अशोभीनीय हो जाएगा यह कैसे हो सकता है? हमारे विचार में तो आ नहीं पा रहा है, परन्तु रहा यह कि जैसा मैंने तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर दिया मानो जो दार्शनिक प्रश्न है, दार्शनिक विचारधारा है, ऐसे ही कायाकल्प भी दार्शनिक एक सिद्धान्त है, वह भी अपने में एक अनूठा एक रहस्य माना गया हैं। जिसके ऊपर वैद्यराजों ने अथवा वैद्यराजों का भी यह विषय नही रहा है, यह विषय तो ऋषि मुनियों का रहा है, जिन्होंने मानो तपस्याएं की है, तपस्या करके एक एक औषध को जानने का प्रयास किया है, कौनसी औषध क्योंकि संसार में जितना भी अन्न है, अन्न से ले करके प्रत्येक सूक्ष्म वृक्ष है ये सब औषधियां कहलाती है, यह अन्न भी औषधि है, परन्तु यह स्थूल अन्न है इससे हमारा वीरत्व उत्पन्न होता है, तमोगुण की प्रतिभा का जन्म होता है। इसीलिए इस स्रोत को शान्त कर देना चाहिए एकादशों इन्द्रियों का मानो देखो, विजय करके जब हम गति करते हैं तो मानो यह तपस्वियों का जीवन बन जाता है, तुम्हें प्रतीत होगा कि जब हम आदि ऋषियों के समीप जाते थे, तुम्हें तो यह प्रतीत होगा, एक समय हम महाराज अश्वपति के यहाँ, जब सो विशुद्ध ऋषि के द्वार पर पंहुचे थे, तो विशुद्ध ऋषि को

निमन्त्रण देने जब वनों में पंहुचे, तो भयंकर देखो, दण्डक वन में उनका आसन रहता था, तो उस आसन पर मानो वह सर्पकेतु एक औषध होती है उसका आसन बनाएं हुए विद्यमान थे तो यह जब प्रश्न किया था क्या महाराज! तुम इस सर्पकेतनी औषध पर क्यों विद्यमान हो, इसका आसन ही क्यों हैं? उन्होंने कहा निकट सर्प नही आता मानो देखो, मेरे भिन्न भिन्न औषधियों के आसन निर्माणित है, मानो देखो, उस पर मैं विद्यमान होता हूँ वही मेरे समीप नही आता, उसकी यह शैलखण्डा मानो जो औषध है, उसके तन्तुओं का एक वस्त्र निर्माणित कर लेते हैं, तो मानो देखो, कोई अशुभ परमाणु उसके निकट नही आता। तो इस प्रकार जो औषध विज्ञान है, यह ऋषि मुनियों का यह विषय है यह मानो साधारण प्राणियों का विषय नही हैं, यह जो क्रिया हमने उच्चारण किया है, साधारण प्राणियों का इतना है, क्या रूग्ण हुआ है, उनको औषध दिया शान्त हो गया, परन्तु देखो, रूग्ण हुआ औषध दिया शान्त हो गया, अमृता सम्भे मानो देखो, इसको पान करने के लिए मानो पुनः से बहुत विशिष्ठता बनानी होती है, हम क्रियाकलाप के आङ्गन में प्रायः प्रवेश करते रहे हैं, प्रवेश करते रहते हैं। परन्तु देखो, हम इसकी विशेषता तो कल प्रगट करेंगें। आज का विचार हमारा यह है कि हम अपने में विशुद्ध बन करके मानो औषध विज्ञान को जाने जिससे मानो देखो, हमारा अन्तरात्मा हमारा क्रियाकलाप हमारा पञ्चीकरण इतना विचित्र होना चाहिए, जिससे हमारे शरीर में किसी नस नाड़ी का अङ्ग भंग न हो जाएं अङ्ग भंग जब होता है, क्या हम मानो देखो, जिस विद्या को नही जानते उसको करने लगते हैं। उसके रूपों में परणित होने लगते हैं, तो वह औषध एक दूसरी नाड़ी को अपने में निगलना प्रारम्भ कर देती है। तो वह क्रियाकलाप अशुद्ध बन जाता है, तो इसीलिए आज का हमारा वाक यह कहता है, हमारा वाक यह कहता है कि हम नाना प्रकार की औषधियों का पान करने में सदैव तत्पर रहें। परन्तु देखो, उससे पूर्व हम उसको गो घृत को, गो दुग्ध को पान करने वाले बनें। औषध विज्ञान को जान करके मानो स्थूल अन्न को पान न करें, तो यह आज मैं अपने विचारों को विराम दे रहा हूँ पुत्रों! शेष चर्चाएं तो मैं कल

ही चर्चाएं प्रगट करूंगा। आज का हमारा वाक क्या कहता है क्या हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए अपने में महान बनते रहें।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या प्रभु! राजा रावण को योगी था जिसकी आयु बाईस सौ वर्ष की हुई।

पूज्यपाद गुरुदेवः पुत्र! वह योगी नही थे, परन्तु यह उनका एक क्रियाकलाप बना रहता था, वह विशुद्ध मानो ब्रह्मवर्चोसि नही रहते थे, तो उस काल में तो रहते थे। वह पर स्त्री गमन नही करते थे परन्तु देखो, वह विशुद्ध रहते थे और यह मानो देखो, सदैव तपस्या में मानो देखो, संलग्न और राज्य का क्रियाकलाप करते थे। इसमें क्या? देखो, वह स्वयं कृषि करके अपने उदर की पूर्ति करते थे, उसी गो दुग्ध को पान करते थे, तो ऐसा मानो राजा कहाँ प्राप्त होता है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह आपके वाक्यों को यथार्थ स्वीकार कर लें, जबकि आधुनिक काल उसे राक्षस कहता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो क्या पुत्र! मेरा अभिप्राय यह नही कि आधुनिक काल क्या कहता है, किसी प्राणी को मेरा तो यही अभिप्राय है, क्या जो जिसमें गुण हैं, उन गुणों का वर्णन करना हमारा कर्तव्य है, हम किसी के मानो देखो, राक्षस पने में या उसकी त्रुटियों में जाने के लिए हम नही आए हैं। क्योंकि जो जिसमें जो गुण प्रतीत होते हैं, उन गुणों का आवाधान करना हमारा कर्तव्य रहता है। परन्तु रहा यह कि आधुनिक काल न प्रतीत कि कौन किसको राक्षस कहता है, परन्तु देखो, राक्षक की विशेषता और व्याख्या तो तुमने श्रवण प्रायः श्रवण की होंगी, राक्षस किसे कहते हैं? क्योंकि राक्षस नामक देवता को भी राक्षस कहते हैं, परन्तु राक्षस उसे भी कहते है, जो कुरिति देखो, परा गमन करने वाला होता है, उसे भी हम राक्षस कहते हैं, परन्तु राक्षस की व्याख्या क्या है? नामोकरण से भी तो राक्षस बन सकता है। परन्तु क्रियाकलापों से उसे पुत्र! दैत्य कहते हैं, राक्षस की व्याख्या देखो, वीर कहलाती है, मानो देखो, वीरत्व में राक्षस प्राप्त होता है, और वह जो अशुभ कर्म करने वाला उसे हम दैत्य कहते हैं, दैत्य कौन है, जो मानो देखो, अशोभनीय

कर्म करने वाला हो जो सदैव इसका आत्मा देखो, जिसके अन्तर्हृदय में सदैव छल कपट बना रहता है, दूसरों के प्रति मानो एक दूसरे की प्रति क्रोध की भावना बनी रहती है, दूसरे की त्रुटियों को दृष्टिपान करता है, उसे हम देखो, उसे हम दैत्य प्रवृत्ति का कहते हैं, परन्तु यह तो अपने विचारने का माध्यम है। हम किसी को कुछ कहते हैं, संसार किसी को कुछ कहता है, रहा यह कि राजा रावण को राक्षस कहते हैं, यह किस दृष्टि से कहते हैं, क्योंकि देखो, राजा राजाओं का संग्राम होता है, एक राजा मानो विजयी हो जाता है, एक किसी को विजय कर लेता है। तो जो विजयी बन जाता है, उसको देवता कहते हैं, और जो मानो पराजय हो जाता है उसको दैत्य कहने लगते हैं। यह कोई ऐसा वाक नही हैं मानो देखो, यह तो साधारणत्व वाक है। इसके ऊपर मैं कोई टिप्पणी करना नही चाहता हूँ। विचार विनिमय केवल यह क्या मानो देखो, उसका आयु उसका देखो, संग्राम से कोई समन्वय नही होता, इसी प्रकार आज का हमारा यह वाक अब समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए हम मानो देखो, कायाकल्प के सम्बन्ध में अपना विचार दे रहे थे, कल मेरे प्यारे महानन्द जी! कुछ समय मानो देखो, उस कायाकल्प के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करेंगें आज के विचार अब समाप्त अब वेदों का पठन पाठन।

19.841216-वनस्पति से दीर्घ आयु

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव की, परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महान और पवित्रतम माने गएं हैं क्योंकि यह जो संसार प्रायः हमें दृष्टिपात आ रहा है यह उस परमपिता परमात्मा की महती है अथवा उसकी महानता है जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, भिन्न भिन्न प्रकार की उड़ाने उड़ता रहा है। आज मैं उस उड़ान को तो नही जा रहा हूँ, परन्तु विचार यह कि आज हम, उस महामना देव की महिमा का, हम सदैव गुणगान गाते रहे अथवा उसकी महती का अपने में प्रायः हम दर्शन करते रहे, क्योंकि उस परमपिता परमात्मा की अनुपम अथवा महानता का जो दिग्दर्शन होता रहा है, वह प्रायः परम्परागतों से ही, महान और पवित्रतम माना गया है। बहुत पुतरातन काल हुआ, जब बेटा! ऋषि मुनि मानो एक स्थावर सृष्टि के ऊपर, प्रायः अपने अन्वेषण करते रहते थे, और ऐसा कोई काल नही हुआ, जिस काल में उसके ऊपर अन्वेषण न हुआ हो, परन्तु उसके ऊपर विचार विनिमय प्रायः परम्परागतों से होता रहा है, मैंने बहुत पुरातन काल में, बहुत पुरातन काल हुआ, पुत्रों! जब मानो स्थावर सृष्टि के लिए मानव ने अपना उद्योग प्रारम्भ किया था।

आओ, आज मैं तुम्हें ऋषि मुनियों के, एक क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, मेरे पुत्रों! ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा की कुछ चर्चाएं, प्रायः हमारे वैदिक साहित्य में आती रही हैं। ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने एक समय, अपने में यह विचार विनिमय किया था, कि हम अपने में अग्न्याध्यान करें, अग्निहोत्रीय हम करते चले जाएं। तो मेरे पुत्रों! यह विचारा कि अग्निहोत्र हम कैसे करें? कौन समिधा हैं? जिसके ऊपर हम अग्न्याध्यान और कौनसा वह साकल्य है? जिस साकल्य के द्वारा, हम प्रायः हूत करना चाहते हैं।

तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने जब यह विचारा कि हमें याग करना है और याग तो मानव के स्वास्थय की एक विवेचना है, याग तो एक वायु मण्डल का शोधन है, याग तो मानो साकल्य के द्वारा होता है, और जिस साकल्य को अग्नि जिस साकल्य को अग्नि भेदन कर देती है वही साकल्य इस आभा वृत्तियों में और वायु मण्डल में छाया मान हो जाता है। मानो वही तो शोधन करता और शोधन का अभिप्राय यह कि मानव के सूक्ष्म तरंगों के द्वारा वह मानव प्रायः तरंगित होता रहता है, और वह जो तरंगें है, वही मानो अशुद्ध तरंगों का विनाश करती रहती हैं। और शुद्धिकरण मानो उसकी प्रतिभा में रत्त होता रहता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने, जब यह विचारा, कि मुझे अग्न्याध्यान करना है, और मुझे कुछ मानो साकल्य को एकत्रित करना है, और साकल्य कहते हैं बेटा! स्थावर सृष्टि के, मानो देखो, उन पदार्थों को जो स्थावर सृष्टि में सुगन्धियुक्त कहलाते हैं। मानो वह अपनी आभा में भी प्रायः शोधन करते रहते हैं, और उसमें विचित्र एक आभा का हमें दर्शन होता रहता है। तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने बेटा! कुछ साकल्य को एकत्रित किया और वह उन्होंने विचारा कि मैं यह जितना याग हम करते है। साकल्य के द्वारा, वह साकल्य हमें आयु वर्धक है, प्राण वर्धक है, मानो स्वास्थय की एक कुञ्जी कहलाती है तो मेरे प्यारे! देखो, इस निहितता से, वह अपने में प्रायः याग की प्रतिभा में, प्रायः रत्त होते रहते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, मुझे कुछ ऐसा स्मरण है, क्या उन्होंने अग्नेय जो वृक्ष मानो समिधा वह साम्ब्रहा वाचन्नं ब्रीहि व्रतां जिसमें अग्नेय तत्त्व की प्रधानता का दिग्दर्शन होता है, तो उसको वह अपने में एकत्रित करना, अथवा उसे चुनना, और अथवा उसे एकत्रित चुनौती दे करके मुनिवरों! उसको स्वाहाः और अग्नि में प्रदान कर देना है मेरे प्यारे! देखो, इसी के द्वारा, हमारे यहाँ एक विद्या का चलन था उस विद्या का चलन है परम्परागतों से जिसमें मानो एक सङ्कल्प शक्ति का सञ्चार होता है। मेरे पुत्रों! देखो, एक हरित नामक एक औषध होती है, तो उस हरित औषध का समन्वय, सूर्य की कुछ किरणों से होता है, तो मानो देखो, जैसे वह किरणें आईं, और हरित औषध ने उस किरण

को अपने में सिंचन प्रारम्भ किया, तो मानो उसमें से एक आभामयी में सुगन्धि का जन्म हो जाता है और वह सुगन्धि मानो ऐसी प्रियतम होती है क्या मानो सूर्य की किरणों उस सुगन्धि का भेदन कर देती है। तो मेरे प्यारे! वह जो हरित नामक औषध है उसमें यह गुण माना गया है कि जैसे मानव स्वाहा उच्चारण करता है मानो वह अपने में जैसे स्वाहा कहा और स्वाहा उच्चारण करते ही मेरे पुत्रों! देखो, वह सूर्य की आभा में रत्त हो जाती है। मानो सूर्य की आभा में रत्त हो करके, मुनिवरों! देखो, वायुमण्डल में, अपने में शोधन करना, प्रारम्भ कर देती है। और जब मानव उसे कहीं से पान कर लेता है, तो मेरे पुत्रों! देखो, उसमें सूर्य की, आभा और सूर्य की विश्वान गत्वेतं मानो देखो, उसमें प्रतिभा होती है। जिसके ऊपर मानव अपने मस्तिष्क की आभा में स्थिर हो जाता है।

मेरे पुत्रों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा, एक समय बेटा! कुछ औषध विज्ञान को ले करके, वह मुनिवरों! देखो, भ्रमण करते हुए, केचवत ऋषि के द्वार पर पंहुचे और केचवत ऋषि महाराज ने, अथर्वा का बहुत स्वागत किया, केचवत ऋषि बोले कि कहो ऋषिवर! तुम्हारा आगमन कैसे हुआ? उन्होंने कहा प्रभु! मैं इसीलिए आया हूँ क्या मैं अपने मस्तिष्क को एक केन्द्रित करना चाहता हूँ मानो मुझे विवेक की आभा प्राप्त हो जाए। तो मुनिवरों! देखो, वह उन्होंने कहा बहुत प्रियतम! मेरे प्यारे! केचवत ऋषि महाराज ने जिसके ऊपर वह अन्वेषण और अनुसन्धान कर रहे थें, एक मानो रेणकेतु स्वाति एक बुटी होती है। मानो उस श्वेति जो बुटी है, उसका समन्वय हरितकेतु बुटी से होता है मानो उन दोनों औषधियों को दोनों बुटियों का मानो देखो, वह सम्मिश्रण किया जाता है, और सम्मिश्रण करके, इसमें कौतुक नामक, एक औषध होती है, जिसका इसमें मिश्रण करके, मानो देखो, इसको पान किया जाता है। इसको मानो जब पूर्वा विमुख हो करके, और सूर्य की किरणों के साथ मानो इस औषध को पान किया जाता है तो मानव के मस्तिष्क में जो मानो देखो, जो सुषुप्ति अवस्था वाली जो नस नाड़िया है उनका सबमे जागरूकता आ जाती है, और जब वह जागरूकता आ जाती है,

तो मानो वह उसको विवेक, ज्ञान और स्थिरता मानो देखो, हृदय उसका स्थिरता में परणित हो जाता है। और लघु मस्तिष्क अपने में मानो हरित में प्रवेश करता हुआ, अपने में सान्त्वना को प्राप्त हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, जब हम इस औषध के द्वारा, अपने जीवन को ऊर्ज्वा में प्रायः वाचक औषधियों में सम्मिश्रण करते हैं, जो तो बेटा! हमारे जीवन की प्रतिभा कुछ और ही होती है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह जो कुचवा औषध है ये कहाँ प्राप्त होती है।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! यह प्रायः मानो पर्वतीय क्षेत्रों में प्राप्त होती है, और इसके मानो इसका यह गुण अब्रहे है, क्या जब देखो, यह अन्धकार छा जाता है, सूर्य नही रहता, रात्रि का गमन हो जाता है, तो मानो देखो, इसमें स्वतः एक अनुपम एक प्रकाश आ जाता है और वह प्रकाश वाली औषध कहलाती है मानो देखो, इसका समन्वय वृत्तियों से रहता है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! यह जो वृत्ति औषध है, इसका क्या तात्पर्य है?

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या वृत्तियों का अभिप्राय ये है क्या जहाँ मानो सुगन्धि औषधियों को वृत्ति औषधि कहा जाता है, और वृत्तिक औषध सुगन्ध वह अपने में धारण करती हुई, और उन किरणों से प्रातःकाल जब उनका समन्वय होता है, तो उन किरणों का मिश्रण होता है, जिन किरणों में देखो, वह लुंग होता है और देखो, स्वर्ण रत्नों की धाराएं, जिन किरणों में होती है उन किरणों में उन औषधियों का समन्वय होता है। मानो देखो, उसको पान करने वाले करते हैं मानो देखो, आधुनिक काल का तो मुझे प्रतीत नही, उन औषधियों को क्या कहा जाता है? मानो देखो, यह तो मैं नही उच्चारण कर सकूंगा, जो पुरातन काल में, जब अनुसन्धान, अन्वेषण करते रहे हैं, तो उस काल में मानो उन औषधियों के विस्तृत तो मानो हमें प्राप्त होता रहा है, बेटा! मानो देखो, यह हमें सुषुप्ति वाला ज्ञान तुम पुनः से क्यों जागरूक करा रहे हो? मेरे आङ्गन में नही आ रहा है तुम आत्मा और परमात्मा

की चर्चा में क्यों नही ले जा रहे हो जहाँ मानव के आत्म तत्त्व की आभा हमें प्राप्त होती है।

कायाकल्प की प्रतिभा

पूज्य महानन्द जीः भगवन! मैं इसीलिए करा रहा हूँ क्योंकि बहुत समय हुआ, आपके मुखारविन्द से ये जो औषध विज्ञान है इसके ऊपर अन्वेषण करना और इसको क्रिया रूप देना वास्तव में ये तो मैं भी जानता हूँ कि वर्तमान काल में इन औषधियों के नामोकरण भी मानो प्रायः नही प्राप्त होते निघण्टु इत्यादियों में भी इसके नामोकरण की कहीं कहीं रूप रेखाए प्राप्त होती हैं, उनमें एक और ऐसा मुझे सिद्ध होता है कि जैसे पुरातन काल की औषधियों के नामोकरण में आधुनिक नामोकरण में ऐसी कोई विशेषता अन्तर्द्वन्द्वता नही हैं परन्तु उसमें केवल यह है क्या कुछ काल ऐसा समाप्त हो गया है जिस काल में बहुत से देखो, परिश्रम देखो, बहुतसी विद्याएं बहुतसी पोथियां अग्नि के मुखारविन्द में परणित हो गई हैं और वह अग्नि में जाने से उस ज्ञान को हम पुनः से यदि उद्बुद्ध करना गुरुदेव चाहते हैं तो इतने रूपों में हो नही पाता क्योंकि वह एक बड़ी विशेषता का मैं आपको चर्चाएं देता चला जा रहा हूँ। हे पूज्यपाद! आधुनिक काल का जो औषध विज्ञान है वह मानो कुछ चाहता है आधुनिक काल के विज्ञान में मानो देखो, कुछ औषधियों का वर्णन आया है, जैसे पीपलिका है जैसे मानो देखो, यह स्वाति है लुवेंगकेतु हैं उस लुवेंगकेतु को आधुनिक काल में कहीं कुछ रूपो में पुकारा जाता है कहीं भाषा अन्तर्द्वन्द्व हो जाता है, तो भाषा अन्तर्द्वन्द्व होने से, उन औषधियों का पूर्ण रूपेण नामोकरण नही हो पाता। तो इसीलिए पूज्यपाद! मैं आपसे यह प्रश्न कर रहा था, क्या इन औषधियों का मानो किन किन रूपों में इनकी कृतिका आती है। मैंने आपने पुरातन काल में मानो यह एक मानव के जीवन के परिवर्तन के सम्बन्ध में चर्चाएं की थी, और यह कहा कि मानो इन औषधियों से पान करने से देखो, उसके जीवन की प्रतिभा, उसका एक कायाकल्प, एक काया दूसरे रूपों में परणित हो जाता है। तो क्या भगवन! यह सम्भव मानो देखो, यह असम्भव तो है, परन्तु

देखो, उसका विश्लेषण पूर्वा हम पान करना चाहते हैं क्योंकि जो सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर के दोनों में वह गमन कराता रहता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः नही पुत्र! ऐसा नही है परन्तु देखो, मैंने कई काल में तुम्हें वर्णन कराते हुए कहा था कि यह जो यह औषध विज्ञान है यह कायाकल्प की जो प्रतिभा मैंने पुरातन काल में तुम्हें वर्णन कराई कायाकल्प का अभिप्राय यह है क्या शरीर यदि जीर्ण हो जाएं, शरीर में जीर्णता आ जाएं जीवन शक्ति का ह्रास हो जाएं, तो औषधियों से देखो, उसको जीवन शक्ति प्रदान की जाती है। तो कुछ मानो इस प्रकार के गायन भी होते हैं, जिन गायन के गाने से, जीवन शक्ति प्रदान की जाती है। देखो, ऐसा गान भी होता हैं परन्तु देखो, वह गायन स्वर और ग्रणियों से मानो देखो, परिपक्व रहता है। तो इसीलिए मैं इस विचार में बेटा! तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, विचार केवल इतना ही है, कि हम अपने में मानो देखो, इस स्वाहाः वृत्तियां को अपनाना प्रारम्भ करें, जिससे हमारा जीवन कायाकल्प के संग वाची में प्रवेश हो जाएं। जैसे हमारे यहाँ पुरातन काल में वट वृत्त जैसे तुमने एक समय कहा था कि बटिका, पिपली का, त्रिटिका, त्रिजटा, शङ्खहाविनी मानो देखो, इन पञ्चम औषधियों को ले करके, और उसको खरल किया जाता है। खरल करते करते मानो देखो, चन्द्रमा की कान्ति में जब उसका खरल किया जाता है। तो खरल करते करते मानो वह शुष्क हो जाए है और शुष्क हो करके उसको सूर्य की किरणों में तपाया जाएं, और तपाने से ही मानो जब वह एक माह तक तपता रहे, तपने के पश्चात पुनः उसका खरल किया जाएं, उनमें मानो देखो, शङ्ख वाचिका औषध के औषध के रस में पुनः उसको खरल किया जाएं, खरल करते करते देखो, पुनः फिर सूर्य की अग्नि में तपाया जाएं और चन्द्रमा की कान्ति में उसे पुनः खरल किया जाएं मानो उसमें सात पुट लगती रहती है। सात पुट के पश्चात मानो उसकी बूटिका बनाई जाती है। जब गुटिका बना करके, उसे मानो देखो, सूर्य की किरण के साथ, उसे पान किया जाता है, पान भी मानो देखो, श्वेतम नामक एक औषध होती है उसका रस लिया जाता है, और शङ्ख जटिका होती है, उसका रस

लिया जाता है, और मानो देखो, एक क्रील का रस ले करके, अम्बिका के रस को ले करके, मानो देखो, उन तीनों रसो में उनको पान किया जाता है। तो पान करने से और देखो, जलं ब्रहे मानो देखो, उसमें बटिका, शंकिका, चेतरेणि, अंचकानिनी, मानो देखो, उन औषधियों के समूह वाचू को ले करके इसका सबका रस पान किया जाता है। तो मानो पान करते करते लगभग, एक वर्ष द्वितीय वर्ष में मानो उसके कायाकल्प की प्रतिभा बन जाती है उसका कायाकल्प हो जाता है।

तो मानो देखो, यह औषधियां प्रायः पर्वतीय क्षेत्रो में, हमें प्राप्त होती रहती हैं इसका आधुनिक नामोकरण भी मानो मैं इतना रूप में नही जाना चाहता हूँ विचार विनिमय क्या मानो देखो, यह सब आधुनिक नाम कहे जाते हैं, इसका पूज्य! जैसे तुमने ब्रहे, मेरे पुत्र! तुमने वर्णन किया कि निघण्टु प्रहा वाचिका कहीं मानो देखो, ऋषिस्यकेतु एक रचित्तकेतु हुए हैं जो मानो देखो, महात्मा दधीचि के गुरु थे और जो अश्विनी कुमारों के गुरु थे, उनकी कहीं पौथी प्रायः निघण्ट कहीं प्राप्त हो जाएं, तो प्रायः उसमें इन औषधियों का वर्णन आता रहता है उन वरणीय औषधियों का पान करने से हमारे जीवन की प्रतिभ एक महानता में परणित हो जाती है। सूर्य की किरण चन्द्रमा की जो कान्ति है यह दोनों एक दूसरे में पूरक कहलाती हैं, जिस औषधियों को ले करके हम मानो अपने में आयु दीर्घ बनाते रहते हैं, आयु की दीर्घता मानो जहाँ इन औषधियों से होती है, वहाँ सङ्कल्प शक्ति से भी होती है जहाँ सङ्कल्प शक्ति से होती है। वहाँ गान रूपों में भी हुआ करती है, इसीलिए हमारा गान विचित्र होना चाहिए।

तो आज मैं विशेषता में क्या मानो तुम्हें यह वर्णन करने लिए आया हूँ क्या प्रत्येक मानव प्रायः इसके ऊपर परम्परागतों से अन्वेषण अथवा विचार विनिमय करता रहा है वहाँ ब्रहे अस्वातं जैसे मानो पुरातन अभी अभी वर्णन कराया था, क्या सृष्टि के प्रारम्भ में मुनिवरों! देखो, इन औषध विज्ञान, स्थावर सृष्टि का अथवा जन्म हुआ है, इसमें प्राण सत्ता का विशेष सञ्चार होता रहता है वही प्राण सत्ता हमारे जीवन का मूलक बन करके रहती है, वही प्राण सत्ता मानो एक दूसरे में पिरोई

जाती है, वही प्राण सत्ता, सर्वत्र ब्रह्माण्ड में लोक लोकान्तरों में पिरोई जाती है, जिसके ऊपर हमारा जीवन, मानो निर्भय रहता है संसार में प्रत्येक प्राणी मानो देखो, परम्परागतों से ही, अनुसन्धान करे, क्या हम अपने में औषध विज्ञान में, विशेषज्ञ बनना चाहते है। तो वह अपने मस्तिष्क की सबसे प्रथम ग्रन्थियों को स्पष्टीकरण को जब तक नही लाएगा जब तक मानो देखो, उसकी प्रतिभा एक महानता में प्रतिष्ठित नही हो पाती। आज का मानव परन्तु देखो, पुरातन काल का मानव जैसा बेटा! तुमने वर्णन कराया मैं उस वर्णन में तो जाना नही चाहता हूँ, परन्तु विचार यह केवल देने के लिए कि हमारे यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ में, बेटा! देखो, सबसे प्रथम स्थावर सृष्टि का जन्म हुआ? स्थावर सृष्टि का क्यों जन्म हुआ मानो उस सृष्टि के व्यवधान से, मानो देखो, इन औषधियों की सुगन्धि मानो स्थावर सृष्टि की मानो देखो, सुगन्ध, इसमें प्राण सत्ता एक ओझल ब्रीहि वाचक हो करके एक प्राणी मात्र में वह छूने वाली है। जैसा हमारे यहाँ पुरातन काल में, मैंने कई काल में तुम्हें वर्णन कराया क्या, इसमें प्राण सञ्चार है, प्राण सत्ता है, प्राण की प्रणव व्रतियां कहलाती हैं। परन्तु देखो, और जितनी यह सृष्टि है जैसे जंगम है, जैसे अण्डज है, और स्वेदज है इसको मानो वृत्तियाँ कहलाती हैं इनमें सबमें आत्म तत्त्व ज्ञान और प्रयत्न की प्रतिभाषिता मुझे दृष्टिपात आती है। परन्तु जहाँ तक यह वर्णन हमे प्राप्त होता है, क्या इसमे स्थावर हो आत्म तत्त्व प्राप्त होता है, इसमें प्रणव शक्ति प्राप्त होती रहती है। तो वही जो प्राण सत्ता है, वही मानो देखो, इसको आभा में युक्त करती रहती है, नियुक्तता में लाती रहती है, ज्ञान और प्रयत्न की इसमें सूक्ष्मता होती है। इसीलिए जैसे वह सूक्ष्मतम होती है, तो मानो देखो, उसी में, एक आभा मैं हमें यह ब्रह्माण्ड, हमें अश्वेत्तों में दृष्टिपात आने लगता है। तो पुत्रों! देखो, जैसा यह मानो देखो, शम्भु वाचा श्वातं ब्रीहि व्रतो वेद की आख्यिका यह कहती है, क्या मानो देखो, यह जो स्थावर सृष्टि है, इस स्थावर सृष्टि के ऊपर ही, मानो सर्वत्र प्राण सत्ता की मानो देखो, प्रतिभा निहित रहती है। और इसीलिए इसमें प्राण सत्ता है, मनस्तव सत्ता सूक्ष्म मानी गई है। मनस्तव सत्ता मानो देखो,

इसमें एक प्रकृति रूपों में परणित रहती है, क्योंकि जहाँ यह प्राण सत्ता का उद्घोष होता है वहाँ मन सत्ता का भी उद्घोष होता रहता है और उनका दोनो का जैसे ही उद्घोष हुआ मानो देखो, वहाँ ज्ञान और प्रयत्न की सूक्ष्मता क्या न होने का हमें प्रमाण प्राप्त होता है। इसीलिए उसमें देखो, जीवन शक्ति प्रदान है परन्तु देखो, वह ज्ञान और चेतना वाली सत्ता प्रदान नही हैं दृष्टिपात नही आ रही है, तो इसीलिए हमारा तात्पर्य हमारा मन्तव्य केवल यह क्या मानो उस प्राण सत्ता को हमें प्राप्त करना है जिस प्राण सत्ता के द्वारा मानव मुनिवरों! देखो, परम्परागतों से नाना प्रकार के यागों का चयन करता रहा है, और उन यागों के चयन करने से ही यज्ञमान की प्रतिभा का जन्म होता है। जैसे यज्ञमान अपने में स्वाहा उच्चारण करता है, मानो स्वाहा कहने से उसके आन्तरिक जगत की अग्नि का भी प्रादुर्भाव हो जाता है, अग्नियां भी प्रचण्ड होती रहती हैं परन्तु यदि और भी शुद्ध विचारों से, स्वाहा उच्चारण किया जाता है, तो उससे आन्तरिक जगत की अग्नि मानो देखो, और रूपों में परणित होती रहती है।

मुझे स्मरण आता रहता है जब महात्मा चमन ऋषि महाराज मानो देखो, अपना कायाकल्प करने लगे, तो कायाकल्पों में उन्होंने देखो, नाना प्रकार की औषधियों को ले करके जैसे उनका पान करते थे, तो मानो प्रातःकालीन वह याग करते थे, तो याग में उन्होनें एक शङ्खवृचिक एक औषध होती है, शङ्ख वृचिक औषध को ले करके और चित्रा औषध ले करके और मानो उसमें शङ्ख वाचिका को ले करके और मुहु एक वंग होती है वंग भृंग को ले करके मानो देखो, वह इसका साकल्य बनाया जाता है और गो घृत में इसके साकल्य को मानो मन्थन किया जाता है और मन्थन करके मानो देखो, जब वह अग्नि में अग्नि प्रदीप्त करते हुए, उसमें केवल समिधाओं का भेदन होता है, समिधा क्रील की होनी चाहिए समिधा मानो शमी वाची की होनी चाहिएं यह पीपल की मानो देखो, आन्तरिक देखो, जितना भाग पृथ्वी में रहता है, पृथ्वी वाली भाग वाली समिधा होनी चाहिएं, उन समिधाओं के द्वारा जो अग्न्याध्यान करता है, और स्वाहाः उच्चारण करता है उस औषधि के द्वारा

अपने मानो देखो, अपनी वाणी को उसमें ओत प्रोत करा देता है तो बेटा! कुछ ऐसा अनुभव किया गया है, क्या मानो देखो, जितना भी स्वाहा, वो वेद के एक ओकांग के शब्द को ले करके जब वह स्वाहा कहता है, जैसे हमारे यहाँ वेद का मन्त्र आया वंश्वमम् ब्रहे वाचप्रहा वन्धनं वश्वतप्रहो वासम भवा नित्यं स्वाहा मानो देखो, यह वाचक स्वाहा कहने से क्योंकि वेद के अन्तिम जो शब्द है उसको लुप्त किया जाता है। तो उसको लुप्त करके उसको मानो रसना के ऊपर उसको विश्राम कराया जाता है। और विश्राम करा करके उसे स्वाहा उच्चारण किया जाता है तो मानो देखो, उससे उनके जो आन्तरिक जगत में जो शब्दों में तरंगें उत्पन्न होती हैं जैसे परमाणुवाद बाह्य से आन्तरिक जगत में आता है और आन्तरिक जगत का बाह्य जगत में जाता है तो मानो देखो, उस स्वाहा कहने से वह जब शब्द अग्नि की धाराओं पर मानो देखो, अन्तरिक्ष द्यौ लोक में प्रवेश होता है तो वह जो शब्द है तो वह जो शब्द है वह शब्द उस प्राणी की आयु की कामना करता है आयु उससे दीर्घ होने लगती है जब आयु दीर्घ होने लगती है तो वह मौन रहता है तो ऐसा मुझे स्मरण है तो मुनिवरों! देखो, जिस प्रकार बारह वर्ष का जब अनुष्ठान किया जाता है, और बाहर वर्ष के अनुष्ठान से मेरे पुत्रों! देखो, उसकी लगभग बारह वर्ष का अनुष्ठान करने से मुनिवरों! देखो, उसकी सौ वर्ष की आयु दीर्घ बन जाती है। ऐसा महात्मा चमन ऋषि के जीवन में हमें प्राप्त होता है। मानो इससे पूर्व काल में भी मैंने बेटा! तुम्हें यह चर्चाएं की हैं, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मानो इस प्रकार के अनुष्ठान करते रहते है अनुष्ठानों का अभिप्राय यह है क्या मानो आयु को दीर्घ बनाना है आयु का वाचक बनाना है मानो देखो, जैसे सम्भवा वेत्तो अस्वति लोकां हिरयण्यं रथा मानो देखो, इसी प्रकार उन्होंने देखो, सच्चतं महात्मा चमन ऋषि के द्वारा अश्विनी कुमार मुनिवरों! देखो, वह वह एक अनुष्ठान उन्होंने और किया था जिस अनुष्ठान में शङ्ख कांचि एक औषध होती है जिस शङ्ख कांचन औषध जो समुद्रों से प्रायः गर्भ में प्राप्त होती है कुछ वाचिका मानो देखो, जो पर्वतों के क्षेत्रों में प्राप्त होती है उसका नाम है वासु सम्भूति दवा सम्भोति औषधान कहलाती

है, परन्तु देखो, इन औषधियों को ले करके, जिस समय वह एक दोनों का मिश्रण करके मानो देखो, हम मधु के सौन्दर्य के, सूर्य की किरणों के साथ उसे पान करते हैं तो हमारी आयु में मानो देखो, एक दीर्घता का एक मानो देखो, हमारे मस्तिष्क में, जितनी संकुचित्त विचारधारा है, उसमें व्यापकवाद आ जाता है। धर्मज्ञ आ जाता है, और वही धर्मज्ञ मेरे पुत्रों! देखो, मानव के जीवन की प्रतिभा बन करके रहती है।

मुझे स्मरण आता रहता है ये औषध राजा महाराज भी मानो देखो, राजा भी पान करते रहते थे, इन औषधियों के पान करने से राजाओं का मस्तिष्क मानो संतुलित रहता है, उसमें स्वार्थवाद नही आता, वह अपनी क्रियाओं में सदैव रत्त रहने वाला है। तो इस प्रकार देखो, हमारा जो जीवन है पुत्रों! यह बड़ा विशेष और इसके देखो, हम औषध विज्ञान के ऊपर तो यह तो विशाल एक वन है मैं तो वनों में जाना नही चाहता हूँ केवल एक संक्षिप्त परिचय देना है, और वह परिचय क्या है? और वह परिचय केवल इतना है, कि हम अपने जीवन में, एक प्रभु की आभा में रत्त रहते हुए और स्वाहाः उच्चारण करते चले जाएं, क्योंकि प्रत्येक वेद के मन्त्र में, एक शब्द, जब लुप्त हो करके, और वह वाणी मानो स्वरों में जब वह आभा में वह वायुमण्डल में परणित हो जाता है तो मानो उससे मानव का मस्तिष्क का विकास होता है, उस मस्तिष्क की आभा रत्त होने लगती है, और जो देखो, और जो इस संसार में आभायुक्त होता हुआ अपने प्रतिभाषित अपनियों में देखो, रत्त रहता हुआ मानो प्रभु का चिन्तन करता है और वह विचारता है कि प्रभु! में सृष्टि के प्रारम्भ में मानो देखो, स्थावर सृष्टि को जन्म दिया है और यह स्थावर सृष्टि का सम्बन्ध धातु पिपाद से रहता है मानो साकल्य से रहता है, आस्वाति से रहता है मानो देखो, वही तो मानव इस स्थावर सृष्टि के गर्भ में निहित हो करके प्रवेश करके मानो देखो, अग्रणीय अपनी आभा को नियुक्त करता रहता है तो आज मैं विशेष विवेचना न देता हुआ विचार केवल यह देने के लिए आया हूँ क्या पुत्रों! देखो, हमारे यहाँ लेपन भी किए जाते हैं मानो देखो, जैसे मुझे स्मरण है बाल्यकाल में

माता की यह इच्छा होती है, कि हमें अपने बालक को ब्रह्म निष्ठ बनाना चाहती हूँ, और ब्रह्मचर्य व्रत ब्रह्मवर्चोसि बनाना चाहती हूँ, तो मानो देखो, एक औषध होती है, मृची नामक एक औषध होती है एक शङ्ख हुलि होती है, एक मानो देखो, कृतिभा होती है, और एक कृतिभा एक समुद्रों के गर्भ में होती है, जिसका नाम वांचकेतु कहलाता है। मानो देखो, चारों औषधियों को हम खरल करके जब बालक के मस्तिष्क का मानो देखो, हम उसका मर्दन करते हैं तो मर्दन करने से उस बालक की जो नस नाड़ियाँ हैं, उनका स्पष्टीकरण हो जाता है और ब्रह्मज्ञान जैसे ही दिया तो वह बालक की स्मरण शक्ति एक मानो प्रतिभा में अश्वेत हो जाती है और वह विचित्र बन जाती है परन्तु वह ब्रह्मवेत्ता की पुकारने लगता है, स्थावर वाचों में प्रवेश करके, मानो देखो, ब्रह्म का उसे भान होने लगता है।

तो आज मैं पुत्रों! बहुत दुरी और गम्भीर वार्त्ताओं में जाना नही चाहता हूँ, यह बहुत गम्भीर वार्ता हैं जिसके ऊपर बेटा! अनुसन्धान और अन्वेषण की आवश्यकता होती है इस अन्वेषण में मानव अपने जीवन को कहाँ ले जाना चाहता है, मानो देखो, आयुर्वेदाचार्य बेटा! आयुर्वेद आयु के वेद में प्रवेश कर जाते हैं तो मानो देखो, नाना प्रकार की आभा नियुक्त रहती है जब इस प्रकार का विवेक मानव को हो जाता है, औषधियों के सम्बन्ध में, तो अपने गुणों का वर्णन करने के लिए औषध उन्हें स्वप्रवत में मानो देखो, उनके गुणों की प्रतिभा का भान कराती रहती है, और वह औषध अपने गुणों का वर्णन कराती रहती है। मुझे स्मरण आता रहता है जब मानो देखो, सोमकेतु मुनि महाराज जब इसका एक समय इसका अनुसन्धान अन्वेषण कर रहे थे, वाचकस्ति एक औषध होती है मानो उसका जब अन्वेषण करने लगे तो एक समय रात्रि समय यह उन्होंने स्वप्रवत में कहा वाचकेतु औषधा सम्भूति में प्रवेश करती हुई बोली कि मैं मानव के मानो देखो, जीर्णता से युवात्व में प्रदान कर देती हूँ, और देखो, यदि उसका भा वाचो मानो अग्नि में तपा करके पुट लगा करके यह पान कराया जाएं, तो ऐसे औषध विज्ञान अपने गुणों का प्रायः वर्णन करती रहती थी तो परमपिता परमात्मा के ब्रह्माण्ड में, बेटा! अनन्तमयी यह

जगत है, यह अनन्तमयी जगत है इसीलिए परमपिता परमात्मा का उद्घोष, हमारे जीवन में होना चाहिए, क्योंकि परमपिता परमात्मा इस संसार के एक एक कण कण में व्याप्त है औषध विज्ञान में भी व्यापक हो रहे हैं मानो उसके व्यापकता में एक अभ्युदय होता रहता है जिसको मानव अपने में पान करता रहता है और उस ब्रह्माण्ड को मापता रहता है मानो ब्रह्माण्ड को मापतेमापते मानो देखो, औषध मुनिवरों! देखो, कहीं ऐसा हमें भान होता है, कि लोक लोकान्तरों में भी प्रायः औषध विज्ञान का चलन रहा है, क्योंकि मङ्गल मण्डल में इस प्रकार की औषधियों का भी प्रायः चलन रहा है, और बुद्ध में भी रहा है, लोक लोकान्तरों की प्रतिभा में जाना नही चाहता हूँ विचार केवल यह देने के लिए आया हूँ क्या मुनिवरों! देखो, यह औषध विज्ञान हमारे यहाँ एक बड़ा विशेष विशिष्टत्व माना गया है, आज मैं विशेष चर्चाएं तुम्हें देना नही चाहता हूँ विचार केवल यह है कि हमारे यहाँ कुछ औषधियों का एक एकोकीकरण माना गया है मानो देखो, जिन औषधियों का एकोकीकरण हमारे औषध विज्ञान में सूर्य की किरणों की पुटों में उनकी पुटिता होती रहती है। और उनका पठन पाठन भी विचित्र होता रहता है।

तो इसीलिए देखो, उस विज्ञान को हमें अपनाना है यह विज्ञान है यह सार्थक विज्ञान इसको पान करते हुए हम मानो देखो, हूत करते हैं उसकी सुगन्ध तरंगें बन करके, वायु मण्डल में प्रवेश कर जाती है। और वायुमण्डल से वही तरंगें मानो देखो, सूर्य चन्द्रमा की कान्ति के साथ वही मानो देखो, तरंगें परमाणु बन करके, पुनः देखो, एकोकीकरण का घोष करते रहते हैं। तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चाएं तुम्हें देने नही आया हूँ विचार यह देने के लिए क्या ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने भी इसके ऊपर मुनिवरों! देखो, अंगिरस मुनि महाराज ने भी इसके ऊपर बहुतसा अन्वेषण किया है। आज मैं विशेष चर्चाओं में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ संक्षिप्त तुम्हें परिचय देने के लिए आया हूँ, बहुत सा औषध है जिसके ऊपर बहुतसा विचार किया जाता है करना मानव का कर्तव्य है क्योंकि आयु को दीर्घ बनाना है आयु के वेद में प्रवेश करना है, प्रकाश में हमें रत्त रहना हैं, बेटा! देखो, हम तो प्रायः

पुरातन काल में, पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा, इस प्रकार का अन्वेषण करते रहते थे, आयु की दीर्घता में परणित होती रहती थी, परन्तु योग सिद्ध आत्मायें इस प्रकार की औषधियों का पान करके अपने में यौगिक प्रतिक्रियाओं में उनका भास होता रहा हैं।

विचार केवल यह कि आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें देने नही आया हूँ, मैं कोई व्याख्याता नही हूँ, परिचय देने के लिए आया हूँ और वह परिचय केवल इतना ही है कि हम बहुत से औषध विज्ञान मे रत्त हो जाएं मेरे प्यारे! मैंने देखो, तुम्हारे प्रश्नों की प्रतिभा मानो वर्णित की है और उसको वृचिका में औषधियों के रूप में इसका एक प्रादुवृत किया है मानो देखो, चमन ऋषि के जीवन में मैंने बहुतसी चर्चाएं तुम्हें वर्णन की अश्विनी कुमारों के जीवन में इस प्रकार का भान हुआ एक समय मानो देखो, एक श्वेत्ता श्वेतर नामक एक राजा हुए हैं जो मनु वंश में हुए, परन्तु श्वेत्ता श्वेतर राजा के हृदय में, मानो देखो, एक विचित्र अस्वात छा गया उसके जीवन में एक अस्वात नामक एक रूग्ण होता है। तो विचारा कि अब क्या करना चाहिए। (पुस्तक से) एक समय उनकी पत्नी विधेशु बोली कि हे प्रभु! मैं आपको ऋषि के द्वार पर ले जाना चाहती हूँ उन्होंने ऐसा कौनसा ऋषि है आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चाएं तुम्हें देने नही आया हूँ विचार यह देने के लिए कि ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने भी अंगिरस मुनि महाराज ने भी इसके ऊपर बहुतसा अन्वेषण किया है संक्षिप्त में तुम्हें परिचय देने के लिए आया हूँ बेटा! देखो, बहुतसा औषध है जिसके ऊपर विचार करना मानव का कर्तव्य है क्योंकि आयु को दीर्घ बनाना है, आयु के वेद में प्रवेश करना है प्रकाश में हमें रत्त रहना है हम तो प्रायः पुरातन काल में पूज्यपाद गुरुओं के द्वार इस प्रकार का अन्वेषण करते रहते थे, आयु दीर्घता में परणित होती रहती थी परन्तु योग सिद्ध आत्मायें इस प्रकार की औषधियों का पान करके अपने में यौगिक प्रतिक्रियाओं में उनका भास होता रहा है विचार केवल यह है कि आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें देने नही आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नही हूँ परिचय देने के लिए आया हूँ और वह परिचय केवल अतना है कि हम

बहुत से औषध विज्ञान में रत्त हो जाएं। यह है आज का वाक अब वेदों का पठन पाठन होगा।